उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

MASY-09
भारत में नगरीय समाज

खण्ड

1

भारत में नगरीय समाज

इकाई-1 5
नगर की अवधारणा एवं प्रादुर्भाव

इकाई-2 19
नगर की विशेषताएँ एवं वर्गीकरण, प्रमुख नगरीय संस्थायें

इकाई-3 47
नगरीय समुदाय एवं स्थानीय आयाम-पार्क, बर्गेस एवं मैकेन्जी के सिद्धान्त

इकाई-4 58
नगरीय एवं शहरी आयाम के रूप में समाजशास्त्रीय परम्परा

इकाई-5 64
सांस्कृतिक स्वरूप

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

परिमापक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 जयकान्त तिवारी	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सम्पादक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 अरविन्द कुमार जोशी	रीडर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यायल, इलाहाबाद की ओर से मुद्रित। उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय इलाहाबाद कुलसचिव डॉ. ए.के. गुप्ता, द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित 2019
मुद्रक : चन्द्रकला युनिवर्सल प्रा.लि. 42/7 जवाहर लाल नेहरू रोड **प्रयागराज** 211002

MASY-09/2
[FIFA-098]

खण्ड-1 : खण्ड परिचय - नगरीय समुदाय

इस खण्ड मे निम्नलिखित इकाइयाँ हैं -

इकाई-1 नगर की अवधारणा एवं प्रादुर्भाव

इकाई-2 नगर की विशेषताएँ एवं वर्गीकरण, प्रमुख नगरीय संस्थायें

इकाई-3 नगरीय समुदाय एवं स्थानीय आयाम () पार्क वर्गेस एवं मैकेन्जी के सिद्धान्त

इकाई-4 नगरीय एवं शहरी आयाम के रूप में समाजशास्त्रीय परम्परा-इमाइल दुर्खीम, कार्ल मार्क्स, मैक्स वेबर एवं टानीज के सन्दर्भ में।

इकाई-5 सांस्कृतिक स्वरूप : जार्ज सिमैल-मेट्रोपोलिस, लूईवर्थ-नगरवाद, रेडफिल्ड ग्रामीण सातत्य।

इकाई - 1 : नगर की अवधारणा एवं प्रादुर्भाव

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 नगर की अवधारणा

- 1.2.1 नगर की परिभाषाएँ
- 1.2.2 नगर की समाजशास्त्रीय परिभाषाएँ
- 1.2.3 नगर की कानूनी दृष्टि से परिभाषा
- 1.2.4 नगर की सांख्यिकीय परिभाषा

1.3 नगरों का प्रादुर्भाव

- 1.3.1 भारत में नगरों का प्रादुर्भाव
- 1.3.2 भारत में नगरों का विविध कालों में जन्म एवं विकास
- 1.3.3 प्राचीन कालीन नगर
- 1.3.4 मध्य एवं मुगलकालीन नगर
- 1.3.5 ब्रिटिशकालीन भारतीय नगर
- 1.3.6 स्वतन्त्रता उपरान्त भारत में नगरों का जन्म एवं विकास
- 1.3.7 भारतीय नगरीय परिदृश्य
- 1.3.8 नगरों के विकास के कारक

1.4 सारांश

1.5 बोध प्रश्न

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- नगर की अवधारणा की चर्चा कर सकेंगे।
- भारत में नगरों के प्रादुर्भाव एवं विकास का विश्लेषण कर सकेंगे।
- नगरों के विकास के कारकों की चर्चा कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में नगर की अवधारणा, उसकी विविध आधारों पर परिभाषाएँ एवं नगरों के प्रादुर्भाव एवं विकास की विवेचना की गई है। तथ्यों से स्पष्ट है कि नगर की परिभाषा पर विद्वानों में सहमति नहीं है। विविध विद्वानों ने विविध आधारों पर नगरों को परिभाषित किया है, यथा समाजशास्त्रीय, कानूनी/विधिक, सांख्यिकीय इत्यादि। नगरों की रचना अनेक ठोस घटकों

पर आधारित होती है जैसे निवासी, संरचनाएँ, परिवहन के साधन, संस्थापनाएं इत्यादि-इत्यादि।

प्रस्तुत इकाई में भारत में नगरों का विविध कालों में जन्म एवं विकास को भी दर्शाया गया है। भारतीय नगरीय परिदृश्य को प्रस्तुत करते हुए नगरों के विकास के कारकों को भी स्पष्ट किया गया है।

1.2 नगर की अवधारणा

कुछ समाजशास्त्रीय अवधारणाओं की तरह ही 'नगर' की अवधारणा पर भी समाजशास्त्रियों में एकमत्य नहीं है। सर्वप्रथम 1598 में इटली के विद्वान जिओवानी बोटेरो (Giovanni Botero) ने अपनी पुस्तक में नगर की चर्चा की है। मम्फोर्ड (1968) का मानना है कि नगर उतना ही प्राचीन है जितना कि मानव बसावट। किन्तु इसकी वैज्ञानिक विवेचना और शोध अध्ययन सत्रहवीं शताब्दी से प्रारम्भ हुआ। भारत के सन्दर्भ में देखा जाये तो स्पष्ट है कि हमारे अनेक प्राचीन धर्म ग्रन्थों में तत्कालीन नगरों का उल्लेख मिलता है। स्पष्ट है कि नगर उतने ही प्राचीन हैं जितनी सभ्यता, तथापि आज भी नगर की सर्वमान्य एवं सन्तोषजनक परिभाषा अनुपलब्ध है।

नगरों की रचना विविध ठोस तत्त्वों से होती है जैसे निवासी, संरचनाएँ, परिवहन एवं यातायात के साधन, संस्थाएँ इत्यादि। नगर में अनेक प्रकार के कार्य होते हैं। एक समान प्रकृति के कार्यो की अधिकता उस नगर के स्वरूप का निर्धारण करती है।

व्यापक रूप से 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में नगरों एवं नगरीय समुदायों ने अपनी विशिष्टताओं एवं समस्याओं के चलते समाजशास्त्रियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। परिणाम स्वरूप विविध समाजशास्त्रियों रेने मॉरियर (1910) जी सिम्मेल (1903) मैक्सवेबर (1921) आर मॉरियर (1929), रॉबर्ट ई० पार्क (1915), ई० डब्लू० वर्गेस और मैकेन्जी (1925), लुई वर्थ, ब्रीज इत्यादि ने अपने अध्ययनों के द्वारा नगरों को समझने और समझाने की कोशिशें कीं।

भारतीय विद्वानों द्वारा नगरों का वैज्ञानिक अध्ययन 1914 से ही प्रारम्भ हुआ। सर्वप्रथम पैट्रिक गिड्डेस ने कुछ भारतीय नगरों का सर्वेक्षण 1914 में शुरू किया। वे मूलतः नगर नियोजन के विशेषज्ञ थे। उन्होंने 1915 में तत्कालीन बॉम्बे प्रेजीडेन्सी के छह कस्बों के पुनः नियोजन सम्बन्धित रिपोर्ट प्रकाशित की। समाजशास्त्रीय दृष्टि से 1953 में जी0एस0 धूरिये ने अपना एक महत्वपूर्ण लेख 'सिटीज ऑफ इण्डिया', सोशियोलॉजिकल बुलेटिन (मार्च 1953 अंक) में प्रकाशित किया।

स्पष्ट है कि नगर उतने ही प्राचीन हैं, जितना कि हमारी सभ्यता। नगरों का अध्ययन भी लम्बे अर्से से हो रहा है, लेकिन फिर भी आज नगर की कोई एक स्पष्ट, सर्वमान्य एवं सटीक परिभाषा नहीं है। मम्फोर्ड (1968) के शब्दों में कहा जाये तो 'नगर की परिभाषा अभी भी विवाद के घेरे में है।' वस्तुस्थिति यह है कि इसको, अलग-अलग दृष्टि से परिभाषित किया

गया है जैसे समाजशास्त्रीय, कानूनी/विधिक, सांख्यिकीय इत्यादि। उल्लेखनीय है कि नगर और गाँव की अस्पष्ट परिभाषाओं के चलते ही यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा पाता है कि कहाँ नगर समाप्त हो रहे हैं और कहां से गाँव प्रारम्भ हो रहा है। यद्यपि प्रशासकीय दृष्टि से नगरीय सीमांकन होता है तथापि उससे काफी दूर तक नगरों के लक्षण दिखायी देते रहते हैं।

सामान्यतः नगर को परिभाषित करने के दो विरोधाभासी आधारों - कानूनी एवं प्राकृतिक का साहित्य में बहुतायत से प्रयोग हुआ है। कुईन ने इन्हीं आधारों की चर्चा करते हुए लिखा है कि, कानूनी आधार पर नगर को एक सरकारी इकाई के रूप में विश्लेषित किया जाता है, जबकि प्राकृतिक आधार की दृष्टि से नगर एक 'प्राकृतिक-सामाजिक अस्तित्व होता है।

नगर की परिभाषा को अलग-अलग दृष्टि से निम्नवत् विश्लेषित किया जा सकता है-

1.2.2 नगर की समाजशास्त्रीय परिभाषाएँ

लुई वर्थ ने नगर की परिभाषा देते हुए उसके तीन महत्त्वपूर्ण तत्त्वों-सघनता, बड़ा आकार एवं विषमता को महत्त्व दिया है। उसके अनुसार, 'सामाजिक रूप से विषमतायुक्त व्यक्तियों की ऐसी स्थायी व बसाबट जो अपेक्षाकृत वृहत् एवं सघन हो, नगर कहलाती है।'

कुईन ने अपनी पुस्तक, 'अर्बन सोशियोलॉजी में लिखा है कि ''प्राकृतिक घटना के रूप में, नगर एक इकाई का गठन करता है, जिसे उसके पड़ोसी क्षेत्रों से कुछ विशेषताओं जैसे जनसंख्या का आकार और घनत्व, विशिष्ट व्यवसायों और सामाजिक सम्बन्धों की गुणवत्ता के आधार पर अन्तर किया जा सकता है।''

सोम्बार्ट के अनुसार नगर की समाजशास्त्रीय परिभाषा वह है, जिसमें 'नगर को एक ऐसे स्थान के रूप में देखा जाता है, जिसका प्रसार इतना अधिक हो गया है कि उसमें रहने वाले लोग एक दूसरे को नहीं जानते हैं।' इसीलिए यह कहा भी जाता है कि गाँव में प्राथमिक सम्बन्ध होते हैं, जबकि नगरों में द्वैतियक। नगरों में लोग एक दूसरे को यहाँ तक कि अपने पड़ोसियों तक को ठीक से नहीं जानते हैं।

मम्फोर्ड ने अपनी पुस्तक, 'दि कल्चर ऑफ सिटीज़ में नगर को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, ''नगर स्पष्ट अर्थों में एक भौगोलिक ढांचा है।'' उनके अनुसार नगर आर्थिक संगठन है तथा संस्थात्मक एवं सामाजिक प्रक्रियाओं का मंच है। कुछ समाजशास्त्रियों ने नगर को उसकी कई विशेषताओं (बहुल मानदण्डों) का उल्लेख करते हुए स्पष्ट करने का प्रयास किया है, जैसे सोरोकिन और जिमरमैन, ए0आर0 देसाई तथा मैकाइवर और पेज इत्यादि।

सोरोकिन और जिमरमैन ने अपनी पुस्तक, 'प्रिंसपल्स ऑफ रूरल-अर्बन सोशियोलॉजी' में आठ प्रमुख आधारों पर ग्राम एवं नगर में अन्तर किया है। ये प्रमुख आधार हैं-व्यवसाय, पर्यावरण/प्रकृति, समुदाय का आकार, जनसंख्या का घनत्व, जनसंख्या की सजातीयता और विजातीयता, सामाजिक विभेदीकरण का स्तर, गतिशीलता एवं प्रवजन तथा अन्तर्क्रिया का क्षेत्र। लगभग इन्हीं आधारों पर ए0आर0 देसाई ने भी नगर एवं ग्राम को समझाने की कोशिश की है।

मैकाइवर और पेज ने नगरीय एवं ग्रामीण जीवन की विशेषताओं के आधार पर नगर को स्पष्ट करने की कोशिश की है। उनके अनुसार, जहाँ ग्रामीण जीवन में कुछ विशिष्ट लक्षण होते हैं, जैसे परिवार का प्रभुत्व, प्राथमिक सम्बन्ध, सरल-सादा जीवन, कृषि प्रधान व्यवसाय इत्यादि, वहीं नगरों की भी कुछ विशेषताएँ होती हैं, जैसे व्यावसायिक विशेषीकरण, तीव्र प्रतिस्पर्द्धात्मक वातावरण, स्त्री-पुरुष की सामाजिक प्रस्थिति, सामाजिक गतिशीलता इत्यादि।

1.2.3 नगर की कानूनी/विधिक दृष्टि से परिभाषा

विश्व के अनेक देशों में नगर की परिभाषा कानूनी/विधिक शब्दावली में की गई है। एक स्थान विशेष को उसकी कुछ विशेषताओं के चलते कानूनी रूप से नगर के रूप में घोषित किया जाता है। यह प्रक्रिया एकदम स्पष्ट है किन्तु स्थान विशेष को नगर के रूप में चिन्हित करने का आधार पूरे देश में एक समान नहीं है। इसीलिए अक्सर ऐसा भी पाया जाता है कि नगर की तमाम विशेषताओं के होने के बावजूद एक स्थान विशेष नगर के रूप में घोषित नहीं हो पाता है।

बर्गेल ने इसी कानूनी प्रक्रिया को आधार बनाते हुए नगर को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, ''नगर वह स्थान है, जिसे उच्च अधिकारी द्वारा स्वीकृत एक अधिसूचना द्वारा, नगर के रूप में घोषित किया गया है।''

कुईन ने अपनी पुस्तक 'अर्बन सोशियोलॉजी' में लिखा है कि 'कानूनी परिभाषा के अनुसार, शहर (नगरपालिका) कानूनी रूप से समाहित क्षेत्र को कहते हैं, जिसकी जनसंख्या निर्धारित न्यूनतम संख्या से अधिक होती है और जिसकी सीमा के अन्तर्गत एक स्थानीय स्वशासी सरकार राज्य द्वारा प्राप्त अपनी सत्ता चलाती है।'

1.2.4 नगर की सांख्यिकीय (जनसंख्या या घनत्व के आधार पर) परिभाषा

नगर की परिभाषा उसकी जनसंख्या या घनत्व के आधार पर भी की जाती है। यह मात्रात्मक मानदण्ड सर्वत्र एक समान नहीं है। विविध राष्ट्रों में जनसंख्या का अलग-अलग आधार है और घनत्व के आधार में भी एक समानता नहीं है।

नगर की सांख्यिकीय परिभाषा के अनुसार 'एक स्थान जहाँ निश्चित संख्या में (उस स्थान द्वारा निर्धारित संख्या) लोग निवास करते हैं को नगर कहा जाता है।'

यह सही है कि नगरों में गाँवों की अपेक्षा जनसंख्या तथा जनसंख्या का घनत्व अधिक होता है तथापि कभी-कभी कुछ गाँवों में भी न केवल जनसंख्या अधिक होती है, अपितु घनत्व भी ज्यादा होता है। स्पष्ट है कि कोई भी स्थान सिर्फ निर्धारित जनसंख्या को पूरा करके नगर नहीं बन जाता है और हम मात्र जनसंख्या के आधार पर नगर को स्पष्ट रूप से समझ नहीं सकते हैं। इस सन्दर्भ में जेम्स ए0 कुईन ने अपनी पुस्तक 'अर्बन सोशियोलॉजी' में शहर के बारे में लिखते हुए प्रश्न किया है कि किस आधार पर कोई यह तय कर सकता है कि कितनी अधिक संख्या आवश्यक है? शहर के निर्माण के लिए लोगों को कितना निकट रहना चाहिए? अमेरिका में 'द यू0 एस0 ब्यूरो ऑफ सेन्सस 'सभी निगमित स्थानों (incorporated

places) जिसमें 2500 या इससे अधिक लोग निवास करते हैं, को नगर मानता है। क्या मात्र इतनी जनसंख्या वाला भारतीय या चीनी क्षेत्र नगर हो सकता है? स्पष्ट है कि कदापि नहीं। 2500 से अधिक आबादी वाले अनेकों गाँव भारत तथा चीन में हैं। फ्रांस में तो मात्र 2000 से अधिक आबादी वाले क्षेत्र को नगर की श्रेणी में सम्मिलित किया जाता है। अधिकाँश यूरोपीय देशों में भी इतनी ही आबादी को नगर निर्धारित करने का आधार माना जाता है।

भारत में 1961 की जनगणना में 5000 या इससे अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र को नगरीय क्षेत्र माना गया। इस जनगणना में (तथा उसके बाद की जनगणनाओं में भी) नगरीय /शहरी क्षेत्र को इस तरह स्पष्ट किया गया है-

(अ) वह स्थान जो या तो नगर निगम हो अथवा निगम क्षेत्र हो, या नगरपालिका, अथवा अधिसूचित क्षेत्र पालिका या छावनी बोर्ड के अधीन हो, अथवा

(ब) वह कोई भी स्थान जो निम्नलिखित मानदण्डों को पूर्ण करता हो।

— कम से कम 5000 की आबादी,

— क़म से कम 75% कार्य व्यवसाय कृषि के अतिरिक्त,

— ज़नसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग मील 1000 व्यक्तियों से कम न हो,

— ऐसे किसी भी स्थान पर कुछ घोषित नगरीय विशेषताएं और सुविधाएँ होनी चाहिए जैसे नए स्थापित क्षेत्र, बड़ी आवासीय बस्तियाँ, पर्यटन महत्त्व के स्थल और नागरिक सुविधाएँ।

यह निर्धारण सांख्यिकीविदों की आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ समाजशास्त्रीय अन्तदृष्टि से भी परिपूर्ण है। विविध देशों में जनसंख्या का अलग-अलग निर्धारण यह स्पष्ट करता है कि नगर का किसी निश्चित जनसंख्या के अधार पर कोई सार्वभौमिक निर्धारण नहीं है।

इसी तरह एकमात्र घनत्व के आधार पर भी नगर और गाँव के मध्य कोई तीक्ष्ण विभाजन रेखा खींची नहीं जा सकती है। वाल्डर एफ0 विलकॉक्स ने लगभग 81 वर्ष पूर्व अपने एक लेख 'ए रीडिफनिशन ऑफ सिटी इन टर्म्स ऑफ डेन्सिटी ऑफ पाँपुलेशन' (1926 में ई0 डब्लू0 वर्गेस द्वारा सम्पादित पुस्तक 'द अर्बन कम्यूनिटी' में प्रकाशित) में यह सुझाव दिया था कि प्रति वर्गमील एक हजार आबादी वाले समुदायों को निश्चित रूप से नगर की श्रेणी में रखा जाना चाहिए।

भारत में जनसंख्या के आधार पर नगरीय क्षेत्र की छह श्रेणियाँ निर्धारित की गयी हैं। भारतीय जनगणना में इनको निम्नवत् रखा गया है-

प्रथम श्रेणी (Class one city) - जनसंख्या 1 लाख या अधिक → (शहर)

द्वितीय श्रेणी- 50,000 से 99,999 तक आबादी →(बड़े कस्बे)

तृतीय श्रेणी - 20,000 से 49,999 तक →(मध्यम कस्बे)

चतुर्थ श्रेणी - 10,000 से 19,999 तक
पंचम श्रेणी - 5,000 से 9000 तक
षष्ठम श्रेणी - 5000 से कम
} (20,000 से कम वाले छोटे कस्बे)

2001 की भारतीय जनगणना के अनुसार देश में नगरीय जनसंख्या 27.8 प्रतिशत है, तथा कुल नगरीय केन्द्रों की संख्या 5161 है। 10 लाख से अधिक आबादी वाले शहरों को 'महानगर' की श्रेणी में रखा जाता है। 2001 में ऐसे 35 महानगर थे।

भारत में नगर और शहर का विभेद ध्यान देने योग्य हैं। यदि एक स्थान विशेष की आबादी 5000 से अधिक लेकिन एक लाख से कम हो तो वे स्थान 'नगरीय' (अर्बन) कहलाते हैं, जबकि एक लाख से अधिक आबादी वाले क्षेत्र 'शहर' (सिटी) कहलाते हैं, और जैसा कि ऊपर कहा गया कि 10 लाख से अधिक आबादी वाले क्षेत्र 'महानगर' कहे जाते हैं। इसी तरह से पचास लाख से अधिक जनसंख्या वाले शहरों को 'मेगा सिटी' कहा जाता है। 2001 में भारत में छह मेगा सिटी थीं- ये हैं दिल्ली, कोलकता, वृहत् मुम्बई, चेन्नई, बंगलुरू और हैदराबाद। वृहत् मुम्बई सबसे बड़ा महानगर (मेगा सिटी) है, जिसकी आबादी वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार तिहत्तर लाख अट्ठासी हजार नौ सौ बारह थी, जबकि सबसे छोटा शहर राजकोट था, जिसकी जनसंख्या वर्ष 2001 में चार लाख छिहत्तर हजार तीन सौ तिरसठ थी। उत्तर प्रदेश के निम्नांकित छह शहर महानगर की श्रेणी में हैं- कानपुर, लखनऊ, आगरा, वाराणसी, मेरठ, इलाहाबाद।

नगर की उपरोक्त तीन महत्त्वपूर्ण आधारों पर, परिभाषाओं के अतिरिक्त भी कुछ अन्य आधारों पर परिभाषाएँ मिलती हैं, जैसे बाजार के आधार पर, व्यवसाय के आधार पर। बर्गेल ने नगर को परिभाषित करते हुए लिखा है कि 'नगर वह स्थान है, जहाँ अधिकांश लोग कृषि के अतिरिक्त कार्यों में संलग्न होते हैं।' विलकॉक्स ने एक जिले को केवल तभी ग्रामीण माना जब 'स्वीकार्य रूप से कृषि ही एकमात्र व्यवसाय हो' जबकि उनके अनुसार 'नगर वे स्थान है, जिनमें व्यवहारिक रूप से कृषि का व्यवसाय नहीं होता है।' इस तरह से इन विद्वानों ने 'व्यवसाय' और उसके परिणामस्वरूप 'बाजार' के पक्ष को महत्वपूर्ण माना।

मानव बसावट के कुछ ऐसे स्वरूप भी हैं जो किसी क्षेत्र विशेष के संदर्भ में यह सोचने पर मजबूर करते हैं कि स्थानीय आर्थिक क्रियाकलापों की दृष्टि से उन क्षेत्रों को किस श्रेणी में रखा जाये-जैसे मछुआरों के गाँव जो कि ग्रामीण और नगरीय दोनों ही श्रेणियों का सम्मिश्रण दिखते हैं, ऐसे ही कुछ हस्तशिल्पियों से परिपूर्ण गाँव। उपभोग और वाणिज्यिक उद्यम की अधिकता के अधार पर हम बसावट के स्वरूप को निर्धारित कर सकते हैं। यह सत्य है कि ग्रामीण क्षेत्रों से खाद्य सामग्री नगरीय क्षेत्रों की ओर आती है। इस प्रक्रिया में ग्रामीण क्षेत्रों में सामान्य बाजारोंन्मुखी क्रियाकलाप होते हैं, जबकि नगरीय क्षेत्रों में वस्तुओं और सेवाओं का संगठित एवं जटिल विनिमय होता है।

किसी एक आधार पर नगर को परिभाषित करना भ्रामक हो सकता है। नगर की अनेकों विशेषताएँ होती हैं। कुछ विद्वानों ने नगर की विविध विशेषताओं को मिलाकर उसे स्पष्ट करने का प्रयास किया है। डिकिन्सन (1951) के अनुसार, 'सर्वप्रथम नगर एक संस्थागत केन्द्र हैं, समाज जिसका यह प्रतिनिधित्व करता है कि संस्था का स्थान धर्म का, संस्कृति का और सामाजिक सम्पर्क का और राजनीतिक तथा प्रशासनिक संगठन का स्थान है। दूसरा यह कृषि और औद्योगिक उत्पादन जिसमें साधारणतया औद्योगिक उत्पादन अधिक महत्वपूर्ण है का स्थान है, तीसरा यह वाणिज्य और परिवहन का स्थान है। चौथा, नगर शासकों, धनवानों और

सेवानिवृत्त व्यक्तियों के रहने का आरामदायक स्थान है जहाँ से अपने समाज की संस्थाओं द्वारा प्रदत्त सभ्य जीवन की सभी सुख-सुविधाओं का उपभोग कर सकते हैं। पाँचवाँ, यह उन लोगों के लिए, जो यहाँ काम करते हैं, निवास स्थान है।' (उद्धृत नगरीय समाजशास्त्र, पुस्तक-1, एम0 एस0 ओ0 इ0-004, इग्नू सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, मई, 2007,पृष्ठ 33)।

1.3 नगरों का प्रादुर्भाव

नगरों का प्रादुर्भाव कैसे हुआ, कब हुआ, प्रारम्भ में इनका स्वरूप कैसा था, किन कारणों से इनकी उत्पत्ति और विकास हुआ इत्यादि अनेकों प्रश्न हमारे मस्तिष्क में उत्पन्न होने स्वाभाविक है। विविध विद्वानों के मन में भी यही जिज्ञासाएँ उत्पन्न हुई होंगी तभी तो उन्होंने इस सन्दर्भ में व्यापक शोध कार्य किये और नगरों की उत्पत्ति और विकास पर अपने ठोस और सप्रमाण विचार रखे। इस सन्दर्भ में कुईन, मम्फोर्ड, मारगेट ए0 मूरे, बर्गेल, किंग्सले डेविस, नेल्स एण्डरसन, चार्ल्स कूले इत्यादि के विचार महत्त्वपूर्ण हैं।

नगर मानव इतिहास के प्रायः सभी चरणों में आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक एंव सांस्कृतिक जीवन का केन्द्र रहे हैं। इनके अभ्युदय या प्रादुर्भाव के अनेकानेक कारण रहे होंगे। स्पष्ट तौर से यह कहा जा सकता है कि कुछ अनिवार्य दशाओं और आवश्यकताओं के चलते लोगों और उनके आर्थिक क्रियाकलापों का संकेन्द्रण किसी स्थान विशेष में हुआ होगा, जो कस्बे और फिर नगर के रूप में विकसित हुए होंगे।

हाट और रीज़ ने अपनी पुस्तक ''सिटीज़ एण्ड सोसायटी' में नगरीय बस्ती के इतिहास के अन्तर्गत यह उचित ही लिखा है कि यद्यपि प्रत्येक शहर का अपना इतिहास होता है, मानव का इतिहास शहरी जीवन और शहरी इतिहास के बड़े भाग के रूप में लिखा जा सकता है। शहर ने ऐतिहासिक प्रक्रिया में एक नये तत्व को प्रस्तुत किया है। यहाँ मनुष्य ने गैरकृषि श्रम द्वारा जीवन में एक नये तरीके को जन्म दिया है। शहर की उत्पत्ति, वृद्धि और फैलाव की खोज और व्याख्या ऐतिहासिक युग के लिए है।

नगरों के प्रादुर्भाव को मानव इतिहास के प्रारम्भिक काल के धुमन्तू जीवन के पश्चात् आए और स्थिर जीवन से खोजा जा सकता है। यद्यपि इसमें भी यथार्थता पर प्रश्न चिन्ह ही है। आज नगरों का उद्‌भव योजनाबद्ध तरीके से अल्प समय में किया जा सकता है किन्तु प्रारम्भिक मानव इतिहास के काल में आज जैसी परिस्थितियाँ एवं सुविधाएँ नहीं थीं। स्वाभाविक है कि प्रारम्भ में नगरों का प्रादुर्भाव दीर्घ काल के दौरान हुआ होगा। प्राचीन कालीन, शहरों के जो साक्ष्य हैं, वे पुरातात्विक और खण्डित/आंशिक हैं। इसके साथ ही साथ सभी देशों के सभी शहरों का सभी युगों में समान सूक्ष्मता के साथ अध्ययन नहीं हुआ है। नगरीय सभ्यता की चर्चा सामान्यतः मैसोपोटामिया और सुमेरिमयन सभ्यताओं के काल से प्रारम्भ होती है। यद्यपि भारत और चीन में भी कुछ प्राचीनतम प्रसिद्ध शहर हैं। यहाँ निश्चित रूप से हम हाट और रीज़ के शब्दों में कह सकते हैं कि, 'पूर्व-शहर और प्राचीन शहरी युग पर विस्तृत/गहन लिखित सामग्री के अभाव का तात्पर्य यह है कि नगरीय जीवन का अधिकांश विवरण अनुमान पर आधारित है। इन शहरों की बाद के काल के शहरों से तुलना अपरिष्कृत या घटिया है और उनका विश्लेषण कम स्पष्ट है।'

ऐसा अनुमान है कि ईसा से लगभग 6 हजार वर्ष पूर्व शहर अस्तित्व में आए। किंग्सले डेविस का मानना है कि 3000 ईस्वी पूर्व मिस्र, मैसोपोटामिया तथा भारत में नगरों का जन्म हो चुका था। निश्चित रूप से प्रारम्भिक शहर छोटे थे तथा गाँवों से ज़रा ही भिन्न थे। उनके छोटे आकार का स्पष्ट कारण यह माना जा सकता है कि कृषि की सीमित उत्पादकता थी और उसे दूर तक ले जाने में परिवहन व्यय ज्यादा था। कृषि उत्पादकता में वृद्धि के साथ ही भारी मात्रा में जनसंख्या का केन्द्रीकरण सम्भव हुआ। विविध आविष्कारों के साथ ही साथ इनका विकास भी होता चला गया। कालान्तर में विविध कारणों से कई शहरों का पतन भी हो गया।

बर्गेल तथा कुछ अन्य विद्वानों (यथा हाट एवं रिज़) ने नगरों की उत्पत्ति और विकास को तीन महत्वपूर्ण कालों-प्राचीन, मध्यकालीन एवं आधुनिक में बाँटकर विश्लेषित किया है। प्रारम्भिक नगर कैसे थे, इस पर विद्वानों में मतभेद है। उदाहरण के लिए मारगेट ए0 मूरे का तर्क है कि धातु का प्रयोग जानने वालों ने आक्रमण करके इसका प्रयोग न करने वालों को अपना दास बना दिया और अति सुरक्षित स्थान पर बस्तियाँ स्थापित की। एथेन्स, रोम और बेबीलोन, जैसे शहरों का जन्म विविध स्थानों से आए आक्रमणकारियों की ही देन था। वहीं लुईस मम्फोर्ड और कुईम इस विचार से अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। उनका मानना है कि प्रथम नगर 'आदिम गाँव' थे, जो धीरे-धीरे अपनी आश्यकताओं और सुविधाओं में वृद्धि करते हुए नगरीय क्षेत्र में परिवर्तित हो गए।

विश्व में नगरों के प्रादुर्भाव का ऐतिहासिक विश्लेषण प्रस्तुत करना यहाँ सम्भव नहीं है क्योंकि हमें अपना विश्लेषण भारतीय नगरों के प्रादुर्भाव तक ही सीमित रखना है। यहाँ नगरों की उत्पत्ति सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण सिद्दान्तों का उल्लेख मात्र करना समीचीन प्रतीत होता है- किंग्सले डेविस ने अतिरिक्त उत्पादन का सिद्धान्त प्रस्तुत किया है। उनका मानना है कि जब लोगों ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के अतिरिक्त उत्पादन करना प्रारम्भ किया तब ही नगरों का जन्म हुआ। लुईस मम्फोर्ड ने उद्विकासीय सिद्धान्त प्रस्तुत किया है। उनका मानना है कि प्रारम्भिक छोटे आदिम गाँव कालान्तर में नगर बन गए। उन्होंने नगरों की छह अवस्थाओं को भी बताया है। ये हैं- इयोपोलिस, पोलिस, मैट्रोपोलिस, मैगालोपोलिस, टाइरेनोपोलिस, और नेक्रोपोलिस। कुईन ने भी लगभग ऐसा ही सिद्धान्त प्रस्तुत किया है जिसे आदिम ग्राम का सिद्धान्त के रूप में जाना जाता है। उसका मानना है कि नगरों का सूत्रपात आदिम ग्रामों से ही हुआ है। जो कालान्तर में विकास करके नगरों में परिवर्तित हो गए। मारगेट ए0 मूरे ने सैन्य आधिपत्य का सिद्धान्त प्रस्तुत करते हुए स्पष्ट किया कि धातु के हथियार बनाने वालों ने उन लोगों पर आधिपत्य कर लिया जो इनका प्रयोग करना नहीं जानते थे। विजयी आक्रमणकारियों ने आधिपत्य स्थापित करके वहीं सैन्य नगरों की स्थापना की। चार्ल्स कूले ने सुविधाओं की उपलब्धता विशेषकर संचार एवं यातायात के आधार पर अपने विचार को प्रगट किया है। उनका मानना है कि जहाँ संचार एवं यातायात की सुविधा उपलब्ध थी, वहीं नगरों का जन्म हुआ। नेल्स एण्डरसन ने विधिक आविष्कारों और परिणामस्वरूप परिवर्तनों को महत्व प्रदान करते हुए नगरों की उत्पत्ति के सन्दर्भ में सामाजिक परिवर्तन का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। उनका मानना है कि आविष्कार और परिवर्तन किसी स्थान के विकास में महत्वपूर्ण होते हैं।

1.3.1 भारत में नगरों का प्रादुर्भाव एवं विकास

भारत में नगरों का प्रदुर्भाव सिन्धु घाटी की सभ्यता के काल (लगभग 2500 ई0 पू0) से माना जा सकता है। मोहनजोदड़ों और हड़प्पा के पुरातात्त्विक उत्खनन से यह प्रमाणित हो गया कि उस काल में भी नगरीय जीवन था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारत में अतिप्राचीन काल से ही अनेकों विशाल धार्मिक-सांस्कृतिक, आर्थिक-व्यापारिक, राजनैतिक एवं सामरिक महत्व के नगर विद्यमान रहे। यह कहना गलत न होगा कि हमारे देश में नगरों का अस्तित्व उतना ही पुराना है, जितना कि हमारी सभ्यता का इतिहास। यह प्रमाणित होता है हमारे विविध प्राचीनतम धार्मिक ग्रन्थों से जिनमें विविध शहरों का स्थान-स्थान पर उल्लेख है। महाभारत और रामायण काल में भी नगर थे, ऐसा उल्लेख मिलता है। इतिहास विविध कालों में नगरों का ज्ञान कराता है, जिसमें विविध शासकों का उल्लेख है जिन्होंने नगरों की स्थापना की। अंग्रेजों के आगमन के साथ ही साथ प्रशासकीय नगरों का जन्म एवं विकास हुआ। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त नियोजित तरीके से नगरों को बसाने का कार्य हुआ। औद्योगीकरण के साथ-साथ भारत में विविध औद्योगिक नगरों का भी जन्म हुआ।

1.3.2 भारत में नगरों का विविध कालों में जन्म एवं विकास

उपरोक्त समस्त विश्लेषण से यह स्वतः ही स्पष्ट है कि भारत में नगरों के जन्म और विकास की विवेचना विविध कालों के अन्तर्गत, अधिक स्पष्टता के साथ ही की जा सकती है। इस दृष्टि से हम मोटे तौर पर भारतीय नगरों के जन्म एवं विकास को चार भागों में रख सकते हैं-

1.3.3 प्रारम्भिक (प्राचीन कालीन) नगर

पुरातात्विक उत्खननों द्वारा वर्णित तथा विविध धार्मिक, ग्रन्थों में उल्लेखित प्राचीन कालीन नगरों को इसके अन्तर्गत रखा जा सकता है। जैसा कि पहले भी अन्यत्र उल्लेख किया गया है कि भारतीय नगरों के प्रमाण सिन्धु घाटी की सभ्यता से ही मिलने शुरू हो गये थे। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा कालीन संस्कृति नगरों के अस्तित्व का उल्लेख करती है, यद्यपि वे नगर कालान्तर में समाप्त हो गए। रामायण, महाभारत एवं पुराणों में भी इन्द्रप्रस्थ, हस्तिनापुर, द्वारिका, अयोध्या इत्यादि नगरों का वर्णन है। काशी (बनारस या वाराणसी), उज्जैन, प्रयाग, मदुरै, मथुरा, इत्यादि भी अत्यन्त प्राचीन कालीन धार्मिक नगर हैं। तक्षशिला और पाटलिपुत्र (वर्तमान पटना) अत्यन्त प्राचीन नगर रहे हैं और कालान्तर में भारी उतार-चढ़ाव के दौर से गुजरे हैं। विविध आक्रमणकारियों ने विशेषकर हूण-शक एवं यूनानी आक्रमणकारियों ने प्राचीन कालीन कई नगरों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। कई नगर ऐसे भी रहे जो विषम परिस्थितियों में भी यथावत बने रहे तथा आज भी विद्यमान हैं। इनमें अधिकांशतः धार्मिक नगर हैं। कुछ नगरों के नाम ऐतिहासिक प्रक्रिया के साथ-साथ परिवर्तित भी हो गए।

गुप्तकाल में चन्द्रगुप्त तथा अशोक जैसे राजाओं के काल में विविध नगरों का वर्णन आता है। तत्कालीन यात्री वृत्तान्तों (जैसे मैगस्थनीज़) में भी वैभवशाली नगरों का वर्णन है, जो

नगरीय संस्कृति एवं जीवन के विविध पक्षों की उपस्थिति का वर्णन करते हैं। चन्द्रगुप्त मौर्य के काल में पाटलीपुत्र का राजधानी के रूप में महत्व किसी से अनजान नहीं है।

1.3.4 मध्य एवं मुगलकालीन नगर

मध्ययुगीन एवं मुगलकालीन राजाओं के काल में न केवल अनेकों नगरों का जन्म हुआ अपितु पूर्व विद्यमान नगरों का भी विकास हुआ। यह काल न केवल आक्रमणों, युद्धों का काल था अपितु इस काल में व्यापारिक, धार्मिक एवं शैक्षणिक गतिविधियों में भी बढ़ोत्तरी हुई। स्वभाविक है कि विविध विशेषताओं से युक्त नगरों का जन्म हुआ जैसे दुर्गनगर, समुद्रतटीय व्यापारिक नगर, शैक्षणिक नगर इत्यादि। इनमें से कई प्रसिद्ध नगर विविध स्थापत्य शैलियों के चलते आज भी पर्यटन के प्रमुख स्थल के रूप में विश्व प्रसिद्ध हैं जैसे आगरा, जयपुर, जोधपुर, आमेर, दिल्ली, बीकानेर, उदयपुर, काँचीपुरम्, अहमदाबाद, ग्वालियर, गौहाटी, चित्तौडगढ़ इत्यादि।

मध्यकाल में भी कई नगरों का उल्लेख मिलता है, विशेषकर हर्षकालीन कन्नौज, श्रीनगर इत्यादि। नालन्दा प्राचीनतम नगर था, किन्तु इस काल में वह विश्वप्रसिद्ध शैक्षणिक केन्द्र बन चुका था। राजपूत शासनकाल में (दसवीं शताब्दी के दौरान) कई राजाओं ने दुर्ग नगरों की स्थापना की जैसे चित्तौड़गढ़, रणथम्भौर इत्यादि। यद्यपि ये नगर अपेक्षाकृत छोटे ही रहे।

जिस-जिस मार्ग से मुगल आक्रमणकारियों ने प्रवेश किया और जहाँ-जहाँ उपयुक्त स्थान पाकर उन्होंने अपना डेरा जमाया, वहाँ-वहाँ मुगलस्थापत्य कला से युक्त दुर्गों, नगरों की स्थापना की। इसीलिए उत्तरी एवं उत्तरी पश्चिमी भारत के अधिकांश स्थानों पर दुर्गों एवं अन्य नगरीय क्षेत्रों का जन्म हुआ। दक्षिण भारत अपेक्षाकृत इस दौरान शान्त रहा। वहाँ का विकास धार्मिक एवं व्यापारिक गतिविधियों को चलते हुआ न केवल भव्य मन्दिरों जैसे मदुराई, तन्जाबुर कान्चीपुरम) एवं धार्मिक तीर्थ स्थलों का निर्माण एवं जन्म हुआ अपितु कुछ समुद्रतटीय नगरों विशेषकर कालीकट का भी विकास हुआ। अन्य समुद्रतटीय क्षेत्रों का व्यापारिक उपयोग यद्यपि प्रारम्भ हो चला था किन्तु उसे वास्तविक रूप अंग्रेजों ने प्रदान किया इसलिए उनकी चर्चा आगे की जायेगी।

1.3.5 ब्रिटिशकालीन भारतीय नगर

भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के प्रवेश के साथ ही व्यापारिक एवं आधिपत्यवादी गतिविधियों में तीव्र वृद्धि हुई। उद्योग-धन्धों यातायात (सड़क, रेलमार्ग एवं जल-परिवहन सहित) एवं संचार, कृषि, उत्खनन, आमोद-प्रमोद, एवं व्यापारिक गतिविधियों को नया स्वरूप एवं दिशा मिली। जहाँ-जहाँ इन गतिविधियों में तीव्रता आयी वहाँ नगरों का जन्म हुआ। यातायात एवं संचार तथा जीवन की अन्य मूलभूत आवश्यकताओं की स्थान विशेष में सुलभता एवं उपलब्धता के कारण नगरों का जन्म एवं विकास आसानी से हुआ। ब्रिटीशकालीन नगर पश्चिमीशैली से ओत-प्रोत हो गए। कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) मद्रास (वर्तमान चेन्नई), बम्बई (वर्तमान मुम्बई) बन्दरगाह नगर व्यापारिक गतिविधियों के कारण तेजी से पनपे। इन

नगरों में तेजी से जनसंख्या वृद्धि हुई और विविध सुविधाओं की वृद्धि हुई। प्रशासकीय महत्व दिये जाने् से ये स्थान और भी आकर्षण का कारण बने। इसी तरह से स्थान-स्थान पर सामरिक एवं सैन्य ठिकानों को स्थापित किया गया जैसे मेरठ, अम्बाला, कानपुर। आमोद-प्रमोद एवं अनुकूल जलवायु का लाभ लेने के लिए मसूरी, शिमला, जैसे ठण्डे पर्वतीय नगरों का जन्म हुआ। रेल लाईनों का जाल बिछने के साथ ही साथ उसकी व्यवस्था से सम्बन्धित स्थानों का विकास प्रारम्भ हुआ, जैसे मुगलसराय, इटारसी, टुण्डला इत्यादि।

सुधारवादी आन्दोलनों के चलते लोगों में सामाजिक-सांस्कृतिक जागरूकता आयी। इसका प्रभाव तत्कालीन नगरों के विकास पर पड़ा। अंग्रेजों से देश को मुक्त कराने के लिए भारत छोड़ो आन्दोलन हुआ, उसने भी नगर की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। 1857 में देश छोड़ो आन्दोलन की व्यापकता के कारण ही अंग्रेजों ने राजनैतिक बन्दियों को सुदूर जेलों में रखने का विचार किया। यद्यपि बाद में राजनैतिक के साथ-साथ आपराधिक बन्दियों को भी उनके साथ देश निकाला (काला पानी की सजा) की सजा दी गयी। अण्डमान की सेल्यूलर जेल में सभी बन्दियों को रखा गया। सम्पूर्ण प्रबन्ध व्यवस्था हेतु विशाल संख्या में अधिकारियों, कर्मचारियों एवं अन्य लोगों की जरूरत पड़ी। इस तरह अण्डमान-निकोबार में पोर्ट-ब्लेयर नगर का जन्म और क्रमिक विकास प्रारम्भ हुआ।

1.3.6 स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त भारत में नगरों का जन्म एवं विकास

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त भारत में नियोजित एवं औद्योगिक नगरों का जन्म हुआ। साथ ही पहले से ही विद्यमान नगरों में विभाजन के बाद भारतीयों के पुनर्वास, बाहरी शरणार्थियों के पुनर्वास, उद्योग-धन्धों, बाँधों, यातायात एवं संचार केन्द्रों, व्यापारिक केन्द्रों, प्रशासकीय गतिविधियों इत्यादि के कारण तीव्र जनसंख्या वृद्धि एवं क्षेत्र का प्रसार हुआ।

दुर्गापुर, भिलाई, राउरकेला, विशाखापत्तन, कांघला, कानपुर, सूरत, बंगलोर, लुधियाना, अमृतसर, जालंधर, खेतड़ी जैसे औद्योगिक केन्द्रों के पास नगरों का जन्म हुआ। भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया, औद्योगिक एवं व्यापारिक गतिविधियों वाले क्षेत्रों में तीव्रता से हुई है। जहाँ भी उद्योग-धन्धे स्थापित हुए वहाँ विशाल नगरों का जन्म एवं विकास होने लगा।

औद्योगिक नगरों के साथ ही साथ योजनाबद्ध तरीकों से भी नगरों की उत्पत्ति हुई। नगर-नियोजन की विशेषताओं से युक्त चण्डीगढ़ नियोजित नगर स्थापित हुआ। नोएडा और गाँधीनगर भी नियोजित नगर की श्रेणी में है। इसके साथ ही साथ अनेकों पुराने नगरों के चतुर्दिक पूर्ण नियोजित क्षेत्रों का विकास प्रारम्भ हुआ। हम यह देखते हैं कि लगभग सभी बड़े नगरों के संकीर्ण घने, अनियोजित क्षेत्रों के बाद पूर्णतः नियोजित बसे हुए आबादी वाले स्थान आते हैं जैसे नई दिल्ली का क्षेत्र, हैदराबाद का नया विकसित क्षेत्र, मुम्बई की कई नई कालोनियों और क्षेत्र कोलकाता का साल्ट ताल एवं अन्य क्षेत्र नये क्षेत्र इत्यादि। शहरी विकास मन्त्रालय विकास प्राधिकरण आवास-विकास, महानगर पालिकाएँ पूर्ण नियोजित एवं व्यवस्थित नगरों को बसाने एवं देखरेख में संलग्न हैं।

आधुनिक भारतीय नगर निम्नाँकित विशेषताओं से युक्त हैं -

(i) अति जनसंख्या एवं जनसंख्या की विषम जातीयता

(ii) औद्योगिक/वाणिज्यिक/राजनैतिक/प्रशासनिक/ धार्मिक-सांस्कृतिक, इत्यादि गतिविधियों के केन्द्र।

(iii) आधुनिक जीवनशैली फैशन एवं लोकाचार

(iv) संचार, परिवहन के सर्वोत्तम साधन

(v) उत्कृष्ट चिकित्सा, आवास एवं मनोरंजन की सुविधाएं

(vi) सामाजिक - आर्थिक गतिशीलता की अत्यधिकता

(vii) स्वैच्छिक संगठनों की अत्यधिकता एंव सहभागिता

(viii) योजनाबद्ध विकास एवं स्थानीय शासन व्यवस्था

1.3.7 भारतीय नगरीय परिदृश्य

विगत 107 वर्षों में देश के कुछ शहरों में नगरीय जनसंख्या में अपेक्षाकृत तीव्र वृद्धि हुई है। 1901 में कलकत्ता (वर्तमान कोलकता) ही एकमात्र ऐसा शहर था जिसकी आबादी 10 लाख से अधिक थी। आज उत्तर प्रदेश में ही कई शहर (जैसे वाराणसी, लखनऊ, कानपुर, इलाहाबाद इत्यादि) ऐसे हैं जिनकी आबादी 10 लाख से ज्यादा है। दिल्ली, चेन्नई, मुम्बई अहमदाबाद, बंगलूर, पुणे इत्यादि कई शहर ऐसे हैं जो अति-नगरीकरण (over urbanisation) की समस्या से जूझ रहे हैं। प्रत्येक शहर की अपने नागरिकों को मूलभूत आवश्यक सुविधाओं को प्रदान करने की एक निर्धारित मात्रा तक क्षमता होती है। नियन्त्रित जनसंख्या होने तक नगर अपने उत्तरदायित्वों का बखूबी निर्वहन करते हैं। लेकिन आज कई नागरिक सुविधाओं का वहाँ संकट उत्पन्न हो गया है। इस अति-नगरीकरण की समस्या का समाधान खोजना प्रशासन के लिए अत्यन्त मुश्किल होता जा रहा है।

भारत के विविध राज्यों में नगरीकरण की प्रक्रिया में कोई समानता नहीं है। कुछ राज्यों में नगरीकरण की प्रक्रिया तीव्र है (जैसे महाराष्ट्र, पश्चिमी, बंगाल, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, आन्ध्रप्रदेश इत्यादि) वहीं कुछ राज्यों में यह धीमी है। (जैसे नागालैण्ड, आसाम, मेघालय, इत्यादि)। उड़ीसा, जम्मू-काश्मीर, हिमाचल प्रदेश इत्यादि राज्यों में भी नगरीकरण की गति अपेक्षाकृत धीमी है।

भारतीय नगरों से सम्बन्धित तथ्य

1. वर्ष 2001 के आंकड़ो के अनुसार भारत में कुल 5161 शहर है।

2. दस लाख से अधिक आबादी वाले 35 महानगर हैं।

3. भारत में वर्ष 2001 में-ग्रामीण, नगरीय जनसंख्या का अनुपात 72: 28 है, यानि मात्र 28 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय है। जबकि सिंगापुर की शत प्रतिशत जनसंख्या नगरीय हैं, वहीं ब्रिटेन की 90 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय है।

4. भारत के तीन सर्वाधिक बड़े महानगर क्रमशः मुम्बई, कोलकता एवं दिल्ली हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ की एक रिपोर्ट (17 फरवरी, 2005) के अनुसार मुम्बई की आबादी 1 करोड़ 83 लाख, कोलकता की 1 करोड़ 43 लाख एवं दिल्ली की 1 करोड़ 53 लाख आबादी है।

1.3.8 नगरों के विकास के कारक

नगरीय विकास में विविधता से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि कुछ अनुकूल परिस्थितियाँ ही मूलतः नगरीय विकास के लिए जिम्मेदार होती हैं। जहाँ अनुकूल परिस्थितियाँ होती हैं, वहीं लोग जाना उपयुक्त समझते हैं। भारत में प्रायः अधिकांश महत्वपूर्ण नगर प्रमुख नदियों के किनारे एवं समुद्रीतट पर बसे हुए हैं। अनुकूल जलवायु, पेयजल की उपलब्धता, अनुकूल कृषि एवं व्यापारिक दशाएँ एवं उपयुक्त कृषि एवं उपयुक्त भू-क्षेत्र इत्यादि नगरों के अभ्युदय, विकास एवं प्रगति का मुख्य कारण रहे हैं। तथ्यों से स्पष्ट होता है कि नगरीकरण की प्रक्रिया अनेकों कारकों से प्रभावित होती है। मैकाइवर और पेज ने अपनी पुस्तक 'सोसाइटी' में तीन मुख्य कारकों का उल्लेख किया है- (1) अतिरिक्त साधन (2) उद्योग और व्यापार की उन्नति और (3) नगर का आर्थिक आकर्षण) इसमें सांस्कृतिक कारकों की पूर्ण उपेक्षा की गयी है, जबकि हम जानते हैं कि हमारे देश में कई धार्मिक नगरों का विकास हुआ है।

नगरों की उत्पत्ति और विकास के सम्पूर्ण विश्लेषण के आधार पर हम निम्नांकित कारकों को नगरों की उत्पत्ति का जिम्मेदार ठहरा सकते हैं-

(1) प्रचुर संसाधनों की उपलब्धता

(2) अनुकूल प्राकृतिक एवं सामाजिक वातावरण

(3) औद्योगिक एवं व्यापारिक दशाएँ

(4) सांस्कृतिक - धार्मिक महत्त्व

(5) प्रशासकीय या राजनैतिक एवं सैन्य कारक

बहुधा उपरोक्त में से एक से अधिक कारक अनुकूल स्थितियाँ पैदा करते हैं, लेकिन यह भी सच है कि कई नगरों को उनकी मुख्य वृत्ति या विशेषताओं के आधार पर जाना जाता है, जैसे वाराणसी को धार्मिक नगर, कानपुर को औद्योगिक-व्यापारिक नगर, मसूरी, शिमला, नैनीताल को पर्यटन नगर इत्यादि-इत्यादि।

1.4 सारांश

इस इकाई में हमने नगर की अवधारणा को समझाने का प्रयास किया। नगर को विविध आधारों (यथा जनांकिकीय, कानूनी एवं समाजशास्त्रीय) पर परिभाषित किया। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में भारतीय नगरों के प्रादुर्भाव एवं विकास पर प्रकाश डाला है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त नियोजित नगर से भी हमने आपको परिचित करवाया और भारतीय नगरीय परिदृश्य को प्रस्तुत करते हुए हमने नगरों की उत्पत्ति और विकास के कुछ कारकों का भी उल्लेख किया।

नगर की अवधारणा का विविध दृष्टिकोणों से अध्ययन करने के उपरान्त हम कह सकते हैं कि नगर क्षेत्र का एक कानूनी - प्रशासकीय आधार होता हैं, बहुसंख्यक लोग गैरकृषि कार्यों को करते हैं तथा जनसंख्या और उसका घनत्व ज्यादा होता है। भारत में नगरों के अस्तित्व के प्रमाण सिन्धु घाटी की सभ्यता से ही मिले हैं। स्वतन्त्रता उपरान्त देश में नियोजित नगरों को बसाने की प्रवृत्ति बढ़ी है। विविध कारणों से देश में नगरीकरण की प्रक्रिया समान गति से नहीं चल रही है।

1.4 बोध प्रश्न

बोध प्रश्न-1

(i) किन्ही चार प्रसिद्ध नगरीय समाजशास्त्रियों के नाम बताइये ?

(ii) भारतीय जनगणना में नगरों की कितनी श्रेणियाँ निर्धारित की गयी हैं ?

(iii) किसने कहा है कि प्रारम्भिक नगर आदिम गाँव थे?

(iv) सैन्य आधिपत्य का सिद्धान्त निम्नाँकित में से किसने दिया है?
(क) लुई वर्थ (ख) मारगेट ए0 मूरे (ग) आशीष बोस (घ) मम्फोर्ड

(v) भारतीय नगरों का प्रारम्भिक ज्ञान किस संस्कृति से मिलता है?

बोध प्रश्न - 2

(i) नगर की समाजशास्त्रीय परिभाषा दीजिए।

(ii) अति नगरीकरण से आप क्या समझते हैं?

(iii) नियोजित नगर से क्या तात्पर्य है?

बोध प्रश्न-3

(i) भारत में नगरों के प्रादुर्भाव की विवेचना कीजिए।

(ii) स्वतन्त्रता उपरान्त भारतीय नगरों के विकास की मुख्य विशेषताओं की विवेचना कीजिए।

(iii) भारतीय नगरीय परिदृश्य को प्रस्तुत करते हुए भारत के नगरों के विकास के कारकों को स्पष्ट कीजिए।

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

(i) लुई वर्थ, पार्क, बर्गेस एवं मम्फोर्ड।

(ii) छह श्रेणियाँ।

(iii) लुई मम्फोर्ड और कुईन।

(iv) मारगेट ए0 मूरे।

(v) मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा कालीन संस्कृति।

इकाई -2 : नगर की विशेषताएँ, एवं वर्गीकरण, प्रमुख नगरीय संस्थायें

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 नगर की विशेषताएँ

- 2.2.1 सामाजिक विविधता
- 2.2.2 औपचारिक संगति
- 2.2.3 सामाजिक सहिष्णुता
- 2.2.4 औपचारिक नियन्त्रण
- 2.2.5 सामाजिक गतिशीलता
- 2.2.6 ऐच्छिक समितियाँ एवं संघ
- 2.2.7 वैयक्तिकता
- 2.2.8 स्थानीय पृथकता

2.3 नगरों का वर्गीकरण

- 2.3.1 आर्थिक केन्द्र
- 2.3.2 राजनैतिक केन्द्र
- 2.3.3 सांस्कृतिक केन्द्र
- 2.3.4 मनोरंजन केन्द्र
- 2.3.5 रिहायशी केन्द्र
- 2.3.6 प्रतीकात्मक केन्द्र
- 2.3.7 विविधता युक्त नगर

2.4 प्रमुख नगरीय संस्थायें

- 2.4.1 नगरीय राजनैतिक संस्थाएँ - नगर शासन
- 2.4.2 नगरीय आर्थिक संस्थाएँ
- 2.4.3 नगरीय शैक्षणिक संस्थाएँ
- 2.4.4 नगरीय धार्मिक संस्थाएँ
- 2.4.5 परिवार
- 2.4.6 नगरीय समाज में विवाह की संस्था
- 2.4.7 नगरीय समाज में जाति

2.5 सारांश

2.6 शब्दावली

2.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें
2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के उपरान्त आपके द्वारा सम्भव होगा-

- नगर की विशेषताओं को जानना।
- नगरों के वर्गीकरण को समझना और
- विविध नगरीय संस्थाओं यथा नगर शासन,विवाह, परिवार एवं जाति,आर्थिक संस्थाएँ, शैक्षणिक संस्थाएँ, धार्मिक संस्थाएँ को समझना इत्यादि।

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में नगर की विशेषताओं एवं वर्गीकरणों तथा प्रमुख नगरीय संस्थाओं को बताने की कोशिश की गयी है। विविध विद्वानों ने नगरों की विशेषताओं का उल्लेख किया है। किंग्सले डेविस ने नगरीय सामाजिक संरचना के तत्वों के रूप में नगरों की विविध विशेषताओं का उल्लेख किया है। सोरोकिन और जिमरमैन ने ग्रामीण-नगरीय समाज की विशेषताओं को एक दूसरे के सन्दर्भ में प्रस्तुत करते हुए नगरीय समाज की विशेषताओं पर प्रकाश डाला है।

प्रस्तुत इकाई तीन भागों में विभक्त है। इकाई के प्रथम भाग में नगर की विशेषताओं का वर्णन किया गया है। इकाई के दूसरे भाग में नगरों का विविध आधारों पर वर्गीकरण किया गया है और तृतीय भाग में प्रमुख नगरीय संस्थाओं का उल्लेख किया गया है।

2.2 नगर की विशेषताएँ

प्रस्तुत इकाई में नगर की विशेषताओं को स्पष्ट किया गया है। इकाई प्रथम में नगर की विविध श्रेणियों की उनके जनसंख्या के आकार के अनुसार विवेचना की गयी है, जिससे स्पष्ट है कि 5000 की आबादी वाला क्षेत्र भी नगर की एक श्रेणी के अन्तर्गत है और 10 लाख या उससे अधिक आबादी वाला विशाल क्षेत्र भी नगर की श्रेणी के अन्तर्गत ही है। परन्तु इन दोनों श्रेणियों में व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक एवं आर्थिक अन्तर है। सामान्यतः नगर शब्द का प्रयोग शहर (सिटी) के सन्दर्भ में किया जाता है जो कस्बों से आगे की श्रेणी का विशाल स्वरूप है। लुंई वर्थ के शब्दों में कहा जाये तो नगर सामाजिक रूप से विषमता युक्त कार्य व्यक्तियों की स्थायी बसावट हैं,जो अपेक्षाकृत वृहत एवं सघन हैं। ऐसे में नगर की तीन विशेषताएँ ही दिखती हैं-सघनता,बड़ा आकार एवं विषमता। सामान्यतः जब नगर की विशेषताओं की बात आती है तो इसके अन्तर्गत नगरीय जीवन-शैली के अन्य तत्त्वों को भी विचार किया जाता है और जब नगरीय जीवनशैली पर हम विचार करते हैं तो हम एक विशिष्ट जीवन शैली से परिचित होते हैं, जिसकी कई विशेषताएं होती हैं। उनमें से एक विशेषता जनसंख्या की

विविधता है, जिसका लुई वर्थ ने भी जनसंख्या के आकार और घनत्व के साथ उल्लेख किया है। जनसंख्या की विविधता गाँवों में भी कुछ आधारों पर देखी जा सकती है जैसे जाति के आधार पर, धर्म के अनुसार, भूमि की जोत के आधार पर किन्तु फिर भी सम्पूर्णता की दृष्टि से उनमें सामाजिक-सांस्कृतिक समरूपता ही पायी जाती है। नगरों में सामाजिक-सांस्कृतिक विषमता अपेक्षाकृत बहुत ज्यादा होती है और वह आसानी से देखी जा सकती है। बोली-भाषा, पहनावा, खान-पान, रहन-सहन का ढंग, प्रजातीय गुण, रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार इत्यादि विविध पक्षों से युक्त भारी विषमता नगर के प्रत्येक क्षेत्र में स्पष्ट परिलक्षित होती है।

किंग्सले डेविस ने अपनी पुस्तक 'ह्यूमन सोसायटी' (पृष्ठ 329-336) में नगरीय सामाजिक संरचना की निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है-

(1) सामाजिक विविधता,

(2) औपचारिक संगति,

(3) सामाजिक सहिष्णुता,

(4) औपचारिक नियन्त्रण,

(5) सामाजिक गतिशीलता,

(6) ऐच्छिक समितियाँ या संघ,

(7) वैयक्तिकता,

(8) स्थानिक पृथकता।

2.2.1 सामाजिक विविधता

नगरों में विविध सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताओं से युक्त लोग निवास करते हैं। विविध क्षेत्रों, प्रदेशों, देशों से ये लोग आकर नगर में निवास करते हैं। जीवन यापन हेतु सभी विविध प्रकार की आर्थिक गतिविधियों में संलिप्त होते हैं। प्रजातीय लक्षण, वैयक्तिक गुण, व्यवसाय, खान-पान,पहनावा, रीति-रिवाज, परम्परा, तीज-त्यौहार,बोली-भाषा,आचार-व्यवहार एवं सम्पूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन, इत्यादि विविध दृष्टिकोणों से लोगों में अत्यधिक विषमता देखने को मिलती है। अलग-अलग सामाजिक्-सांस्कृतिक एवं आर्थिक विशेषताओं से युक्त लोग सहज ही देखे जा सकते हैं।

2.2.2 औपचारिक संगति

बड़े क्षेत्र में विशाल आबादी वाले समाज में प्राथमिक सम्बन्धों का स्थान द्वैतियक सम्बन्ध ले लेते है। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नगरीय व्यक्ति विविध लोगों के सम्पर्क में आता है किन्तु यह सम्पर्क मात्र आवश्यकता पूर्ति के कार्य तक ही सीमित होता है। इस तरह बढ़ती हुई अन्तर्क्रिया बढ़ती हुई औपचारिकता को लाती है। समय का अभाव किन्तु अनेकों कार्य

और अपरिचित व्यक्ति से सम्पर्क कर शीघ्र-निर्णय लेने की विवशता मनुष्य के व्यवहार को यन्त्रवत बना देती है। लोग प्रतिदिन एक दूसरे से सीमित समय के लिए सम्पर्क में आते हैं, मात्र चेहरे से जानते पहचानते और अभिवादन करते हैं, ऐसी 'हैलो फ्रैण्डशिप' नगरीय जीवन की आम विशेषता है।

2.2.3 सामाजिक सहिष्णुता

किंग्सले डेविस ने नगरीय सामाजिक संरचना की एक विशेषता सामाजिक सहिष्णुता को भी माना है। उसका मानना है कि यह सामाजिक सहिष्णुता लोगों के बीच औपचारिक एवं अवैयक्तिक सम्बन्धों के कारण उत्पन्न होती है। नगरीय विषमता को देखते-देखते व्यक्ति इतना उदासीन हो जाता है कि उसमें सामाजिक सहिष्णुता की भावना पैदा हो जाती है और तटस्थ बना रहता है।

2.2.4 औपचारिक नियन्त्रण

नगरों में नियन्त्रण के औपचारिक साधन होते हैं। अनजान लोगों से युक्त विशाल आबादी में व्यक्ति निःसंकोच अनुत्तरदायी और विचलित व्यवहार कर सकता है। अनजान लोगों की भीड़ में कोई भी अपने को छिपा सकता है। नगरीय लोगों की व्यस्तता पारिवारिक सदस्यों के अवांछित व्यवहार से अनभिज्ञ रहती है। प्राथमिक नियन्त्रण के साधनों का प्रभाव नगर में अप्रभावी होता है। ऐसी स्थिति में नगरों में नियन्त्रण के औपचारिक साधनों जैसे कानून, पुलिस एवं कारागार का भय, दण्ड, इत्यादि के द्वारा व्यक्ति के व्यवहारों को नियन्त्रित किया जाता है। नगर में कानून व्यवस्था बनाये रखना अत्यन्त कठिन कार्य है। राज्य विविध उपायों द्वारा निरन्तर नियन्त्रण स्थापित करने की व्यवस्था करता रहता है।

2.2.5 सामाजिक गतिशीलता

नगर, सामाजिक (भौगोलिक गतिशीलता के केन्द्र हैं। नगरों में प्रदत्त प्रस्थिति का कोई खास स्थान नहीं है। नगरीय समाज एक खुला समाज है जहाँ सभी को अपनी क्षमता के आधार पर अपनी प्रस्थिति में परिवर्तन करने के समान अवसर सुलभ हैं। व्यक्ति की अर्जित प्रस्थिति में सुधार की भी उतनी ही सम्भावनाएँ हैं, जितनी की दुगुर्णो एवं व्यसनों के कारण पतन की। नगरों में अपनी 'अर्जित प्रस्थिति' को सुधारने के बहुसंख्यक लोग प्रयास करते हैं। कड़ी प्रतिस्पर्द्धा एवं चुनौतियों के बावजूद कई लोग अपने प्रयासों में सफल होते हैं।

2.2.6 ऐच्छिक समितियाँ एवं संघ

नगर की जनसंख्या बहुत ज्यादा होती है, सामाजिक विषमता भी अत्यधिक होती है किन्तु फिर भी ऐच्छिक साहचर्य के अवसर उत्पन्न होते हैं और लोग विविध विभेदों के बावजूद ऐच्छिक समितियों एवं संघों में संगठित हो सकते हैं। नगर की यह विशेषता होती है कि वहाँ व्यक्ति अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं एवं हितों की पूर्ति के लिए विविध औपचारिक संगठनों, समितियों, संघों में संगठित होते हैं। व्यक्ति की अकेली आवाज की तुलना में संगठन ज्यादा

प्रभावी सिद्ध होते हैं। ऐसे संगठन सामाजिक-सांस्कृतिक, राजनैतिक, आर्थिक-व्यापारिक इत्यादि सभी प्रकार के हो सकते हैं।

2.2.7 वैयक्तिकता

किंग्सले डेविस का मानना है कि विशाल जनसंख्या होने के बावजूद नगर में व्यक्ति की वैयक्तिकता या उसकी वैयक्तिक पहचान दबती नहीं है अपितु उसे उभरने का अवसर मिलता है। उनका कहना है कि नगरीय संसर्ग की ऐच्छिकता और औपचारिकता, अवसरों की बहुलता, सामाजिक गतिशीलता इत्यादि व्यक्ति को निर्णय लेने और नियोजन करने को बाध्य करते हैं। अपना मार्ग उसे स्वयं प्रशस्त करना होता है। प्रतिस्पर्द्धात्मक वातावरण में उसे दूसरों के साथ न केवल प्रतिभाग करना होता है अपितु अपनी एक अलग पहचान भी स्थापित करनी होती है।

2.2.8 स्थानीय पृथकता

नगरीय बसावट के प्रतिमान स्थानीय पृथकता की सही तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। नगरीय बसावट की अपनी विशेषता होती है। लोग कहाँ निवास करते हैं उसके आधार पर उनकी सामाजिक प्रास्थिति निर्धारित होती है। प्रत्येक बड़े नगर में आर्थिक वर्गों, व्यवसायों, धर्मों, संस्कृतियों के लोगों में स्थानिक पृथकता होती है। उच्च सामाजिक-आर्थिक वर्ग के लोग उप-नगरों या ऐसे स्थानों पर बसते हैं जो प्रदूषण मुक्त और नियोजित होते हैं। नगरीय पारिस्थितिकीशास्त्रियों ने स्थानिक वितरण का गहन अध्ययन करके नगर के सामाजिक संगठन पर प्रकाश डाला है। नगरीय पारिस्थितिकी में हम नगर के पारिस्थितिकीय प्रतिमानों का अध्ययन करते हैं। इकाई तीन में इस सन्दर्भ में सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया है।

पिट्रिम ए0 सोरोकिन और जिम्मरमैन, ए0 आर0 देसाई तथा मैकाइवर और पेज ने भी नगर की विशेषताओं का उल्लेख किया है, किन्तु इन्होंने ग्रामीण-नगरीय विभेद प्रस्तुत करते हुए अपने विचारों को रखा है। यहाँ हम मात्र सोरोकिन और जिम्मरमैन (प्रिंसपल्स ऑफ रुरल-अर्बन सोशियोलॉजी) द्वारा बताए विभेदों के आधार पर नगर की विशेषताओं को देखने का प्रयास करेंगे।

	आधार	ग्रामीण क्षेत्र	नगरीय क्षेत्र
1.	व्यवसाय	कृषक एवं उनके परिवारों की प्रधानता। गैर कृषि कार्यों में कम लोगों की सहभागिता।	बहुसंख्यक लोग निर्माणी उद्योगों, यान्त्रिक कार्य, व्यापार-उद्योग, व्यवसाय इत्यादि गैर कृषि कार्यों में संलग्न।
2.	पर्यावरण	मानवीय सामाजिक वातावरण पर प्रकृति का प्रभुत्व, लोग प्रकृति से सीधे जुडे हुए।	प्रकृति से पृथक्करण, प्राकृतिक पर्यावरण पर मानव निर्मित पर्यावरण का प्रभुत्त्व, प्रकृति की सहायता कम ली जाती

			है।
3.	समुदाय का आकार	लघु आकार, कृषि एवं समुदाय के आकार में नकारात्मक सम्बन्ध अर्थात् समुदाय का आकार छोटा होता है।	एक ही समय और एक ही देश में नगरीय समुदाय का आकार, अपेक्षाकृत ग्रामीण से बड़ा होता है। नगरीयता एवं समुदाय के आकार में सकारात्मक सह सम्बन्ध होता है।
4.	जनसंख्या का घनत्व	एक ही देश और एक ही अवधि में जनसंख्या-घनत्व ग्रामीण परिवेश में कम होता है। साधारणतया घनत्व और ग्रामीणता में नकारात्मक सह सम्बन्ध पाया जाता है।	जनसंख्या का घनत्व ज्यादा नगरीयता एवं घनत्व में सकारात्मक सहसम्बन्ध होता है।
5.	जनसंख्या की विजातीय और सजातीयता	प्रजातीय एवं मनोवैज्ञानिक सजातीयता ज्यादा।विजातीयता से नकारात्मक रूप से सम्बन्धित।	अत्यधिक विजातीयता। नगरीयता एवं विजातीयता में सकारात्मक सह-सम्बन्ध
6.	सामाजिक विभेदीकरण एवं स्तरीकरण	विभेदीकरण एवं स्तरीकरण अपेक्षाकृत कम।	विभेदीकरण एवं स्तरीकरण ज्यादातर विभेदीकरण तथा स्तरीकरण का नगरीयता से सकारात्मक सह-सम्बन्ध।
7.	सामाजिक गतिशीलता	जनसंख्या की गतिशीलता के क्षेत्रीय, व्यावसायिक एवं सामाजिक रूप तुलनात्मक रूप से कम तीव्र। साधारणतया प्रवजन गाँवों से नगरों की ओर।	तीव्र गतिशीलता, गतिशीलता और नगरीयता में सकारात्मक सहसम्बन्ध, आपदाओं के समय नगरों से गाँवों की ओर प्रवजन।
8.	अन्तर्क्रिया की व्यवस्था	प्रतिव्यक्ति सम्बन्धों की न्यूनता। संकीर्ण दायरे में अन्तर्क्रियात्मक व्यवस्था। प्राथमिक सम्पर्कों का आधिक्य। सम्बन्धों में स्थायित्व, तुलनात्मक सरलता और निष्कपटता। मानव से मानवीय सम्बन्ध होता है।	अधिक सम्बन्ध तथा सम्पर्क, सम्पर्क का विस्तृत क्षेत्र। द्वैतियक सम्बन्धों की प्रधानता अल्पकालीन आकस्मिक एवं स्वार्थी सम्बन्ध, सम्बन्धों में बनावट।

बोध प्रश्न- एक

1) नगरों में सामाजिक-सांस्कृतिक विषमता पायी जाती है। ऐसी कुछ विषमताओं का

उल्लेख कीजिए।

....

....

....

2) किंग्सले डेविस ने नगरीय सामाजिक संरचना की जो विशेषताएँ बतायी हैं उनमें से एक औपचारिक नियन्त्रण से आप क्या समझते हैं ?

....

....

....

....

3) ग्रामीण और नगरीय व्यवसाय की प्रकृति कैसी होती है?

....

....

....

....

2.3 नगरों का वर्गीकरण

सामान्यतः नगर विविध गतिविधियों से युक्त होते हैं। नगर की मुख्य गतिविधि उसके प्रकार के निर्धारण का आधार बनती है। नगर की अपनी संस्कृति एवं व्यक्तित्व होता है, जो उसकी जीवन पद्धति, शैली, नियोजन के द्वारा समझी जा सकती है।

धार्मिक नगर (बनारस, हरिद्वार, द्वारिका, पुरी, रामेश्वरम इत्यादि) पर्यटन नगर (शिमला, दार्जिलिंग, ऊटी, माउण्टआबू, जयपुर इत्यादि), औद्योगिक नगर (दुर्गापुर, भिलाई, राउरकेला, टाटानगर, इत्यादि) से आमतौर पर अधिकांश लोग परिचित हैं। विभाजन के और भी बहुत से आधार हैं। गिडीयन सोबर्ग (Gidden Sjoberg) पैट्रिक गेड्स, ममफोर्ड, बर्गेल, रोमर इत्यादि ने नगरों का विविध आधारों पर वर्गीकरण किया है। मोटे तौर पर विद्वानों द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण को हम निम्नांकित आधारों पर समझ सकते हैं :

(1) उद्विकासीय आधार,

(2) ऐतिहासिक आधार,

(3) प्रकार्यात्मक आधार,

(4) उत्पत्ति के आधार पर - नियोजित एवं स्वतः विकसित।

उद्विकासीय आधार पर जब नगरों का वर्गीकरण किया जाता है तो उसमें प्रारम्भिक नगर की शुरूआत और तत्पश्चात् क्रमिक विकास के दौर में अलग-अलग तरह के नगरों की उत्पत्ति को प्रस्तुत किया जाता है। उद्विकासीय आधार पर नगरों की उत्पत्ति, विकास और पतन के चक्र को मम्मफोर्ड (दि कल्चर ऑफ सिटीज) ने प्रस्तुत करते हुए नगरों को छह भागों में बांटा है-

(1) इओपोलिस (2) पोलिस (3) मेट्रोपोलिस (4) मेगापोलिस (5) टायरेनोपोलिस (6) नैक्रोपोलिस। ओसवाल्ड स्पेंगलर ('दि डिक्लाइन ऑफ वेस्ट') के विचारों से प्रभावित मम्मफोर्ड ने नगरों के विकास और ह्रास को प्रस्तुत करते हुए प्रारम्भिक तीन अवस्थाओं में नगरों के जन्म और विकास को दिखाया है फिर चौथी अवस्था मैगापोलिस से, क्रमशः सोदाहरण नगरों के पतन का दृष्टान्त प्रस्तुत किया है।

बर्गेल ('अर्बन सोशियोलॉजी) ने नगरों की प्रमुख गतिविधियों के आधार पर वर्गीकरण प्रस्तुत किया है जिसे नगरों का प्रकार्यात्मक वर्गीकरण कहा जाता है। साथ ही साथ उसने नगरों के अन्य आधार-ऐतिहासिक का भी उल्लेख किया है, जिसके अन्तर्गत विविध कालों में विकसित नगरों को रखा जाता है। मोटे तौर पर ऐतिहासिक आधार पर तीन भाग हैं-

(1) ऐतिहासिक नगर - जैसे प्रारम्भिक नगरीय संस्कृति के केन्द्र मोहनजोदाड़ो एवं हड़प्पा।

(2) मध्यकालीन नगर - जैसे दौलताबाद इत्यादि।

(3) आधुनिक नगर, जैसे चण्डीगढ़, नई दिल्ली, बंगलूरू, कोलकता, नोएडा इत्यादि।

वास्तव में नगरों के वर्गीकरण का प्रकार्यात्मक आधार ज्यादा प्रामाणिक एवं तर्कसंगत प्रतीत होता है। इसीलिए नगरों की मुख्य गतिविधियाँ नगरों के प्रकार का निर्धारण करती हैं और उनकी मुख्य गतिविधियों से ही मनुष्य समझ जाता है कि उस नगर की प्रकृति कैसी है। बर्गेक ने प्रकार्यात्मक आधार पर नगरों का सटीक एवं व्यापक वर्गीकरण प्रस्तुत किया है- (1) आर्थिक केन्द्र, (2) राजनैतिक केन्द्र, (3) सांस्कृतिक केन्द्र, (4) मनोरंजन केन्द्र, (5) रिहायशी केन्द्र और (6) प्रतीकात्मक केन्द्र ।

2.3.1 आर्थिक केन्द्र

इसमें भी पाँच विभाजन प्रस्तुत किए हैं-

(i) **प्राथमिक उत्थान केन्द्र** - सीधे प्रकृति से संसाधनों को उपलब्ध कराने वाले क्षेत्र इसके अन्तर्गत आते हैं। बर्गेल ने प्राथमिक उत्पादन केन्द्रों को उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सामग्री के अनुसार तीन भागों में रखकर स्पष्ट किया है- (अ) मत्स्योत्पादन सम्बन्धी नगर (ब) खदान नगर और (स) तेल नगर।

(ii) **औद्योगिक केन्द्र** - ऐसे नगर जो विविध उद्योग धन्धों को परिणाम स्वरूप बसे हों चाहे ये उद्योग लघुस्तरीय हो या वृहत्। भारत में ऐसे कई औद्योगिक नगर हैं जैसे दुर्गापुर, राउरकेला, भिलाई, जमशेदपुर, मुरादाबाद, कानपुर, फिरोजाबाद, इत्यादि।

(iii) **व्यापारिक केन्द्र** - ऐसे नगर जो व्यापारिक गतिविधियों से परिपूर्ण हों, इसके अन्तर्गत आते हैं. इनमें व्यापारिक गतिविधियाँ स्थानीय या राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संचालित होती हैं।

(iv) **परिवहन केन्द्र** - ऐसे नगर जो व्यापारिक परिवहन की सुविधाओं से युक्त हैं, इसके

अन्तर्गत आते हैं। इनमें बन्दरगाहों के समीप स्थित नगर स्पष्ट रखे जा सकते हैं जैसे कोचीन विशाखापत्तनम इत्यादि।

(v) **आर्थिक सेवा केन्द्र** - विविध प्रकार की आर्थिक सेवाओं को उपलब्ध कराने वाले नगर इसके अन्तर्गत आते हैं, जैसे शेयर और स्टॉक एक्सचेन्ज को संचालित करने वाले नगर। इसी तरह से बीमा सम्बन्धित या वितरण सम्बन्धित कार्यों को बड़े पैमाने पर करने वाले नगर इसके अन्तर्गत रखे जा सकते हैं।

2.3.2 राजनैतिक केन्द्र

इसके अन्तर्गत ऐसे नगर आते हैं जो राज्य की या राष्ट्र की राजधानी हों। इन नागरिक राजनैतिक केन्द्रों के साथ-साथ इसमें सेना के विविध प्रशिक्षण केन्द्रों या छावनियों से युक्त नगरों को भी रखा गया है। हमारे देश में कई शहरों का विकास सेना के कारण हुआ है। जैसे महोबा, अम्बाला, मेरठ, जबलपुर, रुड़की इत्यादि।

2.3.3 सांस्कृतिक केन्द्र

विविध, धार्मिक स्थानों वाले नगर इसके अन्तर्गत आते हैं। हमारे देश के कई शहर, धार्मिक महत्व के हैं। भारी संख्या में तीर्थ यात्रियों के आने-जाने के चलते इन तीर्थ स्थानों में शहरों का विकास हुआ है। इस नगरों की मुख्य गतिविधियाँ धार्मिक-सांस्कृतिक पक्षों से सम्बन्धित होती हैं। ऐसे शहरों में वाराणसी, प्रयाग, नासिक, हरिद्वार, ऋषिकेश, अयोध्या, मथुरा, अमृतसर, अजमेर इत्यादि हैं। प्राचीन सांस्कृतिक-धार्मिक महत्व के अवशेषों, स्मारकों, स्तूपों मन्दिरों वाले स्थान भी इस श्रेणी के अन्तर्गत रखे जाते हैं। जैसे कुशीनगर, सारनाथ (वाराणसी के अन्तर्गत ही है), सांची, अजन्ता, एलोरा, खजुराहो, नालन्दा, बोधगया,तक्षशिला इत्यादि।

2.3.4 मनोरंजन केन्द्र

कुछ नगरों का विकास उनकी स्वास्थ्यपूर्ण, जलवायु, प्राकृतिक सुन्दरता तथा शान्त एवं मनोरम वातावरण के कारण हुआ है। भारत में ऐसे अनेक नगर है, जिनका विकास अंग्रेजों के काल में हुआ, जैसे शिमला, मसूरी, नैनीताल, भवाली, माउण्ट आबू, उँटी, दार्जिलिंग, कालिमपौंग इत्यादि।

2.3.5 रिहायशी केन्द्र

ऐसे छोटे शहर या नगरीय क्षेत्र जो बड़े शहरों की सीमा के बाहर विकसित होते हैं, इसके अन्तर्गत आते हैं, जैसे फरीदाबाद, गुड़गाँव, मुम्बई के बाहरी इलाकों में विकसित नगर, इत्यादि।

2.3.6 प्रतीकात्मक केन्द्र

इस प्रकार के स्थान किसी खास धर्म, संस्कृति, विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते हैं।

ये केन्द्र सांस्कृतिक - धार्मिक केन्द्र से मिलते-जुलते ही हैं। इनका स्वतन्त्र वर्गीकरण प्रस्तुत करना कठिन है, क्योंकि ये अक्सर सांस्कृतिक केन्द्र के अन्तर्गत ही रख लिये जाते हैं।

2.3.7 विविधायुक्त नगर

बर्गेल ने इसके अन्तर्गत उन नगरों को रखा है जहाँ अलग-अलग प्रकार के कार्य होते हैं। उनको किसी खास कार्य विशेष के लिए नहीं जाना जाता है।

भारतीय सन्दर्भ में देखा जाये तो वास्तविकता यह है कि यहाँ अधिकांश शहरों में अब विविध प्रकार के कार्य होने लगे हैं। एक ही शहर व्यापारिक केन्द्र भी दिखता है तो वह राजनैतिक केन्द्र भी है, बन्दरगाह वाला शहर भी है। शहर के विकास में जो प्रारम्भिक महत्वपूर्ण कारण जिम्मेदार रहे, उनको देखते हुए अभी कुछ शहरों का वर्गीकरण सम्भव है। जैसे वाराणसी धार्मिक-सांस्कृतिक नगर है, भले ही वहाँ अब डीजल रेल इन्जन कारखाना खुल गया, विविध उद्योग-धन्धे स्थापित हो गए साथ ही व्यापारिक और वाणिज्यिक गतिविधियाँ बड़े पैमाने पर होने लगी हैं। अब भी वाराणसी में बाहर से प्रतिदिन लोग उसके धार्मिक-सांस्कृतिक महत्व के कारण ही आते-जाते हैं।

बर्गेल की तरह ही अन्य विद्वानों ने भी अपने-अपने वर्गीकरण प्रस्तुत किये हैं, जैसे कि एल0ए0 हरबर्ट और नाईल जिस्ट तथा एस0 रोमर का वर्गीकरण बर्गेल के वर्गीकरण के लगभग समान ही है।

आजकल नियोजित तरीके से नगरों को बसाया जाने लगा है। नियोजित तरीके से नगरों को बसाने से उसमें निवास करने वाले लोगों को बहुत सी सुविधाएँ प्राप्त होती हैं, जैसे स्थानीय निवासियों की आवश्यकताओं के अनुरूप सड़कें, पार्क, स्कूल, पीने के पानी की व्यवस्था, चिकित्सालय, मनोरंजन-स्थल, दुकाने, पार्किंग स्थल, बिजली की व्यवस्था एवं उपलब्धता एवं अन्य जन सुविधाएँ। सभी निर्माण व्यवस्थित, भू-उपयोग के अनुसार एवं पूर्वनिर्धारित योजनानुसार किये जाते हैं। इसीलिए कुछ विद्वानों ने नगरों का वर्गीकरण उत्पत्ति के आधार पर भी बताया है। इस आधार पर भी दो तरह के नगर हो सकते हैं- (1) स्वतः विकसित नगर (2) नियोजित नगर। प्रारम्भिक सभी नगर स्वतः विकसित नगर की श्रेणी में आते हैं जिसमें बिना किसी ठोस एवं लम्बी योजना के नगरों का विकास मनमानी तरीके से हुआ है। बाद में जब नियोजन की संकल्पना पर ध्यान दिया गया तो उन्हीं नगरों के नये क्षेत्र नियोजित तरीके से विकसित किये जाने लगे। चण्डीगढ़ एक नियोजित नगर है तो बाकि सभी बड़े नगरों के नये इलाके नियोजित तरीके से विकसित हो रहे हैं। नगर नियोजन की शर्तों एवं नियमों की अनदेखी करने पर बने-बनाये भवनों/दुकानों एंव अन्य निर्माण स्थलों की ध्वस्तीकरण की कार्यवाही सम्बन्धित सरकारी महकमें के द्वारा नियमानुसार की जाती है।

बोध प्रश्न- 2

(i) भारत के किन्ही दो धार्मिक एंव औद्योगिक नगरों का उल्लेख करें।

....

....

....

(ii) ममफोर्ड द्वारा बताये गये नगरों के छह वर्गीकरण को प्रस्तुत करें।

....

....

....

(iii) प्राथमिक उत्पादन केन्द्र वाले नगरों से आप क्या समझते हैं? तीन पंक्तियों में स्पष्ट करें।

....

....

....

2.4 प्रमुख नगरीय संस्थाएँ

इसके अन्तर्गत परिवार, विवाह, जाति, राजनैतिक संस्थाओं तथा आर्थिक संस्थाओं को विश्लेषित किया गया है। जब हम नगरीय संस्थाओं की बात करते हैं तब हम मुख्यतः नगर शासन और आर्थिक समस्याओं की चर्चा करते हैं प्रस्तुत शीर्षक के अन्तर्गत न केवल नगर शासन और आर्थिक नगरीय संस्थाओं को विश्लेषित किया जा रहा है, अपितु अन्य नगरीय सामाजिक संस्थाओं को भी विश्लेषित किया जा रहा है जैसे शैक्षिक संस्थाएँ, धार्मिक संस्थाएँ, परिवार, विवाह एवं जाति।

2.4.1 नगरीय राजनैतिक संस्थाएँ - नगर शासन

जब से नगरों का जन्म हुआ है वे शासन/सत्ता के केन्द्र बिन्दु रहे हैं। नगरीय समाज की जटिलता तथा विषमता के चलते ही नवीन शासन व्यवस्था की आवश्यकता उत्पन्न हुई। नगर राजनीतिक रूप से महत्वपूर्ण होते हैं। नगरीय जीवन के राजनीतिक पक्ष को समझने के लिए नगर शासन की विवेचना आवश्यक है।

ब्रिटिश राज के दौरान सन् 1882 में लार्ड रिपन के प्रस्ताव ने नगर परिषद् और नगरपालिकाओं के द्वारा भारत में स्थानीय लोकतन्त्र का परिचय कराया। उस काल के दौरान पहली नगरपालिका मद्रास (वर्तमान चेन्नई) में 1688 में गठित हुई इसके पश्चात् 1762 में बम्बई (वर्तमान मुम्बई) नगरपालिका और कलकत्ता (वर्तमान कोलकत्ता) में नगरपालिका गठित हुई। नगरपालिकाओं में चुने हुए अध्यक्ष 1870 में लार्ड मेयो के प्रस्ताव के समय से पदासीन होना प्रारम्भ हुए।

भारतीय संविधान के 73वें और 74वें संशोधन (1992) ने राज्य सरकारों के लिए यह अनिवार्य कर दिया कि वे स्थानीय शासन को संगठित करें, उनका चुनाव करायें और उन्हें समुचित वित्त उपलब्ध कराये। स्थानीय शासन राज्य सरकार का विषय है। संघ राज्य क्षेत्रों में यह केन्द्रीय संसद का विषय है।

नगरीय स्थानीय संस्थाओं (Local bodies) के प्रकार- इसके तीन वर्ग हैं -

(1) नगर पालिकाएँ - 3 लाख से अधिक आबादी वाले शहरों हेतु

(2) नगर परिषद् - कस्बों हेतु जो 3 लाख से कम आबादी के हैं।

(3) नगर पंचायत - उन क्षेत्रों के लिए (उपनगरीय) जो गाँव से नगर बनने की संक्रमण अवस्था में है।

नगरपालिका - 3 लाख से अधिक आबादी वाले शहरी क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं को प्रदान करने के लिए तथा स्थानीय शासन हेतु नगरपालिका का प्रावधान है। 10 लाख से अधिक आवादी हो जाने पर शहर में महापालिका/नगर निगम का प्रावधान है। नगरपालिका के मॉडल को 'कमिश्नर व्यवस्था' द्वारा भी जाना जाता है। नगर पालिका का अधिशासी अधिकारी ''नगर प्रशासक'' राज्य द्वारा निश्चित अवधि के लिए नियुक्त व्यक्ति होता है। यद्यपि अवधि बढ़ और घट सकती है। कार्यों को सम्पन्न करवाने के लिए वह अधिकारी ही जिम्मेदार होता है।

चुने हुए पार्षदों द्वारा अपने में अप्रत्यक्ष चुनाव करके 'मेयर' का चुनाव किया जाता है। मेयर नगरपालिका का सर्वोच्च पद होता है जिसके पास अधिशासी सत्ता नहीं होती है। नगर में विविध कार्यों हेतु पार्षदों की कमेटियाँ गठित की जाती हैं। विविध कमेटियों में ''स्टैंडिंग कमेटी'' को सबसे प्रतिष्ठित और महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि इस कमेटी के पास सभी महत्वपूर्ण प्रकार्य एवं अधिकार यथा अधिशासी, पर्यवेक्षणीय, वित्त और कार्मिक होते हैं।

महानगरों में मुख्य अधिशासी अधिकारी नगर आयुक्त होता है, जिसके पास सम्पूर्ण अधिशासी सत्ता होती है।

नगर परिषद् - तीन लाख से कम आबादी वाले छोटे नगरीय क्षेत्रों में स्थानीय शासन की व्यवस्था नगर परिषद् के नाम से जानी जाती है, जोकि राज्य अध्यादेश द्वारा शासित होते हैं। इसमें पार्षदों द्वारा अध्यक्ष का चुनाव अपने ही में किया जाता है। राज्य द्वारा नियुक्त अधिकारी अधिशासी/मुख्य अधिकारी होता है। पार्षदों की विविध कमेटियाँ होती हैं। कुछ राज्यों में परिषद का अध्यक्ष जनता द्वारा सीधे चुना जाता है। अध्यक्ष का कार्यकाल भी राज्यों में अलग-अलग है। (न्यूनतम एक से अधिकतम तीन वर्ष तक) और कहीं-कहीं यह परिषद के साथ समाप्त भी नहीं होता है (Not Coterminus)। विविध राज्यों में नगर परिषद का आकार भी अलग-अलग है। पालिका कानून के अनुसार पार्षदों का कार्यकाल तीन वर्ष (न्यूनतम) से पाँच वर्ष (अधिकतम) है।

नगर परिषद कमेटी की सत्ता और प्रकार्य नगरपालिकाओं के समान ही होते हैं। अध्यक्ष के पास पर्याप्त सत्ता और शक्ति होती है। कुछ राज्यों में नगर परिषद अधिशासी अधिकारी की नियुक्ति करती है, अन्यथा बहुधा राज्य सरकार द्वारा ही अधिशासी अधिकारी नियुक्त किया जाता है।

स्थानीय शासन के प्रकार्य-स्थानीय शासन के समस्त प्रकार्यों को भारतीय म्यूनिसीपल एक्ट के अनुसार दो भागों में रखा जा सकता है- (1) अवश्यकरणीय प्रकार्य (2) विवेकाधीन

प्रकार्य।

अवश्यकरणीय प्रकार्य - इसके अन्तर्गत वे सभी प्रकार्य सम्मिलित हैं जो नगरीय जीवन की बुनियादी आवश्यकताएँ हैं यथा शुद्ध और समुचित पेयजल आपूर्ति, सार्वजनिक सड़कों का निर्माण और उसकी देखभाल, सार्वजनिक सड़कों एवं स्थानों की साफ-सफाई, सीवर की व्यवस्था, सार्वजनिक सड़कों पर प्रकाश की व्यवस्था, सार्वजनिक चिकित्सालयों की देखभाल और सहयोग, जन्म-मरण का पंजीयन, प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना और देखभाल, सार्वजनिक मार्गों, पुलों एवं अन्य स्थानों से अतिक्रमण एवं अवैध निर्माण हटाना, मार्गों का नामकरण, शहरी क्षेत्र के मकानों का नम्बर अंकन, खतरनाक और आपत्तिजनक व्यापार का नियमन इत्यादि।

विवेकाधीन प्रकार्य - इसके अन्तर्गत सार्वजनिक पार्कों, उद्यानों, ग्रन्थालयों, संग्रहालयों, विश्राम स्थलों, कुष्ठ गृहों, अनाथालयों, महिला संरक्षण गृहों एवं सार्वजनिक भवनों का निर्माण एवं उसकी देखभाल, शहरी क्षेत्र का क्षेत्र विन्यास, सड़कों के किनारे तथा अन्य स्थानों पर वृक्षारोपण तथा उसकी देखभाल, निम्न एवं दुर्बल वर्गों के लिए आवास की व्यवस्था, सार्वजनिक अभिनन्दन का आयोजन, सार्वजनिक प्रदर्शनी, सार्वजनिक मनोरंजन, यातायात के साधनों का प्रावधान, अपने कर्मचारियों के लिए कल्याण कार्य एवं आवश्यकतानुसार सर्वेक्षण का आयोजन करना इत्यादि।

उल्लेखनीय है कि उपरोक्त प्रकार्यों में से कुछ ऐसे भी प्रकार्य हैं, जो राज्य की एजेन्सियों द्वारा भी सम्पादित किये जाते हैं। 73वें और 74 वे संवैधानिक संशोधन के पश्चात् एक तिहाई वार्ड महिला उम्मीदवारों के लिए सुरक्षित रखे जाते हैं। इन वार्डों से केवल महिला प्रत्याशी ही उम्मीदवार हो सकती हैं। महिला उम्मीदवारों के अतिरिक्त कुछ अन्य वार्ड सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित रखे जाते हैं। सम्बन्धित क्षेत्र के ऐसे सभी लोग मतदाता हो सकते हैं, जिनकी उम्र 18 वर्ष से अधिक हो। चुनाव प्रावधानों में एकरूपता नहीं है, अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग प्रावधान हैं। कहीं चुनाव का प्रबन्ध राज्य सरकार द्वारा होता है तो कहीं नगर आयुक्त (अधिशासी) अधिकारी) द्वारा। 1992 के अधिनियम की 12वीं अनुसूची में नगरीय स्थानीय इकाई के प्रकार्यों के साथ-साथ नियोजन, नियमन और विकास की शक्तियों का प्रावधान है। 1992 के अधिनियम में चुने हुए पार्षदों के साथ ही साथ नामित पार्षदों का भी प्रावधान है। सामान्यतः नामित पार्षद ऐसे लोगों को चुना जाता है, जिन्हें नगर शासन सम्बन्धित विशिष्ट ज्ञान एवं अनुभव होता है।

नगरपालिकाओं/निगमों / परिषदों की असन्तोषजनक कार्यप्रणालियों का दुष्परिणाम नगरीय जनता को भोगना पड़ता है। नगर की दुर्व्यवस्था या अच्छी छवि उसके शासन पर निर्भर करती है। वर्तमान में कई नगर नागरिकों को विविध सुविधाओं और सेवाओं को प्रदान करने में विफल सिद्ध हो रहे हैं। नगरों की टूटी-फूटी सड़कें, ट्रैफिक जाम की समस्या, सीवर की समस्या, पेयजल आपूर्ति की समस्या, अतिक्रमण, गन्दी बस्तियाँ, साफ-सफाई का अभाव, कूड़ा निस्तारण की समस्या, इत्यादि समस्याएँ नगर शासन की अयोग्यता एवं विफलता की कहानी कह रही हैं। नगर शासन की भी समस्याएँ एंव सीमाएँ हैं, तथापि कर्त्तव्य के प्रति उदासीनता, अकर्मठता एवं भ्रष्टाचार ज्यादा जिम्मेदार हैं। वर्तमान नगरीय समस्याओं का समाधान ही जरूरी

नहीं है अर्थात् भावी पीढ़ी के लिए भी इसे रहने योग्य बनाने की आवश्यकता है। नगरीय पर्यावरण प्रबन्धन के सम्मुख गम्भीर चुनौतियाँ हैं जिससे निपटने के लिए कामक कार्यक्रमों एवं नीतियों की आवश्यकता है।

नगरीय शासन और नगरीय पर्यावरण के सन्दर्भ में जब हम आधारभूत संरचना और सेवा प्रबन्धन को देखते हैं तो स्पष्ट होता है कि नगरीय स्थानीय निकायों के अतिरिक्त केन्द्रीय स्तर पर शहरी विकास मन्त्रालय और शहरी रोजगार और गरीबी उपशयन मंत्रालय राष्टीय स्तर पर नीतियों के निर्माण, कार्यक्रमों के प्रायोजन और समर्थन, विभिन्न केन्द्रीय मन्त्रालयों, राज्य सरकारों और नोडल प्राधिकारों के कार्यकलापों में समन्वय स्थापित करने और नगरीय विकास तथा आवास के सभी मुद्दों से सम्बन्धित कार्यक्रमों की निगरानी के लिए भारत सरकार की शीर्ष प्राधिकार है। (नगरीय समाजशास्त्र, पुस्तक-2, एम.एस.ओ.ई.-004, पृष्ठ 149, इग्नू, 2009)।

जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय पुनरूत्थान मिशन (जवाहर लाल नेहरू नेशनल अर्बन रिन्यूअल मिशन)- नगर शासन की स्थिति को सुधारने एवं सहयोगी व्यवस्था को प्रारम्भ करने की जरूरत सरकार एवं जिम्मेदार नागरिकों ने महसूस की है। राज्य एवं केन्द्र सरकार भी समस्या के प्रति जागरूक है। 3 दिसम्बर 2005 में जवाहर लाल नेहरू नेशनल अर्बन रिन्यूअल मिशन की घोषणा सरकार ने की है। इसमें नगरीय लोगों को सेवा प्रदान करने की दूसरी व्यवस्था के सृजन की बात कही गयी है। इसका मूल उद्देश्य नगरीय अधोसंरचना में वृद्धि करना है और नगरीय स्थिति या दशाओं को और सुधारना है। यह कार्यक्रम केन्द्रीय सरकार द्वारा आयोजित है, जिसमें प्रथम चरण में 60 भारतीय नगरों को चुना गया है। इन नगरों में इस मिशन के अन्तर्गत विविध सुधार कार्यक्रम किये जायेंगे।

अन्य नगरों और कस्बों के लिए भी ये योजनाएँ 3.12.2005 से जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय पुनरूत्थान मिशन (जे. एल. एन. यू. आर. एम.) के साथ शुरू की गई है - (1) संमेकिल आवास और मलिन बस्ती (स्लम) विकास (आई. एच. एस. डी. पी.), और (2) लघु तथा मध्यम कस्बों के लिए नगरीय आधारभूत संरचना विकास। पूर्व में चल रही वाल्मीकि अम्बेडकर आवास योयजना तथा राष्ट्रीय मलिन बस्ती विकास कार्यक्रम (एन.एस.डी.पी) को संमेकित आवास और मलिन बस्ती विकास (आई.एम.एस.डी.पी.) में सम्मिलित कर लिया गया है।

2.4.2 नगरीय आर्थिक संस्थाएँ

नगर आर्थिक गतिविधियों का केन्द्र होते हैं। वहाँ न केवल आर्थिक अवसरों की प्रचुरता होती है अपितु आर्थिक अनिश्चितता भी होती है। नगरीय जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा गैर कृषि कार्यों में संलग्न होता है। शहर में रोजगार के नये अवसरों की उपलब्धता रहती है। नगरों में विविध प्रकार की आधुनिकतम आर्थिक संस्थाएँ होती हैं। नकद अर्थव्यवस्था प्रभावी होती है। विविध समाज वैज्ञानिकों (यथा मैक्सवेबर इत्यादि) का कहना है कि नगर का प्रमुख लक्षण बाजार की मौजूदगी एवं उसमें विशिष्ट वर्ग के व्यवसायियों की उपस्थिति है। नगरीय आर्थिक ढाँचा विविध विशेषताओं को समाहित किये हुए होता है जैसे स्पष्ट श्रम विभाजन, विशेषीकरण,

व्यावसायिक विविधता तथा अत्यधिक आर्थिक विषमता इत्यादि। नगरों में विविध आर्थिक वर्ग होते हैं। वर्ग की सदस्यता अर्जित होती है। एन्थोनी गिडिंग्स ने नगरीय क्षेत्रों में तीन प्रकार के वर्गों का उल्लेख किया है - (1) उच्च वर्ग - पूँजीपति वर्ग, (2) मध्यम वर्ग - शिक्षित एवं तकनीकी योग्यता वालों का वर्ग, (3) निम्न वर्ग - कम कुशल व्यक्ति, मजदूर वर्ग। वास्तविकता यह है कि नगरीय क्षेत्रों में वर्ग विभाजन करना अत्यन्त जटिल कार्य है और अनेकानेक वर्ग नगरों में पाये जाते हैं। व्यावसायिक संस्तरण नगरों में होता है। आर्थिक क्षेत्र में कमी, प्रतिस्पर्द्धा बताती रहती है। व्यावसायिक गतिशीलता के कारण व्यक्ति हमेशा स्थान विशेष से जुड़ा नहीं रह पाता हैं। जटिल संगठनात्मक व्यवस्था का सदस्य होने के नाते सुरक्षात्मक दृष्टि से नगरीय लोग अपने हितों के रक्षार्थ संगठन या संघ की सदस्यता द्वारा संगठित रहते हैं। इन संगठनों/ सम्बन्धों के निर्माण के पीछे कई कारण होते हैं। पद के अनुसार,व्यवसाय के अनुसार तथा अन्य भी विविध आधारों पर भिन्न-भिन्न संगठनों का निर्माण होता है। जैसे श्रमिक संघ, चिकित्सक संघ, शिक्षक संघ, अभियन्ता संघ इत्यादि-इत्यादि। इन संगठनों की अपनी शक्ति होती है जो अक्सर प्रशासकीय व्यवस्था एवं आर्थिक संगठन को प्रभावित करते रहते हैं। नगरों में विविध आर्थिक हैसियत वाले लोगों की उपस्थिति अत्यधिक आर्थिक प्रभेदों को उत्पन्न करती है। इसीलिए नगरों में कई आर्थिक वर्ग पाये जाते हैं। नगरों में व्यवसायों की बहुलता होती है। व्यवसाय परिवार से जुड़ा न होकर व्यक्ति विशेष से जुड़ा होता है। नगरीय परिवार में परिवार के सदस्य एक समान व्यवसायों में ही संलग्न न होकर अलग-अलग प्रकार के व्यवसायों में कार्यरत होते हैं। नगरीय क्षेत्रों में जातिगत पेशों का महत्व नहीं होता है। जिस किसी व्यवसाय या पेशें में अधिक धन अर्जित करने की सम्भावना होती है,व्यक्ति उसी में कार्यरत होने को उत्सुक रहता है।

नगरों के आर्थिक महत्व से इन्कार नहीं किया जा सकता है। बेहतर भविष्य के लिए प्रतिवर्ष लाखों -करोड़ों लोग नगरों की ओर प्रवजन करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों से श्रमिक बल नगरों में आकार आर्थिक विकास में योगदान देते हैं, कुछ ऐसे भी होते हैं जो रोजगार में संलग्न नहीं हो पाते हैं। इनमें अधिकांशः वे होते हैं जो अकुशल होते हैं। यद्यपि शिक्षित बेरोजगारों की भी शहरी क्षेत्रों में पर्याप्त जनसंख्या निवास करती है। शहरी वाणिज्यिक क्षेत्र के रोजगार में लोगों की संलग्नता अपेक्षाकृत ज्यादा है। महिलाओं को भी नगरीय आर्थिक संस्थाओं ने रोजगार के अवसर प्रदान किए हैं।

व्यवसाय और वाणिज्य तन्त्र के पूरक के रूप में शहरों में विविध संस्थाएँ भी कार्यरत होती हैं। इसके साथ ही साथ विविध कार्यालयों की जटिल प्रशासकीय संरचनाएँ भी शहरों में होती हैं। पारिस्थितिकीय उपागम का प्रयोग करने वाले विद्वानों ने शहरों की इन्हीं जटिलताओं को देखते हुए अपने अध्ययन को इनके क्रियाकलापों, औपचारिक संगठनों, आवास व्यवस्था, बाजार, व्यवसाय केन्द्र इत्यादि के स्थानिक वितरण और नगरीय क्षेत्र के विस्तार की प्रक्रियाओं और स्वरूपों पर केन्द्रित किया है।

नगरीकरण के स्वरूप का आर्थिक पहलू कितना महत्वपूर्ण होता है यह इसी वाक्य से समझा जा सकता है कि नगरीकरण आर्थिक विकास के साथ-साथ चलता है और यह उसका स्वाभाविक तथा अनिवार्य परिणाम है।

बोध प्रश्न 3

1) नगरीय परिवार से सम्बन्धित उदीयमान प्रवृत्तियों की पाँच पंक्तियों में विवेचना करें।

....

....

....

2) नगरीय स्थानीय संस्थाएँ कौन-कौन सी है?

....

....

....

3) नगरीय आर्थिक ढाँचे की कौन-कौन सी मुख्य विशेषताएँ हैं?

....

....

....

2.4.3 नगरीय शैक्षणिक संस्थाएँ

नगरीय एवं औद्योगिक समाजों में शिक्षा का विशेष महत्व होता है। आज ज्ञान का विशेष महत्त्व है और इसमें दिन प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है।आज की अर्थव्यवस्था ज्ञान की अर्थव्यवस्था है। ज्ञान की अर्थव्यवस्था (नॉलेज इकॉनमी), ज्ञान का समाज (नॉलेज सोसायटी) इत्यादि शिक्षा के जटिल प्रकार्यों का ही परिणाम है। गेराल्ड आर0 लेस्ली (इन्ट्रोडक्टरी सोशियोलाजी, 1994) ने शिक्षा के तीन सामान्य प्रकार्यों का उल्लेख किया है - (1) यह संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित करती है। (2) यह लोगों को विरोधीकृत वयस्क भूमिकाओं के लिए प्रशिक्षित करती है। और (3) नवीन ज्ञान को विकसित करके यह सांस्कृतिक विरासत को परिवर्तित करती है। ये तीनों प्रकार्य नगरीय,औद्योगिक समाजों में जटिल होते हैं।

मेटा स्पेन्सर (फाउण्डेशन्स आफ माडर्न सोशियोलॉजी, 1979) का कहना है कि शिक्षा अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग प्रकार की चीजें करती हैं, लेकिन समाज के संकीर्णता की दृष्टि से शिक्षा के सात प्रकार्य विशेष महत्वपूर्ण हैं - (1) सभ्यता का संचरण, (2) बच्चों की देखभाल, (3) राष्ट्रीय भावना का निर्माण (4) सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना, (5) कार्य प्रशिक्षण, (6) अध्यापन मूल, और (7) प्रभावकारीकरण।

ग्रामीण समाज़ों की तुलना में नगरीय समाजों में न केवल शिक्षा का महत्त्व ज्यादा होता है अपितु उच्च से उच्च आधुंनिकतम शैक्षणिक संस्थाओं की बहुलता होती है। ग्रामीण समाजों में औपचारिक शिक्षा की जरूरत नहीं पड़ती थी क्योंकि वहाँ तथा पविार तथा उच्च प्राथमिक समूहों के द्वारा ही ज्ञान, विश्वास और कुशलता का संचरण युवाओं को किया जाता था। ऐसा

क्रम जटिल समाजों के लिए पर्याप्त नहीं हैं। बढ़ती प्रौद्योगिकी और श्रम के जटिल विभाजन के कारण आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक व्यवस्था जटिल और विशेषीकृत हो गयी है। इसलिए प्राथमिक समूहों को औपचारिक व्यवस्था की सहायता की जरूरत है। सरकार न केवल प्रयासरत है अपितु वचनबद्ध भी है। ग्रामीण क्षेत्रों में औपचारिक शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार किया जा रहा है। सर्वशिक्षा अभियान भी अपने तालों की ओर अग्रसर है। फिर भी तुलनात्मक दृष्टि डालने पर भारी अन्तर स्पष्ट परिलक्षित होने लगता है। नगरीय क्षेत्रों में शैक्षणिक संस्थाओं मं पूँजी निवेश निजी उद्यमियों/संस्थाओं के द्वारा बड़े पैमाने पर कियाय जाता है। सरकारी शैक्षणिक संस्थानों के साथ-साथ निजी शैक्षणिक संस्थान पर बाजार की माँग के अनुरूप युवाओं को शिक्षित प्रशिक्षित करते हैं।

न केवल परम्परागत व्यवसायों अपितु आधुनिकतम व्यवसायों के लिए प्रवासों को प्रशिक्षित किया जाता है। नये-नये अध्ययन क्षेत्रों की खोज हो रही है, जिनका शिक्षण-प्रशिक्षण नगरीय क्षेत्रों में उपलब्ध शैक्षणिक संस्थाओं में ही होता है। शिक्षा राज्य का विषय है। राज्य अपने उपलब्ध संसाधनों से इसके विकास के लिए प्रयासरत है। नगरीय क्षेत्रों में विविध सकारात्मक कारकों के चलते इसमें वृद्धि दृष्टिगोचर हो रही है। साथ ही निजी क्षेत्र की बढ़ती सहभागिता तथा वैश्वीकरण की चुनौतियों के चलते अन्तर्राष्ट्रीय /वैश्विक शिक्षा संस्थानों का जन्म हो रहा है।

मेटा स्पेसर (1979) का ठीक ही विचार है कि ''जनसंख्या विस्फोट '' के साथ ही ''शिक्षा विस्फोट'' भी हो रहा है। जिसका परिणाम है कि छात्रों की और अध्यापकों की संख्या कई गुना बढ़ गई है। नगरीय क्षेत्रों में हो रही वृद्धि तथा श्रम बाजार के बढ़ते दायरे के कारण इसमें और भी वृद्धि संभावित है।

2.4.4 नगरीय धार्मिक संस्थाएँ

नगरों में सांस्कृतिक बहुलवाद पाया जाता है। विविध धर्मो के लोग नगरों में वास करते हैं। स्वाभाविक है कि नगरों में विविध धार्मिक संस्थाएँ - विविध प्रकार के प्रकार्यो को करती हैं। नगरीय बसावट का सबसे महत्त्वपूर्ण एवं ध्यान देने योग्य पक्ष यह है कि अल्पसंख्यक जनसंख्या सामान्यतः अपने ही लोगों के बीच रहने का प्रयास करते हैं, ऐसा बहुसंख्यकों के साथ भी है। इसका एकमात्र कारण साम्प्रदायिक दंगों में सुरक्षित रहने की इच्छा है।प्रत्येक मोहल्लों तथा अनियोजित क्षेत्रों में यह विभाजन या वितरण स्पष्ट दिखता है। विविध मोहल्लों या क्षेत्रों के नाम से ही व्यक्ति यह बता देता है कि उसमें किस धर्म के ज्यादा लोग हैं। नगरीय क्षेत्रों में धार्मिक आस्था यथावत् है। धार्मिक क्रियाविधि (कर्मकाण्ड, अनुष्ठान इत्यादि) में कमी आयी है। वहीं धार्मिक दिखावा क्रमशः बढ़ता जा रहा है। नये-नये धार्मिक रीति-रिवाज नगरीय क्षेत्रों में प्रसारित हो रहे हैं। धार्मिक कट्टरता नगरी क्षेत्रों में कम हुई है। आवश्यकतानुसार संशोधन एवं सरलता आयी है।तार्किकता बढ़ी है धर्मनिरपेक्षता के मूल्य बढ़े हैं तथापि कभी-कभी धर्म के आधार पर द्वेष एवं तनाव तथा कभी-कभी सामुदायिक झगड़ा देखा जाता है। इस समस्या का वक्त उन लोगों को ज्यादा मिलता है जो ग्रामीण पृष्ठभूमि से ज्यादा जुड़े होते हैं या निम्न वर्ग के होते हैं।

नगरीय धार्मिक संस्थाएँ अनेकों धर्मार्थ एवं अन्य कार्यों को जैसे चिकित्सा, शिक्षा

इत्यादि को करती है। उनके पास अथाह धन होता है। हाल ही के वर्षों में धार्मिक गतिविधियों तथा धार्मिक स्थलों के निर्माण कार्यों में वृद्धि हुई है।

2.4.5 परिवार

परिवार समाज की आधारभूत एवं सार्वभौमिक संस्था है। अथर्ववेद के स्वापन और साम्मनस्य सूक्तों के कुछ उद्धरणों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि भारत में वैदिक काल से ही संयुक्त परिवार की व्यवस्था रही। कीथ और मैकडॉनेल सरीखे विदेशी विद्वानों ने भी संयुक्त परिवार की व्यवस्था को अति प्राचीन काल से ही माना है। स्पष्ट है कि परम्परागत रूप से भारतीय परिवारों की संरचना संयुक्त रही है। आज भी भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांशतः संयुक्त परिवार ही पाये जाते हैं। यद्यपि औद्योगीकरण, नगरीकरण और अन्य कई कारणों के मिश्रित प्रभाव के चलते ग्रामीण परिवारों की संरचना और प्रकार्यों में भी परिवर्तन आ रहा है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि संयुक्त परिवार की अवधारणा के प्रति समाजशास्त्रियों में मतैक्य नहीं है।

नगरीय परिवार अधिकांशतः एकाकी होते हैं यानी पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे। संयुक्त परिवार की प्रमुख विशेषता सत्तात्मक संरचना (मुखिया का सर्वोच्च स्थान और उसकी आज्ञा सबको मान्य), उम्र और सम्बन्धों के आधार पर प्रस्थिति का निर्धारण, वैवाहिक सम्बन्धों की तुलना में रक्त सम्बन्धों को वरीयता एवं दो या दो से अधिक पीढ़ियों के पारिवारिक सदस्यों का सह-निवास, सहभोजन, संयुक्त सम्पत्ति-स्वामित्व एवं नातेदारों के प्रति दायित्व इत्यादि को यदि हम नगरीय परिप्रेक्ष्य में देखें तो यह पाते हैं कि नगरीय परिवार का स्वरूप बदला हुआ है। नगरीय परिवार की न केवल संरचना ही बदली है अपितु उसके प्रकार्यों तथा अन्तः और अन्तर्पारिवारिक सम्बन्धों में भी व्यापक परिवर्तन आया है।

विविध आनुभाविक अध्ययनों से इस बात की पुष्टि होती है कि भारतीय संयुक्त परिवारों में परिवर्तन आया है। यहाँ हम कुछ नगरीय परिवारों सम्बन्धित आनुभाविक अध्ययनों का उल्लेख कर सकते हैं। वर्ष 1955-57 में आई0पी0 देसाई (1964) ने गुजरात के महुवा नगर के कुल 423 परिवारों के अपने महत्वपूर्ण अध्ययन में यह पाया कि 61.47% परिवार एकाकी और 38.53% परिवार संयुक्त थे। अपने ही एक अन्य लेख ("The Joint Family in India : An Analysis", Sociological Bulletin Vol.5, No. 2, Sept. 1956, pp. 144-156) में आई0 पी0 देसाई ने नगरीय परिवारों में परिवर्तन के विषय में तीन प्रकार के निष्कर्ष दिए (1) एकाकिता (nuclearity) बढ़ रही है और संयुक्तता घट रही है तथा आवासीय एवं संगठनात्मक (Compositional) प्रकार के परिवारों में पति-पत्नी और बच्चों के समूह की प्रधानता है, (2) व्यक्तिवाद की भावना नहीं पनप रही है क्योंकि जो परिवार आवासीय व संगठनात्मक रूप से एकाकी हैं, उनमें से 50% से कुछ कम परिवार उसी नगर में रहने वाले या नगर से बाहर रहने वाले परिवारों से सक्रिय रूप से संयुक्त हैं, (3) संयुक्तता के घेरे में नातेदारी सम्बन्धों की परिधि छोटी होती जा रही है। (राम आहूजा, 1995 : 34-35)।

एलिन डी0 रॉस (1961) ने वर्ष 1957 में बैंगलोर (वर्तमान, बंगलूरु) नगर के 157 हिन्दू उच्च व मध्यम वर्गीय परिवारों में परिवर्तन का अध्ययन किया था। उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि लगभग 60 प्रतिशत परिवार एकाकी थे। रॉस ने उत्तरदाताओं से उनके बचपन के परिवार की संरचना और साक्षात्कार के समय की परिवार संरचना को ज्ञात करने के पश्चात् यह निष्कर्ष दिया कि : (1) भारत में आज परिवारों की प्रवृत्ति परम्परागत संयुक्त परिवार से विखण्डन (break away) व एकाकी परिवार की ओर है, (2) लघु संयुक्त परिवार भारत में अब परिवारिक जीवन का एक विशिष्ट मानक हैं, (3) अधिकतर लोग अपने जीवन का कुछ समय एकाकी परिवार में बिताते हैं, (4) अपने जीवन-काल में अनेक प्रकार के परिवारों में रहना इतना अधिक हो गया है कि नगर निवासियों के सामान्य क्रम के रूप में परिवार के प्रकारों के एक चक्र (Cycle) की चर्चा की जा सकती है, (5) पिता और दादा की अपेक्षा वर्तमान पीढ़ी के लिए दूर के रिश्तेदार कम महत्वपूर्ण होते हैं। (6) नगर में रहने वाला पुत्र अपने सभी सम्बन्धियों से काफी दूर हो गया है (घर में कम जगह होने के कारण तथा व्यक्तिवादिता और एकान्त पसन्द प्रवृत्ति बढ़ने के कारण आगन्तुकों का बड़े संयुक्त परिवारों की अपेक्षा कम स्वागत होता है); अतः उन पर संयुक्त परिवार की तुलना में नियन्त्रण भी कम रहता है। (ए0डी0 रॉस :1961:49)।

दिल्ली क्षेत्र में बी0 आर0 घोष (1979) ने नगरीय प्रभाव का परिवारों के परिवर्तन के रूप में विश्लेषण किया है। उनके अनुसार पिछले 55 वर्षों में एकाकी परिवारों में शून्य से 60.9% की वृद्धि हुई है। तीस-चालीस वर्ष पुराने अध्ययनों के ये निष्कर्ष हैं, तो वर्तमान में परिवार के स्वरूप की कल्पना आसानी से की जा सकती है।

परिवारों पर हुए अध्ययनों की श्रृंखला अत्यन्त लम्बी है, और नगरीय परिवारों पर भी अनेकों अध्ययन हुए हैं। सभी अध्ययनों का निचोड़ यही है कि संयुक्त परिवारों का स्थान अब एकाकी परिवार लेते जा रहे हैं, स्त्रियों के भी कामकाजी होने तथा परिवार नियोजन के प्रति जागरूकता के कारण परिवारे का आकार भी छोटा होता जा रहा है, नातेदारी का दायरा भी सीमित हो रहा है। एक ही घर के अन्दर एक साथ रहने की प्रवृत्ति समाप्त हो रही है। शिक्षा, कैरियर और कार्योजन के चलते सदस्यों की गतिशीलता में वृद्धि हुई है। सदस्यों की महत्वकांक्षाओं में भी व्यापक परिवर्तन हुआ है। आत्मपूर्ति जीवन का लक्ष्य होने के कारण व्यक्तिवादिता में भारी वृद्धि हुई है। इतनी ही नहीं सम्पत्ति से जुटा हुआ परिवार का संयुक्त संगठन पारिवारिक द्वन्द्व और सम्पत्ति के बँटवारे के कारण टूटने लगा है। संचार एवं यातायात की सुविधाओं के फलस्वरूप भी परिवार की संरचना पर प्रभाव पड़ा है। परिवार की संरचना में परिवर्तन के कारण पूर्व में संयुक्त परिवार द्वारा किये जाने वाले अनेक कार्य नई विविध संस्थाओं के द्वारा किये जाने लगे हैं। हेमलता आचार्य (1974) संयुक्त परिवारों में परिवर्तन की प्रक्रिया का परीक्षण कर इस परिणाम पर पहुँचती हैं कि 'संरचना के परिवर्तन का अर्थ विघटन नहीं है, अपितु यह एक गतिशील संतुलन है,जो परिवार को विशिष्टता प्रदान करता है।'

उदीयमान प्रवृत्तियाँ (The Emerging Trends)

विविध अध्ययनों से इस बात की पुष्टि होती है कि नगरीय क्षेत्रों में परिवार की संस्था

में व्यापक संरचनात्मक, प्रकार्यात्मक एवं अन्तः एवं अन्तर पारिवारिक सम्बन्धों में परिवर्तन हुए हैं। इन परिवर्तनों को संक्षेप में हम निम्नवत् प्रस्तुत करते हुए नगरीय परिवार से सम्बन्धित कुछ उदीयमान प्रवृत्तियों को स्पष्ट कर सकते हैं-

1- आवास की समस्या, व्यावसायिक गतिशीलता, स्वतन्त्र रहने की प्रवृत्ति (व्यक्तिवादी भावना में वृद्धि) इत्यादि के कारण एकाकी परिवारों में वृद्धि हुई है। विवाह के पश्चात् अलग घर बसाने की प्रवृत्ति 'नव-स्थानीय आवास' अधिकाधिक बढ़े हैं।

2- परिवार के विविध परम्परागत प्रकार्यों यथा आर्थिक प्रकार्य, धार्मिक प्रकार्य, शैक्षणिक प्रकार्य, मनोरंजनात्मक, प्रकार्य एवं सामाजिक सुरक्षात्मक प्रकार्यों में कमी आयी है।

3- परिवार में स्त्रियों और बच्चों के महत्व में वृद्धि हुई है। नगरीय अर्थव्यवस्था सभी को व्यक्तिगत उपलब्धियों का आश्वासन देती है। इस व्यवस्था में स्त्रियों को भी उच्च शिक्षा प्राप्त करने एवं नौकरी करने की सुविधा उपलब्ध हो गयी है। पति-पत्नी के सम्बन्ध समानता के हुए हैं।

4. नगरीय परिवारों में अनुशासन और नियन्त्रण में कमी आयी है। साथ ही वैवाहिक और यौन सम्बन्धों में शिथिलता भी देखने को मिल रही है। जीवन साथी के चुनाव में बच्चे अपने माता-पिता के साथ संयुक्त रूप से विचार कर निर्णय लेते हैं। वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना में जाति के विविध निषेधों का पालन गम्भीरता से नहीं लिया जाता है।

5. परिवार की सत्तात्मक संरचना में परिवर्तन आया है, अब निर्णय परिवार के सभी सदस्यों द्वारा मिल-जुलकर किये जाने लगे हैं।

6. पति-पत्नी के सम्बन्ध मजबूत हुए हैं। दाम्पत्य सम्बन्धों पर अब सन्तान तथा भ्रातृक सम्बन्धों (fitial and fraternal relationship) की वरीयता कम हुई है।

7. सदस्यों की प्रस्थिति का निर्धारण उसकी अर्जित प्रस्थिति के अनुसार होने लगा है।

8. प्रथा, परम्पराओं के स्थान पर तार्किकता में वृद्धि हुई है। धार्मिक मनोवृत्ति में भी लचीलापन देखने को मिलता है।

9. नगरीय परिवार विविध सम्बन्धों के निर्वहन में औपचारिक होता जा रहा है। नातेदारी सम्बन्धों में भी व्यक्ति कुछ ही पीढ़ियों तक सम्बन्धों का निर्वहन करने लगा है।

   यद्यपि सिलविया वातुक (1973) ने उत्तर भारत के एक नगर रामापुर में 1974-76 में प्रवासियों पर किए अपने एक अध्ययन में यह पाया कि उनमें नातेदारी का महत्व यथावत रूप से विद्यमान था।

नगरीय बसावट प्रतिमान में स्वस्थान-अभिमुखता और स्वजाति-अभिमुखता पायी जाती है। मानव का स्वभाव है कि वह अपने नातेदारों के इर्दगिर्द ही विविध सुरक्षात्मक एवं अन्य कारणों से बसता है। नगर में प्रवासित व्यक्ति अपने को वहाँ पूर्ण स्थापित कर लेने के बाद अन्य पारिवारिक सदस्यों को आमन्त्रित करता है तथा उन्हें भी वहाँ बसाने में यथासम्भव मदद करता है। इस प्रकार एक व्यक्ति से दूसरा और फिर तीसरा-चौथा और अनेकों व्यक्ति/ नातेदार एक ही शहर में बसते जाते हैं। छोटे नगरों मे यह नातेदारी महत्वपूर्ण बनी रहती है किन्तु महानगरों

में इसमें ढिलाई पायी जाती है।

10. परिवार के अनेकानेक प्रकार्यों का ह्रास हो गया है। नगरीय व्यक्ति जन्म से ही विविध औपचारिक संगठनों के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करने लगता है। परिवार में उच्च रहन-सहन की न केवल आकांक्षा बढ़ी है अपितु नगरीय परिवार इसके लिए पूर्णतः प्रयास भी करता है।

11. नगरीय परिवारों में विविध कारणों से परिवार नियोजन के प्रति जागरूकता बढ़ी है, परिणामस्वरूप छोटे परिवारों में वृद्धि हुई है।

12. नगरीय परिवार की संरचना केवल एकाकी ही नहीं है, अपितु एकाकी परिवारों में वृद्धि के बावजूद अन्य प्रकार के परिवारों का अस्तित्व भी देखा जा सकता है। एकाकी परिवार का स्वरूप आवश्यकता के कारण या परिस्थितियों के कारण बदलता रहता है। एकाकी परिवार में पति-पत्नी दोनों के कार्यरत होने की स्थिति में छोटे बच्चों की देखभाल के लिए मूल ग्रामीण परिवार से माँ-बाप या अन्य सगे सम्बन्धी को शहर आमन्त्रित करने के कारण परिवार की संरचना प्रभावित होती है। कभी-कभी शैक्षणिक कार्यों से या रोजगार की खोज में या किसी अन्य कारण से (जैसे वृद्धावस्था में अकेले होने के कारण) परिवार का सगा सम्बन्धी (यहाँ तक की सास-ससुर भी) नगरीय एकाकी परिवार में आकर रहने लगता है। ऐसी स्थिति में भी परिवार की संरचना परिवर्तित हो जाती है।

जो कुछ भी हो, इसमें कोई संदेह नहीं कि नगरीय समाज में परिवार आज भी एक महत्वपूर्ण संस्था है।

2.4.6 नगरीय समाज में विवाह की संस्था

विवाह मानव सम्बन्धों का एक सबसे गहरा एवं जटिल बन्धन है। प्रत्येक समाज में विवाह अत्यन्त महत्वपूर्ण प्राथमिक सामाजिक संस्था हैं, जो समाज से मान्यता प्राप्त किसी प्रथा या नियम के अनुसार दो या अधिक स्त्री-पुरूषों के यौन सम्बन्धों को नियमित करती है।

अधिकांशतः विविध समाजों में विवाह के उद्देश्य अलग-अलग हैं, तथापि इसका एक सार्वभौमिक उद्देश्य घर बसाना तथा बच्चों के लालन-पालन के लिए एक स्थायी आधार प्रदान करना है।

भारतीय समाज में और विशेषकर हिन्दुओं में विवाह की संस्था संसार के समस्त सभ्य समाजों में अपना एक अलग स्थान रखती है। परम्परागत हिन्दू संकल्पना के अनुसार विवाह एक धार्मिक संस्कार है, जो एक व्यक्ति को विविध धार्मिक एवं सामाजिक दायित्वों को निभाने का अवसर प्रदान करता है। जन्म-जन्मान्तर का यह बन्धन केवल मृत्यु से ही भंग हो सकता है, किन्तु पति की मृत्यु के पश्चात् भी स्त्रियों को पुनर्विवाह की मनाही है। यद्यपि ऐसा कोई निषेध पुरुषों के साथ नहीं है। धर्मशास्त्रों में हिन्दू विवाह के तीन प्रमुख उद्देश्य बताए गए हैं। (1) धार्मिक कर्तव्यों का पालन (2) पुत्र प्राप्ति और (3) रति। इन उद्देश्यों के निर्धारण से तथा इनके अन्तर्गत किए गए प्रावधानों से ही यह स्पष्ट होता है, कि विवाह एक धार्मिक संस्कार है, जो धार्मिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए किया जाता है।

नगरीय परिवेश में विवाह की संस्था के स्वरूप को समझने के लिए हमें विवाह के परम्परागत स्वरूप को जानना आवश्यक है। विवाह के ये परम्परागत स्वरूप आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में अपने अस्तिंत्व में हैं।

(1) विविध अनुष्ठान एवं रस्म -

विवाह की सम्पूर्ण प्रक्रिया विविध अनुष्ठानों, कर्मकाण्डों एवं रस्मों से होती है। विवाह पूर्व, विवाह के दिन एवं विवाह के पश्चात् पण्डित द्वारा विविध प्रकार की पूजा, अनुष्ठान, एवं रस्मों की अदायगी करवायी जाती है। विविध निषेधों का भी पालन करना पड़ता है। पूजा-पाठ, वैवाहिक मन्त्रोचार, पाणिग्रहण, सप्तपदी, कन्यादान, इत्यादि में काफी समय लगता है। बारात आगमन पर द्वार-पूजा के तत्काल बाद ही वर-वधू को एक साथ वैवाहिक मंच पर बैठाने की प्रथा नहीं रही है। पति-पत्नी के रूप में दोनों एक-दूसरे के साथ अगल-बगल तभी बैठ सकते हैं, जब सम्पूर्ण वैवाहिक रस्म पूर्ण हो जाये। परम्परागत ग्रामीण समाजों में आज भी वैवाहिक अनुष्ठानों का पूर्ण कठोरता एवं धैर्य के साथ पालन किया जाता है।

विवाह के उपरोक्त परम्परागत स्वरूपों के सन्दर्भ में नगरीय विवाह की संस्था को समझना आसान है। नगरीय परिप्रेक्ष्य में विवाह की संस्था के कुछ महत्वपूर्ण स्वरूप इस प्रकार के हैं-

(1) विवाह की अनिवार्यता की धारणा में आंशिक परिवर्तन आया है। आज ऐसे युवक और युवतियाँ भी देखे जा सकते हैं (विशेषकर उच्च वर्गों के) जो विवाह के बन्धन में नहीं बँधना चाहते हैं। यद्यपि समाज में आज भी एक उम्र के बाद के अविवाहित लोगों को कुछ कमियों से युक्त या सन्देह की दृष्टि से देखा जाता है।

(2) विवाह की उम्र में वृद्धि हुई है। लम्बे शैक्षणिक काल, रोजगार अथवा कैरियर में स्थिरता के पश्चात् विवाह करने की सोच, अधिक समय तक स्वतन्त्र जीवन की चाह, बदलते मूल्यों इत्यादि के कारण नगरीय समाज में विवाह की उम्र बढ़ी है। वैवाहिक कानूनों के प्रति जागरूकता तथा नगरी क्षेत्रों में कानून के क्रियान्वयन की अधिक सम्भावना के परिणाम स्वरूप बाल विवाह में तीव्र कमी आयी है।

(3) जीवन साथी के चुनाव का क्षेत्र बढ़ा है। अन्तर्विवाह और बहिर्विवाह के निषेधों में ढीलापन आया है। उपजाति /जाति से न केवल बाहर विवाह हो रहे हैं, अपितु समाज द्वारा उसे स्वीकारा भी जा रहा है। सगोत्र, सप्रवर एवं अंपिण्ड विवाह के निषेधों में भी परिवर्तन आया है। परिवार द्वारा तय अन्तर्जातीय विवाह (विशेषकर उच्च वर्गों मे) भी देखे जा सकते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय, वैवाहिक सम्बन्ध न केवल हो रहे हैं, अपितु समाज द्वारा स्वीकार्य भी किये जा रहे हैं।

(4) जीवन साथी के चुनाव का अधिकार माता-पिता, अभिभावकों एवं परिवार द्वारा मान्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों के हाथ से होता हुआ अब विवाह के इच्छुक लड़के या लड़की के पास चला गया है। नगरीय क्षेत्र में यद्यपि आज भी बहुसंख्यक विवाह माता-पिता द्वारा ही तय किये जाते हैं तथापि लड़का या लड़की की राय लिये बिना वैवाहिक रिश्ते की

बात पक्की होना सम्भव नहीं रह गया है। कई मामलों में तो लड़का या लड़की अपने रिश्ते स्वयं ढूढते हैं और स्वयं ही तय करते हैं कि किससे विवाह करना है। इण्टरनेट एवं वैवाहिक एजेन्सियों का प्रयोग जीवन साथी की तलाश में होने लगा है। विवाह पूर्व एक दूसरे को देखना तथा साथ-साथ विचरण करना आम बात है।

(5) वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना में कुलीन विवाह या अनुलोम-प्रतिलोम का विचार नगण्य हो गया है। समाज में उपयुक्त वरों की कठिन उपलब्धता तथा दहेज की कुरीति के चलते परम्परागत प्रतिलोम विवाह ही अधिक बढ़े हैं। वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना में वर की वैयक्तिक योग्यता ही मुख्य विचारणीय बिन्दु रह गया है। यद्यपि आज भी ग्रामीण पृष्ठभूमि से जुड़े नगरों में रहने वाले परिवारों में परिवार की प्रतिष्ठा, पारिवारिक सम्पत्ति तथा परिवार के सदस्यों की नैतिकता पर भी विचार करके वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने पर जोर दिया जाता है।

(6) वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना के पूर्व जन्म पत्री का मिलान प्रचलन में है, यद्यपि विशेष परिस्थितियों में इसकी औपचारिकता भी सम्भावित रहती है। विवाह का मुहुर्त शास्त्रानुसार ही अधिकांशतः निर्धारित किया जाता है फिर भी कहीं-कहीं सुविधानुसार ऐसा किया जाने लगा है।

(1) **विवाह की अनिवार्यता -** परम्परागत रूप से विवाह करना अनिवार्य माना गया है।। ऐसा कहा जाता है कि विवाह एक सामाजिक दायित्व है इसीलिए यह अनिवार्य है। प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति के लिए विवाह करना जरूरी है। विवाह द्वारा व्यक्ति को प्रस्थिति प्राप्त होती है।

(2) **जीवन-साथी के चुनाव का क्षेत्र -** वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना में अन्तर्विवाह एवं बहिर्विवाह जातिप्रथा के कुछ निषेध हैं। जीवन-साथी का चुनाव दो प्रकार से सीमित हैं- पहला तो यह कि जिसका विवाह होना है, उसका विवाह अपनी ही जाति या उपजाति में होगा। इसे अन्तर्विवाह कहते हैं। दूसरा यह कि भावी जीवन साथी जो कि अपनी ही जाति या उपजाति का है, वह निकट का रिश्तेदार, रक्त सम्बन्धी नहीं होना चाहिए। (ऐसा प्रतिबन्ध मुसलमानों में नहीं हैं) और साथ ही साथ उसका गोत्र भी समान नहीं होना चाहिए। इस तरह सगोत्र, सपिण्ड एवं सप्रवर व्यक्ति से विवाह का निषेध बर्हिविवाह कहलाता है। आज भी परम्परागत ग्रामीण समाज में अन्तर्विवाह तथा बहिर्विवाह के प्रतिबन्ध प्रचलित है। इन प्रतिबन्धों में आंशिक ढील सपिण्ड एवं सप्रवर प्रावधानों में स्पष्ट दिखती है, तथापि सगोत्र विवाह आज भी स्वीकार्य नहीं है। सरकार ने कानूनों के द्वारा विवाह की संस्था में व्यापक परिवर्तन लाने का प्रयास किया है फिर भी आज भी वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना में परम्परागत निषेधों का प्रभाव देखा जा सकता है।

(3) **बाल विवाह या कम उम्र के विवाह का प्रावधान-** परम्परागत भारतीय समाज में बाल विवाह का प्रचलन रहा है। शारीरिक एवं मानसिक परिपक्वता से पहले विवाह करने का प्रचलन विविध धार्मिक निर्देशों एवं रूढ़ियों के कारण रहा है। सरकार ने

बाल विवाह निषेध अधिनियम, (1961) के द्वारा 21 वर्ष से कम उम्र के बालक और 18 वर्ष से कम उम्र की बालिका के विवाह को बाल-विवाह की श्रेणी में रखकर उसे अपराध घोषित कर रखा है। ऐसे विवाहों को मान्यता नहीं देते हुए दण्ड का प्रावधान रखा गया है; तथापि आज भी देश के विविध राज्यों में और विशेषकर विशिष्ट दिवसों पर (जैसे आखा तीज/अक्षय तृतीया इत्यादि) ऐसे विवाहों को होते देखा जा सकता है। ग्रामीण इलाकों में कम उम्र के बच्चों का विवाह हाल ही के वर्षों में घटा है। जो विवाह होते भी हैं, उनमें विवाह के तुरन्त पश्चात् कन्या पति के घर नहीं जाती है। विवाह के कुछ वर्षों के उपरान्त 'गौने' का प्रावधान होता है, जिसमें लड़की अपने ससुराल जाती है। गौने की प्रथा सभी जातियों में अलग-अलग तरह की है।

(4) **जीवन साथी के चुनाव का अधिकार -** सामान्यतः विवाह सम्बन्ध तय करने का अधिकार माता-पिता, अभिभावक या परिवार द्वारा मान्य किसी अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति को है (पहले यह स्थान गुरूओं को था)। परिवार के ये बड़े-बुजुर्ग, आपस में बातचीत कर रिश्ता तय करते हैं तत्पश्चात् अपने निर्णय से बालक या बालिका को अवगत करा देते हैं। इन लोगों द्वारा चयनित जीवन-साथी को लड़का या लड़की सहर्ष स्वीकार करते हैं। वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना के पूर्व लड़का या लड़की से राय नहीं ली जाती है।

(5) **जीवन-साथी के चुनाव में वरीयता-**परम्परागत रूप से कुलीन विवाह का प्रचलन अच्छा माना गया है। शास्त्रों में उल्लेख मिलता है कि कन्या का विवाह अपने से उच्च कुल में होना चाहिए। इसीलिए वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता था कि विवाह कुलीन या अनुलोम प्रकार का हो, जिसमें कन्या का विवाह अपने से उच्च कुल में करने का प्रावधान था। यदि स्थिति इसके विपरीत हो यानि कन्या का जिससे विवाह होने वाला है, वह उससे निम्न कुल का है तो ऐसे विवाह को प्रतिलोम विवाह कहा जाता था। ऐसे प्रतिलोम विवाह का स्थान निम्न माना जाता था तथा परिवार ऐसे विवाहों को करने से यथा सम्भव बचते रहे।

(6) **वैवाहिक सम्बन्ध स्थापना में ग्रह-नक्षत्रों की अनुकूलता का विचार-**वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना में 'कुण्डली'या जन्मपत्री मिलान का विचार भी अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। वास्तविकता यह है कि यह एक पूर्णशर्त है, कि दोनों पक्षों (वर एवं बन्धू) के ग्रह-नक्षत्र आपस में शुभ एवं अनुकूल होने चाहिए। इसीलिए विवाह तय करते समय जन्मपत्री का मिलान किया जाता है और जब दोनों पक्ष पूर्णतः आश्वस्त हो लेते हैं कि निर्धारित मात्रा में गुण मिल रहे हैं तभी रिश्ते की बात आगे बढ़ती हैं। तथापि कई विवाह सुविधानुसार तिथियों एवं समयों पर भी होते देखे जा सकते हैं। पोर्ट ब्लेयर में तो अधिकांशतः विवाह रविवार को या छुट्टियों के दिन होते हैं। यद्यपि अशुभ कालों/अनुपयुक्त कालों (यथा श्राद्ध पक्ष या मलमास/खरमास/अधिमास) में सामान्यतः हिन्दू परिवार विवाह नहीं करते हैं। ऐसा ही नगरीय अन्य धर्मावलम्बी भी अपने धर्म के अनुसार अशुभ/अनुपयुक्त कालों में विवाह से परहेज करते हैं।

(7) वैवाहिक अनुष्ठानों, कर्मकाण्डों, रीति-रिवाजों में व्यापक परिवर्तन आया है। विवाह के सम्पूर्ण समारोह को भव्यता प्रदान करना धार्मिक कृत्यों के विधिवत सम्पादन से ज्यादा वरीयता प्रदान की जाने लगी है। विविध बौद्धिक मन्त्रोचारों एवं रस्मों को यथाशीघ्र संक्षिप्त रूप से सम्पादित करने की कोशिश आम बात है। बिवाह की रस्म के पूर्व कई निषेधों का प्रचलन समाप्त प्राय है। बारात लगते ही वर-वधू के जयमाल का कार्यक्रम सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो चला है। नगरीय क्षेत्रों में विविध संस्कृतियों का प्रभाव विवाह की संस्था पर परस्पर दिखाई पड़ता है। जो कुछ भी जिस किसी समुदाय धर्म एवं वर्ग में ज्यादा भव्य या ग्लैमरस या दिखावे से पूर्ण है, उसे अपने वैवाहिक कार्यक्रम का अंग बनाने की होड़ मची हुई है। रोज नये-नये तरीके खोजें जा रहे हैं ताकि विवाह समारोह को एक अनूठापन प्राप्त हो।

विवाह पश्चात् नगर से बाहर किसी सुरम्य-सुदूर स्थान पर 'हनीमून' हेतु जाना प्रतिष्ठा से जुड़ गया है। सामान्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में विवाह पश्चात् वर-वधू वर्षो तक साथ-साथ घूम नहीं पाते हैं। वे सबके सामने आपस में बातचीत तक नहीं कर पाते थे, और यौन-सम्पर्क भी कई दिनों के बाद हो पाता था। उनके पास 'प्राइवेसी' का वर्षो तक घोर अभाव रहता था। ऐसा कुछ भी नगरीय समाज में नहीं है। विवाह के तुरन्त बाद पति-पत्नी का हनीमून हेतु जाना, साथ-साथ घूमना-फिरना, स्वतन्त्र बेड रूम (निश्चित रूप से मध्यम एवं उच्च वर्ग में आमतौर पर तथा निम्न वर्ग के कुछ सूक्ष्म परिवारों के जिनके पास आवासीय पर्याप्त सुविधा है) में यौन-संतुष्टि करना, इत्यादि सभी कुछ सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

नगरीय विवाह की संस्था के उपरोक्त प्रगतिशील, परिवर्तित एवं सकारात्मक पक्षों के अतिरिक्त उसका एक दूसरा पक्ष भी हैं, जो क्रमशः बढ़ता जा रहा है और वह चिन्तनीय भी हैं। यह है वैवाहिक सामंजस्य की समस्या, वैवाहिक सम्बन्धों की शिथिलता और दहेज की बढ़ती कुप्रवृत्ति। इनके कारण बच्चों सहित पूरा परिवार प्रभावित होता है।

अधिक उम्र में विवाह, वैयक्तिक महत्वाकांक्षा, वैचारिक मतभेद, परम्परागत प्रतिबन्धों की कमी, यथाशीघ्र मुफ्त शानोशौकत एवं धन संचय की चाह, यौन शुचिता को तोड़ने के अवसरों की उपलब्धता इत्यादि कारकों के चलते न केवल वैवाहिक सामंजस्य की समस्या पैदा हुई है अपितु वैवाहिक सम्बन्धों में शिथिलता आयी है और विवाह विच्छेद जैसी समस्या में वृद्धि हुई है। वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना में परिवार के वयोवृद्धों की भूमिका सीमित हो जाने से नवदम्पति के विवादों को सुलझाने में भी पारिवारिक सदस्यों द्वारा पहल नहीं की जाती है। सम्बन्ध विच्छेद हेतु अड़ा पक्ष विविध कानूनों का सहयोग लेने हेतु स्वतन्त्र है। अन्तर्जातीय विवाह, अन्तर्धार्मिक विवाह, प्रेम विवाह, बेमेल विवाह, विलम्ब विवाह, विधवा पुनर्विवाह, तलाक पश्चात् पुनः विवाह (विशेषकर महिलाओं द्वारा), बगैर विवाह साथ-साथ पति-पत्नी के रूप में रहने की प्रवृत्ति 'लिविंग रिलेशनशिप', रोमाँस इत्यादि नगरीय विवाह की संस्था की आधुनिक विशेषताएं हैं।

2.4.7 नगरीय समाज में जाति

भारतीय समाज जाति व्यवस्था के चलते विश्व में अपना अद्वितीय स्थान रखता है। जाति व्यवस्था जन्म के आधार पर व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारण करती है और विविध विशेषाधिकारों और निर्योग्यताओं से जाति विशेष के व्यक्तियों को युक्त करती है। इसके साथ ही साथ जाति विविध निषेधों और व्यावहारिक मापदण्डों को भी तय करती है। भारत में

जाति व्यवस्था प्रमुखतः हिन्दुओं में पायी जाती है किन्तु पूर्ण समानता का दावा करने वाले धर्मों में भी यह किसी न किसी स्वरूप में विद्यमान हैं। जाति के अस्तित्व को लेकर विद्वानों में एक मत्य नहीं है और अक्सर जाति (जन्म पर आधारित) और वर्ण (गुण और कर्म पर आधारित) को एक मानने की भूल भी होती रहती है। धूरिये का कहना था कि भारत वर्ष के प्रत्येक भाषायी क्षेत्र में लगभग 2000 जातियाँ या उपजातियाँ विद्यमान हैं। के0सिंह ने 'पीपुल्स आफ इण्डिया प्रोजेक्ट' में जातियों का व्यापक उल्लेख किया है।

नगरीय जाति व्यवस्था को समझने से पूर्व जाति की विशेषताओं से परिचित होना आवश्यक है। धूरिये, श्रीनिवास, गोरे, राव, केतकर, ब्लन्ट, मजूमदार तथा मदन, दत्ता, विक्टर डी-सूजा, आन्द्रे बेते, योगेन्द्र सिंह इत्यादि विविध विद्वानों ने जाति प्रथा का अध्ययन किया है। जाति की स्पष्ट जानकारी धूरिये द्वारा प्रस्तुत जाति की विशेषताओं से होती है। उनके अनुसार जाति की छह विशेषताएं हैं - (1) समाज का खण्डात्मक विभाजन (2) संस्तरण (3) खान-पान एवं सामाजिक सहवास पर प्रतिबन्ध (4) नागरिक एवं धार्मिक निर्योग्यताएँ एवं विशेषाधिकार (5) विवाह सम्बन्धी प्रतिबन्ध और (6) पेशों के अप्रतिबन्धित चुनाव का अभाव।

जाति व्यवस्था की उपरोक्त विशेषताएं आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में देखी जा सकती हैं, इसीलिए जाति व्यवस्था को मूल रूप से ग्रामीण समाज की विशेषता के रूप में माना जाता है। नगरों में जाति व्यवस्था के मूल स्वरूप में भारी परिवर्तन आया है किन्तु आज भी जाति परिवर्तित स्वरूप के साथ महत्त्वपूर्ण बनी हुई है। नगरों के विविध कारकों एवं परिस्थितियों ने इसके बहुत से निषेधों को समाप्त कर दिया है, या शिथिल कर दिया है, जैसे खान-पान एवं सामाजिक सहवास के निषेध, नागरिक एवं धार्मिक निर्योग्यताएं एवं विशेषाधिकार, संस्तरणात्मक आधार, पेशों के अप्रतिबन्धित चुनाव का अभाव इत्यादि। मूलतः व्यवसायनिष्ठ जाति व्यवस्था के आर्थिक पक्ष में व्यापक बदलाव आया है, आज शहरी क्षेत्रों में व्यवसाय किसी जाति विशेष के लिए ही आरक्षित नहीं रह गये हैं। व्यक्ति को जिस पेशे में कुशलता प्राप्त है और जिसमें वह लाभ की संभावना देखता है, वह उसे तत्काल अपना लेता है। उदाहरण के लिए नगरों में अधिकांशतः चप्पल-जूते के बड़े कारोबारी, उत्पादक, वितरक उच्च जातियों के लोग ही होते हैं। परम्परागत रूप से इस पेशे से जुड़े जाति विशेष के लोग पटरियों पर जूता-चप्पल मरम्मत करते या पालिश करते देखे जा सकते हैं। इसी तरह निम्न जातियों के लोग बड़े प्रशासकीय पदों पर अध्यापकों, चिकित्सकों, वकीलों इत्यादि के रूप में देखे जा सकते हैं। नगरीय व्यवस्था सभी को व्यक्तिगत उपलब्धियों का आश्वासन देती हैं एवं अवसर भी प्रदान करती है।

वैवाहिक प्रतिबन्धों की शिथिलता के चलते अन्तर्जातीय दूरी कम हुई है। जाति प्रथा सम्बन्धी अधिनियमों ने व्यावहारिक भेदभाव को मिटाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। नगरीय परिस्थितियाँ ही ऐसी हैं, जिनके चलते जाति के सभी निषेधों का पालन करना स्वतः ही सम्भव नहीं रह गया है।

2.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने नगर की विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त की। विविध विद्वानों ने नगर की जो विशेषताएँ बतायी हैं उनके आधार पर आपने नगर को समझने की कोशिश की। इसके साथ ही साथ आपने शहर के विविध प्रकारों को भी समझा जो उसकी मुख्य गतिविधि तथा मूल प्रवृत्ति पर आधारित हैं। भारतीय सन्दर्भ में आपने शहरी संस्थाओं यथा नगर शासन,आर्थिक संस्थाएँ,शैक्षणिक संस्थाएँ, धार्मिक संस्थाएँ, विवाह, परिवार,जाति की भी जानकारी प्राप्त की और यह देखने का प्रयास किया कि इनकी उदीयमान प्रवृत्तियाँ क्या हैं। शहरी शासन के रूप में आपने नगरपालिकाओं के विविध प्रकार्यों को भी समझने का प्रयास किया। आपने आर्थिक संस्थाओं को समझने की कोशिश करते हुए यह जानकारी प्राप्त की कि नगरीकरण आर्थिक विकास के साथ-साथ चलता है। इसके साथ ही साथ अन्य सामाजिक संस्थाओं को परिवर्तित स्वरूप से भी आप परिचित हुए।

2.6 शब्दावली

एकाकी परिवार — पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चों से बना परिवार

संयुक्त परिवार — सामान्यतः दो या अधिक पीढ़ियों के पारिवारिक सदस्यों से बना परिवार जिसमें सम्पत्ति संयुक्त होती है तथा एक रसोई में पका भोजन तथा अन्य विशेषताएँ जुड़ी होती हैं।

जनसंख्या का घनत्व — इसका तात्पर्य प्रतिवर्ग किलोमीटर में रहने वाले लोगों की सख्या से है।

2.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

सब्बरवाल, एस0 (संपा0), 1978, प्रोसेस एण्ड इंस्टीट्यूसन्स इन अर्बन इण्डिया : सोशियोलॉजिकल स्टडीज़, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

गोरे, एम0 एस0 1970, इमीग्रेन्टस एण्ड नेबरहुड्स : टू आस्पेक्टस ऑफ लाइफ इन मेट्रोपोलिटन सिटी, बाम्बे टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज : बम्बई।

रामचन्द्र, आर0 1989 अर्बनाइजेशन एण्ड अर्बन सिस्टम्स् इन इण्डिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली।

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

(i) विविध भाषाएं/बोलियाँ, अलग-अलग प्रकार का पहनावा, खानपान, रीति रिवाज एवं विविध पर्व एवं त्योहार, रहन-सहन का अलग ढंग तथा प्रजातीय विविधता इत्यादि।

(ii) औपचारिक नियन्त्रण से तात्पर्य है कि व्यक्ति को नियन्त्रण के औपचारिक साधनों जैसे

कानून, पुलिस के भय एवं दण्ड से नियन्त्रित करना।

(iii) ग्रामीण व्यवसाय मूलतः कृषि या उससे सम्बन्धित होते हैं जबकि नगरों में अधिकांशतः गैर कृषि कार्यों की प्रधानता होती है। बहुसंख्यक लोग निर्माणी ठद्योगों, यान्त्रिक कार्यों, व्यापार-उद्योग, व्यवसाय इत्यादि में संलग्न होते हैं।

बोध प्रश्न -2

(i) वाराणसी और हरिद्वार दो धार्मिक नगर हैं, जबकि बोकारो और जमशेदपुर औद्योगिक नगर हैं।

(ii) ममफोर्ड ने नगरों के निम्नांकित छह प्रकार बताये हैं- इओपोलिस, पोलिस, मेट्रोपोलिस, मेगापोलिस, टायरेनोपोलिस और नैक्रोपोलिस।

(iii) इससे तात्पर्य ऐसे नगरों से हैं जो सीधे प्रकृति से संसाधनों को उपलब्ध कराने के कारण नगर बने हैं जैसे मत्स्योत्पादन वाले नगर, खदान नगर और तेल नगर।

बोध प्रश्न -3

(i) नगरीय परिवार सामान्यतः एकाकी परिवार हैं। परिवारों के परम्परागत प्रकार्यों के सन्दर्भ में देखा जाये तो नगरीय परिवारों में इन प्रकार्यों में कमी आयी है। परिवार में महिलाओं की प्रस्थिति उच्च हुई है, और बच्चों के महत्व में भी वृद्धि हुई है। पारिवारिक अन्तः और अन्तर्सबन्धों में भी परिवर्तन आया है। पति-पत्नी के सम्बन्ध मजबूत हुए हैं।

(ii) नगरीय स्थानीय संस्थाएँ प्रमुखतः तीन हैं नगर पालिकाएँ, नगर परिषद एवं नगर पंचायत। कहीं-कहीं कैण्टोमेन्ट बोर्ड/छावनी परिषद तथा नोटिफाइड एरिया कमेटी भी हैं।

(iii) नगरीय आर्थिक ढाँचे की मुख्य विशेषता स्पष्ट श्रम विभाजन, विशेषीकरण, व्यावसायिक विविधता तथा अत्यधिक आर्थिक विषमता है।

इकाई -3 : नगरीय समुदाय एवं स्थानीय आयाम-पार्क, बर्गेस एवं मैकेन्जी के सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 राबर्ट ई0 पार्क का सिद्धान्त

3.3 अर्नेस्ट डब्ल्यू0 बर्गेस का सिद्धान्त

3.4 आर0 डी0 मैकेन्जी का सिद्धान्त

3.5 सारांश

3.6 बोध प्रश्न

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- नगरीय समुदाय एवं स्थानीय आयामों की विवेचना कर सकेंगे।
- नगरीय प्रतिरूपों से मानव पारिस्थितिकीय सम्बन्धित राबर्ट ई0 पार्क के सिद्धान्त की व्याख्या कर सकेंगे।
- अर्नेस्ट डब्ल्यू0 बर्गेस के केन्द्रित जोन ऑफ सिद्धान्त की विवेचना कर सकेंगे।
- आर0 डी0 मैकेन्जी के मानव पारिस्थितिकीय सम्बन्धित विचारों की चर्चा कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

नगरीय समुदाय और स्थानीय आयामों का अध्ययन विभिन्न उपागमों के द्वारा किया जाता है। जैसे विकासवादी, द्विविभाजन और पारिस्थितिकीय उपागम। परिस्थितिकीय उपागम की विवेचना तीन महत्वपूर्ण विद्वानों ने की है- राबर्ट ई0 पार्क अर्नेस्ट डब्ल्यू0 बर्गेस और आर0 डी0 मैकेन्जी। इस अध्ययन में परिवर्तन के सन्तुलन और विकासवादी प्रवृत्ति पर जोर दिया गया है। परिस्थितिकीय उपागम का विकास 1950 के दशक में शिकागो विश्वविद्यालय में रॉबर्ट ईजरा पार्क और उसके साथियों द्वारा किया गया। पार्क ने यह तर्क दिया कि नगरीय स्थान में सामाजिक जीवन का अध्ययन नगरीय स्थान का सृजन है। उसने अपने अध्ययन को नगरीय स्थान में सामाजिक जीवन पर केन्द्रित किया और नगरीय मानव बसावट तथा उसके स्थानिक सम्बन्धों को व्यवसाय, आवास, विविध संस्थानों, परिवहन एवं संचार सुविधाओं के परिप्रेक्ष्य में देखा। उसके उपागम का विकास ई0 डब्ल्यू0 बर्गेस तथा आर0 डी0 मैकेन्जी इत्यादि ने किया।

3.2 राबर्ट ई0 पार्क का सिद्धान्त : नगरीय प्रतिरूपों में मानव पारिस्थितिकी

पार्क ने नगरीय प्रतिरूपों से मानव पारिस्थितिकी को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। मानव पारिस्थितिकी का सम्बन्ध मानव आबादी द्वारा सामूहिक रूप से अपने पर्यावरण से अनुकूलन करने के तरीके से होता है। पार्क का यह उपागम पारिस्थितिकी उपागम या शिकागो स्कूल के नाम से भी जाना जाता है। 1920 से 1950 के दशक में नगरीय समाजशास्त्र में इस उपागम का विशेष स्थान एवं महत्व रहा है। पार्क की पारिस्थितिकीय मान्यताएँ अगस्त कॉम्ट, हरबर्ट स्पेन्सर, इमाइल दुर्खीम इत्यादि से प्रभावित देखी जा सकती है। पार्क की समाज और समुदाय की अवधारणा पर कॉम्ट और स्पेन्सर की सामाजिक जीव की मान्यता का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। पार्क ने 'जीवन के जाल' (Web of Life) का परीक्षण किया है। उल्लेखनीय है कि चार्ल्स डार्विन ने अपनी पुस्तक 'दी ओरिजीन ऑफ स्पीसीज (1959) में इस धारणा का उल्लेख करते हुए स्पष्ट किया कि जीवन का जाल समान पर्यावरण में भागीदार प्राणियों की अन्तनिर्भरता है तथा यह अस्तित्व के लिए संघर्ष का उत्पादन है। डार्विन के श्रेष्ठतम के जीवित रहने या अस्तित्व के लिए संघर्ष के सिद्धान्त को स्पष्ट किया जाये तो कहा जा सकता है कि जीवित सावयवों की संख्या नियन्त्रित होती है, उनका वितरण नियन्त्रित किया जाता है, और प्राकृतिक का सन्तुलन इस प्रकार से बनाये रखा जाता है कि संघर्ष में जीवित बचे लोग प्रकृति पर्यावरण और प्राणियों में विद्यमान श्रम विभाजन में उपयुक्त भूमिका निर्वाह करते हैं। पार्क ने इस सिद्धान्त को नगरीय स्थान के अध्ययन पर लागू किया।

पार्क का मानना है कि समुदाय के पास संख्या को नियन्त्रित करने हेतु और अपने को निर्मित करने वाले प्रतिस्पर्धी प्राणियों में सन्तुलन बनाये रखने की एक यान्त्रिकी होती है। पौधों और प्राणियों की अपेक्षा मानव समाजों में जनसंख्या की संख्या और गतिशीलता को नियन्त्रित और प्रभावित करने वाली दशाएँ ज्यादा जटिल होती हैं, यद्यपि वे यथेष्ट समरूपता प्रदर्शित करती हैं। इन समुदायों में साम्प्रदायिक सन्तुलन बनाये रखने या लाने के लिए प्रतिस्पर्द्धा तब संचालित होती है, जब कोई अनधिकृत कारक उसके सामान्य जीवन-इतिहास काल के दौरान या अलग से उसमें व्यवधान उत्पन्न करता है। पारिस्थितिकी दृष्टि से समाज एक क्षेत्र (प्रादेशिक इकाई) है, जिसमें जैवीय प्रतिस्पर्द्धा (Biotic Competition) का पतन हुआ है, और अस्तित्व के लिए संघर्ष ने उच्च और ज्यादा परिशुद्ध स्वरूप प्राप्त कर लिया है। प्रभुत्व और उत्तराधिकार प्रतिस्पर्द्धा के प्रकार्य हैं एवं उस पर निर्भर हैं। प्रभुत्व और उत्तराधिकार साम्प्रदायिक व्यवस्था को स्थापित करने के लिए और बनाये रखने के लिए संचालित होते हैं। प्रभुत्व का सिद्धान्त जो कि भू-भाग के द्वारा निर्धारित सीमा के अन्तर्गत तथा स्थान की अन्य प्राकृतिक विशेषताओं द्वारा संचालित होता है, वह समुदाय (शहर) के सामान्य पारिस्थितिकीय प्रतिरूप को निर्धारित करता है तथा प्रत्येक अलग-अलग क्षेत्रों का आपस में प्रकार्यात्मक सम्बन्ध स्थापित करता है। यह स्थिरता का कारक है। उत्तराधिकार परिवर्तन के सुव्यवस्थित अनुक्रम को तय करता है, जिसके द्वारा एक जैवीय (या सांस्कृतिक) समुदाय अपने विकास के क्रम में प्राथमिक और तुलनात्मक रूप से अस्थिर चरण से अपेक्षाकृत स्थायी एवं चरम स्तर से गुजरता है-इसमें

वैयक्तिक जीव के विकास की एक तुल्यता है। प्रतिस्पर्द्धा को सामाजिक स्तर पर संघर्ष का स्वरूप माना जाता है। जनसंख्या का दबाव प्रतिस्पर्द्धा में वृद्धि कर सकता है। पार्क का मानना है कि, प्रतिस्पर्द्धा में वृद्धि होने से श्रम विभाजन की उत्पत्ति होगी क्योंकि जनसंख्या के दबाव के कारण प्राणी भौतिक एवं रहन-सहन के पर्यावरण में अपनी विशिष्ट भूमिका को खोजने को बाध्य होगा। जैविक समुदाय को एक ही समय में अतिसावयव (Super Organism) का एक प्रकार और अपने निवास स्थान के प्राकृतिक संसाधनों के शोषण के लिए एक आर्थिक संगठन समझा जायेगा।

राबर्ट पार्क ने लिखा है कि, मानव पारिस्थितिकी पौधे/पशु पारिस्थितिकी के सदृश्य है, तथापि उससे कई तरह से भिन्न भी है। उन्होंने दोनों के मध्य निम्नांकित विभेदों का उल्लेख किया है- (1) विश्वव्यापी श्रम विभाजन और विनिमय की व्यवस्था के उत्पाद के रूप में मानव भौतिक पर्यावरण पर सीधे निर्भर नहीं है। (2) मानव में आविष्कारों एवं तकनीकी उपकरणों द्वारा भौतिक पर्यावरण को बदलने की ज्यादा क्षमता होती है, और (3) मानव ने जैविक समुदाय के आधार पर रीति-रिवाज और परम्परा युक्त संस्थात्मक संरचना निर्मित की है। पार्क का आगे कहना है कि, मानव समाज दो स्तरों पर संगठित है-जैविकीय और सांस्कृतिक। प्रतिस्पर्द्धा पर आधारित सहजीवी समाज है और संचार और सहमति पर आधारित सांस्कृतिक समाज है।

सामाजिक व्यवस्था को संस्तरण के स्तरों (पारिस्थितिकीय, आर्थिक एवं राजनैतिक तथा नैतिक) के रूप में माना जाता है, जहाँ प्रत्येक परवर्ती स्तर पर व्यक्ति अपने को ज्यादा पूर्ण समाविष्ट और सामाजिक व्यवस्था के अधीनस्थ पाता है।

मानव पारिस्थितिकी में अन्तर्क्रिया -

पार्क के अनुसार मानव पारिस्थितिकी चार कारकों की अन्तर्क्रिया है- (1) जनसंख्या (2) मनुष्य द्वारा रचित सजावटी वस्तुएँ (प्रौद्योगिकीय संस्कृति) (3) रीति-रिवाज और विश्वास (अभौतिक संस्कृति), और (4) प्राकृतिक संसाधन - जो जैविकीय सन्तुलन और स्वाभाविक साम्य को तुरन्त बनाये रखते हैं।

3.3 अर्नेस्ट डब्ल्यू0 बर्गेस : संकेन्द्रित जोन मॉडल (The Concentric Zone Model)

1920 के दशक में अमेरीका के शिकागो शहर में राबर्ट ई0 पार्क के साथ बर्गेस ने पारिस्थितिकीय अध्ययनों की नींव डाली थी। नगर पारिस्थितिकीय शास्त्रियों में अर्नेस्ट डब्ल्यू0 बर्गेस का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

नगर पारिस्थितिकी का अर्थ -

किसी शहर के भौतिक पर्यावरण से सम्बन्धित लोगों के वितरण और उनकी क्रियाओं का अध्ययन इसके अन्तर्गत आता है। नगर पारिस्थितिकीशास्त्री किसी क्षेत्र के भू-उपयोग प्रतिरूप (पैटर्न) का अध्ययन करते हैं और इस बात का अवलोकन करके विश्लेषण करते हैं कि किस प्रकार जनसंख्या के घनत्व में वृद्धि के साथ-साथ उन भू-उपयोग प्रतिरूपों में परिवर्तन होता है।

बर्गेस का सिद्धान्त -

उत्तरी अमेरीकी शहरों का बर्गेस ने व्यापक एवं गहन अध्ययन किया। आधुनिक शहरों की संरचना एवं विकास की व्यवस्था के सन्दर्भ में बर्गेस ने जो केन्द्रित-जोन का विचार रखा वह कई वर्षों तक विविध नगरीय समाजशास्त्रियों द्वारा सराहनीय एवं अनुकरणीय रहा है। कालान्तर में बर्गेस द्वारा पूर्व मॉडल में संशोधन किया गया। उसने शहरों का विवेचन दो अन्य मॉडलों के द्वारा प्रस्तुत किया। ये दोनों मॉडल - सेक्टर मॉडल और बहु-केन्द्री मॉडल (Multiple-nuclei model) बर्गेस के मॉडल से अलग दृष्टिकोण लेकर आए।

बर्गेस ने मानव पारिस्थितिकी के दोनों पहलुओं - भौतिक भूमि प्रयोग पैटर्न और अन्तर्निहित मानवीय सम्बन्धों के आधार पर एक विवरणात्मक ढाँचा प्रस्तुत किया। उनका कहना है कि जैसे-जैसे नगर की संरचनात्मक वृद्धि होती है इसका विस्तार आमूल-चूल रूप से इसके केन्द्र से विभिन्न संकेन्द्रित जोन की ओर फैलता है। संकेन्द्रित जोन सिद्धान्त नगरीय संरचना के विकास के साथ सामाजिक समूहों के संकेन्द्रण और पृथक्करण की प्रक्रिया को भी स्पष्ट करता है। नगरीय संरचना का विकास नगरवासियों और परिधीय गाँवों के बीच जारी द्वन्द्व को भी दर्शाता है।

बर्गेस ने यह देखा कि उत्तरी अमेरीकी शहर बहुतेरे यूरोपियन शहरों की अपेक्षा अनयोजित, अनियन्त्रित तरीके से विकसित हुए हैं। उसमें यह जानने की इच्छा हुई कि वे कौन से कारण हैं जो उत्तरी अमेरिका के शहरों के वृद्धि प्रतिरूप और भू-उपयोग को निर्धारित करते हैं? उसने व्यापक गहन अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला कि भूमि का मूल्य/महत्व शहर के वृद्धि प्रतिरूप को निर्धारित करता है। जैसे-जैसे शहर वृद्धि करता है भूमि का मूल्य बढ़ता जाता है,विशेषकर ऐसी भूमि का जो केन्द्रीय व्यापारिक क्षेत्र के नजदीक हो,जिसमें बड़े डिपार्टमेन्टल स्टोर और कार्यालयी भवन हों। भूमि का मूल्य बदलने पर, शहर की रिहायशी योजना भी बदलती है। कीमती व्यापारिक जमीनें जो कि केन्द्रीय व्यापारिक क्षेत्र में होती हैं, वे वाणिज्यिक डेवलपर्स के द्वारा खरीद ली जाती हैं। मात्र कुछ अमीर लोग फिर भी वहाँ निवास करते हैं, यद्यपि ज्यादातर 'अपार्टमेन्ट भवनों' में रहते हैं। शेष सम्पन्न लोग शहर के बाहर ऐसे स्थानों पर चले जाते हैं, जहाँ वे शिक्षक निजी भवनों का निर्माण करते हैं, जिनमें लॉन, पुष्प वाटिका एवं तरण-ताल की सुविधा होती है। मध्य-आय वाले परिवार बर्गेस के समय केन्द्रीय व्यापारिक क्षेत्र के पास 'अपार्टमेन्ट' में रहते थे या शहर से थोड़ी दूर अलग-अलग आवासों (detached houses) में रहते हैं। (यद्यपि 1950 से यह समूह गरीबों के रहने के लिए आन्तरिक शहरी क्षेत्र को छोड़कर अपनगरीय क्षेत्रों में चला गया) बर्गेस का सिद्धान्त यह स्पष्ट करता है कि नगर में स्थान की सीमितता वहाँ के लोगों में प्रतिस्पर्द्धा पैदा करती है। यह प्रतिस्पर्द्धा उक्त नगरीय सीमित स्थान में व्यवसाय व आवास के लिए वांछित स्थान को लेने के लिए होती है। स्वाभाविक है कि जिसमें अधिकतम भुगतान की क्षमता होती है उसे स्थान की उपलब्धता हो पाती है।

बर्गेस ने शिकागो शहर को भू-उपयोग प्रतिरूप के आधार पर अपने एक लेख, दी ग्रोथ ऑफ दी सिटी : एन इन्ट्रोडक्शन टू ए रिसर्च प्रोजेक्ट', 1961 में रेखांकित किया। उसने

इस डायग्राम में पाँच प्रमुख केन्द्रित जोन (Concentric zones) को उजागर किया-

जोन - I	:	केन्द्रीय व्यापारिक जिला
जोन - II	:	संक्रमण जोन
जोन - III	:	कामकाजी लोगों का रिहायशी जोन
जोन - IV	:	मध्यवर्ग का रिहायशी जोन
जोन - V	:	अन्यत्रवासी जोन (कम्यूटर्स जोन)

केन्द्रीय व्यापारिक जिला -

बर्गेस ने जोन एक को केन्द्रीय व्यापारिक जिले के रूप में स्पष्ट किया है। यह वाणिज्यिक क्षेत्र शहर का सबसे महँगा भू-क्षेत्र होता है, जिसे शहर का हृदय कह सकते हैं। इस क्षेत्र में थियेटर, स्टोर्स आलीशान रेस्टोरेन्ट, निवेशी बैंक, कार्यालय और सरकारी भवन होते हैं। इससे थोड़ी दूरी पर ही थोक व्यापारिक जिला होता है, जिसमें वेयरहाउस, उत्पाद बाजार और इसी तरह के प्रतिष्ठान होते हैं।

आर्थिक-वाणिज्यिक क्रियाकलापों का केन्द्र होने तथा महत्वपूर्ण सरकारी कार्यालयों के होने के कारण नगर का यह हृदय स्थल आवागमन के सभी साधनों से जुड़ा होता है। विशाल संख्या में प्रतिदिन लोग यहाँ आते हैं। भूमि प्रयोग की अतिसघनता भूमि के ऊँचे मूल्य को इंगित करती है। स्वाभाविक है कि इस स्थान में आवासीय-कार्यालयी सम्पत्ति का भी उच्च मूल्य होता है। इस जोन में रिहायशी आबादी अपेक्षाकृत बहुत कम होती है। छुट्टियों में या कार्यालयी समय के उपरान्त यह भीड़-भाड़ वाला नगरीय क्षेत्र सुनसान नजर आता है।

संक्रमण क्षेत्र -

बर्गेस ने जोन दो को संक्रमण जोन के रूप में दर्शाया है। व्यापारिक जिले के बाहर की तरफ वेश्यालय, निम्न-स्तरीय आवास इत्यादि होते हैं, जो कि फैक्ट्रियों के साथ मिश्रित रूप से बने होते हैं। इस क्षेत्र में शहर की सर्वाधिक अपराध दर होती है और यहीं अमेरिका आने पर प्रवासी बसते हैं। इस जोन में अत्यधिक भीड़-भाड़ तथा अतिक्रमण के कारण आवासीय स्वरूप में गिरावट आ जाती है।

कामकाजी लोगों का रिहायशी क्षेत्र -

तीसरा जोन कामकाजी वर्ग का रिहायशी जोन है। इस क्षेत्र में कामकाजी लोगों का घर होता है। यह नियोजित आवासीय क्षेत्र होता है। जिसमें सभी आधुनिक सुविधाएँ होती हैं। संक्रमण जोन से निकटता के कारण जीवन यापन की गुणवत्ता पर उसका दुष्प्रभाव इस जोन पर पड़ता है। अक्सर प्रवासियों की दूसरी पीढ़ी (विशेषकर शिकागो में) के लोग यहाँ निवास करते हैं और जैसे ही ये परिवार सामाजिक सोपान में उच्चता की ओर अग्रसर होते हैं, वे उस क्षेत्र से अन्यत्र प्रस्थान कर जाते हैं।

मध्य-वर्गीय रिहायशी क्षेत्र -

चौथा जोन मध्यवर्गीय रिहायशी जोन है। कभी यह क्षेत्र एकाकी परिवार वाले आवासों का क्षेत्र था। लेकिन बर्गेस के काल में शिकागो के इस क्षेत्र के कई स्थान बहुमंजीली इमारतों

(Apartment Building) और स्थानीय व्यापारिक जिलों के रूप में निर्मित हो गए। गुणवत्तापूर्ण जीवन के लिए आवश्यक सभी सुविधाएँ यहाँ पायी जाती हैं। स्वच्छता, नागरिक सुविधाएँ, समुचित परिवहन एवं संचार सुविधाएँ, प्रदूषण मुक्त विशाल खुले क्षेत्र/पार्क, मनोरंजन के अत्याधुनिक साधनों की उपलब्धता इत्यादि इस क्षेत्र की विशेषता होती है।

अन्यत्रवासी क्षेत्र (कम्यूटर्स) -

बर्गेस के वर्गीकरण के अनुसार अन्तिम पाँचवाँ जोन, 'कम्यूटर्स जोन' होता है। यह क्षेत्र छोटा उपनगरीय शहर होता है। इन क्षेत्रों से लोग अपनी पत्नियों एवं बच्चों को छोड़कर नौकरी एवं कार्य के सिलसिले में केन्द्रीय व्यापारिक जिले में प्रतिदिन जाते हैं और कार्योपरान्त वापस अपने क्षेत्र में लौट जाते हैं। इन क्षेत्रों को कभी-कभी 'डोरमेटरी उपनगर' या 'बेडरूम समुदाय' भी कहा जाता है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि बर्गेस ने नगर संरचना के पैटर्न का प्रथम उत्कृष्ट और समग्र विश्लेषण प्रस्तुत किया। उसने पारिस्थितिकीय सिद्धान्त के ढाँचे के अन्तर्गत नगर की आँतरिक संरचना की व्याख्या की किन्तु उसका उपरोक्त सिद्धान्त शिकागो तथा अन्य प्राचीन केन्द्रित शहरों (जहाँ मात्र एक केन्द्र हो) के सन्दर्भ में ही उपयुक्त बैठता है। अन्य बहुत से शहर जैसे-न्यूयार्क, पेरिस और लाँसएंजेल्स में मात्र एक ही केन्द्र नहीं है। बर्गेस ने ऐसे गैर केन्द्रित शहरों का कोई रेखांकन कर विश्लेषण नहीं किया है। साथ ही यह उन शहरों पर भी लागू नहीं हो सकता है जहाँ उनके वृद्धि प्रतिरूपों को नियंत्रित करने की कड़ी क्षेत्रीय योजनाएँ हों। इसके अतिरिक्त ऐसे शहर जो वर्ष 1950 से एक्सप्रेस मार्गों के कारण तीव्र वृद्धि किये हैं, वे बर्गेस के मॉडल के उपयुक्त नहीं बैठते हैं। उदाहरण के लिए टोरेन्टो में केन्द्रीय व्यापारिक जिले से कुछ ही मील की दूरी पर उच्चवर्ग के लिए आलीशान वैभवपूर्ण भवन उपलब्ध हैं। इसके साथ ही साथ बर्गेस का मॉडल पूर्व औद्योगिक शहरों में वृद्धि प्रतिरूप को भी स्पष्ट नहीं करता है, जिसमें अमीर लोग शहर के केन्द्र में रहते थे न कि बाहरी इलाकों में। बर्गेस का सिद्धान्त विकासशील देशों में नगरों के संरचनात्मक प्रतिरूप और वृद्धि की व्याख्या करने में असफल है। वास्तव में शहर की वृद्धि भू-विन्यास यथा पहाड़, बन्दरगाह इत्यादि पर भी निर्भर होती है। इसलिए मूल्य ही भू-उपयोग प्रतिरूप का एकमात्र निर्धारक कारक नहीं होता है। साथ ही साथ किसी क्षेत्रक (सेक्टर) का विकास विविध कारकों से होता है और नगर हमेशा संकेन्द्री (Homocentric) नहीं होता है। बहुविध केन्द्र मॉडल सिद्धान्त स्पष्ट करता है कि नगर में कई लघु केन्द्र होते हैं।

अर्थशास्त्री होमर हॉयट (Homer Hoyt) ने संकेन्द्रित मॉडल के स्थान पर सेक्टर मॉडल को प्रस्तुत किया है। आवासीय किराये के प्रतिरूप और परिवहन सुविधाओं के विकास के प्रभावों इत्यादि के आधार पर हायर ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि अधिक किराये वाले क्षेत्र नगर के एक से अधिक क्षेत्रों में (सेक्टरों) में अवस्थित होते हैं। उसने-न्यूयार्क मैट्रोपॉलिटन एरिया तथा अनेकों लैटिन अमेरीकी नगरों के अध्ययन के आधार पर संकेन्द्री मॉडल की स्थापनाओं से अलग विचार प्रस्तुत किए।

इसी तरह से चौन्सी हैरिस और एडवर्ड एल0 उलमैन (1954) ने बहुविध केन्द्र मॉडल (Multiple Nuclei Model) का सिद्धान्त प्रस्तुत करते हुए यह कहा कि नगर

संकेन्द्री न होकर विविध लघु केन्द्रों का समूह होता है। उसने नगर को दस मुख्य क्षेत्रों में विभाजित कर अपने इस विचार को स्पष्ट किया है कि नगर का विकास एक केन्द्र के चारों ओर नहीं होता है।

3.4 आर0 डी0 मैकेन्जी : मानव समुदाय के अध्ययन का पारिस्थितिकीय उपागम

सामुदायिक परिवर्तन के पारिस्थितिकीय उपागम को सबसे अधिक स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करने का श्रेय आर0डी0 मैकेन्जी को है। उसने पार्क के साथ मिलकर 'मानव-पारिस्थितिकी' शब्द की खोज की। इनसाइक्लोपीडिया ऑफ दी सोशल साईन्सेज के अनुसार, ''मानव पारिस्थितिकी का उद्देश्य निरन्तर परिवर्तित संस्कृति के अन्तर्गत मानव समाज की अन्योन्यक्रिया के परिणाम स्वरूप जनसंख्या और संस्थाओं की स्थानिक व्यवस्था के परिवर्तित प्रतिमानों के सिद्धान्तों और कारकों की खोज करना है।'' (Encyclopaedia of the Social Sciences, Vol. V, p. 314, The Macmillan Comp., New York) मैकेन्जी (और पार्क भी) इस मत का प्रतिनिधित्व करते हैं कि मानव पारिस्थितिकी, पारिस्थितिकीय संगठन और पारिस्थितिकीय प्रक्रियाओं का अध्ययन है। उसने पारिस्थितिकीय प्रक्रियाओं के अन्तर्गत संकेन्द्रण, विसंकेन्द्रण, केन्द्रीकरण, आक्रमण और अनुक्रम इत्यादि पाँच पारिस्थितिकीय प्रक्रियाओं को रखा है। जनसंख्या स्थानान्तरण तथा प्रमुख भूमि प्रयोग प्रतिरूप में परिवर्तन के सन्दर्भ में उपरोक्त प्रक्रियाएँ चिन्हित की गई हैं। मैकेन्जी नें मानव परिस्थितिकी की परिभाषा का प्रमुख प्रतिमान स्थापित किया है। उसका प्रभाव विविध विद्वानों की परिभाषाओं में प्रदर्शित होता है जैसे - एण्डरसन, बेन, कूले, एंजिल और कार, डासन और गेट्स डन्कन, गिस्ट और हालबर्ट, हिलर, माउरर और विर्थ।

मैकेन्जी ने पारिस्थितिकी की परिभाषा पर्यावरण के चयनात्मक विभाजन और समंजनशील बलों द्वारा प्रभावित मनुष्यों के स्थानिक और कालिक सम्बन्धों के अध्ययन के रूप में की। उसने इस तथ्य पर बल दिया है कि चुनाव की अवैयक्तिक प्रक्रियाएँ, वितरण और समायोजन प्रक्रियाएँ (accomodation process) जो कि प्राकृतिक पर्यावरण के प्रभाव पर निर्भर करती हैं, वे मानव समाज के स्थानिक वितरण और क्षेत्र की पारिस्थितिकी संरचना को निर्धारित करती हैं।

मैकेन्जी के पारिस्थितिकीय सिद्धान्त या मानव परिस्थितिकी की विषयवस्तु को तीन भागों में रखा जा सकता है-

(i) पारिस्थितिकीय संगठन - यह किसी समय विशेष में समुदायों की वृहद वसावट का स्थानीय समुदाय के अन्तर्गत जनसंख्या और संस्थाओं की स्थानिक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है।

(ii) पारिस्थितिकीय प्रभुत्व - यह स्थानिक सम्बन्धों के गतिशील या प्रकार्यात्मक पक्ष का प्रतिनिधित्व करता है।

(iii) पारिस्थितिकीय उत्तराधिकार (वंशक्रम) - जो कि मानव समुदाय में सांसारिक परिवर्तनों का विश्लेषण करता है।

समाजशास्त्रियों ने 'उत्तराधिकार/वंशक्रम' की अवधारणा पादप पारिस्थितिकीय शास्त्रियों से उधार ली है। मैकेन्जी ने वंशक्रम को एक महत्त्वपूर्ण पारिस्थितिकीय प्रक्रिया माना है, और

इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि,यह किसी क्षेत्र में निवास के प्रथम और अन्तिम चरण के दौरान प्रयोग और जनसंख्या प्रकार में पूर्ण परिवर्तन हैं।

मैकेन्जी ने नये 'शहर क्षेत्रवाद' पर अपने पहले आनुभविक अध्ययन को सविस्तार अपनी पुस्तक "The Metropolitan Community" (New York : McGraw-Hill, 1933) में विश्लेषित करते हुए लिखा है कि, नया शहरी क्षेत्रवाद पूर्ववर्ती समय के क्षेत्रवाद से भिन्न है क्योंकि यह मात्र भौगोलिक पृथक्ता (Geographical isolation) न होकर के श्रम विभाजन और सम्पर्क का उत्पाद है।'

मैकेन्जी ने पारिस्थितिकी की जैव-सामाजिक (bio-social) भाषा का प्रयोग बड़े शहरों में प्रभुत्व और समायोजन प्रक्रिया के लिए होने वाले प्रतिस्पर्धात्मक संघर्ष के विवेचन के लिए किया है, जिसमें जो प्रक्रिया में असफल हो जाते हैं वे या तो प्रभुत्वशाली मैट्रोपोलिस में विशेषीकरण द्वारा समन्वित हो जाते हैं या विलुप्त हो जाते हैं। यह पौधों और प्राणी समुदायों में अस्तित्व के लिए प्रतीकात्मक (Symbiotic) प्रतिस्पर्द्धा के समान ही होता है। मैकेन्जी का कहना है कि, 'किसी विशेष प्रकार के समुदाय की प्रवृत्ति आकार में तब तक बढ़ने की होती है जब तक कि वह अपने चरम बिन्दु पर नहीं पहुँच जाती है। चरम बिन्दु वह स्थिति है जहाँ जनसंख्या का आकार इसे संभालने के उपयुक्त आर्थिक आधारों की क्षमता से अधिक हो जाता है। समुदाय सन्तुलन संचार के नये साधनों या प्रौद्योगिकीय नवीनता से बिगड़ जाता है और उस बिन्दु पर जैव समायोजन के नवीन चक्र के रूप में जनसंख्या की गतिशीलता और प्रकार्यों का विभेदीकरण प्रारम्भ हो जाता है। इस तरह पुनः प्रतिस्पर्द्धा प्रकार्यात्मक और स्थानिक दृष्टि से जनसंख्या का चयन और छंटाई शुरू करती है, और यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक कि जनसंख्या नये-चरम बिन्दु तक नहीं पहुँच जाती है। जनसंख्या की इन गतिशीलताओं को मैकेन्जी ने दो संकल्पनाओं-आक्रमण और अनुक्रम द्वारा स्पष्ट किया है। जब विविध प्रयोजनों (जैसे शिक्षा, रोजगार इत्यादि हेतु) के लिये जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों से नगर की ओर आती है तो उसे उसने आक्रमण कहा है। आप्रवासी अधिकांशतः निम्न आर्थिक स्थिति के होते हैं और नकारात्मक रूप से वहाँ के लोगों पर प्रभाव डालते हैं। उनके कारण न केवल स्थानीय लोगों का जीवन स्तर प्रमाणित होता है अपितु कई उच्च प्रस्थिति समूह के लोग तो नगर से हटकर उसकी परिधि में बसना ज्यादा सुविधाजनक और उचित पाते हैं। नए बसे लोगों के प्रति पहले तो रहने वाले नकारात्मक भाव रखते हैं। अनुक्रम आक्रमण की अनुपूरक प्रक्रिया हैं जो कि उसके बाद होती है। आवश्यकतानुसार लोगों द्वारा नगर के बाहरी क्षेत्रों में आपुक्रमिक गतिशीलता को अनुक्रम कहा गया है।

मैकेन्जी ने अमेरीका के महानगरीय समुदायों के अध्ययन द्वारा महान योगदान किया है। उसने नगरीय समुदायों की वृद्धि पर ग्रास और मैथर्ली जैसे विद्वानों का अध्ययन किया। महानगरीय समुदायों और विश्व पारिस्थितिकी पर मैकेन्जी ने अनेक लेख प्रकाशित किए, जिसमें उसने अन्य बातों के अलावा एक मुद्रा की दूसरी मुद्रा से प्रतिस्पर्द्धा और एक भाषा की दूसरी भाषा से प्रतिस्पर्द्धा का विश्लेषण किया। उसका मानना था कि मानव एक सांस्कृतिक प्राणी है, इसलिए वह अपने प्राकृतिक पर्यावरण को रूपान्तरित करने में सक्षम हैं। इसके साथ ही साथ मानव अपनी सीमाओं के अन्तर्गत अपने निवास स्थान का सृजन कर सकता है। मैकेन्जी का कहना था कि, अपने समुदाय के लोगों में मानव जो श्रम विभाजन लागू करता है वह सामुदायिक जीवन की पद्धति के आधारभूत तत्त्वों को निर्धारित करता है और चूंकि यह जैविक घटना के

बजाय सिद्धान्ततः, सांस्कृतिक घटना है, इसलिए इसके स्वरूप में निरन्तर परिवर्तन होते रहेंगे।

मैकेन्जी ने आधुनिक यातायात और संचार साधनों को विशेष महत्त्व प्रदान करते हुए यह कहा कि इन्होंने बड़े शहरों में सभी प्रकार की वस्तुओं के संचालन के नियन्त्रण को केन्द्रीकृत किया है। (R.D. Mckenzie, 'Dominance and World Organizatrion', A.J.S., XXXIII (July 1927), p. 30) उसने स्पष्ट किया कि अधिकांश राष्ट्रों में शहर का मकड़जाल प्रतिरूप रेल यातायात के युग में स्थापित हुआ। मोटर यातायात के चलते ही मुख्य शहर और इसके चारों ओर के कस्बों में परस्पर निर्भरता में वृद्धि हुई ('The Metropolitan Community,' pp.7, 93) इसीप्रकार से हवाई यातायात प्रभुत्वशाली केन्द्रों में समन्वय को संचार के सुधरे साधन उपलब्ध कराकर मजबूत कर रहे हैं। (जिसके द्वारा महत्वपूर्ण कार्मिक तीव्रता से एक स्थान से दूसरे स्थानों पर जा पा रहे हैं।

मैकेन्जी का मानना था कि बीसवीं सदी में औद्योगिक विकास ने जनसंख्या वृद्धि को इतना नहीं बढ़ाया, जितना कि 'केन्द्रीय कार्य' (अति विशेषीकृत वितरणात्मक एवं नियन्त्रण क्रियाओं) के केन्द्रीकरण ने ।' एक वार जब यह केन्द्रीकरण शुरू होता है तो यह और अधिक केन्द्रीकरण सृजित करने के लिए अपने में ही एक महत्वपूर्ण कारक बन जाता है। मैकेन्जी इस सन्दर्भ में कहता है कि 'जब एक बार शहर क्षेत्रीय वितरण केन्द्र के रूप में स्थापित हो जाता है तो इसकी बैंकिंग, यातायात और अन्य सुविधाएँ नयी संस्थाओं को बाध्य करती हैं कि वे उसे अपने संचालन बिन्दु हेतु चुने। यह संचयी प्रक्रिया अनेकों शहरों के आधुनिक तीव्र विकास को विश्लेषित करने का एक मुख्य कारक हैं। (R.D. Mckenzie, 'The Metropolitan Community', p. 164)।

आलोचना -

पारिस्थितिकी सिद्धान्त की विविध विद्वानों यथा फारी (1945) डेवी (1950), रॉबिन्सन (1950) ग्रीयर और कुबे (1969) एवं पिकवान्स (1976) इत्यादि ने आलोचना की है। अधिकाँशतः शास्त्रीय पारिस्थितिकीय सिद्धान्त नगरीय क्षेत्रों के भूमि प्रयोग प्रतिरूप की आकृति और प्रबन्ध पर आधारित हैं। इनकी आलोचना स्वाभाविक रूप से इन्हीं पहलुओं पर ज्यादा हुई है।

पारिस्थितिकी उपागम की आधारभूत मान्यता यह है कि नगर का विकास प्रतिस्पर्द्धा और चयन जैसी स्वचालित शक्तियों का परिणाम होता है। इस संदर्भ में आलोचना करते हुए डेवी (1950) का कहना है कि आवासीय अवस्थापन के प्रतिरूप मुख्यतः औद्योगिक स्थापन के प्रतिरूप का परिणाम हैं और इनका कोई 'एक समान' प्रतिरूप नहीं दिखाई पड़ता है।

वृत्तीय बनावट में नगरीय स्थल के प्रसार होने सम्बन्धी पारिस्थितिकी उपागम की मान्यता की भी व्यापक आलोचना हुई है। नगरों का विकास किसी एक औद्योगिक या वाणिज्यिक केन्द्र के चतुर्दिक ही न होकर उसका प्रसार बाहर की ओर भी हुआ है।

पारिस्थितिकीय सिद्धान्त की आलोचना इस आधार पर भी हुई है कि इसके सिद्धान्त अमेरीकीय नगरीय केन्द्रों के अध्ययनों पर आधारित हैं। आलोचकों का तर्क है कि अमेरिका के प्रारम्भिक नगरीय केन्द्रों की विशेषताओं और बाद के नगरों की विशेषताओं में पर्याप्त अन्तर है और इनके बीच तुलना उपयुक्त नहीं है।

रॉबिन्सन (1950) का कहना है कि पारिस्थितिकय सहसम्बन्ध में व्यक्तिगत सहसम्बन्ध पर अत्यधिक बल दिया गया है। उसका कहना है कि पारिस्थितिकीय सहसम्बन्धों (समस्त

प्रघटनाओं के बीच) और व्यक्तिगत सहसम्बन्धों (व्यक्तिगत इकाइयों के बीच) के मध्य अन्तर होता है। इसलिए व्यक्तिगत सम्बन्धों को प्रदर्शित करने के लिए एक साक्ष्य के रूप में पारिस्थितिक सहसम्बन्ध को प्रदर्शित करना भूल है।

फायरे (1945) ने पारिस्थितिकी सिद्धान्त की इस आधार पर आलोचना की कि नगरीय प्रसार की प्रकृति का निर्धारण हमेशा ही आर्थिक कारकों द्वारा नहीं होता। उसने भावना और प्रतीकवाद पर बल दिया है।

ग्रीयर और कुबे (1969) का कहना है कि पारिस्थितिकीय सिद्धान्तों में नगरीय क्षेत्रों के अन्दर विभिन्न सामीप्यों की जीवन शैली और उपसमूहों की उपसंस्कृतियों का ध्यान नहीं रखा गया है। इसी तरह से कुछ आलोचकों (देखें पिकवान्स (1976) 'अर्बन सोशियोलॉजी : क्रिटिकल एसेंज़') का कहना है कि पारिस्थितिकी सिद्धान्तकारों का ध्यान नगर में घटित होने वाली प्रत्येक घटना पर समान रूप से नहीं था। उन्होंने सामाजिक विघटन तथा व्यक्तिगत अपसमायोजन पर ज्यादा बल दिया।

जो कुछ भी हो विविध सीमाओं एवं आलोचनाओं के बावजूद भी नगरीय समाज की स्पष्ट व्याख्या करने में पारिस्थितिकी उपागम एक महत्वपूर्ण समग्र सैद्धान्तिक उपागम माना गया है।

3.5 सारांश

इस इकाई में हमने तीन महान नगरीय समाजशास्त्रियों-पार्क, बर्गेस और मैकेन्जी के सिद्धान्तों के द्वारा नगरीय समुदाय एवं स्थानीय आयामों को समझने का प्रयास किया है। पार्क के सिद्धान्त को जीवन के जाल से सम्बन्धित उसकी अवधारणा से प्रारम्भ किया गया और उसके प्रभुत्व के सिद्धान्त और उत्तराधिकार सम्बन्धित विचारों को भी विश्लेषित किया गया जो सामुदायिक व्यवस्था को स्थापित करने और बनाये रखने में महत्वपूर्ण है। हमने मानव पारिस्थितिकी के चारों अन्तर्क्रियात्मक कारकों को भी विश्लेषित किया। बर्गेस के भू-उपयोग प्रतिरूप के आधार पर नगरों के पाँच प्रमुख केन्द्रित जोन के वर्गीकरण को समझकर हमने विषय से सम्बन्धित अपने ज्ञान के पर्याप्त वृद्धि की। मैकेन्जी के मानव समुदाय के अध्ययन में पारिस्थितिकी उपगाम तथा मानव पारिस्थितिकी की विषयवस्तु पर भी हमने पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया।

3.6 बोध प्रश्न

(क) लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र01 राबर्ट ई0 पार्क ने मानव पारिस्थितिकी एवं पौधे/पशु पारिस्थितिकी में जो मुख्य विभेद बताये हैं, उन्हें स्पष्ट कीजिए।

प्र02 पार्क के अनुसार मानव समाज कितने स्तरों पर संगठित है? स्पष्ट व्याख्या कीजिए।

प्र03 बर्गेस का अध्ययन मुख्यतः कहाँ के शहरों पर आधारित हैं?

प्र04 बर्गेस द्वारा बताए नगरों के जोन का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।

प्र05 मैकेन्जी की मानव पारिस्थितिकी की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।

(ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र01 राबर्ट ई0 पार्क के नगरीय प्रतिरुपों से मानव पारिस्थिकीय सम्बन्धित सिद्धान्त की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए।

प्र02 अर्नेस्ट डब्ल्यू0 बर्गेस के संकेन्द्रित जोन मॉडल सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।

(ग) बहुविकल्पीय बोध प्रश्न

1. पार्क के अनुसार मानव पारिस्थितिकी निम्नांकित में से कितने कारकों की अन्तर्क्रिया है?

   (अ) एक (ब) दो (स) तीन (द) चार

2. नगरीय प्रतिरूपों से मानव पारिस्थितिकी को समझने में किसने 'जीवन के जाल' का परीक्षण किया है?

   (अ) मैकेन्जी (ब) पार्क (स) बर्गेस (द) वर्थ

3. किसने कहा है कि मानव पारिस्थितिकी पौधे/पशु पारिस्थितिकी के सदृश्य हैं?

   (अ) बर्गेस (ब) पार्क (स) मैकेन्जी (द) दुर्खीम

4. आधुनिक शहरों के अध्ययन में केन्द्रित जोन का विचार किस विद्वान ने प्रस्तुत किया?

   (अ) वर्थ (ब) पार्क (स) मैकेन्जी (द) बर्गेस

5. बर्गेस ने कितने प्रमुख केन्द्रित जोन बताये हैं ?

   (अ) छह (ब) चार (स) तीन (द) पाँच

6. किसने कहा है कि, 'मानव एक सांस्कृतिक प्राणी है तथा वह अपने प्राकृतिक पर्यावरण को रूपान्तरित करने में सक्षम हैं?

   (अ) मैकेन्जी (ब) पार्क (स) बर्गेस (द) मार्क्स

3.7 बहुविकल्पीय बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (द)
2. (ब)
3. (ब)
4. (द)
5. (द)
6. (अ)

इकाई -4: नगरीय एवं शहरी आयाम के रूप में समाजशास्त्रीय परम्परा

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 इमाइल दुर्खीम : यान्त्रिक एवं सावयवी सुदृढ़ता वाले समाज

4.3 कार्ल मार्क्स : समाज के उद्विकास में उत्पादन के प्रकारों की भूमिका

4.4 टॉनीज : जैमिनशॉफ्ट से जैसिलशॉफ्ट की ओर

4.5 मैक्सवेबर : वाणिज्य-व्यापारिक सम्बन्धों का बढ़ता प्रभुत्व

4.6 सारांश

4.7 बोध प्रश्न

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आपके द्वारा सम्भव होगा-

- नगरीय एवं शहरी आयाम के रूप में विविध समाजशास्त्रीय परम्पराओं को समझना,
- दुर्खीम की यान्त्रिकी एवं सावयवी सुदृढ़ता की अवधारणाओं के आधार पर नगर की विशेषताओं को समझना,
- कार्ल मार्क्स द्वारा समाज के उद्विकास में उत्पादन के प्रकारों की भूमिका को समझना,
- टॉनीज के नगर सम्बन्धित विचारों को समझना, और
- मैक्स वेबर के नगर सम्बन्धित विचारों को जानना।

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में विविध समाजशास्त्रियों यथा दुर्खीम, कार्ल मार्क्स, टॉनीज़ और मैक्सवेबर द्वारा प्रस्तुत नगरीय एवं शहरी आयामों की सामाजशास्त्रीय परम्परा को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। इन चारों समाजशास्त्रियों ने नगरों के जन्म और विकास तथा उसकी विशिष्टताओं की व्यापक चर्चा की है। इसी को ध्यान में रखते हुए इस इकाई को चार भागों में रखकर विश्लेषित किया गया है।

प्रथम भाग में दुर्खीम की यान्त्रिक एवं सावयवी सुदृढता की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए उसके नगर सम्बन्धित विचारों को स्पष्ट किया गया है। द्वितीय भाग में कार्ल मार्क्स द्वारा मानव समाज के उद्विकास के ऐतिहासिक कालों में उत्पादन के प्रकारों की भूमिका के आधार पर समाज के विशिष्ट स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। तृतीय भाग में टॉनीज

के जैमनशॉफ्ट और गैसेलशॉफ्ट की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए नगर सम्बन्धित उसके विचारों को विश्लेषित किया गया है। अन्तिम चौथे भाग में मैक्सवेबर के नगर सम्बन्धित विचारों को विश्लेषित किया गया है। साथ ही नगर की आवश्यक विशेषताओं को भी बताया है। कुल मिलाकर इस इकाई में चार महान समाजशास्त्रियों के नगर सम्बन्धित विचारों को प्रस्तुत कर यह प्रयास किया गया है कि आप नगरीय आयाम के रूप में इन समाजशास्त्रीय परम्पराओं से अवगत हो सकें।

4.2 इमाइल दुर्खीम : यान्त्रिक एवं सावयवी सुदृढ़ता वाले समाज

दुर्खीम ने समाज में श्रम विभाजन की प्रगति के आधार पर समाजों को दो भागों में बाँटा। पहला प्रकार लघु आदिम और कृषक समुदाय, जिसमें विशेषीकरण सीमित होता है। इस प्रकार के समाज में लोग बन्द अलग समूहों में बँधे हुए होते हैं। दुर्खीम ने इस प्रकार की बन्द प्रवृत्ति को यान्त्रिक सुदृढ़ता कहा है। जनसंख्या की वृद्धि सामाजिक उद्विकास की शक्ति होती है जो लोगों को बाध्य करती है कि वे विविध क्रियाओं में विशेषीकृत हों। परिणामस्वरूप एक नये प्रकार के समाज का जन्म होता है, जो कि दुर्खीम के अनुसार सावयवी सुदृढ़ता पर आधारित होता है। ऐसे समाजों में सम्बन्ध कम घनिष्ठ और व्यक्तिगत होते हैं तथा लोग आपस में समान भौतिक हितों के लिए संविदा और ज्यादा अमूर्त्त प्रतीकों द्वारा जुड़े हुए होते हैं।

दुर्खीम ने श्रम विभाजन की भूमिका को सामाजिक बन्धनों को परिवर्तित करने का प्रमुख आधार माना है। बढ़ता हुआ श्रम विभाजन नगरीय समाजों की विशेषता है। उसका कहना था कि किसी समाज के सभी आम नागरिकों में समान विश्वास एवं भावनाओं की सम्पूर्णता एक व्यवस्था का निर्माण करती है, जिसका अपना जीवन होता है। इसे सामूहिक और समान चेतना कहा जा सकता है। यह समाज के सभी क्षेत्रों में फैली हुई होती है। (दुर्खीम, 1960 : पेज 79)।

दुर्खीम नगरीकरण के समुदाय पर पड़ने वाले प्रभावों के प्रति संदेहपूर्ण था। नगरीय सामाजिक सम्बन्धों को उसने सतही, गुमनामतापूर्ण और संक्रमणकारी चारित्र वाला बताते हुए यह कहा है कि कृत्रिमता (बनावटीपन) और तार्किकता सामान्यतः नगरवासियों को प्रदत्त होती है। मनुष्य अपने लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु तत्पर रहता है। दुर्खीम कहता है कि, हमारी पहचान हमारी उपयोगिता के सम्बन्धों में है, इस अर्थ में कि हम सभी जो भूमिका अपने जीवन में करते हैं, वह अधिकांशतः हमारे अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के साध्य के रूप में समझी जाती है, जबकि दूसरी तरफ वैयक्तिक उपलब्धि घनिष्ट समूह के वैयक्तिक एवं भावनात्मक नियन्त्रण से मुक्ति अथवा स्वतन्त्रता का एक अंश होती है। एकीकृत समाज में रहते हुए जो स्वतः विकसित स्व-अभिव्यक्ति, आचरण और सहभागिता की इच्छा आती है, उसे मनुष्य नगरीय समाज में खो देता है। दुर्खीम के अनुसार यहीं आदर्श शून्यता (anomic) की दशा निर्मित होती है। यह सामाजिक शून्यता/रिक्तता सामाजिक विघटन का कारक बनती है।

दुर्खीम ने प्रौद्योगिक समाज में सामाजिक विघटन के विविध प्रकारों को समझाने में सामाजिक शून्यता या आदर्शशून्यता का प्रयोग किया है। दुर्खीम ने घटती जन्म दर, बढ़ती हुई विलगाव की स्थिति और बढ़ते हुए यौन भूमिका तनावों को आधुनिक नगरीय जीवन से जोड़ते हुए यह विश्वास व्यक्त किया है कि इसका स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। उसने अपने

इस विचार को बढ़ती हुई आत्महत्या की दर से सप्रमाण जोड़ने की कोशीश की है। (कुशनर एवं स्टर्क : जुलाई; 95 (7) 1139-1143, अमेरिकन जर्नल आफ पब्लिक हेल्थ, 2005)।

दुर्खीम ने अपराध और विचलन को नियन्त्रित करने में कानूनी आचारों और सामाजिक यान्त्रिकी पर ज्यादा जोर दिया है। यान्त्रिक सुदृढ़ता में, कानूनी आचार ऐसी किसी भी गतिविधियों को जो सामान्य, सहभागी नैतिकता अर्थात् सामूहिक चेतना को तोड़ती है (उल्लंघन करती) है, को दबाते हैं।

4.3 कार्ल मार्क्स : समाज के उद्विकास में उत्पादन के प्रकारों की भूमिका

मार्क्स ने मानव समाज को परस्पर-निर्भर सम्पूर्णता के रूप में विश्लेषित किया है। मार्क्स के समाजशास्त्रीय विचारों का आधार भौतिकवाद है। भौतिक दशाएँ या आर्थिक कारक समाज की संरचना और विकास को प्रभावित करती हैं। मार्क्स ने मानव समाज के उद्विकास की खोज चरणबद्ध रूप में की है। उसने ऐतिहासिक कालों का विश्लेषण और विभेद भौतिक उत्पादन के तरीकों के आधार पर करते हुए चार प्रकार को उत्पादन के साधनों (तरीकों) एशियाटिक, प्राचीन, सामन्तवादी और पूंजीवादी की विस्तृत चर्चा ही है।

पूँजीवाद उत्पादन का वह तरीका है जिसमें पूँजी उत्पादन का प्रभुत्वशाली साधन होती है। पूँजी का निजी स्वामित्व विविध स्वरूपों में पूँजिपतियों के वर्ग के हाथों में होता है। पूँजी कई स्वरूपों में हो सकती है जैसे धन के रूप में, श्रम शक्ति और उत्पादन की वस्तुओं के क्रय करने की साख के रूप में। यूरोप में पूँजीवाद की सर्वप्रथम उत्पत्ति की चर्चा करते हुए मार्क्स ने ऐसी उत्पादन की व्यवस्था वाले नगरीय क्षेत्रों की सामाजिक - आर्थिक एवं सांस्कृतिक दशाओं का वर्णन किया है।

मार्क्स ने पूँजीवादी के अन्तर्गत नगरीकरण के परिणामों की निन्दा की है। उनका मानना है कि दरिद्रता और भौतिक पतन नगरीकरण का एक पक्ष है, लेकिन उतना ही महत्त्वपूर्ण परम्परागत समुदायों के सामाजिक अन्तर्बन्धन का विखण्डन और शहर के स्वार्थी विश्व द्वारा उसका प्रतिस्थापन है। सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों ही दृष्टि से 'कम्यूनिज़्म' नगरवाद पर निर्भर है। नगरीकरण को उन्होंने मुक्तता/स्वतंत्रता के रूप में देखते हुए यह विचार व्यक्त किया कि बीते हुए नगरीय काल में कुछ भी बचा हुआ नहीं था, समुदायों का सामाजिक बन्धन पहले वर्गों के नये समूहीकरण द्वारा फिर मानवीय क्षमताओं के विकास द्वारा स्वयं अपने लिए और वास्तविक स्वतन्त्रता हेतु बदला।

मार्क्स ने नये नगरीय जमाव में श्रमिकों के समूह के केन्द्रीकरण और नगरों की ओर प्रवजन को क्रान्तिकारी शक्ति के निर्माण का आवश्यक चरण बतलाया। नगरों की प्रशंसा करते हुए मार्क्स ने यह माना कि नये शहरों में सामाजिक गर्व है, जिसे प्राप्ति के इन्जन के रूप में और फलदायक परिवर्तन के स्रोत के रूप में देखा जाता है। नगरीकरण प्रगतिवादी था, उसने मानवता की उत्पादक क्षमता के रूपान्तरण की घटनाओं को प्रदान किया और दूसरा वैयक्तिकतता को महसूस करने की दृष्टि से भी। शहर ने व्यक्ति की विशिष्ट क्षमता को एक बाजार प्रदान किया है। स्वतन्त्रता, विविधता एवं पसन्द के अवसरों की उपलब्धता नगरीकरण के प्रगतिवादी पक्ष हैं।

4.4 फर्डिनेण्ड टॉनिज़ : जैमिनशॉफ्ट से जैसिलशॉफ्ट की ओर

टॉनिज़ (1855-1936) के शहरों एवं नगरीकरण सम्बन्धित विचारों को समझने के पूर्व उसके द्वारा प्रस्तुत मानव संगठन के दो स्वरूपों - जैमिनशॉफ्ट (Gemeinschaft) और जैसिलशॉफ्ट (Gesellschaft) को समझना आवश्यक है। टॉनिज का कहना था कि प्रारम्भिक काल में समाज अलचिले बन्धनों की शृंखला में बंधा होता था, जो स्थिरता एवं सुरक्षा प्रदान करते थे। प्राथमिक सामाजिक सम्बन्धों की एक मजबूत व्यवस्था थी। इस प्रकार का सामाजिक पर्यावरण वास्तविक समुदाय था, जिसे टॉनिज ने जर्मन शब्द ''जैमिनशॉफ्ट (समुदाय) द्वारा सम्बोधित किया। टॉनिज़ का मानना है कि आधुनिकीकरण के चलते बहुत से समाजों में विविध भूमिकाओं में बढ़ते हुए श्रम विभाजन के कारण सम्बन्धों में अवैयक्तिकता आयी है और नातेदारी तथा जीवन शैली के रूप में परम्पराओं में पतन आया है। उसने इस प्रकार के सामाजिक जीवन के प्रतिरूप को जर्मन शब्द 'जैसिलशॉफ्ट' (जटिल नगरीय समाज) द्वारा सम्बोधित किया है। इस तरह टॉनिज़ के अनुसार समाज क्रमशः छोटे, अविशेषीकृत ग्रामीण समुदायों (जैमिनशॉफ्ट) से विस्तृत, जटिल नगरीय समाज (जैसिलशॉफ्ट) में परिवर्तित होता है।

कम्यूनिटी ऐण्ड सोसायटी (1887) नामक पुस्तक में टॉनिज ने बाजार अर्थव्यवस्था के प्रभाव को सामाजिक संगठन के परम्परागत स्वरूप पर देखने की कोशिश की है। उन्होंने नगरीकरण के परिणामों तथा सामाजिक जीवन के आचरण के लिए राज्य के विकास तथा विभेदीकृत समाज में सामाजिक सुदढ़ता की यान्त्रिकी पर भी विस्तृत चर्चा की है।

टॉनिज़ प्राथमिक सामाजिक सम्बन्धों की कसक को महसूस करते थे। उनके अनुसार 'जैमिनशॉफ्ट' ही एक साथ रहने का अन्तिम और वास्तविक स्वरूप है। इस स्वरूप में आये परिवर्तन से एक नये तरह का समाज (जैसिलशॉफ्ट) बना है जिसमें प्राकृतिक और बनावटी व्यक्तियों का बाहुल्य हो गया है। व्यक्ति अपने ही लाभ एवं स्वार्थ के लिए 'प्रयासरत' है और दूसरों की क्रियाओं को तभी और तब तक ही पुनः स्वीकार करता है जब तक कि वे उसके हित में और वृद्धि करती हैं। उसका मानना है कि स्वार्थ के लिए बहुतेरे सम्बन्धों को स्थापित करने वाला नगरीय व्यक्ति पारस्परिक परिचित सम्बन्धों से वंचित रहता है।

टॉनिज ने महानगर को बुर्जुआ समाज के पैराडाईम के रूप में देखा है। उसका कहना है कि महानगर सामुदायिक जीवन में गैसेलशॉफ्ट की पराकाष्ठा का प्रतिनिधित्व करता है। महानगरों में धन और पूँजी असीमित और सर्वशक्तिमान होती है। इसके द्वारा सम्पूर्ण विश्व के लिए वस्तुओं एवं विज्ञान का उत्पादन एवं पूर्ति सम्भव होती है। साथ ही साथ, सभी राष्ट्रों के लिए कानून और जनमत निर्माण। यह विश्व बाजार और विश्व व्यापार का प्रतिनिधित्व करता है। विश्व के उद्योग इसमें केन्द्रीकृत होते हैं। इसके समाचार पत्र विश्व के पत्र होते हैं, और इसके लोग सम्पूर्ण विश्व के लोग होते हैं। (जयापलान, पृ0 53)।

टॉनिज का कहना है कि पूर्णतः विकसित विनिमय अर्थव्यवस्था के प्रभाव से सामुदायिक जीवन के परम्परागत स्वरूप का पतन हो जाता है। उत्पादन उपभोग के लिए न होकर बिक्री के लिए होने लगता है और श्रम का भुगतान धन में किया जाने लगता है। बाजार की प्रतिस्पर्द्धा के कारण अवैयक्तिकता में वृद्धि होती है। साथ ही साथ सामाजिक जीवन में सहयोग बढ़ता है। टॉनिज आम आदमी को 'गैसेलशॉफ्ट' के अन्तर्गत सर्वहारा के रूप में पाता है और कहता है कि आम संस्कृति विखण्डित हो गयी है। पूँजीवादी राज्य में राजनैतिक दलों के वर्चस्व में वृद्धि

होती है, वे अपने को पूर्ण आत्मसात् कर सार्थक बनाते हैं। दृढ सामाजिक बन्धन शहरों एवं महानगरों में पड़ोस द्वारा प्रदत्त अपनी निरन्तरता और घनिष्ठता खो देते हैं। नगरीकरण वैयक्तिकता की दिशा की ओर ले जाता है, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपना ही 'मास्टर' होता है। वह इच्छानुसार स्वतन्त्र विचरण करता है और जिससे प्रसन्न होता है उससे सम्बन्ध बनाता है और किसी भी तरह से अपने नाम के लिए जीता है। 'जैमिनशॉफ्ट' के 'स्व' का स्थान जैसिलशॉफ्ट का 'व्यक्ति' ले लेता है।

4.5 मैक्स वेबर : वाणिज्य-व्यापारिक सम्बन्धों का बढ़ता प्रभुत्व

मैक्स वेबर के नगरीय विचार उसके प्रसिद्ध लेख 'दी सिटी' में देखने को मिलते हैं। यह लेख उसकी मृत्यु के उपरान्त सन् 1921 में प्रकाशित हुआ। मध्यकालीन शहर को समझने के उद्देश्य से लिखित इस लेख में शहर की सामान्य प्रक्रियाओं को समझने एवं नगरवाद के एक व्यवस्थित सिद्धान्त के नजदीक पहुँचने का प्रयास किया गया है। अपनी तीसरी पुस्तक 'इकोनॉमी एण्ड सोसायटी' में भी वेबर ने 'गैर वैध शक्ति' के रूप में शहर के एक 'प्रारूप' को विश्लेषित करने का प्रयास किया है। इस सन्दर्भ में गैबी (जून, 2006) का यह प्रश्न उठाना उचित ही है कि मैक्सवेबर की गैर वैध शक्ति का अस्तित्व कैसे सम्भव है, जबकि उसने तीन प्रकार की वैध शक्तियों के प्रारूप को प्रस्तुत कर प्रसिद्धि प्राप्त की है।

वेबर ने शहर को राजनैतिक एवं प्रशासकीय अवधारणा के आधार पर परिभाषित किया है। मध्यकालीन पश्चिम शहर ने नगरीकरण की जो दिशा प्राप्त करके विशिष्टता प्राप्त की है, उसकी विविध नगरीय माडलों से तुलना करके उसने उसकी विशिष्टता के कारकों को जानने का प्रयास किया है। उसने प्राचीन काल से प्रारम्भ करके मध्यकालीन पश्चिम शहर का पूर्वी शहरों से तुलनात्मक अध्ययन किया है।

वेबर ने नगरीय समुदायों के गठन में वाणिज्य-व्यापारिक सम्बन्धों की प्रभुत्त्वता को तुलनात्मक रूप से अधिक प्रभावी माना है। उसका मानना है कि कोई भी बसावट तभी पूर्णतः नगरीय समुदाय कही जा सकती है, जब उसमें निम्नांकित विशेषताएँ हों-

(i) पुष्टिकरण,

(ii) एक बाजार,

(iii) अपना एक न्यायालय और कम से कम आंशिक स्वायत्तशासी कानून,

(iv) समिति का सम्बन्धित स्वरूप, और

(v) कम से कम आंशिक स्वायत्तता एवं मतदान का अधिकार।

वेबर ने उन सभी शहरों को रद्द किया है, जहाँ सत्ता सार्वभौम के बजाय वैयक्तिक आधार पर लागू की जाती है। (जयापलान, पृ0 52) उसने धार्मिक समूहों द्वारा शासित शहरों को भी रद्द किया है। उसने उन शहरों को भी रद्द किया है, जिनकी ताकत आर्थिक आधार के बजाय सेना से निकलती है।

4.6 सारांश

इस अध्याय में हमने नगरीय आयामों के रूप में विविध समाजशास्त्री परम्पराओं को

समझने का प्रयास किया है। इसके अन्तर्गत हमने नगर सम्बन्धित चार समाजशास्त्रियों दुर्खीम, कार्ल मार्क्स, टॉनिज एवं मैक्स वेबर के विचारों को जानने का प्रयास किया है। सामाजिक बन्धनों को परिवर्तित करने में श्रम विभाजन की क्या भूमिका होती है, इसे हमने दुर्खीम के सावयवी और यान्त्रिक सुदृढ़ता की अवधारणा के आधार पर समझने का प्रयास किया है। इसी तरह हमने भौतिक उत्पादन के तरीकों के अधार पर पूँजीवाद और परिणामस्वरूप नगरीय जीवन के विशिष्ट स्वरूप को मार्क्स के विचारों के आधार पर समझने का प्रयास किया है। मैक्सवेबर के वाणिज्यिक-व्यापारिक सम्बन्धों के प्रभुत्व सम्बन्धी विचारों को हमने समझने का प्रयास किया है, वहीं हमने टॉनीज द्वारा प्रस्तुत यान्त्रिक एवं सावयवी सुदृढ़ता और पूर्ण विकसित विनिमय व्यवस्था को समझने का प्रयास किया है। कुल मिलाकर इस इकाई में चार अलग-अलग दृष्टिकोणों से नगरीय आत्माओं के रूप में समाजशास्त्रीय परम्पराओं को हमने समझा है।

4.7 बोध प्रश्न

बोध प्रश्न -1

(i) दुर्खीम के अनुसार शहरी समाज किस प्रकार की सुदृढ़ता से युक्त होते हैं?

(ii) दुर्खीम के अनुसार नगरीय समाजों की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं?

(iii) मार्क्स के समाजशास्त्रीय विचारों का आधार क्या है?

(iv) टॉनीज ने मानव संगठनों के कौन से दो स्वरूप बताये हैं?

(v) गैसेलशाफ्ट की पराकाष्ठा का प्रतीक क्या है?

बोध प्रश्न -2

(i) दुर्खीम की यान्त्रिक एवं सावयवी सुदृढता की अवधारणा क्या है?

(ii) मार्क्स के अनुसार नगरों के प्रगतिवादी पक्ष कौन-कौन से हैं?

(iii) वेबर के अनुसार नगरीय बसावट की मुख्य विशेषताएँ क्या हैं?

बोध प्रश्न -3

(i) कार्लमार्क्स ने समाज के उद्विकास में उत्पादन के प्रकारों की क्या भूमिका बतलायी है? स्पष्ट कीजिए।

(ii) नगरीय समुदायों के गठन में वाणिज्य-व्यापारिक सम्बन्धों की प्रभुत्त्वता का वेबर की दृष्टि से विश्लेषण कीजिए।

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न -1

(i) सावयवी सुदृढ़ता।

(ii) श्रम विभाजन।

(iii) भौतिकवाद।

(iv) जैमिनशॉफ्ट एवं जैसिलशॉफ्ट।

(v) महानगर।

इकाई -5: सांस्कृतिक स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 सांस्कृतिक स्वरूप सम्बन्धी सिद्धान्त

5.2.1 जार्ज सिमैल - मैट्रोपोलिस

5.2.2 लुई वर्थ-नगरवाद का सिद्धान्त

5.2.3 रेडफिल्ड - ग्रामीण-नगरीय सातत्य

5.3 सारांश

5.4 बोध प्रश्न

5.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि -

- जार्ज सिमैल के मैट्रोपोलिस सम्बन्धी विचारों का मूल्यांकन कर सकें।
- लुई वर्थ के नगरवाद सम्बन्धी सिद्धान्त को समझ सकें।
- रेडफिल्ड द्वारा प्रस्तुत ग्रामीण-नगरीय सातत्य का आलोचनात्मक मूल्यांकन कर सकें।

5.1 प्रस्तावना

निश्चय ही अब तक आप समझ चुके होंगे कि 'शहर' मात्र एक भौगोलिक क्षेत्र ही नहीं है। शहर की अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताएं होती हैं। वहाँ का सांस्कृतिक बहुलवाद दो विशेषताओं से युक्त है, जिसमें एक में तो लोग विविध जाति, प्रजाति, वर्ग और संस्कृति वालों के साथ समन्वित हैं और दूसरा सभी ने अपनी-अपनी पृथक् सांस्कृतिक पहचान भी बनाए रखी है। इकाई तीन के अध्ययन से स्पष्ट है कि नगरीय समुदाय एवं स्थानीय आयामों पर पार्क, बर्गेस एवं मैकेन्जी ने गम्भीर विचार प्रस्तुत किए हैं। इकाई चार के अध्ययन से हम समाजशास्त्रीय परम्पराओं से अवगत हो चुके हैं। प्रस्तुत इकाई में शहर के सांस्कृतिक स्वरूप की सैद्धान्तिक व्याख्या जार्ज सिमैल, लुई वर्थ एवं रेडफिल्ड के विचारों के द्वारा की जायेगी।

5.2 सांस्कृतिक स्वरूप सम्बन्धी सिद्धान्त

इस इकाई में हम जार्ज सिमैल के मैट्रोपोलिस, लुई वर्थ के नगरवाद एवं रेडफिल्ड के ग्रामीण-नगरीय सातत्य सम्बन्धी सांस्कृतिक सिद्धान्तों की विवेचना करेंगे।

5.2.1 जार्ज सिमैल-मैट्रोपोलिस-

शैक्षणिक अध्ययनों में नगरीय संस्कृति को वैध उद्देश्य प्रदान करने वाला जार्ज सिमैल (1858-1918) जर्मन दर्शन और समाजशास्त्र का एक महान विद्वान था। बर्लिन में जन्मे सिमैल पर 19वीं शताब्दी के अन्तिम मध्य काल में उसके चतुर्दिक फैली नगरीय संस्कृति का स्पष्ट प्रभाव पड़ा। उसने नगरों के सांस्कृतिक स्वरूप का विश्लेषण मैट्रोपोलिस और मानसिक जीवन की व्याख्या के अन्तर्गत अभिव्यक्त किया है।

शिकागो स्कूल, विशेषकर राबर्ट पार्क पर सिमैल के कार्यों का व्यापक प्रभाव पड़ा। राबर्ट पार्क ने अपने एक महत्वपूर्ण लेख 'दी सिटी' (1915) में यह उल्लेख किया है कि 'वह (सिमैल) आधुनिकता का पहला समाजशास्त्री था' (फ्रिस्वे, 1985:2)। वहीं लुई वर्थ ने सिमैल के महत्व को पहचानते हुए यह विचार व्यक्त किया कि समाजशास्त्री दृष्टि से 'दी मैट्रोपोलिस एण्ड मेन्टल लाईफ' शहर पर अत्यन्त महत्वपूर्ण एक मात्र लेख है (विर्थ, 1925 : 219 इन लेविन इत्यादि, 1976 : 249)। 'दी सोशियोलॉजी ऑफ जार्ज सिमैल' नामक पुस्तक में कर्ट एच0 वुल्फ (1950) ने सिमैल के विचारों को स्पष्ट अनुवादित किया है। महानगरीय जीवन और महानगरीय मनुष्य की विशेषताओं को सिमैल ने बताते हुए यह प्रश्न किया है कि कैसे व्यक्तित्व बाहरी शक्तियों से सामंजस्य हेतु स्वयं को समायोजित करता है।

सिमैल का ऐसा मानना था कि मनुष्य एक भेदभाव करने वाला प्राणी (डिफरेन्शियेटिंग क्रीयेचर) है। उसका मस्तिष्क तत्क्षणिक प्रभाव और पूर्ववर्ती प्रभाव के अन्तर द्वारा उत्प्रेरित होता है। मैसिमो कैसिअरी (Massimo Cacciari) का यह दावा है कि, मैट्रोपोलिस की समस्या, आधुनिक अस्तित्व और इसके स्वरूपों के बीच सम्बन्धों की समस्या के रूप में ही वह बिन्दु है जहाँ से जार्ज सिमैल का सम्पूर्ण दर्शन विकसित हुआ है। सिमैल की यह मान्यता है कि समाजशास्त्रीय परिणामों के साथ शहर एक क्षेत्रीय सत्ता (entity) ही नहीं, अपितु समाजशास्त्रीय अस्तित्व (entity) है, जो कि स्थानिक गठित (formed spatially) है। सिमैल के इस विचार का परिष्कृत रूप बाद के शिकागो के नगरीय समाज के पारिस्थितिकीय सिद्धान्तों विशेषकर पार्क, बर्गेस और थामस में देखा जा सकता है। इतना ही नहीं सिमैल के समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों की रचना के पद्धतिशास्त्रीय आरम्भिक बिन्दु, कि समाज प्रतिरूप अन्तर्क्रियाओं का जाल है, पर किसी भी तत्कालीन समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों के पैराडाइम ने गम्भीरता से प्रश्न नहीं किया।

सिमैल की महानगरीय आधुनिकता की खोज में हमें उसके 'मैट्रोपोलिस' पर लिखे महत्वपूर्ण लेख को मान्यता देनी होगी जो कि नगरीय अनुभवों के अन्य लेखों से श्रेष्ठ है। सिमैल का मानना है कि आधुनिक महानगर (मैट्रोपोलिस) आधुनिकता के केन्द्रीकरण और गहरीकरण (Concentration and intensitication) के स्थान हैं। (परिपक्व पूंजी अर्थव्यवस्था इसकी गहनता का क्षेत्र है साथ ही आधुनिक महानगर का मुख्य बिन्दु भी है), न कि उत्पादन का प्रकार या औद्योगिक पूंजीवादी उपक्रम। आधुनिकता के दोनों तरफ आर्थिक दृष्टि परिभ्रमण के क्षेत्र, विनिमय और उपभोग पर होती है। मेट्रोपोलिस के सन्दर्भ में लोगों, समूहों एवं वस्तुओं के परिभ्रमण और अन्तर्क्रिया के स्वरूपों एवं प्रतिनिधित्व के तरीकों पर जोर दिया गया है।

परिभ्रमण की प्रभुता के रूप में आधुनिक महानगरों को समझने का तात्पर्य गति या चाल के प्रकारों पर दृष्टि डालना है। इसके बदले, इसका तात्पर्य निरन्तरता से परे एक गति और

मध्यस्ता, अमूर्तता और अनिरन्तरता के तत्काल बाद के अनुभव से है। इस बाद की विशेषता को सिमैल ने भी आधुनिक मुद्रा अर्थव्यवस्था के विश्लेषण में उजागर किया है और हम लोगों के ध्यान को न केवल वस्तुओं के संचलन और हमारी उनके प्रति छवि को, अपितु साथ ही हमारी आधुनिक मुद्रा अर्थव्यवस्था से बढ़ते अप्रत्यक्ष सम्बन्धों को भी (मुद्रा लेन-देन के प्रौद्योगिक कड़ी के विस्तार रूप में) स्पष्ट किया है। लोगों के लिए महानगरीय अनुभव संचालन से सम्बन्धित होता है- सामाजिक गुंजाइश से नया अनुभव और दूसरों से सम्पर्कों की बहुलता और गति। आधुनिक मैट्रोपोलिस शाखा में अनुभव और बोध में परिवर्तन, कुछ अंशों में, यह तथ्य कि अवलोकनकर्त्ता/दर्शक भी गति में होता है, जैसा कि चीजों की छवि, गलियों का जाल और प्रदर्शनियाँ। बाद के सन्दर्भ में यह नहीं भूलना चाहिए कि सिमेल का सन्दर्भ उसके मैट्रोपोलिस पर लेख, का जन्म उसके व्याख्यान थे (जो उसने फरवरी 1903 में मैट्रोपोलिस पर व्याख्यानों की कड़ी प्रस्तुत की थी)। उल्लेखनीय है कि सिमैल से अनुरोध किया गया था कि वह शहर के मानसिक और बौद्धिक जीवन पर व्याख्यान दे (यद्यपि उससे यह अपेक्षा थी कि वह उसके सांस्कृतिक, बौद्धिक और कलात्मक पक्षों पर जोर देगा), और यह उसके लेख का प्रमुख विषय भी था। फिर भी, उसने आधुनिक शहर पर किए गए अन्य सम्बन्धित खोजों की तुलना में न्याय नहीं किया।

डेविड फ्रिस्बे ने सिमैल के कार्यों का विश्लेषण अपनी पुस्तक ("Fragments of Modernity: Theories of Modernity in the work of Simmel, Kracayer and Benjamin (Cambridge, Polity, 1985) साथ ही City Scapes of Modernity (Oxford, Black well, 2001) में किया है। ऐसा माना जाता है कि जार्ज सिमैल, समाजशास्त्र के संस्थापकों में से एक थे, जिन्हें अनुचित तरीके से उपेक्षित कर दिया गया था। उन्हें वापस सम्मानजनक स्थान पर लाने का श्रेय डेविड फ्रिस्बे को हैं। सिमैल के समकालीन समाजशास्त्री मैक्सवेबर और दुर्खीम आधुनिक समाजशास्त्र के विकास में प्रभावशाली हस्ती बनकर उभरे हैं, जबकि इसमें सिमैल को कोई भूमिका प्रदान न करना अनुचित है, क्योंकि उनके कार्यों को बड़ी तेजी से अमेरीकन समाजशास्त्रियों ने अपनाया विशेषकर शिकागो स्कूल के समाजशास्त्रियों ने। उसकी कई अवधारणाओं का उसके उत्तराधिकारियों ने ज्यादा व्यवस्थित और आनुभविक तरीके से प्रयोग किया है।

मैक्स वेबर की तरह सिमैल मैट्रोपोलिस को एक ऐतिहासिक विकास के रूप में देखता है और उसका उद्देश्य नगरीय जीवन की सामान्य विशेषताओं को अद्वितीय चिन्हित करना है। उसका उद्देश्य यह नहीं था कि वह नगरीय जीवन की विशेषताओं को उस घरेलू शहर की सार्थकता में देखे। वेबर की अपेक्षा सिमैल मेट्रोपोलिस समाज की दृष्टि (Vision) का निर्माण लघु-स्तरीय (माइक्रो-लेवल) व्यवहारों को देखकर करता है। इस दृष्टि से सिमैल का विश्लेषण अधिक नृतत्वशास्त्रीय या सामाजिक - मनोवैज्ञानिक गुणवत्ता युक्त है। सिमैल की तुलना में वेबर ने ज्यादा व्यवस्थित विश्लेषण करना चाहा है। ब्रोडी (1982) का मानना है कि, 'सिमैल ने अपने अध्ययन में मनुष्य (individual social actor) की चेतनता, व्यक्तित्व और चरित्र पर दृष्टि डाली है। (Brody, 1982, in Firsby, 1994 : 83)।

सिमैल का यह तर्क है कि 18वीं शताब्दी तक नगरीकरण को सामाजिक प्रभुत्त्व के परम्परागत स्वरूप से मुक्ति के रूप में सम्बन्धित किया जाता था। परम्परागत समाजों में कठोर

(rigid) प्रस्थिति संस्तरणों ने व्यक्ति के लिए यह लगभग असम्भव कर दिया था कि वह अपनी व्यक्तिगत स्वायत्तता और पहचान के लिए पहल करे, लेकिन 19वीं शताब्दी में औद्योगिक पूँजीवादी ने मातहत वर्गों की जमीन से बाँधने वाली डोर को ढीला कर दिया और अब व्यक्ति अपने को एक दूसरे से विभेदित करने की चाह रखने लगे। सिमेल का विश्वास है कि यह मैट्रोपोलिस का प्रकार्य है कि वह इस संघर्ष में गतिविधियों (arena) का क्षेत्र प्रदान करे तथा उसका समाधान (recancilation) करें। (सिमैल, 1950 : 423)। इस नयी प्राप्त स्वतन्त्रता के परिणामस्वरूप लोगों में अपने शहर में रहने वालों के प्रति उदासीनता (indifference) आयी है।

5.2.2 लुई वर्थ नगरवाद

लुई वर्थ ने अपने एक लेख 'अर्बनिज़्म एज़ ए वे ऑफ लाइफ' (In Cities and Society : The Revised Readers in Urban Sociology, edited by Paul K. Hatt and Albert J. Reiss, The Free Press of Glencoe, Inc., Fourth edition, 1963) में नगरवाद के सिद्धान्त की व्यापक विवेचना की है। उनके अनुसार मनुष्य के सामाजिक जीवन पर शहरों का प्रभाव नगरीय जनसंख्या के अनुपात में ज्यादा होता है। शहर आधुनिक मनुष्य के निवास का स्थान और कार्यस्थल ही नहीं होता है,अपितु यह आर्थिक,राजनैतिक, सांस्कृतिक जीवन को प्रारम्भ करने और नियन्त्रित करने का केन्द्र होता है, जो विश्व के सर्वाधिक पिछड़े इलाकों को इसकी परिधि में लाता है तथा विविध क्षेत्रों, लोगों और क्रियाओं को एक ब्रह्माण्ड (cosmos) में पीरोता है।

एक जीवन शैली के रूप में नगरवाद को तीन अन्तर्सम्बद्ध परिप्रेक्ष्यों से आनुभविक रूप से सुलभ किया जा सकता है- (1) एक भौतिक संरचना के रूप में, जिसमें कि एक जनसंख्या आधार, एक प्रौद्योगिकी एवं एक पारिस्थितिकीय व्यवस्था होती है, (2) सामाजिक संगठन की एक व्यवस्था के रूप में, जिसमें एक विशेषतासूचक सामाजिक ढाँचा, एक सामाजिक संस्थाओं की श्रृंखला एवं एक सामाजिक सम्बन्धों का विशिष्ट प्रतिमान शामिल होता है तथा (3) अभिवृत्तियों एवं विचारों की एक श्रृंखला एवं सामूहिक व्यवहार के विशिष्ट स्वरूपों में लिप्त एवं सामाजिक नियन्त्रण की विशेषतासूचक कार्य प्रणालियों के अधीन एक व्यक्ति-समूह के रूप में। (IGNOU Course material, MSO 004, भारत में समाजशास्त्र, इकाई 25, खण्ड 7, नवम्बर 2006, पृष्ठ 146)।

लुई वर्थ ने शहरी समाज में प्रभावी दो प्रकार के बलों को दर्शाया है (i) पार्थक्य बल एवं (ii) कुठाली प्रभाव (Melting pot), जिसके अनेक एकरूपीकरण पहलू होते हैं, जैसे प्रशासन आदि की एकरूप व्यवस्था। तथापि, उनका कहना है कि शहरी समाज एक साधन-से-साध्य तर्क पर आधारित होता है, जो कि शोषणकारी होता है और जहाँ व्यक्ति गुमनामी के सहारे अलग-थलग पड़ जाता है। वर्थ का मानना है कि शहरों में जीवन की सघनता ने पड़ोस को जन्म दिया, जिनमें परम्परागत समुदायों के विशिष्ट अभिलक्षण होते हैं। (वही, पृष्ठ 146)

वर्थ का सिद्धान्त इस मान्यता के लिहाज से महत्वपूर्ण है कि, नगरवाद मात्र किसी समाज का हिस्सा नहीं होता, बल्कि वह व्यापक सामाजिक व्यवस्था को अभिव्यक्त एवं प्रभावित

भी करता है। (वही, पृष्ठ 146)

निसंदेह, शहरों का विकास तथा विश्व का नगरीकरण आधुनिक समाज का एक सर्वाधिक प्रभावशाली तथ्य है। उसका यह मानना है कि विश्व की कितनी जनसंख्या नगरीय है, इसे सही-सही बताना मुश्किल है, क्योंकि नगरीय संकेन्द्रण की प्रक्रिया कई देशों में असमान प्रकार की है।

अमेरिका और जापान का उदाहरण देते हुए लुई वर्थ ने यह बताने की कोशिश की है कि इन औद्योगिक क्षेत्रों में एक ही पीढ़ी के अन्तर्गत ही ग्रामीण क्षेत्र नगरीय समाज में परिवर्तित हो गए जिसके कारण इनके सामाजिक जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में व्यापक परिवर्तन आया है। इन परिवर्तनों के कारण तथा उनके प्रभाव के चलते समाजशास्त्रियों का ध्यान आकृष्ट हुआ कि वे ग्रामीण और नगरीय जीवन की पद्धतियों के अन्तर का अध्ययन करें।

शहरी जीवन के तरीके पूर्णतः नवीन होते हैं या उनपर पूर्ववर्ती जीवन प्रणाली (ग्रामीण) की भी थोड़ी-बहुत छाप होती है? इस प्रकार हमारा ध्यान जाना उचित ही है। वर्थ का यह मानना है कि चूँकि शहर "वृद्धि का उत्पाद है" न कि तात्कालिक सृजन (instantaneous creation), इसलिए यह अपेक्षा की जा सकती है कि जीवन की शैली (modes of life) पर जो यह प्रभाव डालता है वह पूर्व प्रभावी मानव जीवन के तरीकों को पूर्णतः हटा नहीं सकता है। इसलिए हमारा सामाजिक जीवन पूर्ववर्ती लोक समाज की, कुछ ज्यादा और कुछ कम अंशों तक, छाप लिये हुए होता है। शहर की बहुत बड़ी जनसंख्या गाँवों से आती है और जिस पर अपने पूर्व अस्तित्व की जीवन पद्धतियों का स्वरूप विद्यमान रहता है। इसीलिए हमलोगों को नगरीय और ग्रामीण प्रकार के व्यक्तित्व में असम्बद्ध और खण्डित विभेद खोजने की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। वर्थ का सुझाव है कि हमलोगों को शहर और ग्रामीण क्षेत्र को एक दूसरे के सन्दर्भ में दो ध्रुव समझना चाहिए,जिसमें सम्पूर्ण मानव बसावट अपने को व्यवस्थित करती है। नगरीय-औद्योगिक और ग्रामीण-लोक समाज को समुदायों के आदर्श प्रकार रूप में देखते हुए हम मानव जुड़ाव के आधारभूत मॉडल के विश्लेषण हेतु एक परिप्रेक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं, जैसा कि वे समकालीन सभ्यता के सामने आते हैं।

लुई वर्थ का कहना है कि इसके बावजूद की हमारी सभ्यता में शहर की अत्यधिक सार्थकता है, तथापि हमारा ज्ञान नगरवाद की प्रकृति और नगरीकरण की प्रक्रिया में अत्यन्त कम है। नगरीय जीवन की विशेषताओं को विविध विषयों में अलग करने की कई कोशिशें की गयी हैं, जैसे कि भूगोलवेत्ताओं, इतिहासकारों, अर्थशास्त्रियों और राजनीतिशास्त्रियों ने अपने-अपने क्षेत्र के दृष्टिकोणों को शहर की विविध परिभाषाओं में सम्मिलित करने की कोशिश की है।

वर्थ ने शहर के समाजशास्त्रीय उपागम की रचना करते हुए मानव सम्बद्धता के एक विशिष्ट प्रकार के रूप में शहर की अनूठी विशेषताओं पर बल दिया है। शहर की समाजशास्त्रीय रूप से सार्थक परिभाषा नगरवाद के उन तत्त्वों को चुनेगी जो विशिष्ट पद्धति के रूप में मानव समूह जीवन को स्पष्ट करते हैं।

क्या नगर को निर्धारित करने का एकमात्र आधार उसका बड़ा आकार है? या केवल आकार के आधार पर किसी समुदाय को नगर के रूप में विश्लेषित किया जाना चाहिए? वर्थ इससे सहमत नहीं है। तत्कालीन समय में जनगणना की नगर सम्बन्धित परिभाषा को,जो

2500 या अधिक आबादी वाले सभी समुदायों को नगरीय और शेष को ग्रामीण परिभाषित करते थे, वर्थ ने मानने से इन्कार कर दिया। उसका यह मानना था कि निर्धारित संख्या से कम आबादी वाले ऐसे क्षेत्र जो कि महानगरीय केन्द्रों के प्रभाव क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं, का नगरीय समुदाय कहलाने का दावा उन बड़े क्षेत्रों से अधिक होगा जो कि मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के अलगावयुक्त एकाकी अस्तित्व में रह रहे हों। उनका कहना था कि इसे समझना चाहिए कि जनगणना की परिभाषाएँ अनावश्यक रूप से इस तथ्य से प्रभावित होती हैं कि शहर, सांख्यिकीय दृष्टि से हमेशा एक प्रशासकीय अवधारणा होती है, जिसमें कि कारपोरेट सीमा शहरी क्षेत्रों की सीमा निर्धारण में प्रभावी भूमिका अदा करती है।

वर्थ का कहना है कि नगरवाद को शहर की भौतिक सीमा के अन्तर्गत ही देखने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। नगरवाद जीवन पद्धति/शैली के रूप में देखने की किसी समुचित अवधारणा पर पहुँचने के लिए ऐसा करना पड़ेगा। संचार और परिवहन में जो प्रौद्योगिकी विकास हुआ है उसने मानव इतिहास में नयी पहचान बनायी है। इसने शहर की भूमिका को हमारी सभ्यता में प्रभावशाली तत्त्व बना दिया है और शहरी जीवन पद्धति को शहर की सीमा के पार बढ़ा दिया है। औद्योगिक और व्यावसायिक, वित्तीय और प्रशासकीय सुविधाओं तथा गतिविधियों, परिवहन एवं संचार सेवाएँ और सांस्कृतिक तथा मनोरंजनात्मक उपकरण जैसे कि प्रेस, रेडियो स्टेशन, थियेटर, ग्रन्थालय, संग्रहालय, संगीत-कार्यक्रमों के हॉल, नाचघर, अस्पताल, उच्च शिक्षा की संस्थाएँ, शोध और प्रकाशन केन्द्र, व्यावसायिक संगठन और धार्मिक एंव कल्याणकारी संस्थाओं के केन्द्रीकरण के परिणामस्वरूप शहर विशेषकर बड़े शहर का प्रभुत्व बढ़ा है। शहर इन्हीं सब विशेषताओं और सुविधाओं के चलते ग्रामीण जनसंख्या पर प्रभाव डालता है। ग्रामीण और नगरीय जीवन शैली के बीच जो विभेद हैं वह अभी और अधिक होगा। नगरीकरण केवल उस प्रक्रिया को ही नहीं इंगित करता है,जिसके द्वारा लोग एक स्थान जिसे शहर कहते हैं,की ओर आकर्षित होते हैं और इसकी जीवन की व्यवस्था में अपने को संलग्न करते हैं।

वर्थ का कहना है कि नगरवाद की एक कार्यकारी परिभाषा केवल आवश्यक विशेषताओं को जो सभी शहरों में - कम से कम हमारी संस्कृति सामान्य रूप से है, ही बताना नहीं है, अपितु यह उनमें विविधताओं की खोज की ओर झुकी होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, एक औद्योगिक शहर सार्थक रूप से सामाजिक सन्दर्भ में एक व्यापारिक, खदानवाले, मत्स्य वाले, रिज़ार्ट, विश्वविद्यालय और राजधानी शहर से अलग होगा। एक समान प्रकार के उद्योग वाला शहर बहु औद्योगिक शहर से अलग प्रकार की सामाजिक विशेषताओं को प्रस्तुत करेगा। इसी तरह से औद्योगिक रूप से सन्तुलित शहर असन्तुलित शहर से, एक उपनगर एक सेटलाईट टाउन से, एक रिहायशी उपनगर एक औद्योगिक उपनगर से, एक शहर महानगरीय क्षेत्र से, एक प्राचीन शहर एक नये शहर से,और इसी तरह से एक विकसित शहर एक स्थिर और मरणासन्न शहर से अलग सामाजिक विशेषताओं को प्रस्तुत करेगा।

एक समाजशास्त्रीय परिभाषा स्पष्ट रूप से एक सामाजिक अस्तित्व के रूप में विविध प्रकार के शहरों में जो आवश्यक विशेषताएँ हैं, को समाहित करेगी, किन्तु यह स्वाभाविक रूप से सभी विविध प्रकारों की विशेषताओं को विस्तृत रूप से अभिव्यक्त नहीं करेगी। शहरों की कुछ विशेषताएँ दूसरों की अपेक्षा नगरीय जीवन की प्रकृति को बनाने में ज्यादा सार्थक होती हैं, और नगरीय सामाजिक दृश्य विशिष्ट स्वरूपों में आकार, घनत्व और प्रकार्यात्मक प्रकार के शहरों में विविधता की हम अपेक्षा कर सकते हैं। और तो और, हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि

शहरों के सम्पर्क और संचार की मात्रा के अनुसार नगरवाद का प्रभाव ग्रामीण जीवन पर पड़ता है।

शहर की परिभाषा -

लुई वर्थ ने सामाजिक ज़ीवन पर विस्तृत आकार, घनत्व और विविधता के प्रभाव को दिखाना चाहा है। उसके अनुसार 'एक शहर को अपेक्षाकृत विस्तृत, स्थायी और सामाजिक रूप से विविध प्रकार के मनुष्यों को घनी बसावट के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

वर्थ का मानना था कि शहर में मजबूत अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध असम्भव है। नगरीय जीवन ने समुदाय की भावना को नष्ट कर दिया है। शहरवासी अपने सम्बन्धों में सतही होते हैं। उनका जीवन घनिष्ठता और सम्बन्धों की गहराई से वंचित होता है। शहर के लोग प्रतिस्पर्द्धा, विवर्धन (बढ़ा-चढ़ाकर कहना) और परस्पर शोषण की भावना से रहते हैं। वे ग्रामीणों या छोटे कस्बे के लोगों की तुलना में ज्यादा तार्किक और असंवेदनशील होते हैं। उनमें पड़ोसियों से मित्रवत सम्बन्धों का अभाव होता है। और वे स्व-संरक्षित एकान्तता (Self protective aloofness) को बनाये रखते हैं। इस प्रकार का एकाकी, संवेदन शून्य जीवन समस्त प्राकृतिक सामाजिक समूहों को नष्ट कर देता है और अनेकों सामाजिक समस्याओं यथा अपराध, बाल अपराध, भ्रष्टाचार, मानसिक विकार एवं आत्महत्या इत्यादि को जन्म देता है।

5.2.3 रेडफिल्ड : ग्रामीण - नगरीय सातत्य

लुई वर्थ की तरह रेडफिल्ड (दी फॉक कल्चर ऑफ यूकाटान, 1941) ने भी शहरों के अध्ययन में 'निर्धारणवादी उपागम' का सहारा लिया। ग्रामीण समाज के प्रति उसका स्पष्ट झुकाव रहा। उसका कहना था कि पूरे विश्व में नगरीय संस्कृति ग्रामीण संस्कृति को नष्ट कर रही है।

रेडफिल्ड ने नगरीय समाजों का विश्लेषण ग्रामीण (लोक) समाज की विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य में किया है। यूकाटान के कस्बों और 'इण्डियन्स' के गांवों में किये गये अपने अवलोकनों के आधार पर उसने कृषक समाजों को फॉक सोसायटीज़ (ग्रामीण/लोक समाज) के नाम से सम्बोधित किया है। उसके अनुसार ग्रामीण समाज छोटे, अलग-थलग और एक समान होते हैं, जिसमें कोई जटिल प्रौद्योगिकी नहीं होती और लिंग और उम्र के अतिरिक्त कोई श्रम विभाजन नहीं होता है। ऐसे समाज सुदृढ़ और निकट सम्बन्धों पर आधारित होते हैं और लोगों के मध्य आमने-सामने के संचार सम्बन्ध होते हैं। लोग परस्पर एक दूसरे को भलीभाँति जानते हैं। सामाजिक नियन्त्रण धार्मिक संस्थाओं द्वारा होता है। कर्मकाण्ड अत्यधिक विकसित होते हैं। सांस्कृतिक प्रतिरूप भावनाओं और परम्पराओं पर आधारित होते हैं न कि तार्किक पसन्द पर। सामान्यतः लोग सरल होते हैं तथा बिना किसी प्रश्न के पुरानी जनरीतियों का पालन करते हैं। परिवार अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। वह केन्द्रीय सामाजिक समूह है। नातेदारी के दृढ़ बन्धन होते हैं, लोग एक दूसरे की मदद बिना किसी स्वार्थ के करते हैं। ग्रामीण समाज में लोगों की प्रस्थिति जन्म से निर्धारित होती है।

नगरीय समाज की ग्रामीण समाज से तुलना करते हुए रेडफिल्ड ने नगरीय विशेषताओं

की आलोचनात्मक व्याख्या की है। उसके अनुसार, नगरीय समाज ग्रामीण समाज (फॉक सोसायटी) के विपरीत होता है। नगरीय समाज विस्तृत, असमान और अवैयक्तिक होता है। सम्बन्ध कमजोर और दूर के होते हैं, निकट सम्बन्धों का अभाव होता है। लोग अ-धार्मिक, व्यक्तिवादी और सहनशील होते हैं। अत्यधिक विभेदीकृत समाज होने के कारण व्यक्ति इसमें सामाजीकरण के सभी आदर्शों को पूर्णतः अपना नहीं सकता है। कार्यों का सम्पादन इसलिए नहीं होता है कि नातेदारों से सम्बन्ध बना रहेगा अपितु कार्य धन या प्रतिष्ठा रूपी लक्ष्य का साधन बन जाता है। शहरी लोग विविध परिस्थितियों के सन्दर्भ में जटिल निर्णय निकालते हैं।

नगरों का दुस्प्रभाव ग्रामीण समाज पर पड़ता है। रेडफिल्ड के अनुसार, आधुनिक संचार ग्रामीण समाजों को नगरीय लोगों के सम्पर्क में ला रहा है और ग्रामीण समूह की संस्कृति को नीचा दिखा रहा है। नगरों का ऐसे दुष्प्रभाव पड़ा है कि ग्रामीण समूहों के लोग अपनी परम्पराओं पर प्रश्न करने लगे हैं। इस तरह नगरीय संस्कृति लोक संस्कृति को नष्ट कर रही है। यह एक उद्विकासीय दृष्टिकोण है, जिसमें रेडफिल्ड यह विश्वास करता है कि पिछड़े इलाकों में नगरीय संस्कृति के फैलाव के परिणावस्वरूप विश्व का रूपान्तरण हो रहा है। रेडफिल्ड का मानना है कि नगरीकरण ने सौम्य ग्रामीण समुदायों को बरबाद कर दिया है।

ए0 एल0 क्रोबर, रीज़ और हाट, हर्सकोविट्स इत्यादि ने ग्रामीण-नगरीय सातत्य अवधारणा की विविध आधारों पर आलोचना की है। जी0पी0 मरडोक ने ग्रामीण-नगरीय सातत्य अवधारणा की आलोचना करते हुए कहा है कि, यह ऐतिहासिक, प्रकार्यात्मक या मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त और पद्धति का प्रयोग नहीं करती है। लेविस का कहना है कि लोक की अवधारणा एक आर्दश प्रारूप है, इसलिए परिभाषा का विषय है। उन्होंने अवधारणात्मक ढाँचे की सांस्कृतिक परिवर्तन और सांस्कृतिक विश्लेषण की उपयोगिता के सन्दर्भ में छह आलोचनाएँ पी0के0हाट एण्ड ए0जे0रीज सीनियर की पुस्तक 'सीटिज़ एण्ड सोसायटी', चतुर्थ संस्करण, 1963 में होरेस माइनर का लेख 'दी फॉक अर्बन कन्टीन्यूअम, पृष्ठ 25) की हैं। रीज़ और हाट का मानना है कि रेडफिल्ड का लेखन और शोध नगरीय सम्पर्क के अतिरिक्त अन्य स्रोतों की उपेक्षा करता है। अधिकाँश समाजवैज्ञानिक यह विश्वास करते हैं कि शहरों और सभ्यताओं का उद्विकास बढ़ती हुई सांस्कृतिक अन्तर्क्रियाओं और अन्तर्निर्भरता के परिणाम स्वरूप हुआ है (हाट एण्ड रीज़, जूनियर, 1963: 25)।

5.3 सारांश

प्रस्तुत इकाई में हमने जार्ज सिमैल, लुई वर्थ और रेडफिल्ड के नगरों के सांस्कृतिक स्वरूप सम्बन्धित सिद्धान्तों को विश्लेषित किया है। इसमें हमने जार्ज सिमेल के 'मेट्रोपोलिस' सम्बन्धित विचारों की समीक्षा की है कि किस तरह वह मैट्रोपोलिस को ऐतिहासिक विकास के रूप में देखता है और उसके अनुसार नगरीय जीवन की सामान्य विशेषताएँ क्या-क्या हैं। हमने इसी में लुई वर्थ के सिद्धान्त की भी चर्चा की है। नगरवाद एक जीवन शैली है, ऐसा वर्थ का मानना है। अन्त में हमने रेडफिल्ड के ग्रामीण - नगरीय सातत्य सम्बन्धित विचारों के आधार पर नगरों के सांस्कृतिक स्वरूप को समझने का प्रयास किया है।

खण्ड

2

भारत में नगरीय समाजशास्त्र

इकाई-1	5
नगरीकरण की उभरती प्रवृत्तियाँ	
इकाई-2	14
नगरीकरण के कारक	
इकाई-3	19
नगरीकरण के समाजशास्त्रीय आयाम	
इकाई-4	26
नगरीकरण के सामाजिक परिणाम	
इकाई-5	34
नगरों का भावी स्वरूप	

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

परिमापक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 जयकान्त तिवारी	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सम्पादक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 जगदीश नारायण सिंह	रीडर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड-2 : खण्ड परिचय - भारत में नगरीय समाजशास्त्र

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने औद्योगीकरण और विज्ञान के क्षेत्र में अत्यधिक प्रगति की है। अनेक नगरों और महानगरों की स्थापना के साथ-साथ औद्योगीकरण ने नगरों को आकर्षण का केन्द्र बना दिया है। नगरीकरण की प्रक्रिया में तीव्रता आयी है। प्रत्यक्ष - अप्रत्यक्ष रूप से समाज के विभिन्न पक्षों पर इसका प्रभाव पड़ रहा है। भारतीय समाज में नगरीकरण के दूरगामी प्रभावों तथ नगरीय जीवन के विभिन्न पक्षों और तथ्यों को वैज्ञानिक ढंग से देखने, व्याख्या करने और सरल भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास इस द्वितीय खण्ड में किया गया है। खण्ड द्वितीय कुल 5 इकाइयों में विभक्त है। प्रथम इकाई में भारत में नगरीकरण की उभरती प्रवृत्तियों को स्पष्ट किया गया है। इसमें नगरीकरण का संक्षिप्त परिचय देते हुए विश्व नगरीकरण की प्रवृत्तियों को देखते हुए भारत में नगरीकरण की प्रवृत्तियों को दर्शाया गया है। इसके अन्तर्गत नगरीय जनसंख्या वृद्धि दर, भारत में प्रथम वर्ग के नगर, राज्यवार नगरीय जनसंख्या वितरण को स्पष्ट किया गया है। द्वितीय इकाई नगरीकरण के कारकों से सम्बन्धित है। इसमें नगरीकरण के औद्योगिक, प्रौद्योगिक, आर्थिक, सामाजिक, भूमंडलीय आदि कारकों पर प्रकाश डाला गया है। तृतीय इकाई में नगरीकरण के समाजशास्त्रीय आयामों और चतुर्थ इकाई में इसके सामाजिक परिणामों यथा जाति, विवाह और परिवार की संस्था पर प्रभावों, जनसंख्या की अनियंत्रित वृद्धि, नारी प्रस्थिति में बदलाव, मलिन बस्तियों के विकास आदि को देखने का प्रयास किया गया है। खण्ड की अन्तिम इकाई पंचम में नगरीकरण की वर्तमान स्थिति को देखते हुए भविष्य में नगरों का स्वरूप कैसा होगा? आवासीय दशा कैसी रहेगी? सामाजिक अन्तः क्रिया का स्वरूप कैसा होगा? जनसंख्या घनत्व कितना होगा? आदि को जानने तथा उनके समाधान की भावी नीतियों पर प्रकाश डाला गया है। प्रत्येक इकाई के अन्त में उस विषय के सारांश और उससे सम्बन्धित सन्दर्भ ग्रन्थों का उल्लेख किया गया है। साथ ही लघु उत्तरीय, दीर्घ उत्तरीय और वस्तुनिष्ठ प्रश्नों को पूछा गया है। खण्ड के अन्त में पारिभाषिक शब्दावली अर्थात हिन्दी में प्रयुक्त प्रमुख शब्दों, अवधारणाओं का अंग्रेजी अनुवाद दिया गया है।

इकाई -1 : नगरीकरण की उभरती प्रवृत्तियाँ

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1 प्रस्तावना

1.2 नगरीकरण का अर्थ

1.3 नगरीकरण की परिस्थितियाँ

1.4 विश्व में नगरीकरण की प्रवृत्तियाँ

1.5 भारत में नगरीकरण की प्रवृत्तियाँ

- 1.5.1 भारत में नगरीय जनसंख्या वृद्धि दर
- 1.5.2 भारत में प्रथम वर्ग के नगर
- 1.5.3 राज्यवार नगरीय जनसंख्या वितरण
- 1.5.4 लैंगिक असमानता और नगरीकरण
- 1.5.5 मलिन बस्तियों की संख्या और नगरीकरण

1.6 सारांश

1.7 संदर्भ ग्रन्थ

1.8 सम्बन्धित प्रश्न

- (अ) लघु उत्तरीय प्रश्न
- (ब) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
- (स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1.9 प्रश्नोत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेंगे कि,

- नगरीकरण का अर्थ बता सकेंगे ।
- नगरीकरण को जन्म देने वाली परिस्थितियों को जान सकेंगे।
- विश्व में नगरीकरण की प्रवृत्तियों को समझ सकेंगे ।
- भारत में नगरीय जनसंख्या की दशकीय वृद्धि पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- भारत में प्रथम वर्ग के नगरों क जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- भारत में राज्यवार नगरीय जनसंख्या के वितरण को समझ सकेंगे।
- भारत में नगरीकरण की प्रवृत्तियों से सम्बन्धित प्रमुख वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर दे सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

आखेट युग और पशुपालन युग को पार करके जब मानव कृषि युग में पहुँचा तब शैनः शनैः ग्रामों की स्थापना हुई। इस अवस्था में पहुँचने तक मानव हिंसक एवं मांसोपयोगी पशुओं के शिकार और पशुपालन के अतिरिक्त कृषि कार्य भी सीख चुका था। कृषि के लिए वह एक निशिचत स्थान पर रहकर जीविकोपार्जन करने वाला बन गया। चारों ओर खेतों का जाल फैल गया और उन खेतों के केन्द्रीय स्थान पर जो मानव समूह बसा, उसने ग्रामों को जन्म दिया। ममफोर्ड का कहना है कि कालान्तर में इन बड़े ग्रामों ने ही विकसित होकर नगरों का रूप धारण कर लिया। इसके विपरीत एण्डरसन ने नगरों की उत्पत्ति तथा विकास में आविष्कार, प्रतिस्पर्द्धा और परिवर्तन को सहायक माना है। सर्वप्रथम नगरों की उत्पत्ति नील की घाटी में 500 ईसा पूर्व में हुई। उस समय के प्राचीन नगरों में हेलिओपोलिस, मेम्फिस और बेब्लोन प्रसिद्ध थे। चार्ल्स कूले नगरों की उत्पत्ति को परिवहन के साधनों से जोड़ते हैं । जो स्थान यातायात और सन्देशवाहन की सुविधाओं से परिपूर्ण थे वहीं नगरों की स्थापना हुई जैसे समुद्र के किनारे कोलकाता, मुम्बई जैसे नगरों के विकास को आज भी देखा जा सकता है।

1.2 नगरीकरण का अर्थ

जहाँ तक नगरीकरण का प्रश्न है, नगरीकरण शब्द नगर से बना है। सामान्य भाषा में नगरीकरण का अर्थ नगरों के विकास और प्रसार से लगाया जाता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें तीन विशेषताएं देखने को मिलती हैं जैसे - 1. नगरों की जनसंख्या में वृद्धि होना, 2. गांवों का नगरों में परिवर्तित होना, 3. ग्रामीण क्षेत्र में नगर की विशेषताओं का प्रसार होना । बर्जेल ने नगरीकरण की प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि ''ग्रामीण क्षेत्रों का नगरीय क्षेत्रों में परिवर्तित होने की प्रक्रिया को ही हमें नगरीकरण कहना चाहिए।'' इस प्रक्रिया का गाँव की जनसंख्या और आर्थिक संरचना पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जिस अनुपात में ग्रामीण जनसंख्या घटती है। ठीक उसी अनुपात से नगर की जनसंख्या में वृद्धि होती है। इस प्रक्रिया में गाँव से आने वाले लोग नगरीय जीवन की विशेषताओं को अपना कर उसका प्रसार गाँव में करते हैं। फलतः गाँव में भी नगरीय जीवन की विशेषताएं दिखलाई पड़ने लगती हैं। गोल्ड तथा गोल्ब का ऐसा मत है। कि ''नगरीय जीवन सम्बन्धी व्यवहार का ग्रामीण जीवन तक प्रसार हो जाने का नाम ही नगरीकरण है।'' डेविस के अनुसार, ''नगरीकरण एक निशिचत प्रक्रिया तथा परिवर्तन का वह चक्र है जिसमें कोई समाज कृषक से औद्योगिक में परिवर्तित होता है।'' ब्रीज के अनुसार, ''नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके कारण लोग नगरीय कहलाते हैं। नगरों में रहने लगते हैं, कृषि के स्थान पर अन्य व्यवसायों को जो नगर में उपलब्ध रहते है अपनाते हैं और अपने व्यवसाय प्रतिमानों में अपेक्षाकृत परिवर्तन लाते हैं।'' अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण अंचल के लोगों को नगरीकरण के द्वारा आकर्षित किया जाता है। नगरों में उपलब्ध सुविधाएं नगरीकरण की प्रक्रिया में योगदान देती हैं।आज के युग में बढ़ता हुआ भौतिकवाद, अच्छे जीवन की चाह नगरीकरण को तीव्र गति से प्रभावित करती है जिसके कारण छोटे नगर बड़े नगरों में तीव्र गति वे विकसित हो रहे हैं।

1.3 नगरीकरण की परिस्थितियाँ

नगरीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान करने में वैज्ञानिक प्रगति, कृषि क्रान्ति, यातायात के साधनों की वृद्धि, व्यापारीकरण, भौतिक सभ्यता और संस्कृति के प्रति व्यक्ति का आकर्षण, जनसंख्या वृद्धि आदि कारक उत्तरदायी हैं। लुईस वर्थ का कहना है कि "जनसंख्या अभिवृद्धि से विशेषीकरण का विकास होता है। इस व्यावसायिक और औद्योगिक विशेषीकरण से नगर का विकास होता है।" इंग्लैण्ड, बेल्जियम, जर्मनी, फ्रांस, अमेरिका और भारत में नगरीकरण का कारण जनसंख्या विकास ही रहा है। नगरों में आने वाली जनसंख्या को नगरों ने आकर्षित ही नहीं किया, बल्कि ग्रामीण जनसंख्या में अभिवृद्धि होने के कारण ग्रामीण लोग नगरों में आते हैं। नगरीय प्रवास में प्रेरक और पोषक तत्वों 'पुश और पुल' का सिद्धान्त कार्यशील रहता है। कई देशों में इस प्रक्रिया को रोकने का प्रयत्न किया गया विशेषकर इंग्लैण्ड, फ्रांस, रूस और पोलैण्ड में, लेकिन इन सब नियंत्रणों का कोई प्रभाव नहीं रहा। इन देशों में नगरीकरण बढ़ा और प्रबल होता गया।

1.4 विश्व में नगरीकरण की प्रवृत्तियाँ

मानव इतिहास के लम्बे काल में नगरीकरण ने बहुत धीरे धीरे कदम बढ़ाया है। औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व नगरीय विकास की वृद्धि दर अति मंद थी। औद्योगिक क्रान्ति के बाद यह वृद्धि अनवरत बढ़ती गयी। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि 1800 ई. में नगरीय जनसंख्या कुल जनसंख्या का 4.79 प्रतिशत थी। सन् 1950 में विश्व की कुल जनसंख्या का 29 प्रतिशत नगरों में निवास करने लगी । 1990 में यह प्रतिशत बढ़कर 45 तथा सन् 2005 में 50 प्रतिशत को पार कर गया। विश्व के विभिन्न भागों में नगरीय जनसंख्या का वितरण भी असमान रहा है। विश्व के पिछड़े राष्ट्रों में नगरीय विकास का स्तर जहाँ निम्न रहा है वहीं नगरीय जनसंख्या वृद्धि दर विकसित राष्ट्रों से काफी आगे है। 1950 ई0 के बाद विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में नगरीय जनसंख्या तेजी के साथ बढ़ी है। 1980 में विकासशील देशों में नगरीय जनसंख्या वृद्धि दर 3.7 प्रतिशत थी जो विकसित देशों के 1.3 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या वृद्धि दर से तीन गुना अधिक थी। आज विश्व में सर्वाधिक नगरीय जनसंख्या एशियाई देशों में है। भारत, चीन और इण्डोनेशिया में ही लगभग 80 करोड़ लोग नगरों में रह रहे हैं जो तीन महाद्वीपों की समस्त नगरीय जनसंख्या से अधिक है। भारत में नगरीकरण का अनुपात संयुक्त राज्य अमेरिका से कम है लेकिन भारत की नगरीय जनसंख्या को यदि हम देखें तो वह अमेरिका की कुल जनसंख्या से अधिक है। उल्लेखनीय है कि विकासशील देशों में नगरीकरण औद्योगिक प्रगति का प्रतिफल न होकर शासकीय कार्यों, वाणिज्य, व्यापार, कृषि आधारित अर्थव्यवस्था आदि के विस्तार का प्रतिफल है। इन देशों में अभी भी आधारभूत औद्योगिक ढांचा तथा पूंजी संचय का स्तर निम्न ही है।

1.5 भारत में नगरीकरण की प्रवृत्तियाँ

भारत में नगरीकरण का प्रथम चरण सिन्धु घाटी की सभ्यता से प्रारम्भ होता है। इस सभ्यता में 6 विकसित नगर होने के प्रमाण हैं। ये नगर थे - हड़प्पा, मोहन जोदड़ो, चन्हुदड़ों, काली बंगा, लोथल तथा रोपड़। लगभग 600 ई. पूर्व से यहाँ नगरीकरण का दूसरा चरण प्रारम्भ हुआ। इस चरण

में धार्मिक, सांस्कृतिक तथा प्रशासनिक केन्द्र के रूप में कई नगरों का विकास हुआ। इनमें से कई नगर तो समाप्त हो गये परन्तु कई नगरों का अस्तित्व अभी भी बना हुआ है। 18वीं सदी में अंग्रेजों के आगमन के साथ यहाँ नगरीकरण का तीसरा चरण प्रारम्भ हुआ। अंग्रेजों ने नगरीकरण की अधुनिक विशेषताओं के आधार पर यहाँ नगरीय विकास को प्रेरित किया। इस चरण में समुद्रतटीय स्थलों के साथ कई उद्योग सुलभ स्थानों का भी नगरों के रूप में उदय हुआ। पर्यटन, प्रशासकीय मुख्यालय औद्योगिक केन्द्र के रूप में नगरों के विकास के अलावा दिल्ली, कोलकाता, मुम्बई तथा चेन्नई के रूप में चार महानगरों का उदय भी इस चरण की मुख्य विशेषता रही है।

1.5.1 भारत में नगरीय जनसंख्या वृद्धि दर

20वीं सदी में भारत में कुल जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ नगरीय जनसंख्या में भी वृद्धि हुई। 1901 में भारत की नगरीय जनसंख्या 2.5 करोड़ थी। 2001 में यह बढ़ कर 27.78 करोड़ हो गयी। दस दशकों में यह ग्यारह गुना से भी अधिक बढ़ गयी। निम्नलिखित सारणी भारत में नगरीय जनसंख्या की दशकीय वृद्धि को प्रदर्शित करती है -

सारणी - भारत : नगरीय जनसंख्या वृद्धि (1901-2001)

वर्ष	कुल जनसंख्या (मिलियन में)	नगरीय जनसंख्या (मिलियन में)	दशकीय अन्तर (प्रतिशत में)	कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत
1901	236.3	25.7		10.84
1911	252.1	26.6	2.4	10.29
1921	251.4	28.6	7.3	11.18
1931	279.0	33.8	18.4	11.99
1941	318.7	44.3	31.1	13.86
1951	361.1	62.6	41.1	17.29
1961	439.2	78.8	25.9	17.97
1971	548.2	1.8.8	37.8	19.91
1981	683.3	156.2	46.1	23.34
1991	844.3	217.2	36.4	25.71
2001	1027.0	285.3	31.1	27.78

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि भारत में नगरीय जनसंख्या की वृद्धि दर एक जैसी नहीं है। 1941-51 के नगरीय जनसंख्या में वृद्धि का कारण देश विभाजन के कारण अधिकांश शरणार्थियों का नगरों एवं कस्बों में आश्रय लेना था। 1951-61 के दशक को छोड़कर यह वृद्धि बढ़ती ही गयी। 1951-61 में भी परिभाषा परिवर्तन के कारण कई नगर, नगर की श्रेणी से हटा दिये गये। 1971-81 में यह वृद्धि दर उच्चतम तथा पुनः 1981-2001 के दशकों में नगरीय जनसंख्या घटती प्रवृत्ति को प्रदर्शित कर रही है। इस घटाव का मुख्य कारण कुल जनसंख्या में मन्य वृद्धि तथा नगरीय - ग्रामीण प्रवास में कमी का आना है। सारणी के अवलोकन से यह भी पता चलता

है कि 2001 की जनगणना के अनुसार 27.78 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में रहती है, जब कि 1991 में 25.71 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में रहती थी। आज संयुक्त राज्य अमेरिका की कुल जनसंख्या 28.14 करोड़ है। जबकि इस समय हमारे देश में 28.6 करोड़ से ऊपर जनसंख्या नगरों में रह रही है।

1.5.2 भारत में प्रथम वर्ग के नगर

सन 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में प्रथम वर्ग के 423 नगरों में से 35 नगर महानगर की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं क्योंकि इन नगरों की जनसंख्या 10लाख से बढ़ चुकी है। 1991 में इनकी संख्या मात्र 23 थी। इन 35 महानगरों में से 6 वृहद नगर (मेट्रोपोलिटन सिटी) मुम्बई, दिल्ली, कोलकाता, चेन्नई, बंगलौर, तथा हैदराबाद हैं। इन नगरों की जनसंख्या 50लाख से ऊपर है। इनमें भी 3 नगरों की आबादी एक करोड़ के आस-पास पहुँच गई है। भारत में प्रथम श्रेणी के नगरों की संख्या में वृद्धि का मुख्य कारण द्वितीय श्रेणी के नगरों में जनसंख्या का बढ़ना तथा उनका प्रथम श्रेणी में शामिल होना है।प्रथम श्रेणी के नगरों में कुल नगरीय जनसंख्या का 62.3 प्रतिशत भाग रहता है। आज जिस गति से नगरों की जनसंख्या बढ़ रही है उस अनुपात में आर्थिक संसाधन नहीं बढ़ रहे हैं । इस कारण मलिन बस्तियों का भी विस्तार होता आ रहा है। ये मलिन बस्तियाँ नगरों में अपराध, बाल अपराध, अनैतिकता, अस्वास्थ्यकर वातावरण, वैयक्तिक, पारिवारिक विघटन और निम्न जीवन स्तर की प्रवृत्ति को बढ़ावा दे रही हैं।

1.5.3 राज्यवार नगरीय जनसंख्या का वितरण

भारत में राज्यवार नगरीय जनसंख्या के वितरण के दृष्टिकोण से भी प्राप्त आंकड़ों में काफी अन्तर है। नगरीकरण के दृष्टिकोण से गोआ का स्थान प्रथम है। मिजोरम द्वितीय एवं महाराष्ट्र तृतीय स्थान पर हैं। हिमाचल प्रदेश देश का सबसे कम नगरीकृत राज्य है। पूर्वोत्तर हिमालय क्षेत्र का सिक्किम देश का तीसरा सबसे कम नगरीकृत राज्य है। कुल नगरीय जनसंख्या के दृष्टिकोण से महाराष्ट्र प्रथम, उत्तर प्रदेश द्वितीय, तमिलनाडु तृतीय, पश्चिम बंगाल चतुर्थ एवं आन्ध्र प्रदेश पांचवें स्थान पर है। 2001 की जनगणना के अनुसार प्रथम पांच राज्यों के नगरीय जनसंख्या का क्रमिक वितरण इस प्रकार है -

सारणी - नगरीय जनसंख का वितरण

राज्य	कुल नगरीय जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत
महाराष्ट्र	41,100,980	42.40
उत्तर प्रदेश	34,539,582	20.78
तमिलनाडु	27,443,553	44.00
प. बंगाल	22,486,481	28.03
आन्ध्र प्रदेश	20,808,940	27.30

महाराष्ट्र की कुल जनसंख्या का 42.40 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है। देश के कुल 28.61 करोड़ नगरीय जनसंख्या में 4.11 करोड़ का योगदान महाराष्ट्र करता है। देश की

कुल नगरीय जनसंख्या में महाराष्ट्र का सर्वाधिक योगदान 14.37 प्रतिशत है। 2001 की जनगणना के अनुसार संघ राज्य क्षेत्रों में सर्वाधिक नगरीकृत दिल्ली है। इसके बाद क्रमशः द्वितीय और तृतीय स्थान पर चण्डीगढ़ और पाण्डीचेरी है। नगरीकरण के आंकड़ों से यह भी पता चलता है कि पूर्वी भारत की अपेक्षा पश्चिमी तथा उत्तरी भारत की अपेक्षा दक्षिणी भारत अधिक नगरीकृत है।इसका कारण क्षेत्रीय संसाधन तथा नगरीय विकास हो सकता है। उत्तर व उत्तर पूर्व में हिमालय के पर्वतीय भाग, भारत के सबसे कम नगरीकरण वाले क्षेत्र हैं।

1.5.4 लैंगिक असमानता और नगरीकरण

आर0 सी0मजूमदार का कहना है कि भारत एक कृषि प्रधान देश होते हुए भी नगरीय सभ्यता में संसार के अन्य देशों की तुलना में अग्रणी रहा है, जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण मोहनजोदड़ों तथा हड़प्पा की खुदाई से प्राप्त अवशेष चिन्ह हैं। यद्यपि देश में नगरों का विकास अति प्राचीन काल से हो रहा है, परन्तु नगरीकरण की प्रक्रिया का सर्वाधिक विकास आजादी के बाद विशेषतया पंचवर्षीय योजनाओं के क्रियान्वयन तथा आधुनिक और विशाल उद्योग धन्धों की स्थापना से हुआ जिसमें नगरों की संख्या तथा जनसंख्या दोनों में पर्याप्त वृद्धि हुई। जनसंख्या वृद्धि के कारणों को देखा जाय तो उसमें सर्वाधिक हाथ स्थानान्तरण का है और उसमें भी स्त्रियों की अपेक्षा पुरूषों का आवागमन नगरों की ओर अधिक रहा है जिससे नगरों में पुरूषों की बहुलता होती गयी। इससे यौन अनुपात के क्षेत्र में विशेष अन्तर होता गया। प्रथम वर्ग के नगरों में यह अन्तर विशेष रूप से देखने को मिल रहा है। इसका प्रधान कारण नौकरी की ओर लोगों का अधिक खिंचाव है। प्रो. जकारिया ने असम तथा गुजरात में पुरूषों के अत्यधिक स्थानान्तरण का यही कारण पाया। डेविस का निष्कर्ष भी कुछ इसी तरह का रहा। इनके अनुसार विवाहितों की अपेक्षा अविवाहित पुरूष अधिक स्थानान्तरण करते हैं। विवाहित पुरूष अपने परिवार, स्त्री-बच्चों को माँ-बाप के यहाँ छोड़ कर स्थानान्तरण करते हैं। उत्तर प्रदेश, राजस्थान तथा बिहार में यदि पुरूषों का स्थानान्तरण कम है तो इसका कारण इन प्रदेशों में उद्योग-धन्धों का विकास कम होना है। स्त्रियों के स्थानान्तरण न होने का कारण नगरों में मकानों की समस्या, नौकरी की असुविधा तथा अशिक्षा का प्रसार है जिससे वे पुरूषों की होड़ में पीछे रह जाती हैं।

1.5.5 मलिन बस्तियों की संख्या और नगरीकरण

नगरीकरण की तीव्रता के कारण मलिन बस्तियों का फैलाव भारतीय नगरों में हो रहा है। महाराष्ट्र में मलिन बस्तियों की जनसंख्या 1.06 करोड़ है जो सर्वाधिक है। केरल में जनसंख्या का .41 प्रतिशत सबसे कम मलिन बस्तियाँ हैं। मलिन बस्ती जनसंख्या का राष्ट्रीय औसत 14.1 प्रतिशत है। देश में मलिन बस्तियों की कुल जनसंख्या 4.3करोड़ है जो मलिन बस्तियों वाले नगरों की कुल जनसंख्या का 22.58 प्रतिशत है। दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों में मलिन बस्तियों की जनसंख्या का अनुपात सबसे अधिक मुम्बई में 48.88 प्रतिशत और सबसे कम पटना में 0.25 प्रतिशत है। मुम्बई की मलिन बस्तियों में महाराष्ट्र की जनसंख्या का 6 प्रतिशत निवास करती है और

अधिकतर नगरीय समस्याएं इन्हीं मलिन बस्तियों से सम्बन्धित होती हैं ।

1.6 सारांश

इस प्रकार हम देखते हैं कि नगरीकरण ने वर्तमान समय में समाज के समक्ष सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार की प्रवृत्तियों को जन्म दिया है। इसके कारण जहाँ नगरों के स्वरूप में व्यापक परिवर्तन, छोटे नगरों का महानगरों के रूप में विकास, ग्रामीण क्षेत्रों तक नगरों का विस्तार हुआ है, वहीं इस प्रक्रिया ने अनेक गम्भीर समस्याओं को भी जन्म दिया है। नगरीकरण के कारण व्यक्तिगत व्यवहार प्रतिमान, सांस्कृतिक जीवन, परम्परागत परिवार और वैवाहिक मूल्य प्रभावित हुए हैं। जाति व्यवस्था और ग्रामीण समुदाय पर इसका प्रभाव पड़ा है। प्रव्रजन और नगरीय जनसंख्या की अभिवृद्धि हुई है। कुटीर उद्योगों का पतन हुआ है। मलिन बस्तियाँ से दुर्घटनाएं, बीमारियां, अपराध, बेरोजगारी, वेश्यावृत्ति, मद्यपान आदि समस्याएं बढ़ी हैं जो किसी न किसी रूप में व्यक्ति और समाज को विघटित कर रही हैं। व्यक्ति और समाज को विघटन से बचाने के लिए आज हमें नगरीकरण की गति को उचित दिशा में ले जाने की आवश्यकता है अन्यथा इसके परिणाम व्यापक स्तर पर अति गम्भीर और घातक हो सकते हैं।

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. नेल्स एण्डरसन : दी अरबन कम्युनिटी, न्यूयार्क, 1959
2. गेराल्ड ब्रीज : अर्बनाइजेशन इन न्यूली डेवलपिंग कंट्रीज, बाम्बे, 1970
3. इगोर अर्नेस्ट बर्जेल : अरबन सोशियोलाजी, न्यूयार्क, 1955
4. आशीष बोस : स्टडीज इन इण्डियाज अर्बनाइजेशन, बाम्बे, 1973
5. लुईस विर्थ : अर्बनाइजेशन एज ए वे आफ लाइफ, दी अमेरिकन जर्नल आफ सोशियोलाजी, 1938
6. के0 डेविस : पापुलेशन आफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, प्रिन्टाइस, 1951
7. भारतीय जनगणना रिपोर्टः 2001
8. टी0जी0मैकगी : अर्बनाइजेशन प्रासेज इन द वर्ल्ड, लन्दन, 1971

1.8 सम्बन्धित प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नगरों की उत्पत्ति कैसे हुई?
2. नगरीकरण क्या है?
3. विकासशील देशों में नगरीकरण के कारक क्या है?
4. विश्व में नगरीय जनसंख्या की वृद्धि दर क्या है?

5. भारत में नगरीकरण के विभिन्न चरणों को स्पष्ट कीजिए।
6. भारत में नगरीय जनसंख्या की वृद्धि दर को स्पष्ट कीजिए।
7. भारत में राज्यवार नगरीय जनसंख्या के वितरण को स्पष्ट कीजिए।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. नगरीकरण क्या है? नगरीकरण की उत्तरदायी परिस्थितियों का वर्णन कीजिए।
2. नगरीकरण क्या है? भारत में इसके प्रमुख चरणों को स्पष्ट कीजिए।
3. विश्व में नगरीकरण की प्रवृत्तियों का वर्णन कीजिए।
4. भारत में नगरीकरण की मुख्य प्रवृत्तियां क्या हैं? विवेचना कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. ''ग्रामीण क्षेत्रों का नगरीय क्षेत्रों में परिवर्तित होने की प्रक्रिया को नगरीकरण कहते हैं,'' किसने कहा है?

   (अ) कोल्ड एण्ड कोल्ब (ब) एण्डरसन
   (स) बर्जेल (द) डेंविस

2. सामान्य रूप से नगरीकरण का तात्पर्य है -

   (अ) कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या के अनुपात को प्रकट करना
   (ब) केवल ग्रामीण जनसंख्या का नगरों की ओर जनसंख्या प्रवास को प्रकट करना
   (स) केवल छोटे नगरों से बड़े नगरों की ओर जनसंख्या के प्रवास को प्रकट करनाा
   (द) किसी देश में केवल महानगरों के विस्तार का होना

3. निम्नलिखित एशियाई देशों में सर्वाधिक नगरीकृत देश है -

   (अ) इराक (ब) थाइलैण्ड
   (स) जापान (द) मलेशिया

4. भारत का सर्वाधिक नगरीकृत राज्य है -

   (अ) गोआ (ब) मिजोरम
   (स) महाराष्ट्र (द) गुजरात

5. विश्व में सर्वाधिक नगरीय जनसंख्या किस महाद्वीप में है?

   (अ) अमेरिका (ब) अफ्रीका
   (स) योरप (द) एशिया

6. सन 2001 में भारत की कुल जनसंख्या में नगरीकृत जनसंख्या का प्रतिशत है-

   (अ) 25 (ब) 26.6
   (स) 27.8 (द) 26.8

7. भारत की कुल नगरीय जनसंख्या का कितना प्रतिशत भाग प्रथम श्रेणी के नगरों में रहता है?

   (अ) 35 (ब) 55
   (स) 62.3 (द) 72

8. भारत की नगरीय जनसंख्या में सर्वाधिक योगदान किसका है?

(अ) उत्तर प्रदेश का (ब) महाराष्ट्र का

(स) पश्चिम बंगाल का (द) तमिलनाडु का

9. 2001 में भारत के प्रथम वर्ग के कुल नगरों की संख्या थी -

(अ) 423 (ब) 299

(स) 223 (द) 206

10. निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत -

(अ) पेशों की विविधता नगरीय जीवन की एक विशेषता है। सही/गलत

(ब) ग्रामीण-नगरीय प्रवजन नगरीय जनसंख्या की वृद्धि में योगदान देता है। सही/गलत

(स) नगरीकरण की दृष्टि से भारत एक उच्च नगरीकृत देश है। सही/गलत

(द) भारत में नगरीय जनसंख्या की वृद्धि में औद्योगीकरण प्रमुख योगदान देता है। सही/गलत

11. निम्नलिखित में से किनसे भारत में नगरीय जनसंख्या का आकार प्रभावित होता है?

(अ) जन्म दर (ब) मृत्यु दर

(स) स्थानों का पुनर्वर्गीकरण (द) सभी

12. जनगणना वर्ष 1901 से जनगणना वर्ष 2001 तक भारत की कुल जनसंख्या की नगरीय जनसंख्या प्रतिशत में लगभग कितनी वृद्धि हुई है?

(अ) 13 प्रतिशत (ब) 21 प्रतिशत

(स) 17 प्रतिशत (द) 25 प्रतिशत

13. भारत में नगरीकरण -

(अ) औद्योगीकरण के फलस्वरूप प्रारम्भ हुआ ।

(ब) औद्योगीकरण का कारण बना ।

(स) आधुनिक शिक्षा के फलस्वरूप प्रारम्भ हुआ ।

(द) औद्योगीकरण तथा पश्चिम प्रभावों के पहले अस्तित्व में था।

1.9 प्रश्नोत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

1. (स) 2. (अ) 3. (स) 4. (अ)

5. (द) 6. (स) 7. (स) 8. (ब)

9. (अ) 10. (अ - सही, ब - गलत, स- गलत द- सही)

11. (द) 12. (ब) 13. (द)

इकाई -2 : नगरीकरण के कारक

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 नगरीकरण के औद्योगिक कारक
2.3 प्रौद्योगिक कारक
2.4 आर्थिक कारक
2.5 राजनीतिक कारक
2.6 सामाजिक कारक
2.7 भूमण्डलीय कारक
2.8 सारांश
2.9 संदर्भ ग्रन्थ
2.10 सम्बन्धित प्रश्न
(अ) लघु उत्तरीय प्रश्न
(ब) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
(स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न
2.11 प्रश्नोत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के सम्बन्ध को जान सकेंगे ।
- नगरीकरण को गति देने मे प्रौद्योगिक एवं आर्थिक कारकों की भूमिका को जान सकेंगे।
- राजधानी स्थापना से नगरीकरण की प्रक्रिया की प्रबलता को समझ सकेंगे ।
- नगर प्रवास के सामाजिक कारकों को पहचान सकेंगे।
- नगरीकरण के भूमण्डलीय कारकों पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- नगरीकरण के क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि के योगदान को ज्ञात कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

आखेट युग और पशु पालन युग को पार करके जब मानव कृषि युग में पहुँचा तक कृषि कार्य के लिए उसने एक निश्चित स्थान पर निवास करना आरम्भ किया। चारो ओर खेतों का जाल फैल गया और उन खेतों के केन्द्रीय स्थान पर जो मानव स्वरूप बसा उसने ग्रामों को जन्म दिया। ममफोर्ड

का कहना है कि कालान्तर में बड़े ग्रामों ने विकसित होकर नगरों का रूप धारण कर लिया। ग्राम और नगर की संस्कृति के मिलने से एक ऐसी जीवन विधि का विकास हुआ जिसमें ग्राम ओर नगर दोनो के तत्व थे। एक नये सामाजिक वर्ग का जन्म हुआजिसका भूमि के साथ कोई सम्बन्ध नहीं था। यह वर्ग औद्योगिकं श्रमिक वर्ग कहलाया। इस वर्ग के कौशल और ज्ञान के फलस्वरू ही विभिन्न उद्योगों की स्थापना हुई, विशाल भवनों का निर्माण हुआ। इस प्रकार नगर के जन्म के साथ ही नगरीकरण की प्रक्रिया भी प्रारम्भ हुई। यद्यपि युरोप, अमेरिका तथा एशिया के देशों की तुलना में भारत में यह प्रक्रिया शिथिल रही है। किन्तु वर्तमान समय में विकास, उन्नति, प्रगति और उद्योग धन्धों आदि की वृद्धि के कारण इसकी गति तीव्र होती जा रही है। कृषि क्रान्ति, अनुकूल भौगोलिक पर्यावरण, नगरीय सुविधाओं के आकर्षण, राजनीतिक परिस्थितियाँ, प्रौद्योगिक विकास आदि कारक इस प्रक्रिया की तीव्रता में वृद्धि कर रहे हैं।

2.2 नगरीकरण के औद्योगिक कारक

नगरों के विकास में औद्योगिकरण एक महत्वपूर्ण कारक है। यदि किसी देश में नगरों का विकास तेजी से हो रहा है तो समझ लेना चाहिए कि वहाँ औद्योगीकरण भी उतनी ही शीघ्रता से हो रहा है। जो लोग उद्योगों में काम करते हैं उनकी आवश्यकता की पूर्ति के लिए दूसरे लोग भी वहाँ आ जाते हैं। उद्योग से बनी चीजों को खरीदकर ये उसे देश में वितरित करने का कार्य करते हैं। साथ ही उस उद्योग के लिए आवश्यक पूंजी या साख आदि जुटाने के लिए अनेक प्रकार के बैंक आदि भी खुल ज़ाते हैं। इस प्रकार औद्योगीकरण के साथ-साथ व्यापार और वाणिज्य में प्रगति होने लगती है। शिक्षा और मनोरंजन के साधन बढ़ने लगते हैं। इनसे लाभ उठाने के लिए आस पास के लोग नगरों में आकर रहने लगते हैं। नगर की जनसंख्या बढ़ती है। उसका विस्तार होने लगता है। छोटे नगर बड़े नगरों में बदलने लगते हैं। आज मुम्बई, कानपुर, अहमदाबाइद तथा कोलकाता इत्यादि नगर इसी प्रकार से विकसित नगरों के उदाहरण हैं। कई बार औद्योगींकरण नये सि से नगरों को विकसित करने में भी सहायक हैं, अर्थात यदि उद्योग ऐसे क्षेत्रों में खुल जाएं जहाँ पहले से नगर नही हैं, तो शीघ्र ही ऐसे क्षेत्र नगरीय क्षेत्रों में बदल जाते हैं। ऐसे नगरों को सामान्यतः औद्योगिक नगरों की संज्ञा दी जाती है। भारत में टाटानगर, फरीदाबाद, भिलाई, राऊरकेला, चितरंजन, गाजियाबाद इत्यादि ऐसे नगरों के प्रमुख उदाहरण हैं।

2.3 प्रौद्योगिक कारक

नगरीकरण का एक महत्वपूर्ण कारक प्रौद्योगिकीय विकास भी है। प्रौद्योगिकीय उन्नति से परिवहन तथा संचार के साधनों में उन्नति होती है। दुनियाँ के किसी भी भाग से कच्चा माल मंगवाकर उद्योग धन्धों का विकास किया जा सकता है। कृषि के क्षेत्र में मशीनों का प्रयोग करके समय की बचत की जा सकती है। अनेक व्यक्तियों को कृषि से अवकाश देकर नगरों में श्रमिकों की आवश्यकता पूरी की जा सकती है। प्रौद्योगिक विकास से खेती के उत्पादन में उन्नति होती है। आधारभूत उद्योग धन्धों के लिए आवश्यक माल, कपड़ा, जूट, चीनी, घी, तेल आदि सरलता से मिलने लगता है। आज छोटे बड़े सभी मिल, कारखानों और फैक्टिरियों में उत्पादन का कार्य मशीनों और नूतन तकनीकी पद्धति से किया जा रहा है। तकनीकी विकास के कारण ही आज छोटे छोटे नगरों में भी उद्योग धन्धों का विकास हो रहा है। उद्योग धन्धों के बढ़ने से व्यापार और वाणिज्य में प्रगति होती है। लाभ उठाने के लिए लोग भागते हैं। नगर की जनसंख्या बढ़ती है। उसका विस्तार होने लगता है।

2.4 आर्थिक कारक

नगरीकरण का एक महत्वपूर्ण कारक आर्थिक भी है। नगर में आर्थिक क्षेत्र विस्तृत रूप में पाया जाता है। लोग सरलता से जीविकोपार्जन कर सकते हैं। ग्रामों में कृषि या उससे सम्बन्धित व्यवसायों को छोड़कर अन्य व्यवसाय नहीं पाये जाते । इसके विपरीत नगरों में व्यवसायों की भरमार रहती है जिसके कारण लोग नगरों की तरफ आकर्षित होते हैं। नगर आर्थिक आकर्षक के केन्द्र हैं। यहाँ की शान, चमक-दमक, रहन-सहन का स्तर आदि सब कुछ ऐसा है। जो लाखों व्यक्तियों को नगर में काम करने और बसने का निमंत्रण देता है। इससे नगरीकरण की प्रक्रिया को बल मिलता है।

2.5 राजनीतिक कारक

नगर आवागमन के साधनों का केन्द्र एवं उद्योग धन्धों तथा व्यापार का प्रमुख स्थान होता है। यहाँ जीवन की आवश्यकताएं सरलता से पूर्ण की जा सकती हैं। इसी कारण सरकारें अपने केन्द्र नगरों में ही बनाती हैं। राजधानी स्थापना से नगरीकरण की प्रक्रिया अधिक प्रबल हुई हैं। इस दृष्टि से दिल्ली, अहमदाबाद, लखनऊ, हैदराबाद, चेन्नई आदि नगर उल्लेखनीय हैं। राजधानी हो जाने के कारण नगरों का और अधिक विकास होने लगता है।क्योंकि वह उस प्रदेश व क्षेत्र विशेष के आकर्षण का केन्द्र बन जाता है।सेना भी यहाँ पर अधिक मात्रा में रखी जाती है। इसके अतिरिक्त प्रायः प्रमुख कार्यालय भी राजधानी में स्थित होते हैं जिनके कारण नगरीय जनसंख्या में वृद्धि का प्रतिशत बढ़ जाता है।

2.6 सामाजिक कारक

नगरीकरण के अनेकों सामाजिक कारक भी हैं। हमारा ग्रामीण समाज आज अपने को असुरक्षित समझता है। हत्या, डकैती आम बात है। इसके नगरों में जान माल की अधिक सुरक्षा रहती है। नगर प्रशासन चुस्त-दुरूस्त रहता है। ग्रामीण समाज की अपेक्षा नगरीय समाज में लोग जीवन को अधिक सुरक्षित समझकर रहना प्रारम्भ कर देते हैं। इसके अतिरिक्त गांव में व्यक्ति के पास मनोरंजन के नाम पर कुछ नहीं रहता है। अच्छे पार्क, चिड़ियाघर, ऐतिहासिक और धार्मिक स्थल, बच्चों के खेलने के स्थान, चिकित्सकीय सुविधा, उच्च शैक्षणिक संस्थान आदि की कमी रहती है। इन सब कारणों से लोग आज नगरों की ओर भाग रहे हैं और नगरीकरण का विकास हो रहा है।

2.7 भूमण्डलीय कारक

भूमण्डलीकरण या वैश्वीकरण भी आज नगरीकरण का एक प्रमुख कारक बनता जा रहा है। भूमण्डलीकरण एक ऐसी जटिल प्रक्रिया है जो व्यापार, प्रौद्योगिकी, उद्योग, अर्थव्यवस्था और आधुनिकता से जुड़ी संस्थाओं को सार्वभौमिक दिशा की ओर रूपान्तरित करती है। इसका उद्देश्य सम्पूर्ण विश्व को एक अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत लाना है। विश्व के किसी भी एक भाग में बनने वाले उत्पाद को पूरे विश्व में बिकने की सुविधा उपलब्ध कराना है। ल्योतार जैसे समाजशास्त्री वैशवीकरण को सीधे अर्थों में विश्व बाजारवाद के आर्थिक नियम और सिद्धान्त के रूप में लेते हैं जिसका महत्व आर्थिक अन्तनिर्भरता को बढ़ावा देना है। इसके प्रेरक बाजार की खोज, बहुराष्ट्रीय विनिवेश,

प्रोद्योगिकी, इलेक्ट्रानिक के उपकरण और कम्प्यूटर नेटवर्क हैं। वैश्वीकरण का केन्द्र आज विश्व के वे नगर होते जा रहे हैं जहाँ औद्योगिक एवं तकनीकी विकास चरम स्थिति में हैं। ये अपने उत्पादों के विपणन, व्यापार और उपभोग के लिए एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिकी देशों के नगरों को देखते हैं। जहाँ कच्चे माल की खोज और बाजार विस्तार की व्यापक सम्भावना है।

हमारे देश में अशिक्षा, जनसंख्या की अधिकता, संसाधनों की कमी और जागरूकता का अभाव है। जिसका लाभ समृद्ध देश उठाकर अपने उत्पादों को आकर्षक विज्ञापनों तथा संचार के माध्यमों द्वारा भारतीय नगरों में पहुँचा रहे हैं। नगरों के सम्पन्न लोग तो इन्हें खरीद ही रहे हैं, मध्यम एवं साधारण वर्ग के लोग भी उनकी नकल करने में पीछे नहीं हैं। इसका परिणाम यह हो रहा है। कि हमारा स्वदेशी उद्योग और अर्थव्यवस्था कमजोर होती जा रही है। नगरों के लघु एवं मध्यम उद्योग, हैण्डलूम एवं पावलूम समाप्त होते जा रहे हैं और नगरीय बाजार ग्लोबल बाजार का हिस्सा बनते जा रहे हैं।

2.8 सारांश

नगर के जन्म के साथ ही नगरीकरण की प्रक्रिया भी प्रारम्भ हुई है। यद्यपि युरोप, अमेरिका तथा एशिया के देशों की तुलना में भारत में यह प्रक्रिया धीमी रही है।लेकिन वर्तमान में विकास, प्रगति और उद्योग-धन्धों आदि की वृद्धि के कारण इसकी गति तीव्र होती जा रही है। आजादी के बाद जो नगर प्रान्तों की राजधानियाँ बने वहाँ नगरीकरण तेजी से हुआ। जिन नगरों का आर्थिक दृष्टि से विकास हुआ तथा जहाँ बड़े उद्योग-धन्धे विकसित हुए वहाँ नगरीकरण में तीव्रता आयी। सांस्कृतिक एवं धार्मिक कारकों ने भी नगरीकरण में योगदान दिया। कृषि क्रान्ति, अनुकूल भौगोलिक पर्यावरण, नगरीय सुविधाओं के आकर्षण, प्रौद्योगिकीय विकास आदि कारक भी आज इस प्रक्रिया की तीव्रता में वृद्धि कर रहे हैं। लेकिन इसका मुख्य कारक औद्योगीकरण ही है।रीजमेन का कहना है कि ''कहीं भी औद्योगीकरण की प्रक्रिया नगरीय विकास की अनुपस्थिति में घटित नहीं होती।'' टिस्डेल ने भी कहा है, ''किसी एक स्थान पर जनसंख्या को केन्द्रीभूत होने के लिए तकनीक का विकास अनिवार्य है।'' लेकिन तकनीकी विकास स्पष्टतः औद्योगीकरण की प्रक्रिया से सम्बन्धित है। इसलिए यह मानना उचित ही होगा कि औद्योगीकरण तथा नगरीकरण दोनों प्रक्रियाएं परस्पर सम्बन्धित है ।

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. एण्डरसन, नेल्स - दी अरबन कम्यूनिटी, न्यूयार्क, 1959
2. बोस, आशीष - अर्बनाइजेशन इन इण्डिया, 1970
3. ल्योटार्ड, जे0एफ0 - दी पोस्ट माडर्न कंडीशन, मैनचेस्टर, 1984
4. ममफोर्ड, लेविस - सिटी डेवलपमेन्ट, न्यूयार्क, 1945
5. ब्रीज, गेराल्ड - अर्वनाइजेशन अन न्यूली डेवलपिंग कंट्रीज, बाम्बे, 1970

2.10 सम्बन्धित प्रश्न

(अ) लघुउत्तरीय प्रश्न

1 औद्योगिक नगर किसे कहते हैं?

2. औद्योगिक श्रमिक वर्ग किसे कहते हैं?

3. वैश्वीकरण के प्रेरक क्या हैं?

4. नगरीय जीवन पर वैश्वीकरण का क्या प्रभाव पड़ा है?

(ब) दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. भारत में नगरीकरण के प्रमुख कारक क्या हैं? स्पष्ट कीजिए।

2. प्रौद्योगिक एवं आर्थिक विकास नगरीकरण को किस तरह प्रभावित करता है? स्पष्ट कीजिए।

3. नगरीकरण को जन्म देने वाली परिस्थितियों का वर्णन कीजिए।

(स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. निम्नलिखित में से कौन सा मूलतः औद्योगिक नगर नहीं है ?

   (अ) दुर्गापुर (ब) रांची

   (स) जमशेदपुर (द) कोचीन

2. भारतीय नगरों की जनसंख्या वृद्धि में किसका प्रमुख योगदान है?

   (अ) प्रवजन (ब) नैसर्गिक वृद्धि

   (स) नगरीय सीमाओं का निर्धारण (द) औद्योगीकरण

3. नगरीकरण की प्रक्रिया शिथिल रही है -

   (अ) भारत में (ब) इंग्लैण्ड में

   (स) अमेरिका में (द) फ्रांस में

4. राऊरकेला किस प्रकार का नगर है?

   (क) धार्मिक (ब) प्रतीकात्मक

   (स) औद्योगिक (द) सांस्कृतिक

5. सम्पूर्ण विश्व को एक अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत लाकर किसी भी एक भाग में बनने वाले उत्पाद को पूरे विश्व में किबने की सुविधा उपलब्ध कराना किसका उद्देश्य है?

   (अ) आधुनिकीकरण का (ब) भूमंडलीकरण का

   (स) पश्चिमीकरण का (द) किसी का नहीं ।

6. निम्नलिखित में कौन नगर की विशेषता है ?

   (अ) गैर कृषि व्यवसाय (ब) बड़ आकार

   (स) उच्च जनसंख्या घनत्व (द) उक्त सभी

2.11 प्रश्नोत्तर

1. (द) 2. (द) 3. (अ) 4. (स)

5. (ब) 6. (द)

इकाई -3 : नगरीकरण के समाजशास्त्रीय आयाम

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 समाजशास्त्रीय विश्लेषण की कठिनाइयाँ

3.3 नगरीकरण एवं नगरीयता का भेद

3.4 औद्योगीकरण एवं नगरीकरण में अन्तर

3.5 औद्योगीकरण एवं नगरीकरण में सम्बन्ध

3.6 नगरीकरण और नगरीय विकास

3.7 सातत्य की तीव्रता और बढ़ती अन्तक्रियाएं

3.8 नगरीय समस्याएं और चुनौतियाँ

3.9 नगर प्रशासन का बढ़ता दायित्व

3.10 सारांश

3.11 संदर्भ ग्रन्थ

3.12 सम्बन्धित प्रश्न

(अ) लघु उत्तरीय प्रश्न

(ब) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

3.13 प्रश्नोत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- नगरीकरण के समाजशास्त्रीय विश्लेषण की कठिनाइयों को समझ सकेंगे ।
- नगरीकयता की विशेषताओं को ज्ञात कर सकेंगे।
- नगरीकरण एवं नगरीयता के अन्तर को बता सकेंगे ।
- औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के सम्बन्धों पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- नगरीय विकास के अर्थ पर टिप्पणी कर सकेंगे।
- नगर प्रशासन और आयोजन की कठिनाइयों को जान सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

नगरीकरण के अध्ययन की महत्ता आज विश्व भर में है। विशेष रूप से विकासोन्मुख देशों में इस प्रक्रिया का विश्लेषण आवश्यक समझा जा रहा है। इन देशों में यह प्रक्रिया तेजी से आगे

बढ़ रही है और इसके कारण और परिणामों के विश्लेषण के आधार पर ही समुचित सामाजिक नीतियों का सृजन सम्भव हो रहा है। विभिन्न प्रकार के शोध व सर्वेक्षण संस्थाएं भी नगरीकरण की प्रकृति का विश्लेषण कर रही हैं। इस सन्दर्भ में भारत में भी इसके समाजशास्त्रीय विश्लेषण की अपरिहार्य आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा है। इस विश्लेषण में जहाँ एक ओर हमें नगरीय जीवन की उदविकासीय प्रक्रिया का बोध हो रहा है, वहीं नगरीकरण के सामाजिक दुष्परिणामों की भी जानकारी प्राप्त हो रही है। नगरीकरण से विकसित मानव सभ्यता मात्र भौतिक दृष्टि से ही विशिष्ट नहीं रह गया है। बल्कि इसे हम कुल मिलाकर भौतिक तथा अभौतिक संस्कृति कह सकते हैं। इसे एक विशिष्ट सामाजिक क्रम के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। नगरीकरण से वस्तुतः नगरीय जीवन प्रणाली का आविर्भाव होता है। यह नगरीय जीवन में आकार, घनत्व, विजातीयता आदि जनसंख्यात्मक तत्वों का विकास करती है। इसके साथ ही सामाजिक सम्पर्कों की प्रकृति व उनकी प्रभावशीलता पर व्यापक प्रभाव डालकर व्यक्ति के समाजीकरण व मानव प्रकृति को भी प्रभावित कर रही है।

3.2 समाजशास्त्रीय विश्लेषण की कठिनाइयाँ

आधुनिक युग में नगरीकरण की प्रक्रिया एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में समाजशास्त्र के अध्ययन का विषय है, लेकिन इस प्रक्रिया की अवधारणा के समाजशास्त्रीय विश्लेषणों में अनेक कठिनाइयां उपस्थित होती हैं। नगरीकरण की अवधारणा का प्रयोग कभी कभी नगरीयता या नगरवाद, नगरीय जीवन और नगरीय विकास के रूप में किया जाता है। नगरीकरण की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए हमें इन सभी दृष्टियों से विचार करना आवश्यक है। इस सन्दर्भ में हमें नगरीकरण और नगरीयता के परस्पर भेद, औद्योगीकरण तथा नगरीकरण में सम्बन्ध तथा अन्तर, नगरीकरण और नगरीय विकास की अवधारणा को समझना होगा।

3.3 नगरीकरण एवं नगरीयता का भेद

नगरीय जीवन के साथ व्यक्तियों के समायोजन की प्रक्रिया को नगरीयता या नगरवाद कहते हैं। शिकागो सम्प्रदाय के लुईसवर्थ के अनुसार, नगरीयता या नगरवाद मात्र बसावट का तरीका नहीं है, अपितु यह जीवन की एक विशिष्ट शैली है। यह शैली ग्रामीण जीवन शैली से भिन्न होती है। नगरीयता की प्रमुख विशेषताएं - अवयक्तिक सामाजिक अन्तर्क्रिया, अत्यधिक गतिशीलता एवं परिवर्तनशीलता,समय का दबाव, दिखावापन, गुमनामिता,काम करने के लिए निर्जीव शक्ति का प्रयोग, उन्नत प्रौद्योगिकी पर आधारित सामाजिक जीवन, परिवारवाद का ह्रास आदि है। बर्जेल नगरीयता को एक दशा या परिस्थितियों का पुंज मानते हैं, जबकि नगरीकरण परिवर्तन की एक प्रक्रिया है। जिसमें व्यक्ति नगरीय जीवन-शैली को अंगीकार करते हैं। क्वीन और कारपेन्टर के अनुसार, 'नगर निवास की स्थिति से तादात्म्य स्थापित करने को नगरीयता और नगरीय निवास की विशिष्ट जीवन पद्धति से तादात्मीकरण को नगरीकरण कहते हैं।'' यद्यपि लुईस विर्थ की विचारधारा से यह भेद विपरीत है परन्तु इस सन्दर्भ में इसका उल्लेख स्पष्टीकरण से सार्थक है। यदि यह मान लिया जाय कि नगरीयता जीवन पद्धति का एक विशेष प्रारूप है। जिसका विस्तार दिन प्रतिदिन होता जा रहा है तो इसमें आश्चर्य नहीं कि इसका विस्तार सुदूर ग्रामों तक हो जाय। नगरों में व्याप्त विषमता, सम्बन्धों का कृत्रिम एवं औपचारिक होना, जनसंख्या का बढ़ता घनत्व, बढ़ता औद्योगीकरण एवं नगरीकरण, सुरक्षा के प्रतिमान, स्वतंत्रता, वैज्ञानिकता इत्यादि से ग्रामीण जीवन अपनी संस्कृति, सभ्यता, परम्परा, रूढ़ि इत्यादि में शिथिलता प्रदान कर नगरीय जीवन प्रणाली को अपनाता चला

जा रहा है। नगरीय सम्पर्क एवं संचार के द्वारा ग्रामीण जीवन नगरों के प्रभाव में जितना आ रहा है, नगरीयता की छाप उस पर उतनी ही पड़ती जा रही है।

प्रश्न उठता है कि क्या जीवन ढंग का और कोई प्रारूप इसका स्थान ग्रहण कर सकेगा? उत्तर शायद नहीं ही होगा क्योंकि समय काल के परिप्रेक्ष्य में इसका महत्व बढ़ता जा रहा है। नगरीयता अब नगरों तक ही सीमित नहीं है अपितु हर उस स्थान पर यह है जहाँ तक कि नगर का प्रभाव पहुँचता है। नगरीकरण की वृद्धि , प्रचार, प्रसार, क्रियान्वयन तथा सृजन में इसका अपना योगदान है। अतः "नगरीय जीवन ढंग ही अन्तिम जीवन ढंग होगा" वर्जल द्वारा प्रस्तुत सम्भावना सार्थक दृष्टिगत होती है।

3.4 औद्योगीकरण एवं नगरीकरण में अन्तर

नगरीकरण को नगरीयता का पर्यायवाची शब्द नहीं कहा जा सकता है।नगरीकरण एक गतिशील प्रक्रिया है जो ग्रामीण एवं नगरीय दोनों प्रकार के जीवन में सदैव परिलक्षित होती है। इस प्रक्रिया के समान ही औद्योगीकरण भी एक प्रक्रिया है। ये दोनों प्रक्रियायें एक दूसरे से घनिष्ठता रखने वाली समानान्तर चलने वाली प्रक्रियाएं हैं। दोनों एक दूसरे पर पूर्ण रूप से निर्भर हैं । परन्तु इन दोनों प्रक्रियाओं को भी एक मान लेना बड़ी भूल है। औद्योगीकरण की प्रक्रिया से तात्पर्य उद्योगों के विकास से है। नवीन उद्योगों की स्थापना और उनका विकास औद्योगीकरण कहलाता है। इस प्रक्रिया में उत्पादन वृद्धि के लिए बड़ी मशीनों और शक्ति के साधनों का व्यापक और नियोजित ढंग से प्रयोग किया जाता है। इसका उद्देश्य उत्पादन में गुणात्मक और परिमाणात्मक परिवर्तन लाना रहता है। नगरीकरण का अर्थ सामान्यतया नगरों के विकास तथा प्रसार से लगाया जाता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें नगर में रहने वाले व्यक्तियों की संख्या बढ़ती है, गांव नगरों में परिवर्तित होते हैं। ग्रामीण क्षेत्र में नगर की विशेषताओं का प्रसार होता है।

3.5 औद्योगीकरण एवं नगरीकरण में सम्बन्ध

औद्योगीकरण एवं नगरीकरण क प्रक्रियाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों एक संयुक्त प्रक्रिया हैं जिनसे नगरों का विकास होता है। इनके परिणाम भी समान होते हैं। यदि हम औद्योगिक क्रान्ति के बाद के इतिहास को देखें तो हमें प्रतीत होगा कि विश्व के देशों में औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप ही नगरीकरण का द्रुत गति से विकास हुआ। भारत में भी ये प्रक्रियाएं साथ चली हैं। यहाँ इन प्रक्रियाओं का प्रभाव विशेष रूप से 20वीं शताब्दी में हुआ है। पुराने नगरों में जनसंख्या की अभिवृद्धि और नवीन नगरों का विकास इस शताब्दी की विशेषता है। जहाँ कहीं भी उद्योगों का विकास हुआ वहीं नगरों का भी विकास हुआ। टाटा नगर, राउरकेला, और भिलाई इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। इसके विपरीत नगरीकरण भी औद्योगीकरण की प्रक्रिया को प्रोत्साहन देता है। बड़े-बड़े उद्योगों में जनशक्ति की आवश्यकता होती है। उसकी आपूर्ति नगरों के माध्यम से ही सम्भव है।

3.6 नगरीकरण और नगरीय विकास

औद्योगीकरण की तरह नगरीय विकास को भी नगरीकरण के समान एक ही प्रक्रिया नहीं माना जा सकता है। नगरीय विकास वस्तुतः नगरीकरण का परिणाम है। बिना नगरीकरण की प्रक्रिया से प्रभावित हुए नगरीय विकास सम्भव नहीं है। नगरीय विकास, औद्योगीकरण की प्रक्रिया के

परिणामस्वरूप भी सम्भव होता है। नगरीय विकास में नगरीकरण तथा उप-नगरीकरण दोनों प्रक्रियाएं प्रभावशील होती हैं। नगरीकरण वस्तुतः दो मानवीय क्रियाओं से सम्बन्धित है। प्रथम, ग्रामीण जनसेख्या का नगरों में प्रव्रजन और द्वितीय नगरों का ग्रामीण क्षेत्रों तक विकास। इस भांति नगरीकरण और उपनगरीकरण दोनों से नगरीय विकास होता है।नगरीय विकास से तात्पर्य नगरों के स्वरूप में व्यापक परिवर्तन और अभिवृद्धि होना है। नगरों का ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार होना नगरीय विकास की प्रथम आवश्यकता है। नगरीय विकास की प्रक्रिया के अन्तर्गत नगरों की जनसंख्या की वृद्धि होना भी सम्मिलित है। नगरों के श्रेणीक्रम की प्रक्रिया में परिवर्तन होना या नगरों का महानगरों के रूप में परिणित होना भी नगरीय विकास है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद दिल्ली, चेन्नई, कोलकाता, कानपुर, अहमदाबाद आदि नगरों का व्यापक रूप से नगरीय विकास हुआ है।

3.7 सातत्य की तीव्रता और बढ़ती अन्तर्क्रियाएँ

हमारे देश के गाँव हजारों वर्षों तक पिछड़ेपन के शिकार रहे। औद्योगीकरण, नगरीकरण, पशिचमीकरण और वैज्ञानिक उपलब्धियों का उस पर नहीं के समान प्रभाव रहा । लेकिन आजादी के बाद इन्हीं चीजों का प्रभाव तीव्रता से पड़ा। विभिन्न ग्रामीण योजनाओं, यातायात और संचार साधनों की वृद्धि, वैज्ञानिक कृषि आदि कारणों से गांवों में तीव्रतर परिवर्तन हो रहा है। विकास के क्रम में ग्राम नगर में बदलते जा रहे हैं। नगर गाँव में पहुँच रहे हैं। ग्रामीण समाज प्रतिदिन नगरीय समाज की विशेषताओं के प्रतिबिम्ब बनते जा रहे हैं, जैसा कि मुम्बई के गोरे गाँव और दिल्ली के साहिबाबाद में हम देख रहे हैं। और भी बहुत से उदाहरण हैं जहाँ मानवीय जीवन पद्धति में ग्रामीण और नगरीय समाज की विशेषताओं की निरन्तरता जिसे हम 'ग्रामीण-नगरीय सातत्य' की प्रक्रिया कहते हैं।, एक दूसरे में प्रविष्ट होकर अपना प्रभाव डाल रही हैं। पाहल का तो यहाँ तक कहना है कि नगरों में भी ग्राम होते हैं। ये नगरीय ग्राम नगर के मध्य में स्थित होते हैं । इनके सदस्यों में प्राथमिक सम्बन्ध होते हैं। जीवन नगरीकृत रहता है। इन नगरीय ग्रामों को 'महानगरीय ग्राम' की संज्ञा दी जाती है। नगरों मे आवास समस्या तथा जनाधिक्य होने के कारण भी महानगरीय ग्रगामों में लोग रहना पसन्द करते हैं। इसके विपरीत मेयर का कहना है कि ग्रामीण जनता जो नगरों में निवास करती है, वह नगरीकृत नहीं रहती। पूर्वी लन्दन का उल्लेख करते हुए मेयर ने लिखा है कि यद्यपि नगर में आने वाली ग्रामीण जनसंख्या की कार्यपद्धतियाँ उन्हें नगरीय व्यवहार के लिए बाध्य करती हैं परन्तु कार्य के समय के अतिरिक्त नगरीय व्यवहार के लिए वे बाध्य नहीं हैं। लन्दन के अतिरिक्त बोस्टन, सुमात्रा, मैक्सिको आदि से सम्बन्धित अध्ययन भी इसी बात की पुष्टि करते हैं।

समाजवैज्ञानिकों में मतभेद चाहे जो हो, इतना अवश्य है कि आज का ग्रामीण समाज नगरीय समाज की विशेषताओं को ग्रहण करता जा रहा है । उसमें नगरीय तत्वों का तीव्रता से विकास हो रहा है। अन्तर्क्रियाएं बढ़ी हैं। भविष्य में ऐसा भी हो सकता है कि जिन तत्वों के आधार पर हम गांव और नगर को पहचान रहे हैं, वे समाप्त हो जाँय। गांव नगर का रूप ले लें जैसा कि पशिचमी देशों में हो रहा है। लेकिन भारत जैसे कृषि प्रधान देश में इसकी सम्भवना बहुत कम है। यहाँ का ग्रामीण समाज अपनी मौलिक विशेषताओं, मूल्यों, परम्पराओं आदर्शों आदि को नहीं छोड़ेगा।

3.8 नगरीय समस्याएं और चुनौतियाँ

प्रौद्योगिक, औद्योगिक विकास, नगरीयता और नगरीकरण के कारण छोटे नगरों का भौतिक

विकास हुआ है; बड़े नगरों के भौतिक विकास में भी वृद्धि हुई है। इस विकास ने आवासों से कार्य स्थलों की दूरियाँ बढ़ा दी हैं जिसके कारण कामकाजी व्यक्ति को अपने कार्यस्थल तक पहुँचनें के लिए घन्टों पहले घर से निकलना पड़ता है। सड़कों, मार्गों , वाहनों और भीड़-भाड़ की स्थितियाँ व्यक्ति के व्यक्तित्व, कार्यों और पारिवारिक सम्बन्धों, दायित्वों आदि को प्रभावित करती हैं। इससे व्यक्ति को अनेक समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। वस्तुस्थिति कुछ इस प्रकार की हो गयी है कि नागरिक सुविधाओं, उपयोगिताओं, सेवा योजन, पद प्रतिष्ठा से लेकर विभिन्न धर्मों, क्षेत्रों, संस्कृतियों के लोगों से जो नगरों में रहते हैं, सामंजस्य की समस्या बनी रहती है। पर्यावरण की मलिनता मानसिक विकारों में वृद्धि कर देती हैं। ये समस्याएं केवल बड़े नगरों तक ही सीमित नहीं है बल्कि छोटे नगरों में भी व्याप्त है। अन्य विकासशील देशों में भी इन समस्याओं का अवलोकन किया जा सकता है।

3.9 नगर प्रशासन का बढ़ता दायित्व

आधुनिक नगरीकरण की प्रक्रिया ने नगर प्रशासन के समक्ष अनेक समस्याएं उत्पन्न कर ं हैं। नगरों मे चुनौतियों से परिपूर्ण जीवन ढंग, नगरवासियों की दशाएं, गन्दी बस्तियाँ, जनस्वास्थ्य भीड़ भाड़, आपा धापी, यातायात दुर्घटना वृद्धि, अपराध, वेश्यावृत्ति आदि से नगर प्रशासकों र्क. समस्याएं बढ़ गयी हैं। ये समस्याएं शान्ति व्यवस्था से लेकर सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित होती हैं। जनसंख्या के अतिरिक्त भार के कारण नागरिक आपूर्ति से सम्बन्धित समस्याएं सबसे ज्यादा होती हैं। द्रुत नगरीकरण, भारी प्रव्रजन और अस्थायी निवास के कारण प्रशासकों को जनसंख्या के शीघ्र और सही आंकड़े प्राप्त नहीं हो पाते। फलतः नगरों की गतिशील प्रकृति के कारण भौतिक और सामाजिक आयोजन के कार्यक्रम में देर होती है। नगर के मास्टर प्लान और कटिबन्धीकरण की योजनाएं धीमी पड़ जाती हैं। आयोजन के कार्यक्रमों में कभी कभी नगर के प्रभावशाली लोग भी बाधा डालते हैं। अपने भवनों के पास मार्गों, स्कूलों, औषधालयों के निर्माण, लघु उद्योगों की स्थापना में ये रूकावटें डालते हैं। नगर मानिटर्स से मिलकर जनसेवा, बिजली, पानी, कार पार्किंग, बाल उद्यान आदि योजनाओं को रूकवा देते हैं। इसके साथ ही नगर प्रशासन में प्रशिक्षित कर्मचारियों के अभाव, जनता के असहयोग, व्यक्तिगत स्वार्थों, आर्थिक तंगी आदि कारणों से भी इस क्षेत्र में व्यापक सफलता नहीं मिल पा रही है। ऐसी स्थिति में सरकार का ध्यानाकर्षण नगरीय चुनौतियों और सुविधाओं के प्रति सदैव बने रहना आवश्यक है। समयबद्ध कार्यक्रमों के माध्यम से नगरीय प्रशासन, प्रबन्ध व्यवस्था, शान्ति, सुरक्षाा, सामाजिक सम्बन्ध सन्तुलित प्रकार से विभिन्न स्तरों पर बांटकर सबके लिए सुनियोजित किये जा सकते हैं। फ्रांस, इंग्लैण्ड, अमेरिका, टर्की, ब्राजील आदि देशों में इसी ढंग से कार्य हो रहा है। भारत में भी नगर विकास मंत्रालय को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

3.10 सारांश

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि नगरीकरण एक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया नगरों का निर्माण करती है। नागरिक प्रभाव को आगे बढ़ाती है। ग्रामों को नगरों में परिवर्तित करती है। नगरीयता का विकास करती है। नगरीयता से नगरों में नगरीकृत समाजों की अभिवृद्धि होती है। नगरीय विकास अपना स्वरूप प्रकट करता है। औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिलता है। औद्योगीकरण से व्यापारीकरण होता है। व्यापारीकरण से नगरीकरण की प्रक्रिया को एक दिशा प्राप्त होती है।

3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. एण्डरसन, नेल्स - दि अरबन कम्युनिटी, न्यूयार्क, 1959
2. बर्जल, ई. ई. - अरबन सोशियोलाजी, न्यूयार्क, 1955
3. क्वीन एण्ड कारपेन्टर - दी अमेरिकन सिटी, न्यू यार्क, 1953
4. वर्थ, लुईस - अर्बनाइजेशन एज ए वे आफ लाइफ, दी अमेरिकन जर्नल आफ सोशियोलाजी, 1938
5. पालमीडोज एण्ड मिजरूची - अर्बनिज्म, अर्बनाइजेशन एण्ड चेन्ज, लन्दन, 1976
6. रीमर, स्वेन्ड - दि माडर्न सिटी, न्यूयार्क, 1952

3.12 सम्बन्धित प्रश्न

(अ) लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नगरीयता क्या है? स्पष्ट कीजिए।
2. नगरीयता की विशेषताएँ क्या हैं?
3. नगरीकरण और नगरीयता में अन्तर कीजिए।
4. औद्योगीकरण नगरीकरण से किस तरह भिन्न है?
5. महानगरीय ग्राम किसे कहते हैं?

(ब) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नगरीकरण के समाजशास्त्रीय आयामों को स्पष्ट कीजिए।
2. ''औद्योगीकरण एवं नगरीकरण एक संयुक्त प्रक्रिया है।'' स्पष्ट कीजिए।
3. नगरीय विकास नगरीकरण का परिणाम है, स्पष्ट कीजिए।
4. ''नगरीकरण की प्रक्रिया में औद्योगीकरण अन्तिम चरण है।'' व्याख्या कीजिए।

(स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. निम्नलिखित में औद्योगीकरण की विशेषता नहीं है -

   (अ) उत्पादन में मशीनों का प्रयोग (ब) कुटीर व्यवसाय में वृद्धि

   (स) जनशक्ति का लघुप्रयोग (द) मजदूरों की सहभागिता

2. निम्नलिखित में से नगरीकरण का सामाजिक जीवन पर कौन सा सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता?

   (अ) अन्तर्जातीय विवाह (ब) द्वैतीयक सम्बन्धों की वृद्धि

   (स) स्त्री-पुरूष समानता में वृद्धि (द) श्रम विभाजन का विशेषीकरण

3. कृषि उत्पादन के क्षेत्र में गुणात्मक परिवर्तन की उत्पत्ति कैसे सम्भव हुई ?

(अ) औद्योगिक खोज के कारण (ब) सामन्तवाद के कारण

(स) निरंकुश राजतन्त्र के कारण (द) उपर्युक्त में कोई नहीं

4. नगरीयता की अवधारणा को किसने विकसित किया है?

(अ) एण्डरसन (ब) बर्गेस

(स) लुईस विर्थ (द) कारपेन्टर

5. नगरीयता का नगरवाद का अर्थ है -

(अ) नगरीय जनसंख्या में वृद्धि (ब) नगर के भौतिक आधार में वृद्धि

(स) ग्रामीण नगरीय अप्रवास (द) जीवन शैली

6. वर्तमान औद्योगिक समाज को किस श्रेणी में रखा जा सकता है ?

(अ) जटिल समाज (ब) सरल समाज

(स) जनजातीय समाज (द) परम्परागत समाज

7. निम्नलिखित में किसका प्रथम विश्लेषण करने वालों में से एक थे लुईस वर्थ?

(अ) स्वचालन के प्रभावो के (ब) उद्योगवाद के प्रभावों के

(स) उत्तर उद्योगवाद के प्रभावों के (द) नगरीयता के प्रभावों के

8. नगर आयोजन किसका परिणाम है?

(अ) समाजशास्त्रियों के प्रयत्नों का (ब) प्रभावशाली लोगों के प्रयत्नों का

(स) औद्योगीकरण और नगरीकरण का (द) उपरोक्त में किसी का नहीं

9. निम्नलिखि में कौन नगरीयता का एक लक्षण है ?

(अ) घनिष्ठता (ब) अजनबीपन

(स) नातेदारी (द) संयुक्त परिवार

3.13 प्रश्नोत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

1. (ब) 2. (ब) 3. (अ) 4. (स)

5. (द) 6. (अ) 7. (द) 8. (स)

9. (ब)

इकाई -4 : नगरीकरण के सामाजिक परिणाम

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 परिवार की संरचना में परिवर्तन
4.3 जाति व्यवस्था पर प्रभाव
4.4 विवाह संस्था पर प्रभाव
4.5 स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन
4.6 जनसंख्या की अनियंत्रित वृद्धि
4.7 धर्म के प्रभाव में कमी
4.8 सामुदायिक जीवन में अनिश्चितता
4.9 मलिन बस्तियों का विकास
4.10 सारांश
4.11 संदर्भ ग्रन्थ
4.12 सम्बन्धित प्रश्न
(अ) लघु उत्तरीय प्रश्न
(ब) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
(स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न
4.13 प्रश्नोत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- नगरीकरण के परिणामस्वरूप परिवार की संरचना और मूल्यों में हो रहे परिवर्तनों को जान सकेंगे ।
- जाति व्यवस्था की कट्टरता पर नगरीकरण के प्रभाव को देख सकेंगे।
- वैवाहिक संस्था तथा मूल्यों पर इसके प्रभाव की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- नारी के परम्परागत स्तर में हो रहे परिवर्तनों को ज्ञात कर सकेंगे।
- नगरीकरण के कुछ अस्वस्थ प्रभावों जैसे जनसंख्या की अनियंत्रित वृद्धि, सामुदायिक भावना का ह्रास, धार्मिक आस्था में कमी, मलिन बस्तियों के विकास आदि पर टिप्पणी कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

नगरीकरण एक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया का सीधा सम्बन्ध नगर से है।यह प्रत्येक नगर, महानगर, राज्य और देश में अलग अलग ढंग से कार्य करती हैं क्यों कि प्रत्येक नगर की प्रकृति

एक समान नहीं रहती है।विकासशील देशों में यह प्रक्रिया तीव्र गति से प्रभावी हो रही है।भारत में भी इस प्रक्रिया का विशेष प्रभाव पड़ा है। इसके कारण हमारे सम्पूर्ण सामाजिक संरचना में परिवर्तन आ गया है और हमारा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं नैतिक जीवन एक नया मोड़ ले रहा हैं। लोगों का जीवन स्तर ऊँचा उठ रहा है, रूढ़ियों के प्रभाव में कमी आयी है, स्त्रियों तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को पहले की अपेक्षा अधिक अधिकार प्राप्त हुए हैं, वैयक्तिक स्वतंत्रता में वृद्धि हुई है, सामाजिक राजनीतिक जागरूकता बढ़ी है। तथा जाति पर आधारित असमानता का संस्तरण टूट रहा है। इसके पश्चात भी इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि नगरीकरण नें व्यक्तिवाद, लाभ की भावना, अनावश्यक प्रतियोगिता, मलिन बस्तियों, औपचारिक सम्बन्धों तथा भौतिकवाद के प्रति आकर्षण में वृद्धि करके नगरीय समाज में अनेक जटिल समस्याओं को जन्म दिया हैं। ऐसा शायद ही कोई क्षेत्र हो सकता है जिस पर इसका प्रभाव दृष्टव्य न हो। इसके स्वस्थ, अस्वस्थ दोनों प्रभावों को निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से देखा जा सकता है -

4.2 परिवार की संरचना में परिवर्तन

परम्परागत भारतीय समाज में संयुक्त परिवारों का प्रचलन रहा है जिसमें तीन-चार पीढ़ियों के लोग सम्मिलित रूप से रहते हैं, उनका एक ही रसोई में खाना बनता है, सम्मिलित सम्पत्ति होती है, एक मुखिया होता है। लेकिन नगरीकरण के प्रभाव के कारण रोजगार हेतु व्यक्ति नगरों की ओर भाग रहा है। नगरों में मकानों की गम्भीर समस्या के फलस्वरूप संयुक्त परिवार का आकार छोटा होता जा रहा है। वह केन्द्रक परिवार में बदल रहा है। जिसमें केवल पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे शामिल हैं। केन्द्रक परिवारों की रचना वहाँ सफलतापूर्वक हो रही है जहां नयी पीढ़ी के नवयुवक और नवयुवतियाँ मूल परिवारों के सदस्यों के नियंत्रणों एवं प्रतिबन्धों से दूर रहकर नगरीय पर्यावरणों में जीविका के साधनों को खोलकर बस जाते हैं। केन्द्रक परिवारों में ग्रामीण सामुदायिक जीवन की स्थिरता तथा अनौपचारिक सम्बन्धों की कमी रहती है। इनमें परिवारवाद की कमी तथा कभी कभी पारिवारिक विघटन की प्रवृत्तियां भी दृष्टिगत होती हैं। इन परिवारों के सहस्वामी या परिवार के वरिष्ठ सदस्यों में भी व्यसन आदि के शिकार होने की संभावना बढ़ जाती है। जीवन साथी के मरने या विवाह विच्छेद से केन्द्र का परिवार के टूटने की संभावना में और अधिक वृद्धि होती है।

नगरीकरण के कारण परिवार के मूल्यों में परिवर्तन हो रहा है।पारिवारिक कार्यों को बाहर की विशेष समितियाँ हाथ में ले रही हैं। व्यक्ति पर न तो संयुक्त परिवार का और न ही समुदाय का नियंत्रण रह गया है। उसे जो अच्छा लगता है, वही करता है। व्यक्ति अपने कार्यों में स्वतंत्र है। नगरीय जीवन पद्धति में उसकी परिवार पर निर्भरता घटती जा रही है। के0 एम0 कपाडिया, आई0 पी0देसाई, एम0 एस. गोरे, मिल्टन सिंगर, एलिन डी0 रास, के0टी0 मर्चेन्ट, बी0 वी0 शाह आदि ने संयुक्त परिवारों पर नगरीकरण के प्रभाव को दर्शाया है।

4.3 जाति व्यवस्था पर प्रभाव

जाति व्यवस्था की परम्परागत संरचना विभिन्न जातियों के बीच ऊंच नीच के स्पष्ट विभाजन, अन्तर्विवाह की नीति, खान पान के प्रतिबन्धों तथा व्यावसायिक विभाजन पर आधारित थी।नगरीकरण

के प्रभाव से आज जाति व्यवस्था के यह सभी आधार परिवर्तित होने लगे हैं। जातियाँ अपने संरचनात्मक स्वरूप को खोकर राजनीतिक दबाव समूह के रूप में उभर रही हैं।नगरीय क्षेत्रों में नवीन व्यवसायों की वृद्धि के कारण इन व्यवसायों में अब अनेक जातियों के लोग एक साथ काम करते हैं। इससे विभिन्न जातियों में ऊंच नीच की भावनाएं कम हो रही हैं।अस्पृश्यता सम्बन्धी विचारों में परिवर्तन आ रहा है।साथ साथ उठने-बैठने, घूमने, खाना खाने, एक ही मुहल्ले या कालोनी में रहने से लोग एक दूसरे के सुख दुख में भागीदार हो रहे हैं। व्यावसायिक जीवन की गतिशीलता आज सभी जातियों को समान आर्थिक अवसर प्रदान करके जाति व्यवस्था की कट्टर रूढ़िवादिता को समाप्त करती जा रही है। जाति संरचना में होने वाले परिवर्तनों को संस्कृतिकरण की प्रक्रिया के रूप में स्पष्ट करते हुए श्रीनिवास ने लिखा है कि निम्न जातियाँ अब उच्च जातियों के व्यवहार-प्रतिमानों का अनुकरण करके अपनी जातीय स्थिति को ऊंचा उठाने का प्रयत्न करने लगी हैं। यह परिवर्तन उन समताकारी, लौकिक तथा आधुनिकतावादी मनोवृत्तियों की देन है जिनका नगरीयता से विशेष सम्बन्ध है।

4.4 विवाह संस्था पर प्रभाव

नगरीकरण ने हिन्दू विवाह व्यवस्था को अनेक रूपों में प्रभावित किया हैं। महानगरों के नाभिकीय परिवारों में विवाह को एक धार्मिक संस्कार न मानकर एक सामाजिक संविदा के रूप में देखा जाने लगा है। विवाह के पीछे आज अधिकतर व्यक्तियों का दृष्टिकोण धार्मिक दायित्वों की पूर्ति करना न होकर 'सेक्स' और पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना हो गया है। नगरीय सामाजिक जीवन में श्राद्ध , तर्पण और यज्ञों के प्रति उदासीनता की प्रवृत्ति आ जाने से पुत्र जन्म को विवाह का अन्तिम लक्ष्य नहीं माना जाता। सपिण्डता के क्षेत्र संकुचित हो रहे हैं। अनुलोम प्रतिलोम का भेद समाप्त होता जा रहा है। मुम्बई नगर की शिक्षित स्त्रियों के बारे में हाटे के अध्ययन से पता चलता है कि हिन्दू समाज का पुराना स्तम्भ अर्थात् सांस्कारिक विवाह कमजोर होता जा रहा है और अनुबन्धात्मक विवाह की संकल्पना प्रबल होती जा रही है।

नगरीय क्षेत्रों में अब विधवा विवाह का प्रचलन तीव्र गति से बढ रहा है । प्रेम विवाहों और अन्तर्जातीय विवाहों को मान्यता मिल रही है। घुरिये का कहना है कि "पहले अपने वर्ण के बाहर विवाह करने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी परन्तु आज नये मूल्यों के अपेक्षाओं के अनुरूप बहुत से शिक्षित नवयुवक-नवयुवतियाँ पारस्परिक प्रेम अथवा आकर्षण के कारण आवश्यक होने पर इस बन्धन को तोड़ देने के लिए तैयार हैं।" कपाडिया ने भी विश्वविद्यालय के जिन स्नातकों से साक्षात्कार लिया था उनमें से 51 प्रतिशत ने अपनी सन्तान का विवाह अपनी जाति के बाहर करने की तत्परता व्यक्त की । जीवन साथी के चयन में पत्र पत्रिकाओं में विज्ञापन देकर प्रार्थना पत्र नियंत्रित करने के नये मूल्य विकसित हो रहे हैं। मैरिज ब्यूरो की स्थापना हो रही है। सेक्स आकर्षण और प्रेम को महत्व न देकर पर्याप्त पैसा, अच्छी सामाजिक प्रतिष्ठा और व्यवसाय में सफलता को महत्व दिया जा रहा है। विवाह पूर्व मैथुन (सेक्स) ,परस्त्रीगमन अथवा परपुरूष गमन के प्रति नगरों में लोगों की अभिवृत्ति उदार होती जा रही है। दिल्ली नगर में प्रमिला कपूर के अध्ययन में ऐसी स्त्रियों का अनुपात 55 प्रतिशत पाया गया जिनका कहना था कि किन्हीं विशेष परिस्थितियों में यदि किसी दूसरे पुरूष

के साथ सम्भोग हो जाता है तो वे अपने पति से आशा रखेंगी कि वे उन्हें क्षमा कर दें। ऐसे स्त्रियों की संख्या भी अधिक थी जिनका कहना था कि विवाह की परिधि के बाहर कभी कभार चुम्बन, हाथ पकड़नें या आलिंगन की सीमा तक सेक्स सम्बन्धी स्वतंत्रता की छूट होनी चाहिए। नगरों की स्त्रियाँ अधिकाधिक संख्या में यह भी विश्वास रखने लगी हैं कि जब विवाह व्यावहारि दृष्टि से सकल न रह जाये तो उसे भंग करने की अनुमति होनी चाहिए तथा इसमें किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए। देसाई के अध्ययन में 47 प्रतिशत महिलाएं तलाक के पक्ष में थीं। कुप्पुस्वामी के अध्ययन में भी 46.69 प्रतिशत स्त्रियों ने दृढ़ मत व्यक्त किया कि विशेष परिस्थितियों में वे अपने पति को तलाक दे सकती हैं।

4.5 स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन

आजकल नगरों में स्त्रियां स्वावलम्बी बन रही हैं । वह छोटे से लेकर बड़े पदों पर हैं। वह पति की दासी नहीं वरन् मित्र और जीवनसाथी हैं। नगर उन्हें प्रगतिशील बना रहा है। वह घर से बाहर शिक्षिका, नर्स, प्रशासनिक अधिकारी, सामाजिक कार्यकत्री, चिकित्सिका आदि के रूप में सेवाएं करके धन अर्जित कर रही हैं। देश के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सार्वजनिक क्रियाकलापों में योगदान दे रही हैं। नगरीकरण के कारण उसका परम्परागत रूप धीरे धीरे आधुनिक रूप में परिवर्तित हो रहा है। वह परिवार में नये आदर्शों और मूल्यों को प्रोत्साहन दे रही है। रहन-सहन, तौर तरीका, शिक्षा, काम के अवसर, विवाह, घर गृहस्थी सभी क्षेत्रों में उसके कदम आगे बढ़ रहे हैं।

4.6 जनसंख्या की अनियंत्रित वृद्धि

नगरीकरण के परिणामस्वरूप नगरों में जनसंख्या की वृद्धि हो रही है। यह वृद्धि कई कारणों से है। सबसे महत्वपूर्ण कारक ग्रामीण जनसंख्या का नगरों की ओर प्रस्थान करना है। 1971 में देश में 3126; 1981 में 4,029 तथा 1999 में 4,689 नगर थे।नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत 2001 की जनगणना के अनुसार 27.78 है। जबकि 1971, 1981 तथा 1991 में जनसंख्या का वह अनुपात क्रमशः 19.19, 23.34 तथा 25.72 था। ये आंकड़े स्पष्टतः दर्शाते हैं कि एक ओर नगरों की संख्या बढ़ रही है और दूसरी ओर नगरों में जनसंख्या का घनत्व बढ़ता जा रहा है। नगरों की संख्या और नगरों में जनसंख्या का बढ़ना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि ग्रामों से जनसंख्या का प्रव्रजन नगरों की ओर हो रहा है। औद्योगीकरण और नगरीकरण की प्रवृत्तियों ने इस प्रव्रजन की प्रक्रिया को और भी तीव्र कर दिया है। भारत में यह प्रव्रजन चार संरूपों ग्रामीण से ग्रामीण, ग्रामीण से नगरीय, नगरीय से नगरीय और नगरीय से ग्रामीण में देखा जा सकता है। 1991 की जनगणना के अनुसार 17.7 प्रव्रजन ग्रामीण से नगरीय था। प्रव्रजन के विश्लेषण से यह भी पता चलता है कि लगभग 68 प्रतिशत प्रव्रजन कम दूरी के हैं, 21 प्रतिशत मध्यम दूरी के और 11 प्रतिशत लम्बी दूरी के हैं।

पश्चिम के देशों में भी सन् 1750 से 1950 तक नगरीय जनसंख्या की विशेष रूप से अभिवृद्धि हुई है विशेषकर इंगलैण्ड, बेल्जियम, जर्मनी, फ्रांस और अमेरिका में। इन देशों में

नगरीकरण का कारण जनसंख्या विकास ही रहा है। नगरों में आने वाली जनसंख्या को नगरों ने आकर्षित ही नहीं किया, बल्कि ग्रामीण जनसंख्या में अभिवृद्धि होने के कारण ग्रामीण लोग नगरों में आना प्रारम्भ कर दिये। नगरीय प्रव्रजन में 'पुश और पुल' का सिद्धान्त कार्यशील रहता है। पुश अर्थात् प्रेषक या धक्का के अन्तर्गत गरीबीजन्य विपरीत आर्थिक स्थिति, भिन्न-उत्पादकता, बेरोजगारी, प्राकृतिक आपदाएं आदि कारणों से व्यक्ति जन्म स्थान को छोड़कर आर्थिक अवसरों की खोज में नगर आता है जबकि पुल अर्थात् कर्षक या खिंचाव के अन्तर्गत उद्योग, वाणिज्य और व्यापार के त्वरित विकास को देखते हुए कार्य और रोजगार के बेहतर अवसर, उच्च मजदूरी दर, उच्च जीवन-स्तर की प्राप्ति के लिए व्यक्ति नगरों की ओर आकर्षित होते हैं। कई देशों में इस प्रक्रिया को रोकने का प्रयत्न किया गया है। इंग्लैण्ड के ग्रामों में कृषि के स्थान पर ऊन उत्पादन केन्द्र स्थापित होने से कृषक बेकार हो गये और वे नगरों में आने लगे। यद्यपि इंग्लैण्ड की सरकार ने इस दृष्टि से नियंत्रण लगाने की चेष्टा की । कृषकों के सम्मुख इसके अलावा और कोई चारा नहीं था। फ्रांस और पोलैण्ड में भी सरकार ने जनसंख्या प्रव्रजन की इस प्रक्रिया पर रोक लगाने की चेष्टा की। लेकिन इन नियंत्रणों का कोई प्रभाव नहीं रहा । नगरीकरण बढ़ता और गति पकड़ता चला गया।

इस प्रकार आजीविका की खोज में लोगों के नगर आगमन से नगरीकरण की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिल रहा है। जनसंख्या का घनत्व, बनावट और गुण देश की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था और प्रगति को प्रभावित कर रहा हैं। किसी भी नगर की जनसंख्या वहाँ पर उपलब्ध साधनों की तुलना में सन्तुलित रहनी चाहिए लेकिन अनियन्त्रित जनसंख्या वृद्धि नगरों में गरीबी, बेरोजगारी, अपराध, पारिवारिक कष्ट एवं विघटन, भ्रष्टाचार आदि समस्याओं को जन्म दे रहा है।

4.7 धर्म के प्रभाव में कमी

नगरीकरण के परिणामस्वरूप आज धर्म के प्रभाव में कमी आ रही है। एक ही मिल फैक्ट्री, कारखाने, होटल, रेस्त्रां, सिनेमाघर आदि में विभिन्न जाति के व्यक्ति साथ साथ कार्य और मनोरंजन करते हैं। इससे नगर में दिन प्रतिदिन धार्मिक कट्टरता समाप्त होती जा रही है। औद्योगिक और भौतिकवादी सभ्यता तथा संस्कृति ने परम्परागत मूल्यों, विश्वासों और अन्ध विश्वासों को बदल दिया है। नगरीय मशीनी जीवन में न तो पूजा-पाठ का बहुत महत्व रह गया है और न ही स्वर्ग-नरक तथा मोक्ष की अवधारणा का। इस भौतिकवादी औद्योगिक संसार का सबसे बड़ा धर्म भौतिक सुख हो गया है। व्यक्ति धर्म से जुड़े विभिन्न अनुष्ठानों को जो कुछ कर भी रहा है वह मात्र औपचारिकता है।उसमें भावना कम, दिखावा ज्यादा है। धार्मिक केन्द्रस्थल भ्रष्टाचार और अनैतिकता के केन्द्र बनते जा रहे हैं। धार्मिक कार्यों में सामूहिक भागीदारी समाप्त होती जा रही है। धार्मिक कृतियों का संक्षिप्तीकरण हो रहा है। विवाह संस्कार के अनेक चरण जो कई दिनों में सम्पन्न होते थे, आज कुछ ही घंटों में पूर्ण हो रहे हैं।धार्मिक कृत्यों में दिखावे का आडम्बर, समाचार पत्रों में विज्ञापन, जयमाल आदि की महिमा , पण्डालों की सजावट तथा दिखावा वाली प्रथाओं जैसे मेंहदी, घुड़चढ़ी, लाउडस्पीकर का अत्यधिक प्रयोग आदि व्यक्ति के धर्म के प्रति भावनात्मक प्रतिबद्धता की कमी की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं।

4.8 सामुदायिक जीवन में अनिश्चितता

नगरीकरण का एक महत्वपूर्ण परिणाम सामुदायिक जीवन में अनिशिचतता का आना है। नगरों में विभिन्न प्रान्त, देश, धर्म, जाति, सम्प्रदाय और प्रजाति के लोग रहते हैं। इस भिन्नता के कारण एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से अलग रहता है। उसके नगरीय जीवन में एकरूपता नहीं आ पाती है। उनमें सामुदायिक भावना या 'हम' की भावना पनप नहीं पाती हैं समुदाय अपनी विचित्रताओं में कैद रहता है। कोई रात को सोता है तो कोई दिन में, कोई आज रोजगार में लगा रहता है तो कल बेकार हो जाता है।यह अनिश्चितता हर समय बनी रहती है। सुबह घर से गया व्यक्ति रात को घर लौटे गा या नहीं, इसकी भी कोई निश्चितता नहीं हैं। यह अनिश्चितता सामुदायिक जीवन को विघटित करने वाले तत्वों को जन्म देती है।

4.9 मलिन बस्तियों का विकास

नगरीकरण के परिणामस्वरूप वर्तमान औद्योगिक केन्द्रों में जनसंख्या की तीव्र वृद्धि हुई है। जिस अनुपात में जनसंख्या की वृद्धि हुई है उस अनुपात में मकानों का निर्माण नहीं हो पा रहा है। फलतः अनेकों मलिन बस्तियाँ विकसित होती जा रही हैं। मलिन बस्तियों के मकान अन्धकार एवं सीलनयुक्त होते हैं।इनमें शौचालय, स्नानघर, बिजली, पानी, हवा, रोशनी की पर्याप्त सुविधाओं का अभाव रहता है। एक एक कमरे में कई कई व्यक्ति रहते हैं। इनमें कुछ भी गोपनीय नहीं रहता है।शीघ्र ही बच्चे बुरी आदतों को ग्रहण कर लेते हैं। रश्मि मयूर ने मुम्बई नगर के अपने एक अध्ययन में मलिन बस्तियों को गरीबी , प्रदूषण औरययय अपराध से भरे हुए एक नगरीय जंगल के रूप में व्यक्त किया है। जहां गरीबी के कारण बच्चे बाल अपराधी बन जाते हैं । मैसूर नगर की मलिन बस्तियों के अध्ययन के आधार पर वैंकट रैयप्पा का कहना है कि मलिन बस्तियों के निवासियों में निराशा की भावना रहती है। हमारे देश में आज छोटे बड़े, नये पुराने, नियोजित अनियोजित सभी नगरों में मलिन बस्तियां पाई जा रही हैं जिनके कारण नगरों में अपराध, अनैतिकता, अस्वास्थकर वातावरण, गिरता सांस्कृतिक स्तर, पारिवारिक विघटन, निम्न जीवन स्तर आदि उभरती प्रवृत्तियों को जन्म मिल रहा है।

4.10 सारांश

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि नगरीकरण ने भारतीय समाज को अनेकों प्रकार से प्रभावित किया है। ऐसा शायद ही कोई क्षेत्र हो सकता है जिस पर इसका प्रभाव न पड़ा हो। प्रत्यक्ष, परोक्ष, स्वस्थ, अस्वस्थ, सभी रूपों से समाज के विभिन्न पक्ष इससे प्रभावित हुए हैं। जिसकी प्रतिक्रिया आज के वर्तमान समाज में हम देख रहे हैं। सामाजिक जीवन की प्रत्येक गतिविधियां, जन्म दर, मृत्यु दर, जनसंख्या, जाति, विवाह, परिवार, तलाक, सामाजिक मूल्य आदि इससे प्रभावित हुए हैं। लोगों में मानसिक तनाव बढ़ा है। गन्दी बस्तियों और झोपड़ियों का विकास हुआ है। अपराध, बाल अपराध, मद्यपान, नशाखोरी, वेश्यावृत्ति आदि सामाजिक समस्याएं बढ़ी हैं जो देश के लिए चिन्ता के विषय बने हुए हैं।

4.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ब्रीज, गेराल्ड - अर्बनाइजेशन इन न्यूली डेंवलपिंग कंट्रीज, बाम्बे, 1970
2. गोरे, एम0एस0 - अर्बनाइजेशन एण्ड फेमिली चेन्ज, बाम्बे, 1968
3. कपाडिया, के0 एम0 - मैरेज एण्ड फैमिली इन इण्डिया, बाम्बे, 1955
4. लिपसेट, एस0 एम0 - सोशल मोबिलिटी इन इन्डस्ट्रियल सोसाइटी, वर्कले, 1959
5. बोस, आशीष - स्टडीज इन इण्डियाज अर्बनाइजेशन, बाम्बे, 1973
6. देसाई, ए0आर0 एण्ड पिल्लई, एस0 डी0 - स्लम्स एण्ड अर्बनाइजेशन, बाम्बे, 1970
7. बलसारा, जे0 एफ0 - प्राब्लम्स आफ रैपिड अर्बनाइजेशन इन इण्डिया, बाम्बे, 1964
8. डेविल, एम0 आर0 - प्राब्लम्स आफ सिटी लाइफ, न्यूयार्क, 1932
9. मैन पावर प्रोफाइल - इण्डिया, 1998

4.12 सम्बन्धित प्रश्न

(अ) लघुउत्तरीय प्रश्न

1. पारिवारिक मूल्यों एवं संरचना पर नगरीकरण के प्रभावों को स्पष्ट कीजिए।
2. नगरीकरण से स्त्रियों की स्थिति में किस तरह बदलाव आया है? स्पष्ट कीजिए।
3. जाति व्यवस्था पर नगरीकरण के प्रभावों को बताइये ।
4. नगरीकरण की प्रक्रिया में धक्का एवं खिंचाव पुश एण्ड पुल के कारक क्या हैं?

(ब) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नगरीकरण के सामाजिक प्रभावों को स्पष्ट कीजिए।
2. नगरीकरण के अस्वस्थ सामाजिक परिणामों को स्पष्ट कीजिए।
3. "नगरीकरण के परिणामस्वरूप अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि और मलिन बस्तियों का विकास हुआ है।" स्पष्ट कीजिये।

(स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. नगरीकरण पर किस अवधारणा का ज्यादा प्रभाव पड़ा है?

   (अ) जाति (ब) वर्ग

   (स) जाति वर्ग दोनों (द) उपर्युक्त में कोई नहीं

2. 'अर्बनाइजेशन एण्ड फेमिली चेन्ज' पुस्तक के लेखक कौन हैं ?

   (अ) गेराल्ड ब्रीज (ब) एम0एस0 गोरे

   (स) एण्डरसन (द) ए0आर0देसाई

3. मलिन बस्तियाँ की क्या विशेषताएँ हैं ?

(अ) सामाजिक बुराइयों के क्षेत्र (ब) अनधिकृत कब्जा वाले संक्रमणित क्षेत्र

(स) निर्धनता की संस्कृति का क्षेत्र (द) उपर्युक्त सभी।

4. अबाधित प्रव्रजन स्वागत योग्य नहीं हैं। निम्नलिखित में से कौन इसका प्रमुख कारण नहीं है?

(अ) आर्थिक अवसाद (ब) चतुर्दिक बेकारी

(स) निर्धनता (द) धार्मिक विद्वेष

5. प्रव्रजन के प्रेषक एवं कर्षक (पुश एण्ड पुल) सिद्धान्त के परिणामत ?

(अ) नगरीय जनसंख्या घटती है (ब) नगरीय जनसंख्या बढ़ती है।

(स) संयुक्त परिवार सशक्त होता है (द) सामाजिक स्थिरता आती है।

6. भारतीय परिवार का परम्परागत स्वरूप क्या है?

(अ) ग्रामीण परिवार (ब) एकाकी परिवार

(स) संयुक्त परिवार (द) जनजातीय परिवार

7. निम्नलिखित में से कौन नगरीकरण का परिणाम है -

(अ) व्यक्तिवादिता (ब) बाल विवाह

(स) संयुक्त परिवार (द) प्राथमिक नियंत्रण

8. नगर में सामाजिक दूरी किस कारण से होती है ?

(अ) नगर का आकार (ब) आवास तथा कार्य की जगह के बीच की दूरी

(स) सामाजिक विषमता (द) अपर्याप्त जनपरिवहन

9. भारत में नगर की जनसंख्या वृद्धि में प्रथम योगदान है -

(अ) प्रव्रजन (ब) नैसर्गिक वृद्धि

(स) नगर सीमाओं के पुनः निश्चयन (द) औद्योगीकरण

4.13 प्रश्नोत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

1. (अ) 2. (ब) 3. (द) 4. (द)

5. (द) 6. (स) 7. (अ) 8. (स)

9. (अ)

इकाई -5 : नगरों का भावी स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 भावी नगरों की समस्याएँ

- 5.2.1 आवास की कठिन समस्या
- 5.2.2 सामाजिक अन्तः क्रिया का अभाव
- 5.2.3 भौतिक विकास एवं मानसिक असन्तुलन
- 5.2.4 नागरिक जीवन की विचित्रताएं
- 5.2.5 कार्य और व्यवहार का विशेषीकरण
- 5.2.6 पारिवारिक विघटन
- 5.2.7 जनसंख्या का बढ़ता घनत्व

5.3 समाधान की भावी नीतियाँ

- 5.3.1 परिवार नियोजन पर ध्यान
- 5.3.2 नागरिक सुविधाओं की वृद्धि
- 5.3.3 क्षेत्रीय सन्दर्भ में विकास आयोजनों का क्रियान्वयन
- 5.3.4 नगरीय पुनर्गठन की आवश्यकता

5.4 सारांश

5.5 संदर्भ ग्रन्थ

5.6 सम्बन्धित प्रश्न

- (अ) लघु उत्तरीय प्रश्न
- (ब) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
- (स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

5.7 प्रश्नोत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- नगर का जो भावी स्वरूप होगा उसमें आवासीय दशा तथा सामाजिक अन्तःक्रिया के स्वरूप को जान सकेंगे ।
- व्यक्ति के व्यवहार प्रतिमानों को समझ सकेंगे।
- भविष्य में नगरीय जनसंख्या के घनत्व पर टिप्पणी कर सकेंगे ।
- नगरों की विघटनात्मक स्थिति को देखते हुए उससे निबटने के लिए राष्ट्रीय नीतियों को जान सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

भारत में नगर तथा नगरीकरण के भविष्य को निर्धारित करने में औद्योगीकरण का प्रमुख स्थान है। जैसे जैसे औद्योगीकरण का प्रमुख स्थान है। जैसे जैसे औद्योगीकरण की प्रक्रिया बढ़ती जाती है वैसे-वैसे नगरीकरण की प्रक्रिया प्रभावित होती जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 1901 में नगरीकरण की जो दर थी, वह भारत में 1951 में थी। इसका एकमात्र कारण आर्थिक विकास का तुलनात्मक रूप से मन्द होना है। डेनियल लर्नर का कहना है, "भारत का औद्योगिक विकास अमेरिका तथा अन्य देशों की तुलना में बहुत ही हतोत्साही रहा है। यहाँ जनसंख्या वृद्धि तो हो रही है पर आर्थिक विकास नहीं के बराबर है।" परन्तु आज स्थिति बदलती जा रही है। आर्थिक विकास की तीव्रता के कारण अब नगरों का विकास भी तेजी से हो रहा है। उद्योग, व्यवसाय, वाणिज्य, व्यापार, आदि की वृद्धि के कारण नगरों का आकार बड़ा होता जा रहा है। बड़े ग्राम नगरों का रूप धारण करते जा रहे हैं। नगरों के विकास के साथ साथ आवास, यातायात, स्वच्छता, पानी, बिजली संचार आदि से सम्बन्धित समस्याएं भी बढ़ती जा रही हैं। इन समस्याओं को देखते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि भविष्य के नगर किस प्रकार के होंगे? उनमें किस प्रकार की समस्याएं होंगी?

5.2 भावी नगरों की समस्याएँ

नगरों का जो भावी स्वरूप होगा उनमें निम्नलिखित प्रकार की समस्याएं होंगी-

5.2.1 आवास की कठिन समस्या -

महानगरों में मानव आवास की दशा दिन प्रतिदिन शोचनीय होती जायेगी। स्नानागार व रसोई घर के लिए मकानों में पर्याप्त स्थान का अभाव होगा। धार्मिक स्थान, शिक्षा के केन्द्र, बाजार आदि नगर से दूर विकसित होंगे। स्कूल, पुस्तकालय, खेल के मैदान और मनोरंजनात्मक संस्थाओं के उपयोग के लिए व्यक्तियों को दूर जाना होगा। नगरों में विघटित क्षेत्र का विकास होगा।

5.2.2 सामाजिक अन्त:क्रिया का अभाव -

भविष्य में नगरीय जनसंख्या का घनत्व इतना अधिक होगा कि सामुदायिक और सामाजिक अन्तःक्रियाएं विकसित नहीं हो पायेंगी। एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी को नहीं पहचानेगा। लोगों में प्राथमिक सम्बन्धों का अभाव होगा। महानगरीय जीवन इतना जटिल और व्यस्ततम होगा कि व्यक्ति का सारा समय केवल व्यवसाय करने और अपने परिवार का संचालन करने में व्यतीत हो जायेगा।

5.2.3 भौतिक विकास एवं मानसिक असन्तुलन -

भविष्य में नगरों का जो स्वरूप होगा उसमें व्यक्ति में धन व नैतिकता के प्रति आकांक्षाएं बढ़ेंगी। व्यक्ति का व्यवहार दिखावटी होगा। वह सुबह से शाम तक व्यस्त रहेगा। धर्म व आध्यात्मिकता से कोई सम्बन्ध नहीं होगा। निराशा, उद्वेश, भावुकता, तनाव आदि प्रवृत्तियों का विकास होगा। मानसिक असन्तुलन बढ़ेगा। व्यक्ति मदिरापान करेगा व आत्महत्या की संख्या में वृद्धि होगी। अजनवीयन बढ़ेगा । व्यक्ति अकेलेपन का अनुभव करेगा।

5.2.4 नागरिक जीवन की विचित्रताएँ -

नगर जटिलताओं के केन्द्र होते हैं। यहाँ विभिन्न प्रकार की संस्कृति, धर्म, सम्प्रदाय और वर्ग होते हैं। इन्हें समझने और इनके अनुसार अपने को ढालने में व्यक्ति स्वयं को बदलता रहता है।वर्तमान औद्योगिक मशीनी दुनिया में उसके जीवन की जटिलताएं बढ़ती जा रही हैं। द्रुत औद्योगीकरण एवं नगरीकरण को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि भविष्य के नगरों में व्यक्ति का जीवन अत्यधिक जटिल और भ्रमित होगा। पद, नौकरी, और व्यवसाय में सफलता के लिए प्रतियोगिताएं बढ़ जायेंगी। डेविस के अनुसार, ''नगरों में व्यक्तिवादिता इस सीमा तक होगी कि प्रत्येक क्षेत्र में साधन सम्पन्नता और धन संग्रह को ही जीवन का अन्तिम लक्ष्य समझेगा। इस मनोवृत्ति के फलस्वरूप प्रतिस्पर्द्धा नगरीय समुदाय की स्थायी विशेषता होगी।'' छल, कपट, व्यक्तिगत स्वार्थ, महत्वाकांक्षा तथा गतिशीलता में वृद्धि होगी। व्यक्ति पर परिवार, समुदाय और समाज का नियंत्रण कम होगा। परम्पराओं के प्रति उदासीनता बढ़ेगी। सम्पूर्ण जीवन, भाव व्यवहार, रहन सहन का ढंग, वेश भूषा, खान-पान, तौर-तरीके वास्तविक कम, कृत्रिम अधिक बनते जायेंगे। संस्कृति की ये विभिन्नताएं व्यक्तियों को व्यक्ति से अलग करेंगी। जनसंख्या का भारी घनत्व वैयक्तिक पहचान को नष्ट करेगा। व्यक्ति आत्मकेन्द्रित होगा और भीड़ में अकेलेपन का अनुभव करेगा। भौतिक भोगवादी संस्कृति में व्यक्ति स्वार्थी, पद लोलुप एवं नैतिक दृष्टि से कमजोर होगा।

5.2.5 कार्य और व्यवहार का विशेषीकरण -

भावी नगरों में जनसंख्या की भिन्नता और उसका बड़ा आकार विशेषीकरण को अधिक प्रोत्साहित करेगा। प्रत्येक विशेषज्ञ समूह समाज को अपना योगदान देता है। इससे समाज में सम विभाजन होता है। श्रम विभाजन का अर्थ किसी भी स्थायी संगठन में मिल जुल कर काम करने वाले व्यक्तियों, या समूहों द्वारा भिन्न किन्तु समन्वयात्मक क्रियाओं के सम्पादन से हैं। इसके अन्तर्गत विभाजित काम करने के प्रत्येक भाग को किसी पृथक व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह द्वारा सम्पादित किया जाता है। जैसे कपड़े का व्यापारी केवल कपड़ा बेचता है परन्तु कपड़े को बनाने, व्यवसायात्मक प्रक्रिया और वितरण करने के लिए वह दूसरे कई विशेषज्ञों पर निर्भर रहता है जिससे कि कपड़ा उसकी दुकान पर पहुँच जाय। इस प्रकार नगरों में लोगों की एक-दूसरे पर निर्भरता बनी रहती है। भावी नगरों में इस निर्भरता और श्रम विभाजन की स्थिति में और अधिक वृद्धि हो सकती है।

5.2.6 पारिवारिक विघटन -

भावी नगरों में पारिवारिक विघटन बढ़ेगा। कार्योजत महिलाओं की संख्या में वृद्धि होगी। परिवारिक सुख-शान्ति के प्रयास ढीले पड़ेंगे। कार्योजित होनें के कारण स्त्रियों को बच्चों की देखभाल का समय नहीं मिलेगा। बाल अपराधों की संख्या में वृद्धि होगी। व्यवसायिक, सामुदायिक, पारिवारिक आदि क्षेत्रों में व्यक्ति को निराशा का वातावरण मिलेगा। प्रथाओं, परम्पराओं जैसी अनौपचारिक नियंत्रण के साधन ढीले पड़ेंगे। औपचारिक रूप से बनाये हुए नियंत्रण के साधनों पर व्यक्ति की निर्भरता बढ़ेगी।

5.2.7 जनसंख्या का बढ़ता घनत्व -

नगरों में गांवों की अपेक्षा जनसंख्या का घनत्व अधिक रहता है। नौकरी के अवसरों की उपलब्धता, शिक्षा, चिकित्सा और मनोरंजन की सुविधाएं व्यक्ति को नगरों की ओर आकर्षित करती हैं।फलतः नगरों में सुविधाओं के बाहुल्य के कारण जनसंख्या का घनत्व अधिक रहेगा। जनसंख्या में विभिन्नता रहेगी और उसका बड़ा आकार विशेषीकरण को प्रोत्साहित करेगा। लोगों की एक-दूसरे पर निर्भरता बढ़ेगी। व्यापक जनसंख्या अतिक्रमण के कारण नगर महानगर में बदल जायेंगे। कोलकाता नगर का विशाल स्वरूप इस प्रक्रिया का ही प्रतिफल है।

5.3 समाधान की भावी नीतियाँ

इस प्रकार सभी नगरीय जीवन की विविध समस्याओं और विघटनात्मक परिस्थितियों को देखते हुए इससे निबटने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर समुचित नीति का हस्तक्षेप आवश्यक है। इस सन्दर्भ में निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं -

5.3.1 परिवार नियोजन पर ध्यान -

भारत में नगरों के भविष्य को निर्धारित करने में जनसंख्या का प्रमुख स्थान है। ग्रामीण जनसंख्या का नगरों में व्यापक पलायन का मुख्य कारण नगरीकरण है। विश्व के अन्य नगर भी इससे प्रभावित हैं। यदि इस प्रक्रिया से नगरों में जनसंख्या का अतिक्रमण इसी प्रकार होता रहा तो भविष्य में नगरों का स्वरूप अत्यन्त भयानक हो जायेगा। अतः हमें परिवार-नियोजन पर ध्यान देना होगा। यदि हम जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण करने में सफल हो जायेंगे तो सामाजिक विकास के मार्ग भी खुल जायेंगे। भविष्य में सामाजिक यांत्रिकी का कार्य भी भारत में सार्थक सिद्ध हो सकेगा। ऐसी उम्मीद है कि भारत की राष्ट्रीय जनसंख्या नीति के दीर्घकालिक उद्देश्य के अन्तर्गत 2045 तक हम अपनी जनसंख्या को स्थिरता प्रदान कर सकेंगे।

5.3.2 नागरिक सुविधाओं की वृद्धि

नगरों में जनसंख्या अतिक्रमण रोकने के लिए केवल परिवार-नियोजन पर ही ध्यान देना आवश्यक नहीं है बल्कि नागरिक सुविधाओं की वृद्धि की भी आवश्यकता है। इस सन्दर्भ में नगर समीप के ग्रामीण क्षेत्रों को विकसित करने की आवश्यकता है। नगर समीप के ग्रामीण क्षेत्र जिन्हें उपनगरीय ग्रामीण क्षेत्र कहा जाता है वहाँ वह जनसंख्या निवास कर सकती है जो अपनी आजीविका और रोजगार हेतु प्रतिदिन नगरों में आती हैं। उनके विकास के लिए सम्बन्धित योजना बनाने की आवश्यकता है। इस सन्दर्भ में कुछ कस्बों को ''पोटेन्शियल ग्रोथ'' सेन्टर के रूप में संगठित किया जा सकता है। इन आत्मनिर्भर ग्रोथ सेन्टर्स में जनता को सभी नागरिक सुविधाएँ - ज्ञान, शिक्षा, साक्षरता, संचार और आर्थिक सुधार प्रदान करने की आवश्यकता है। इससे छोटे कस्बों के स्तर में उन्नति होगी। नगरों में ग्रामीण प्रब्रजन की समस्या का निराकरण होगा। प्रब्रजन से जो विभिन्न सामाजिक बुराइयाँ विकसित होती हैं, उनसे भी छुटकारा मिल सकेगा।

5.3.3 क्षेत्रीय सन्दर्भ में विकास आयोजनों का क्रियान्वयन -

ग्रामीण - नगरीय विभेद को दूर करने के लिए हमें क्षेत्रीय सन्दर्भ में विकास आयोजनों का क्रियान्वयन करना होगा। स्थानीय उपलब्ध साधनों का अधिक से अधिक उपयोग करना होगा। बड़े उद्योगों की स्थापना छोटे कस्बों में करनी होगी। इससे बेकारी से ग्रस्त नगरीय समुदाय इन स्थानों को स्थानान्तरित हो सकेगें। बेकारी की समस्या दूर हो सकेगी। जनसंख्या का अतिक्रमण कम होगा। इसी प्रकार यातायात, बैंक और तकनीकी सुविधाओं का विकास होने पर नगरों के छोटे उद्योग भी इन औद्योगिक कस्बों में स्थानान्तरित हो सकेंगे। इससे उद्योग और श्रमिक दोनों को लाभ होगा। श्रमिक अपने ग्रामीण मकानों में यथावत रह सकेंगे। उनके पारिवारिक जीवन में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं रहेगा। उन्हें नगर की गन्दी बस्तियों से छुटकारा मिल सकेगा। वे कृषि या उद्योग में बचे हुए समय को लगाकर अतिरिक्त आमदनी प्राप्त कर सकेंगे। इससे कृषि और उद्योग का अन्तर कम हो सकेगा। विलियम ब्रीड ने अपने एक लेख 'भारत में औद्योगिक विकेन्द्रीकरण' में इसी बात पर जोर दिया है कि औद्योगिक प्रसार बड़े नगरों की तुलना में छोटे नगरों एवं कस्बों में किया जाना चाहिए तथा नगरीकरण के भविष्य को महानगरों के हाथ में नहीं सौपना चाहिए। यदि हम ऐसा करते हैं तो इसके परिणाम गम्भीर होंगे।

5.3.4 नगरीय पुनर्गठन की आवश्यकता

भारतीय नगरों के भविष्य को सुधारने के लिए नगरों के पुनर्गठन की भी आवश्यकता है। हमारे देश के प्रमुख नगरों मुम्बई, दिल्ली और कोलकाता में हजारों लोगों के पास रहने के लिए मकान नहीं हैं। वे सड़कों की पटरियों, दुकानों, स्टेशनों और गन्दी बस्तियों में निवास करते हैं। पटरियों पर सोते हैं। आवास में समुचित संडासों का अभाव है। स्नानागारों की सुविधा नहीं है। इन आवश्यक नागरिक सुविधाओं से हमारे देश के अन्य नगर भी वंचित हैं। अतः इनके भविष्य को सुधारने की दिशा में नगरों का संरचनात्मक पुनर्गठन आवश्यक है। इस सम्बन्ध में नगरीय सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया जिसमें समस्याओं के निराकरण में जनता अधिक से अधिक भागीदार हो, को लागू किया जा सकता है। पड़ोस स्तर योजनाओं और नगर स्तर की योजनाओं में सामंजस्य तथा नगरीय पुनर्चक्रण (नगर से बाहर उद्योग) स्थापित किया जा सकता है। नगर प्रशासन या नगर महापालिकाएं भी इस क्षेत्र में भूमिका निर्देशन करते हुए सड़को के क्षेत्र, रोशनी, उद्योग, मनोरंजन और सामुदायिक स्वास्थ्य का निर्धारण कर सकती हैं।

5.4 सारांश

व्यापार, व्यवसाय, उद्योग आदि की वृद्धि के कारण दिन-प्रतिदिन नगरों का आकार बड़ा होता जा रहा है। आवास, यातायात, स्वच्छता, बिजली, पानी, संचार आदि से सम्बन्धित समस्याएं बढ़ती जा रही हैं। विघटनात्मक परिस्थितियों का विकास हो रहा है। इन समस्याओं और विघटनात्मक परिस्थितियों को दूर करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर समुचित नीतियों और सामाजिक पुनर्गठन की

व्यापक योजनाओं को लागू करने की आवश्यकता है।इस सन्दर्भ में परिवार नियोजन पर ध्यान देकर, नागरिक सुविधाओं की वृद्धि करके, क्षेत्रीय सन्दर्भ में विकास योजनाओं का क्रियान्वयन करके, नगर को एक सामाजिक इकाई के रूप में संगठित किया जा सकता है। भारत सरकार भी इस तथ्य को स्वीकार करती है लेकिन क्रियात्मक रूप में इन नीतियों का हम सही ढंग से पालन नहीं कर पा रहे हैं। इस कारण भारतीय नगर अनेंक समस्याओं से ग्रस्त होते जा रहे हैं।

5.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भारद्वाज, आर0 के0 - अर्बन डेवलपमेन्ट इन इण्डिया, दिल्ली, 1974
2. डोगरा, बी0 बी0 - क्राइसिस इन आवर सिटीज, सिविस अफेयर्स, वा. 22, न.2, 1974
3. रीमर, स्वेन्ड - दी माडर्न सिटी, न्यूयार्क, 1952
4. राव, एम0 एस0 ए0 - अर्बनाइजेशन एण्ड सोशल चेन्ज, न्यू दिल्ली, 1970
5. सोवानी, एन0वी0 - अर्बनाइजेशन एण्ड अर्बन इण्डिया, न्यू यार्क, 1966
6. टर्नी, राय - इण्डियाज अर्बन फ्यूचर, बाम्बे, 1962

5.6 सम्बन्धित प्रश्न

(अ) लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भावी नगरों में आवासीय दशा का वर्णन कीजिए।
2. भावी नगरों में सामाजिक अन्तः क्रिया के स्वरूपों का वर्णन कीजिए।
3. नगरीय विकास में जनसंख्या नियंत्रण के प्रयास कैसे सार्थक हो सकते हैं? स्पष्ट कीजिए।
4. ग्राम-नगर के विभेदों को दूर करने के लिए क्या प्रयत्न किये जा सकते हैं? स्पष्ट कीजिए।
5. भारतीय नगरों के पुनर्गठन पर प्रकाश डालिए।
6. उपनगरीय ग्रामीण क्षेत्र की अवधारणा क्या है?

(ब) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय नगरों में जनसंख्या प्रव्रजन के कारणों को स्पष्ट कीजिए।
2. भारतीय नगरों को विघटन से बचाने के उपायों को बताइये।
3. भावी नगरों की प्रमुख समस्याओं का वर्णन कीजिए।
4. भविष्य में नगरीय समस्याओं के समाधान की नीतियों पर प्रकाश डालिए।

(स) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'इण्डियाज अर्बन फ्यूचर' के लेखक कौन हैं?

(अ) रीमर (ब) सोवानी

(स) राय टर्नी (द) आशीष बोस

2. निम्नलिखित में कौन सी समस्या भावी नगरों की हो सकती है ?

(अ) दहेज की (ब) बाल विवाह की

(स) जातिगत तनाव की (द) सामाजिक अन्तःक्रिया के अभाव की

3. भविष्य के नगरों में धन और भौतिकता के प्रति व्यक्ति की आकांक्षाएं -

(अ) बढ़ेंगी (ब) घटेंगी

(स) समान रहेंगी (द) कह नहीं सकते

4. भावी नगरों में कौन सी विशेषता दृष्टव्य होगी ?

(अ) उच्च तकनीक का प्रयोग (ब) कम्प्यूटर का प्रयोग

(स) सामाजिक विभाजन की समाप्ति (द) सभी

5. निम्नलिखित में से कौन भावी नगरीय समाज की विशेषता नहीं है ?

(अ) व्यक्तिादिता (ब) जनसंख्यात्मक विषमता

(स) प्राथमिक नियंत्रण (द) समाज में खुलापन

6. भारत की राष्ट्रीय जनसंख्या नीति का दीर्घकालिक उद्देश्य निम्नलिखित में से किस वर्ष तक जनसंख्या को स्थिर कर देना है ?

(अ) 2010 तक (ब) 2055 तक

(स) 2035 तक (द) 2045 तक

7. नगरीय पुनर्चक्रण की संकल्पना का अर्थ है -

(अ) प्रदूषण रोकने की क्रियाविधि (ब) उद्योंगों को नगर में दूसरी जगर स्थानान्तरित करना।

(स) पुरानी इमारतों का नवीनीकरण (द) नगर को दूसरी जगह स्थानान्तरित करना

5.7 प्रश्नोत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

1. (स) 2. (द) 3. (अ) 4. (द)

5. (स) 6. (द) 7. (ब)

पारिभाषिक शब्दावली
(हिन्दी से अंग्रेजी)

हिन्दी	-	अंग्रेजी
औद्योगीकरण	-	Industrialization
औद्योगिक नगर	-	Industrial City
आधुनिक नगर	-	Modern City
आधुनिक प्रवृत्तियाँ	-	Recent Trends
अपराध के केन्द्र	-	Centres of Crime
आवासीय क्षेत्र	-	Residential Zone
अप्रवास	-	Migration
आधुनिकता	-	Modernity
उपनगरीय	-	Suburban
उभरती प्रवृत्तियाँ	-	Emerging Trends
एकाकी परिवार	-	Nuclear family
कस्बा	-	Town
गुणात्मक	-	Qualitative
घनत्व	-	Density
जनसंख्या नीति	-	Population Policy
दशक	-	Decade
नगरीयकरण	-	Urbanization
नगरवाद	-	Urbanism
नगरों की पुनर्रचना	-	Restructuring of cities
नगरीय विकास	-	Urban growth
नगरीय भविष्य	-	Urban future
नगरीय परिस्थितिकी	-	Urban Ecology
नगरीकरण की प्रवृत्तियाँ	-	Trends of Urbanization
नगरीय सामाजिक संस्थाएँ	-	Urban Social institutions
नगरों की उत्पत्ति	-	Origin of cities
नगरवाद एक जीवनशैली	-	Urbanism as a way of life

नगरीय प्रतिमान	-	Urban pattern
नगरीय समुदाय	-	Urban community
प्रतीकात्मक नगर	-	Symbolic city
प्रव्रजन	-	Migration
प्रौद्योगिक	-	Technological
अपराध	-	Crime
बाल अपराध	-	Child delinquency
भूमंडलीकरण	-	Globalization
मलिन बस्ती	-	Slums
महानगर	-	Metropolis
विराटनगर	-	Megalopolis
व्यक्तिवाद	-	Individualism
सामाजिक विजातीयता	-	Social heterogeneity
सामाजिक गतिशीलता	-	Social mobility
सांस्कृतिक विभिन्नताएं	-	Cultural differences.
सामाजिक मूल्य	-	Social values
स्थानान्तरण	-	Migration
सातत्य	-	Continuum
क्षेत्रीय विकास	-	Regional development

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

MASY-09
भारत में नगरीय समाज

खण्ड

3

नगरीय केन्द्रों का वर्गीकरण

इकाई-1 5

लघु नगर (टाउन) बड़े नगर (सिटी) एवं वृहद नगर (मेगासिटीज)

इकाई-2 20

नगर के औद्योगिक आधार, उद्योग केन्द्रित विकास

इकाई-3 30

नगर के व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन का स्वरूप

इकाई-4 37

व्यवसाय संरचना में परिवर्तन का सामाजिक संरचना पर प्रभाव

इकाई-5 44

धार्मिक नगरों का स्वरूप एवं महत्व

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

परिमापक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 जयकान्त तिवारी	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सम्पादक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 विभूति भूषण मलिक	एशोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, स्कूल फॉर अम्बेदकर स्टडीज, बाबा साहेब भीम राव अम्बेदकर विश्वविद्यालय, लखनऊ।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड-3 : खण्ड परिचय - नगरीय केन्द्रों का वर्गीकरण

इस खण्ड में नगरीय केन्द्रों के वर्गीकरण पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। इसमें कुल पाँच अलग-अलग इकाईयां हैं। प्रथम इकाई में लघु नगर, बड़े नगर एवं वृहद नगर को परिभाषित किया गया है और यह दर्शाया गया है कि किस प्रकार विश्व में और भारत में नगरीकरण की प्रक्रियाएं विद्यमान हैं। दूसरी इकाई में नगर के औद्योगिक आधार व उद्योग केन्द्रित विकास की चर्चा की गयी है। जिसमें नगर बसाने के प्रमुख बिन्दुओं को रेखांकित किया गया है तथा भारत के प्रमुख औद्योगिक नगर केन्द्र, भारत में नगरीकरण और औद्योगीकरण के स्वरूप की समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से चर्चा की गयी है। तीसरी इकाई नगर की व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन के स्वरूप पर आधारित है, जिसमें सामाजिक संरचना को परिभाषित कियां गया है। एवं नगरीय सामाजिक संरचना की प्रमुख विशेषताओं, नगरीय सामाजिक संरचना के आधार, नगर में सामाजिक परिवर्तन के कारक एवं नगरीय व्यावसायिक संरचना में, परिवर्तन के स्वरूप आदि बिन्दुओं का विस्तृत वर्णन किया गया है। चौथी इकाई में व्यावसाय संरचना में परिवर्तन का सामाजिक संरचना पर प्रभाव की व्याख्या की गयी है जिसमें व्यावसायिक संरचना को परिभाषित करने के साथ-साथ व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन के कारणों को दर्शाया गया है एवं व्यावसायिक संरचना का सामाजिक संरचना पर प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। इस खण्ड की अन्तिम और पाँचवी इकाई धार्मिक नगरों के स्वरूप एवं महत्व पर आधारित है, जिसमें नगर एवं धार्मिक नगर को परिभाषित और उनमें अन्तर को दर्शाया गया है। इसके अतिरिंवत धार्मिक नगर का स्वरूप, विशेषताएं, महत्व एवं विश्व के प्रमुख धार्मिक नगर पर विस्तृत रूप से चर्चा की गयी है।

इकाई -1 : लघु नगर (टाउन) बड़े नगर (सिटी) एवं वृहद नगर (मेगासिटीज)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 नगरीकरण : अर्थ एवं परिभाषा

1.3 विश्व में नगरीकरण की प्रक्रिया

1.4 भारत में नगरीकरण की प्रक्रियाएँ

1.5 नगर का विकास और उद्भव

1.6 नगरीय केन्द्रों का वर्गीकरण

1.7 लघु नगर : अर्थ व परिभाषा

1.8 जनगणना के अनुसार लघु नगर की अवधारणा

1.9 लघु नगर की विशेषताएँ

1.10 बड़े नगर : अर्थ व परिभाषा

1.11 बड़े नगर : विशेषताएँ

1.12 महानगर : अर्थ एवं परिभाषा

1.13 भारत में महानगर

1.14 वृहद नगर : अर्थ व परिभाषा

1.15 वृहद नगर : विशेषताएँ

1.16 वृहद नगर के उदाहरण

1.17 सारांश

1.18 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.19 प्रश्नोत्तर

1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम नगरीकरण,नगर व नगरीय केन्द्रों के वर्गीकरण से परिचित होंगे। इसी क्रम में नगरीय केन्द्रों के वर्गीकरण के अन्तर्गत लघु नगर, बड़े नगर, महानगर तथा वृहद नगर की अवधारणा को समझेंगे, उनकी विशेषताओं को जानेंगे व उनमें पाए जाने वाले अंतर से भी अवगत होंगे।

1.1 प्रस्तावना

मानव समुदाय का प्रारम्भ अपने पास-पड़ोस के पर्यावरण से प्रभावित होकर हुआ है। प्रारम्भ में आदिम समुदाय (प्रीमिटिव कम्युनिटी) की स्थापना हुई। यह समुदाय धीरे-धीरे कृषि-ग्रामीण समुदाय

में परिवर्तित हो गये। इनमें से कुछ ग्रामीण समुदाय समय के साथ-साथ नगरीय समुदाय में परिवर्तित हो गये। जनजातीय समुदाय अपने पास-पड़ोस से अत्यधिक प्रभावित और परिभाषित होते हैं। ग्रामीण समुदाय एक प्रकार का विस्तृत प्राथमिक समूह है, जिसकी विशेषता यह होती है कि यह घनिष्ठ आमने सामने के सम्बन्धों पर आधारित होता है। इसमें न्यूनाधिक सामुदायिक भावना होती है एवं यह अपेक्षाकृत एक स्वायत्त संगठन है। नगरीय समुदाय लोगों का एक खुला संगठन है जिसमें व्यक्ति एक सीमित क्षेत्र में रहते हैं और यहाँ पर जनसंख्या का घनत्व अपेक्षाकृत अधिक होता है। नगरीय जीवन जटिल सामाजिक शक्तियों का प्रतिफल होता है। थे सामाजिक शक्तियाँ जनसंख्या के संवेग, ग्रामीणों के अप्रवास, संचार एवं यातायात के साधनों के विकास, व्यापारिक केन्द्रों की अत्यधिक वृद्धि और औद्योगीकरण के प्रभाव से उत्पन्न होती है।

प्रस्तुत इकाई में नगरीकरण की प्रक्रिया ने किस प्रकार नगर तथा नगरीय केन्द्रों को जन्म दिया, इसका विस्तृत विश्लेषण ऑकड़ों के साथ प्रस्तुत किया गया है। इस सन्दर्भ में अनेक समाज वैज्ञानिकों के विचार व परिभाषा को भी सम्मिलित किया गया है। इसके अतिरिक्त नगरीय केन्द्रों का वर्गीकरण के साथ-साथ लघु नगर, बड़े नगर, महानगर एवं वृहद नगर को भी परिभाषित किया गया है एवं इसकी प्रमुख विशेषताओं की भी चर्चा की गयी है।

1.2 नगरीकरण : अर्थ एवं परिभाषा

नगरीकरण शब्द का निर्माण 'नगर' से हुआ है। नगरीकरण उस प्रक्रिया की ओर संकेत करता है जिसके माध्यम से नगरों का निर्माण होता है और इस प्रक्रिया के तहत नगर, महानगर,राज्य और देश में नगरों का निर्माण होता है। सामान्यतः हम नगरीकरण, नगरीयता एवं नगरवाद को एक ही अर्थ में प्रयोग करते हैं, जबकि इनमें परस्पर काफी अंतर है। अतः नगरीकरण को स्पष्ट रूप से समझने के लिए अनेक समाज वैज्ञानिकों के विचारों का उल्लेख आवश्यक है। जो निम्नवत है -

बर्जल के अनुसार - "ग्रामीण क्षेत्रों को नगरीय क्षेत्रों में परिवर्तित होने की प्रक्रिया को ही हमें नगरीकरण कहना चाहिए। इस प्रक्रिया का गाँव की जनसंख्या की आर्थिक संरचना पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जिस अनुपात में ग्रामीण जनसंख्या घटती है, ठीक उसी अनुपात से नगर की जनसंख्या में वृद्धि होती है।"

थॉम्पसन व लुइम्स के शब्दों में, "नगरीकरण उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसके अन्तर्गत किसी देश की जनसंख्या बढ़ती दर से शहरों में आकर बसने लगती है। 'नगरत्व' एक ऐसी जीवनयापन विधि है, जो नगरों में अपनाई जाती है।"

इटली के भूगोलवेत्ता **विडाल डी ला ब्लाश** ने लिखा है कि , "नगर एक सामाजिक संगठन है जिसका क्षेत्र अधिक विस्तृत है; यह सभ्यता के एक स्तर को प्रदर्शित करता है जिसको अन्य क्षेत्र प्राप्त नहीं कर पाए हैं तथा सम्भवतः वे उसे कभी भी नहीं प्राप्त कर पायेंगे।"

भारतीय जनगणना के अनुसार शहर ऐसे निवास क्षेत्र का नाम है, जिसमें तीन चौथाई व्यक्ति गैर-कृषि साधनों से जीवनयापन करते हैं।

सोरोकिन एवं जिम्मेरमैन लिखते हैं, "जो पौधों एवं पशुओं का व्यवसाय करते हैं उसे ग्रामीण समाज

कहते हैं और जो विविध प्रकार के व्यवसायों से जीवन यापन करते हैं उन्हें नगरीय समाज कहते हैं।''

नगरीकरण एक सामाजिक प्रक्रिया है, इस प्रक्रिया से नगरीयता का विकास होता है। जिसके परिणाम स्वरूप नगरीकृत समाजों की अभिवृद्धि होती है। नगरीकरण एक विश्वव्यापी प्रक्रिया है।

1.3 विश्व में नगरीकरण की प्रक्रिया

पूरे विश्व में आज नगरीकरण की प्रक्रिया अत्यधिक तेजी से बढ़ रही है। नगरीय बस्ती के आविर्भाव काल से सर्वदा नगरीय जनसंख्या की वृद्धि दर ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि दर से अधिक रहती है।

सन् 1950 में विश्व की मात्र 29 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती थी, किन्तु स 1995 में यह बढ़कर 45 प्रतिशत हो गयी। ऐसा अनुमान है कि तीन दशकों में अर्थात सन 2025 तक विश्व में नगरीय जनसंख्या का अनुपात 61 प्रतिशत हो जायेग।

विशव में तीव्र गति से बढ़ते नगरीकरण के कारण नगरीय संरचना में परिवर्तन हो रहा है। वृहद नगरों की जनसंख्या का कुल नगरीय जनसंख्या में अनुपात बढ़ रहा है। सन 1950 में विश्व की कुल नगरीय जनसंख्या की 12 प्रतिशत जनसंख्या विशाल नगरों में रहती थी। इन विशाल नगरों में प्रत्येक विशाल नगर की जनसंख्या 40 लाख से अधिक थी, यह अनुपात सन 1980 में बढ़कर 16 प्रतिशत हो गया । विश्व की 45 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या विभिन्न साइज के नगरों में निवास कर रही है। नगरीय जनसंख्या विश्व के औद्योगिक विकसित देशों में कृषि व्यवस्था वाले विकासशील देशों की तुलना में अधिक है।विकसित देशों की 74 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है। पर विकासशील देशों में यह अनुपात 37 प्रतिशत है।

विभिन्न महाद्वीपों में दक्षिणी अमेरिका में नगरीकरण सर्वाधिक है, वहाँ 78 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय केन्द्रों में निवास करती है। इसके बाद यूरोप और ओशीनिया, उत्तरी अमेरिका I स्थान है, जहाँ नगरीय जनसंख्या का अनुपात क्रमशः 74, 70 और 68 प्रतिशत है। इसके विपरीत अफ्रीका महाद्वीप में नगरीकरण सबसे कम है। जहाँ की मात्र 34 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय है। इस दृष्टि से एशिया की स्थिति भी अधिक भिन्न नहीं है। एशिया में नगरीय जनसंख्या 35 प्रतिशत है।

तालिका - 1

विशव : नगरीय जनसंख्या व इसमें वृद्धि दर, 1975-2005

क्षेत्र/देश	शहरी जनसंख्या (प्रतिशत)			प्रतिशत वृद्धि दर, 1990-95	
	1975	1995	2025 (अनुमानित)	नगरीय जनसंख्या	ग्रमीण जनसंख्या
विशव	38	45	61	(1994-2000)3.7	0-8
विकासशील देश	--	37	41	1994-2000)0.7	--
विकसित देश	--	74	75		--

अफ्रीका	25	34	54	4.4	2.0
नाइजेरिया	23	39	62	5.2	1.7
इथोपिया	10	13	30	4.7	2.7
जाइरे	30	29	50	3.9	2.9
दक्षिण अफ्रीका	48	51	69	2.9	1.6
अंगोला	18	32	56	6.3	2.6
कीनिया	13	28	51	6.8	2.5
यूरोप	**67**	**74**	**83**	**0.6**	**1.0**
रूस फेडरेशन	66	76	86	0.4	1.7
जर्मनी	81	87	92	0.8	1.2
यू.के.	81	89	93	0.4	0.4
फ्रांस	73	73	82	0.5	0.4
इटली	66	67	76	0.0	0.1
यूक्रेन	58	70	83	0.7	1.9
यूगोस्लाविया गणराज्य	43	57	74	2.6	0.2
चेक गणराज्य	58	65	76	0.1	0.3
स्वीडन	83	83	88	0.5	0.5
पोलैण्ड	55	65	78	0.9	1.1
उत्तरी और केन्द्रीय अमेरिका	57	68	79	1.8	0.4
स.रा.अमेरिका	74	76	85	1.3	0.2
मैक्सिको	63	75	86	2.8	--
केनेडा	76	77	84	1.2	1.1
त्रिनिदाद और टोबागो	63	72	84	1.9	0.8
निकारागुआ	50	63	78	4.1	2.1
द.अमेरिका	64	78	88	2.5	0.8
ब्राजील	61	78	89	2.7	1.4
कोलंबिया	61	73	84	2.4	0.3
अर्जेण्टीना	81	88	93	1.6	1.3
सूरीनाम	[illegible]	50	70	2.3	0.0
पैरागुए	39	53	72	4.3	1.2
एशिया	25	35	55	3.3	0.8
चीन	17	30	55	4.0	0.0
भारत	21	27	45	2.6	1.6
इण्डोनेशिया	19	35	61	4.5	0.1
पाकिस्तान	26	35	57	4.4	2.0

बांग्लादेश	09	18	40	5.3	1.5
जापान	76	75	85	0.4	0.2
अफगानिस्तान	13	20	40	7.7	5.4
येमन गणराज्य	16	34	58	8.0	3.6
जार्जिया	50	58	74	1.0	1.0
इजराइल	87	91	94	3.9	3.1
जॉर्डन	55	71	84	5.9	2.6
श्रीलंका	22	22	43	2.2	1.0
यू.ए.ई.	65	84	91	3.4	0.9
ओशीनिया	72	70	75	1.4	1.7
आस्ट्रेलिया	86	85	89	1.3	1.9
न्यूजीलैण्ड	83	86	92	1.5	0.4
फीजी	37	41	60	2.2	1.1

स्रोत - UNEP, WRI & WB (1996), World Resources, 1996-97, Oxford University Press, Oxford, pp. 150-151 & Human Development Report, p. 193.

एक अनुमान के अनुसार सन 2005 तक विश्व के प्रत्येक 10 व्यक्तियों में से 6 व्यक्ति नगरों में निवास कर रहे होंगे। तब दक्षिणी अमेरिका 88 प्रतिशत नगरीकरण के साथ विश्व का सर्वोच्च नगरीकरण वाला महाद्वीप होगा। इसके बाद क्रमशः यूरोप (83 प्रतिशत) उत्तरी व मध्य अमेरिका (79 प्रतिशत) (55 प्रतिशत) तथा अफ्रीका (54 प्रतिशत) का स्थान होने की आशा है। (तालिका-1)

1.4 भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया

भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया का एक लम्बा इतिहास रहा है।प्राचीन काल से इस प्रक्रिया का सूत्रपात हुआ है जिसका पता हड़प्पा और मोहनजोदड़ों की खुदाई से चलता है। नगरीकरण की इस प्रक्रिया को आधुनिक काल में अधिक गति और बल मिला है। ब्रिटिशकाल में भारत में 493,444 ग्राम और कस्बे थे इनमें से 2490 ऐसे स्थान थे जहाँ 5000 से अधिक जनसंख्या निवास करती थी। 1070 ऐसे क्षेत्र थे जहाँ 10000 से कम जनसंख्या निवास करती थी। इस भाँति हमारे देश में कलकत्ता सबसे बड़ा नगर था। कलकत्ता और इसके उपनगर की कुल मिलाकर जनसंख्या 7,95000 थी । कलकत्ता के बाद बम्बई भारत का प्रमुख नगर था। ब्रिटिश काल अर्थात 1871 की जनगणना के समय यहाँ 6,44000 लोग रहते थे। इस भाँति बनारस में 1,75000, पटना में 1,59000, दिल्ली में 1,54000, आगरा में 1,49000, इलाहाबाद में 1,44000,बंगलौर में 1,43000, अमृतसर में 1,36000, कानपुर में 1,23000, पूना में 1,19000,अहमदाबाद मं 1,17000, सूरत में 107,000 और बरेली में 103,000 लोग निवास करते थे।

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व उपरोक्त सभी नगर भारत के महानगर माने जाते थे। एशिया और भारत में इन नगरों के अलावा कुछ छोटे नगर भी थे। इस दृष्टि से लाहौर, रंगून और हावड़ा, नागपुर और मेरठ की जनसंख्या 20,000 से अधिक थी। फर्रूखाबाद, त्रिचनापल्ली और शाहजहाँपुर की जनसंख्या 70,000 से अधिक थी। इस भाँति कुल मिलाकर भारत में 1871 में कुल 42 नगर थे।

तालिका - 2

भारत में ग्रामीण नगरीय जनसंख्या वृद्धि की दरें

वर्ष	ग्रामीण जनसंख्या (%)	शहरी जनसंख्या (%)	दशक में नगरीय जनसंख्या मे वृद्धि दर	नगरीय जनसंख्या मे वृद्धि दर
1901	89	11	--	-
1911	90	10	0.35	0.03
1921	89	11	8.27	0.79
1931	88	12	19.12	1.75
1941	86	14	31.97	2.77
1951	83	17	41.42	3.47
1961	83	18	26.41	2.34
1971	81	20	38.23	3.21
1981	76.37	23.73	46.14	3.83
1991	73.26	26.74	36.19	3.00
2001	71.27	28.72	31.30	2.47

इसी प्रकार भारत में नगरीकरण की प्रक्रियाएं तेज होती गयी और विगत पांच दशकों में नगरीय जनसंख्या में 30 प्रतिशत प्रति दशक के दौर से जनसंख्या की वृद्धि हुई है। तालिका 2 का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि 70 के दशक में कुल 20 प्रतिशत आबादी शहर में निवास करती है। यह सिलसिला बड़ी तेजी से चलती रही है। और 2001 तक कुल 28.72 प्रतिशत जनसंख्या शहर में निवास करती है। ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट 2005 में अनुमान लगाया गया है कि सन 2015 तक भारत की 32.2 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय हो जाएगें।

1.5 नगर का विकास और उद्भव

नगर का विकास यात्रा लाखों वर्षों की है और इस विकास यात्रा के क्रम में समाज, देश, गाँव, नगर व महानगर बनें हैं। नगर के विकास के साथ साथ मानव समाज की क्षमता, योग्यता और

बुद्धि की परिपक्वता जुड़ी है, जिसमें कि उत्पादन के विकसित मानवीय संसाधन और साधनों का इतिहास समाहित है।

नगर की उत्पत्ति के संबंध में अनेक समाजशास्त्री और इतिहासवेत्ताओं ने विचार दिये हैं। मार्गेट मूरे के अनुसार नगरों का विकास धातु युग से हुआहै। एण्डर्सन का विचार है कि नये अविष्कार और परिवर्तन, नगर को स्थापित करने में सहायक रहे हैं। ममफोर्ड ने नगर की उत्पत्ति को गाँव से माना है।उनके अनुसार, "नगर वास्तव में गाँव में दृश्य रूप में उपस्थित था, किन्तु गाँव एक अप्रजनक्य अण्डे की तरह था न कि विकसित गर्भस्थ तत्व की भाँति, किन्तु इसे भावी विभिन्नतापूर्ण और जटिल सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया के लिए परिपूरक पुरूष संरक्षण की सूत्रों की परिपूर्णता की आवश्यकता थी।" उन्होंने नगर के उत्थान और पतन की छः अवस्थाएँ बताई हैं। प्रथम अवस्था को **योपोलिस** माना है जिसमें कि ग्रामीण समुदाय की स्थापना होती है और इस अवस्था में पशुपालन और कृषि का विकास होता है।कालांतर में बड़े गाँवों की स्थापनाएं होने लगी जहाँ शिक्षा और कारीगरी में भी बहुत पर्याप्त विकास हुआ। द्वितीय चरण **पोलिस** में गाँव में सामान्य संगठन की स्थापना हुई जो रक्त समूह पर आधारित है। जो संगठन एक सामान्य स्थान पर बने, जो सामूहिक रूप से आक्रमण से अपनी रक्षा करते थे। ये सब परिवारों के विशाल संगठन थे जो कि नगरों को स्थापित करने के लिए मजबूत नींव रखते थे। तृतीय अवस्था **मेट्रोपोलिस** है । जनसंख्या को जीवन के अधिकतम सुविधाएँ जहाँ प्राप्त हुई, वहीं जनसंख्या का घनत्व बढ़ता गया। इस दृष्टि से जल की सुविधा, कृषि और भूमिं जहाँ तहाँ उपलब्ध थे वहाँ पर नगर बसने लगे और इस स्थान पर यातायात की सुविधाएँ विकसित हुई। इसमें अर्न्तनगरीय सर्म्पकों में द्वैतीयक अन्तःक्रियाओं और अन्तःसम्बन्धों में वृद्धि हुई। इस अवस्था में तर्क और अभिव्यक्ति के साधनों में वृद्धि हुई। नगरों के उदविकास की चतुर्थ अवस्था **मेगापोलिस** है। इस अवस्था को पूँजीवादी व्यवस्था का प्रतीक माना गया है।अधिक से अधिक धन कैसे अर्जित किया जाय इसमें व्यक्ति लिप्त हो गये और नगर इसका केन्द्र माना गया। इस अवस्था में तर्क और वैज्ञानिकता का महत्व बढ़ने लगा और भौतिकवादी संस्कृति के विकास ने व्यक्ति को भावनाहीन बना दिया। व्यक्ति निजी स्वार्थों की पूर्ति में फँस गये और सामूहिक भावना को तिलांजलि देने लगे जिससे सामाजिक विघटन आरम्भ हो गया। नगर की विकासयात्रा में **टाइरेनोपोलिस** पाँचवीं अवस्था है। और इस अवस्था तक पहुँचते पहुँचते पूरी तरह से पूंजीवादी व्यवस्था की स्थापना हो चुकी थी। इस अवस्था में मनुष्य ने सुविधाभोगी और वर्गीय समाज की स्थापना की । वर्गीय समाज की स्थापना और पूँजीपतियों की शक्ति में वृद्धि से समाज में बेकारी, निर्धनता जैसे सामाजिक समस्याओं में वृद्धि हुई है। मफोर्ड के अनुसार, नगर के विकास का अंतिम चरण **नेक्रोपोलिस** है। जिसमें नगर के व्यक्ति और पूँजीपति अपने निजी स्वार्थ को लेकर अत्यधिक लिप्त हो चुके थे जिससे नगरों में अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गई और सम्पूर्ण ढांचा नष्ट हो गये। इस अवस्था में समाज में अराजकता और बर्बरता फैल गई ।

1.6 नगरीय केन्द्रों का वर्गीकरण

नगरीकरण की प्रक्रिया ने नगरीयता को काफी हद तक बढ़ावा दिया, जिससे मानवीय अभिस्थापनाओं के स्वरूपशास्त्रीय और रचना शास्त्रीय विषय अति व्यापक हुआ। नगरों के आकार

और प्रकार्यों के अनुसार नगरीय केन्द्रों का वर्गीकरण हुआ जिसे लघुनगर, कस्बा, नगर, महानगर, विराट नगर, विश्व नगर, औद्योगिक नगर, वाणिज्य नगर आदि नाम दिया गया।

1.7 लघु नगर या कस्बा

लघु नगर या कस्बा मानवीय अविस्थांपना का ऐसा स्वरूप है जिसमें ग्रामीण और नगरीय दोनो प्रकार की विशेषताओं का समावेश है। जब बड़े बड़े गाँव की प्रवृत्तियाँ और गतिविधियाँ बड़ा रूप धारण कर लेती हैं तब ऐसे गाँव को लघु नगर की संज्ञा दी जा सकती है। गाँव की सामान्य आर्थिक- सामाजिक गतिविधियों को संचरित करने के कारण कोई भी क्षेत्र लघु नगर का रूप धारण कर लिया और उसे लघु नगर के रूप में परिभाषित किया गया। प्रमुखतः नगरीकरण, औद्योगीकरण और व्यापारिक प्रवृत्तियों से विकसित होते हैं, जिसमें शिक्षा, यातायात, श्रम संगठन, बैंक, बीमा और मनोरंजन आदि सन्निहित होता है। लघु नगर की अवस्थापना इस प्रक्रिया से सम्बन्धित हैं जब कोई जनसंख्या स्थायी रूप से निवास करती है, और इस एकत्रीकरण का उद्देश्य धर्म, कला, साहित्य, व्यापार, शिक्षा आदि गतिविधियाँ व्यापक होती हैं, तो उस क्षेत्र को लघु नगर कहते हैं।

लघु नगर को परिभाषित करते हुए अनेक विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत किया है। इस संदर्भ में **बर्गल** ने लिखा है कि, ''कस्बा एक नगरीय अवस्थापना के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो पर्याप्त आयामों के ग्रामीण क्षेत्र पर आधिपत्य रहता है।'' इसी प्रकार **एच.एम. मेयर और सी.एफ. कोहन** ने कस्बा निर्माण प्रक्रिया के संबंध में लिखा है, ''जब कभी ये गतिविधियाँ परस्पर संबंधित रहते हुए एक स्थायी और घनिष्ठ स्थानापन्नता और साथ ही सामुदायिक संगठन के लिए कुछ प्रयत्न किये हुए हो तो वह स्थान कस्बे की विशेषताओं को धारण कर लेता है।''

1.8 जनगणना के अनुसार लघु नगर की अवधारणा

किस क्षेत्र को लघु नगर या नगर की संज्ञा दी जाय, इस संदर्भ में जनगणना के आंकड़े व परिभाषा निर्धारित की गयी है और समय समय पर उसको परिवर्तित भी किया गया है। 1901 की जनगणना में लघुनगर की अवधारणा को **इम्पीरियल सेन्सस कोड** के अनुसार निर्धारित किया गया है। इसके अनुसार लघु नगर उसे कहेंगे द्1) जहाँ किसी प्रकार की नगर पालिका हो, (2) सिविललाइन के क्षेत्र नगरपालिका के अन्तर्गत न हो, (3) स्थायी रूप से सभी प्रकार के निवासी हों, (4) स्थायी रूप से आवास व्यवस्था हो तथा जिनकी जनसंख्या 500 से कम न हो। 1921 की जनगणना में इस अवधारणा को और वृहद और व्यापक बनाया गया, क्योंकि भारत जैसे राज्य के अन्तर्गत अनेक नगरीय लक्षणों के निवास क्षेत्र थे जो कि लघुनगर परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आते थे। इसका कारण यह था कि इन निवासी क्षेत्रों में नगरपालिका नहीं थी। अतः इस जनगणना में स्थायी निवास, व्यापार और जनसंख्या के घनत्व को प्रधानता दी गई। पुनः 1941 की जनगणना में लघु नगर को परिभाषित किया गया जिसके अनुसार जहाँ व्यापारिक, प्रशासनिक, नगरीय लक्षण हों तथा जिनकी जनसंख्या 2000 हो। इस प्रकार सन 1961 और 1971 की जनगणना में सन 1951

की परिभाषा को स्वीकार करके सन 1971 की जनगणना में जिन क्षेत्रों को लघु नगर में सम्मिलित किया गया उसके बिन्दु निम्न प्रकार हैं - (1) नगरपालिका, (2) नोटीफाइड एरिया, (3) टाउन एरिया, (4) छावनी क्षेत्र और (5) 5000 से अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र । उपर्युक्त परिभाषाओं से लघु नगर के निम्नलिखित प्रमुख बिन्दु निर्धारित की जा सकती है।

1.9 लघु नगर की विशेषताएँ

1. लघु नगर में ग्रामीण एवं नगरीय जीवन की विशेषताएँ साथ साथ देखने को मिलती है।
2. एक बड़ा गाँव जहाँ पर औद्योगिक और व्यापारिक प्रक्रियायें तेजी से उस क्षेत्र में प्रारम्भ हो गयी हों।
3. आस-पास के गाँव की आवश्यकतायें उस क्षेत्र से पूर्ण होते हों।
4 एक बहुत बड़ी जनसंख्या उस क्षेत्र में स्थायी रूप से निवास करती हों।
5. उस क्षेत्र की जनसंख्या 5000 से अधिक हो गई हो।

1.10 बड़े नगर : अर्थ एवं परिभाषा

समाजशास्त्रियों ने बड़े नगर को परिभाषित करने के लिए भिन्न भिन्न आधार को अपनाया है। नगरीय क्षेत्र या नगर क्या हैं इस शब्द का प्रयोग प्रमुखतः दो अर्थ में की जाती है। एक जनसांख्यिकीय, दूसरा समाजशास्त्रीय। पहले अर्थ में जनसंख्या के आकार,जनसंख्या की सघनता और वयस्क पुरूषों में से अधिकांश के रोजगार के स्वरूप पर बल दिया जाता है। दूसरे अर्थ में विशमता, अवैयक्तिकता, अन्योन्याश्रय और जीवन की गुणवत्ता पर ध्यान केन्द्रित रहता है।

इन दो आधारों के अलावा बड़े नगर को परिभाषित करने के लिए प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण नगरीयता की व्यापकता का दृष्टिकोण, न्यायिक दृष्टिकोण और पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण का उल्लेखनीय स्थान है।

प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण के अनुसार बड़े नगर में नगरीयता के तत्वों की क्रियात्मकताओं की एकता होती है और उसी के आधार पर परिभाषित किया गया है।

नगरीय व्यापकता के दृष्टिकोण के अनुसार नगर और ग्राम, भौतिक सामीप्यता की प्राकृतिक प्रक्रिया है। समाजशास्त्रियों ने नगर और ग्राम की विभिन्नता तथा व्यापकता को लेकर नगर और ग्रामीण को परिभाषित किया है। जिम्मरमैन, सोरोकिन तथा लुईस वर्थ ने नगरीयता के आधार पर नगर के दृष्टिकोण को अपनाने की चेष्टा की है। लुईस वर्थ ने समाजशास्त्रीय उद्देश्यों के लिए एक नगर को यह कहकर परिभाषित किया है कि "नगर, सामाजिक रूप से पंचमेल, विषम रूप व्यक्तियों की अपेक्षा, बड़ी, सघन और स्थायी बस्ती है।"

कानूनी दृष्टिकोण के अनुसार नगर वह स्थान है जहाँ एक निश्चित संख्या से अधिक

व्यक्ति निवास करते हों और जहाँ एक निश्चित सीमा के अन्तर्गत नगरपालिका, सरकार द्वारा प्राप्त अधिकारों का प्रयोग करते हों। इस तरह नगर एक शासकीय इकाई है।

नगर की पारिस्थितिकीय अवधारणा नगर को परिस्थितिकीय दृष्टिकोण से देखना है, अर्थात नगरीय समुदाय के सम्पूर्ण वातावरण को एक इकाई के रूप में विश्लेषित करके नगर को परिभाषित करना है।

जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से भी नगर को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। इस दृष्टि के अनुसार किसी स्थान को नगर कहने के लिए जनसंख्या को आधार माना जाता है जो प्रति किलोमीटर पर जनसंख्या की सघनता पर आधारित है। **नगर के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण** को प्रस्तुत करते हुए **सोरोकिन** और **जिम्मरमैन** ने कहा है कि, "एक नगर एक पूर्ण समाज है, जिसका भौगोलिक आधार इसकी जनसंख्या के लिए विशेषतः नियंत्रित है। अथवा जिसका क्षेत्रीय तत्व, मानवीय तत्व की तुलना में सापेक्षतः पर्याप्त है।" उन्होंने इस अवधारणा को स्पष्ट करते हुए बड़े नगर की निम्नलिखित विशेषताएं बतायी हैं।

1.11 बड़े नगर की विशेषताएँ

सोरोकिन और **जिम्मरमैन** ने नगर की अधालिखित आठ विशेषताएं बतलाई हैं -

1. ऐसा क्षेत्र जहाँ की अधिकांश आबादी उत्पादन, यान्त्रिक कार्य, व्यापार, विभित्र उद्योगों और प्रशासकीय कार्यों में व्यस्त हो, अर्थात जिनकी आजीविका कृषिविहीन व्यवसायों से चलती हो, नगर के रूप में जाना जाता हैं

2. क्षेत्रीय पर्यावरण मनुष्य द्वारा निर्मित होता है और नगरीय व्यक्ति प्रकृति पर कम से कम आश्रित रहते हैं। अतः जीवन जटिल एवं भौतिक साधनों पर निर्भर करता है।

3. समुदाय का आकार वृहद होता है, अतः सामाजिक संगठन और पारस्परिक सम्बन्ध अधिक औपचारिक होते हैं।

4. नगर में जनसंख्या का घनत्व और दबाव अत्यधिक होता है। और आवास की समस्या बहुत ही जटिल होती जाती है।

5. नगरों में गाँवों की तुलना में जनसंख्या की विषमता अधिक होती है, क्योंकि विविध सांस्कृतिक क्षेत्रों के लोग आजीविका के लिए यहाँ आकर बसते हैं।

6. सामाजिक विभेदीकरण एवं संस्तरण वर्ग प्रणाली पर आधारित होता है और विभेदीकरण गाँवों में अधिक जटिल देखा जा सकता है।

7. यहाँ रहने वाले लोगों में गतिशीलता अत्यधिक देखी जा सकती है।, क्योंकि नगर में गतिशीलता के अवसर गाँवों की तुलना में अधिक मिलते हैं।

8. नगरों में लेगों के पारस्परिक सम्बन्ध द्वितीयक सम्बन्धों के आधार पर निर्मित होते हैं, क्योंकि व्यक्तिपरकता इतनी अधिक होती है कि सामाजिक सम्बन्ध अल्पकालीन और स्वार्थों पर आधारित होते हैं, अर्थात नगर वह स्थान है जो विस्तृत होने के कारण वहाँ के लोग आपस में एक दूसरे को नहीं जानते हैं।

1.12 महानगर : अर्थ एवं परिभाषा

महानगर शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा से हुई है। जिसका अर्थ 'मातृनगर' है। यूनान के सभी अधिक होती है। ई0ई0 बर्गेल ने कहा है कि , "महानगर शब्द का अब सामान्यतः प्रयोग एक महानगरीय क्षेत्र में केन्द्रिय नगर को इंगित करने के लिए किया जाता है। यह पसन्द करना प्रतीत होता है कि ऐसे नगर को महानगरीय केन्द्र कहा जाय और एक अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की सबसे बड़ी अवस्थापना को महानगर कहा जाये।"

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से महानगर की निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं -

1. **अन्तर्राष्ट्रीय कार्यों का केन्द्रीय स्थान-** महानगर क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक गतिविधियों का केन्द्र है।

2. **जनसंख्या के घनत्व में वृद्धि -** जनसंख्या के घनत्व की दृष्टि से महानगर अत्यधिक घनत्व वाले नगरीय केन्द्र हैं। इसको परिभाषित करने के लिए उद्योग, निवास स्थान, जनसंख्या और व्यापार सम्बन्धी आंकड़ों का आधार लिया जाता है।

3. **विशाल औद्योगिक व व्यवसायिक केन्द्र-**महानगर औद्योगिक गतिविधियों का केन्द्र है। इसी सन्दर्भ में मेकेन्जी ने लिखा है कि, "सन्देश वाहन वित्त-व्यवस्था और व्यापारिक एवं व्यावसायिक सेवाओं में विशेषज्ञता आदि में प्रमुखतः महानगर व उसका क्षेत्र केन्द्रित होता है। उत्पादन निर्माण की प्रवृत्तियाँ आदि क्रियाएं महानगर से निर्देशित होती हैं तथा प्रादेशिक क्षेत्र में बटी हुई और बिखरी हुई होती हैं।"

4. **आवागमन और सन्देशवाहन के प्रचुर और अच्छे साधन -** महानगर में आवागमन और संदेश ाहन की बेहतर सुविधा और संसाधन है।

   हैरोल्ड एम. मेयर ने ् ार क्षेत्रों के विशिष्ट लक्षणों की दृष्टि से विचार किया है। उसने महानगर व नगर क्षेत्रों में यातायात के साधनों को महत्वपूर्ण बताया है। उसने शिकागों नगर का उदाहरण देते हुए लिखा है कि शिकागो नगर संसार की रेल व्यवस्था का सबसे प्रमुख केन्द्र है।यहाँ की जटिल रेल व्यवस्था के कारण शिकागो नगर एक शिखररथ महानगर है। यह एक प्रकार्यात्मक सावयव है। इस भाँति विस्तृत निवासी क्षेत्रों से सक्रीय सम्पर्क रखने, समुचित एवं विस्तृत यातायात और संदेश वाहन की व्यवस्था रखने वाला नगर महानगर कहलाता है।

1.13 भारत में महानगर

1981 की जनगणना में भारत में महानगरों (10 लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगर) की संख्या 12 थी जो 1991 की जनगणना में बढ़कर 23 हो गयी थी। 2001 की जनगणना में महानगरों की संख्या बढ़कर 35 हो गयी।

1981-91 के दशक में मुम्बई, कोलकाता, दिल्ली व चेन्नई में जनसंख्या की वृद्धि दर क्रमशः 33.4 प्रतिशत, 18.7 प्रतिशत, 46.2 प्रतिशत, 46.2 प्रतिशत व 25.0 प्रतिशत थी। 1999-2001 में इन नगरों की जनसंख्या की वृद्धि दर क्रमशः 29.9 प्रतिशत, 21.2 प्रतिशत, 52.3 प्रतिशत व 18.9 प्रतिशत रही। इस अवधि में जयपुर व पुणे में जनसंख्या की वृद्धि दर क्रमशः 54.9 प्रतिशत व 50.2 प्रतिशत रही।

तालिका - 3

2001 में 10 लाख से अधिक जनसंख्या वाले शहरी इलाके/नगर

2001 में नगरों का क्रमानुसार स्थान	शहरी इलाका / नगर	जनसंख्या (2001)
1.	वृहत मुम्बई	16,368,084
2.	कोलकाता	13,216,546
3.	दिल्ली	12,791,458
4.	चेन्नई	6,424,624
5.	बंगलौर	5,686,844
6.	हैदराबाद	5,533,640
7.	अहमदाबाद	4,519,278
8.	पुणे	3,755,525
9.	सूरत	2,811,466
10.	कानपुर	2,690,486
11.	जयपुर	2,324,319
12.	लखनऊ	2,266,933
13.	नागपुर	2,122,965
14.	पटना	1,707,429
15.	इन्दौर	1,639,044
16.	बड़ोदरा	1,492,398
17.	भोपाल	1,454,830
18.	कोयम्बटूर	1,446,034
19.	लुधियाना	1,395,053
20.	कोची	1,355,406

21.	विशाखापटनम	1,329,472
22.	आगरा	1,321,410
23.	वाराणसी	1,211,749
24.	मुदरै	1,194,665
25.	मेरठ	1,167,399
26.	नासिक	1,152,048
27.	जबलपुर	1,117,200
28.	जमशेदपुर	1,101,804
29.	आसनसोल	1,090,171
30.	धनबाद	1,064,357
31.	फरीदाबाद	1,054,981
32.	इलाहाबाद	1,049,579
33.	अमृतसर	1,011,327
34.	विजयवाड़ा	1,011,152
35.	राजकोट	1,002,160

1.14 वृहद नगर (मेगासिटीज) : अर्थ एवं परिभाषा

नगर के विकास की प्रक्रिया में महानगर सबसे बड़े हैं, परन्तु कालान्तर में महानगर अधिक विकसित नहीं हुए, बल्कि स्थायी रूप से अपने परम्परागत कार्य करते रहे। विश्व के अनेक महानगरों में कई सामान्य लक्षण देखने को मिलते हैं, परन्तु एक लम्बी अवधि के उपरान्त इसमें भी असमानता विकसित हो गई, जिससे महानगर वृहद नगर में परिणत हो गये।

विशव में औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप विराटनगर स्थापित हुए हैं। विराटनगर मुख्यतः मानवीय आवश्यक वस्तुओं का निर्माण करने तथा विक्रय करने वाले केन्द्र होते हैं। विराट नगरों के चारों ओर खेतिहर समुदाय निवास करते हैं। इस समुदायों के लोग विराट नगरों के चारों ओर निवास करते हैं। विराट नगरों का क्षेत्र अति व्यापक होता है।

वृहद नगर को परिभाषित करते हुए **अर्नोल्ड टॉयनबी** ने अपने पुस्तक **सिटिज ऑन दी मूव** में लिखा है कि, ''विराटनगर के निवासी अपनी स्वयं उदर पूर्ति करते हैं, पूर्णतः उस भोजन से जो उस क्षेत्र में उत्पादित होता है जिसमें वे रहते हैं।''

1.15 वृहद नगर की विशेषताएँ

1. वृहद नगर में सामाजिक और जनसंख्यात्मक गतिशीलता अधिक पायी जाती है।
2. वृहद नगर में सैनिक साधनों द्वारा भौतिक विजय, पूँजी द्वारा व्यापार पर नियंत्रण एवं वस्तुओं के आदान-प्रदान के महत्वपूर्ण केन्द्र हैं।

3. वृहद नगर व्यापारिक दृष्टि से उल्लेखनीय स्थान रखती है।

4. वृहद नगर में गगन चुम्बी निवास स्थान अधिक पाये जाते हैं।

5. वृहद नगर में कई प्रकार के कार्य क्षेत्र उपलब्ध होते हैं जैसे औद्योगिक क्षेत्र, वाणिज्य क्षेत्र और निवास क्षेत्र।

6. वृहद नगर के निवास क्षेत्र को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम धनी निवासी उपनगर, क्षेत्र जहाँ नगरीय कर्मचारियों का धनी वर्ग अपनी रात्रियाँ व्यतीत करता है। द्वितीय नगर का श्रमिक वर्ग जो अपने कार्य के स्थानों तथा औद्योगिक संस्थानों के समीप रहता है।

1.16 वृहद नगर के उदाहरण

अमेरिका के वाशिंगटन; फ्रैंकफर्ट न्यूयार्क आदि नगरों को वृहद नगर की श्रेणी में रखा गया हैं इन नगरों में जनसंख्या का घनत्व अत्यधिक होता है और कारखानों और मिलों में काम करने वालों की संख्या अत्यधिक होती है।

1.17 सारांश

प्रस्तुत इकाई लघु नगर, बड़े नगर एवं वृहद नगर के अध्ययन पर आधारित है। इकाई में सर्वप्रथम नगरीकरण की अवधारणा को परिभाषित की गयी है। और विश्व में एवं भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया को आँकड़ों के आधार पर दर्शाया गया है। इसमें नगरों के वर्गीकरण करने से पहले नगरों के विकास और उदभव पर प्रकाश डाला गया है। तत्पश्चात लघु नगर,बड़े नगर, महानगर एवं वृहद नगर को परिभाषित करते हुए उनकी विशेषताओं को उदाहरण और आँकड़ों के साथ प्रस्तुत किया गया है।

1.18 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मैकाइबर एवं पेज, 1994, *समाज : एक परियचात्मक विश्लेषण,* रतन प्रकाशन मन्दिर, आगरा।

2. राव, एम. एस. ए. (सं.), 1974, *अरबन सोशियोलॉजी इन इण्डिया,* ओरिएंट लौंगमैन इलाहाबाद।

3. बुटलर, ई. डब्लू. 1976, *अरबन सोशियोलॉजी,* हपिर एण्ड रो पब्लिशर, न्यूयार्क।

4. बोस, आशिस, 1970, *अर्बनाइजेशन इन इंडिया,* इनवेन्टरी ऑफ सोस मेनटरीयर्स, एकडमिक बुक्स, बम्बई।

1.19 प्रश्नोत्तर

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नगरीकरण से क्या तात्पर्य है?

2. लघु नगर क्या है?
3. बड़े नगर किसे कहते हैं?
4. सोरोकिन व जिम्मरमैन द्वारा दी गई नगर की विशेषताओं को बताइये।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नगरीकरण को परिभाषित कीजिए और विश्व के नगरीकरण की प्रक्रिया को दर्शाइये।
2. भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया को परिभाषित कीजिए।
3. नगर के विकास एवं उदभव पर एक निबन्ध लिखिए।
4. नगरों को परिभाषित करते हुए नगरीकरण का वर्गीकरण कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. किसने नगर के उत्थान और पतन की छः अवस्थाएँ बतायी हैं?

   (अ) मार्गेट सुरे (ब) एण्डर्सन (स) ममफोर्ड (द) सोरोकिन एवं जिम्मरमैन

2. नगरों के उदविकास की किस अवस्था को पूँजीवादी व्यवस्था का प्रकृति माना गया है?

   (अ) योपोलिस (अ) मेगापोलिस (स) पोलिस (द) नेक्रोपोलिस

3. किस नगर को मानवीय अभिस्थापन का स्वरूप माना गया है, जिसमें ग्रामीण और नगरीय दोनों प्रकार की विशेषताओं का समावेश है?

   (अ) लघु नगर (ब) बड़े नगर (स) वृहद नगर (द) इनमें से कोई नहीं

4. किस दृष्टिकोण के अनुसार नगर शासकीय इकाई है ?

   (अ) समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण (ब) कानूनी दृष्टिकोण

   (स) जनांककीय दृष्टिकोण (द) परिस्थितिकीय दृष्टिकोण

उत्तर- 1. (स) 2. (ब) 3. (अ) 4. (ब)

इकाई -2 : नगर के औद्योगिक आधार, उद्योग केन्द्रित विकास

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 नगर की अवधारणा

2.3 नगर बसने के आधार

2.4 नगर का औद्योंगिक आधार

2.5 नगरीय औद्योगीकरण की विशेषताएँ

2.6 भारत के प्रमुख औद्योगिक नगर-केन्द्र

2.7 नगरीकरण एवं विकास

2.8 नगर एवं उद्योग केन्द्रित विकास

2.9 भारत में नगरीकरण और औद्योगीकरण का स्वरूप

2.10 सारांश

2.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.12 प्रश्नोत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य नगर की परिभाषा एवं नगर के बसने के आधार के अतिरिक्त नगर के औद्योगिक आधार और उद्योग केन्द्रित विकास का अध्ययन करना है तथा नगरीय औद्योगीकरण की विशेषताएँ आदि से अवगत कराना है।

2.1 प्रस्तावना

औद्योगीकरण या उद्योग धन्धे स्थापित करने के उपरान्त नगर एवं नगरीकरण का विकास होता है। कभी कभी कई छोटे छोटे नगर जहाँ स्थापित होते हैं,वहीं उद्योग धन्धे स्थापित होना प्रारम्भ हो जाता है। नगरीकरण एवं औद्योगीकरण को विकास का सूचकांक माना गया है। किसी देश की मात्रा को औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के आधार पर परिभाषित किया जाता है। अट्ठारहवीं व उन्नीसवीं सदी में औद्योगीकरण की प्रक्रिया के साथ साथ औद्योगिक नगरों का विकास हुआ। इसके परिणामस्वरूप कृषि यांत्रिकी व खेती में मशीनीकरण का भी आरम्भ हुआ। इसके साथ ही यह संभव हो सका कि अनाज की अधिक उपज उन शहरों की जनसंख्या के उदर पूर्ति हेतु भेजी जा सके, जहा। विभिन्न उद्योगो और व्यवसायों को संपन्न करने के लिए लोग शहरों में आकर बसने लगे। यांत्रिक उन्नति के कारण जो व्यवसाय परिवार तक सीमित थे तथा पूर्व औद्योगिक आर्थिक इकाई के रूप में कार्यरत थे, वे व्यवसाय (उद्योग) अब बड़ी बड़ी फैक्ट्रियों के रूप में बदल गये। औद्योगिक समाजों

के शहरों में जनसंख्या दूसरे स्थानों की तुलना में अधिक होती है और जनसंख्या के घनत्व की दृष्टि से वह क्ष्षेत्र अधिक भीड़ भाड़ वाला होता है। इन देशों में बड़े शहर होते है। जिन्हें प्राइमेट सिटी कहा जाता है। ये शहर व्यवसाय के केन्द्र बिन्दु या चुंबक की तरह होते हैं जो ग्राम निवासियों को अच्छे रोजगार हेतु आकर्षित करते हैं। प्रस्तुत इकाई उपरोक्त सभी बिन्दुओं पर प्रकाश डालता है।

2.2 नगर की अवधारणा

'नगर' शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्द City (सिटी) का हिन्दी रूपान्तरण है। City शब्द लैटिन के Civitous (सिवीटॉस) से बना है जिसका अर्थ 'नागरिकता' है। नगर शब्द से अमूर्तताओं, मूर्तताओ, कार्यों, संस्कृतियों, प्रारूपों, वृद्धि एवं विकासों जैसे अन्य अनेक ऐसे पहलुओं क बोध होता है। इस सन्दर्भ में थियोडॉर्सन लिखते है कि, "नगर ऐसा समुदाय है जिसमें उच्च जन घनत्व, गैर कृषि व्यावसायियों की प्रमुखता, जटिल श्रम-विभाजन से उत्पन्न उच्च कोटि का विशेषीकरण एवं स्थानीय सरकार की औपचारिक व्यवस्था पाई जाती है।" जनसंख्या का अधिक घनत्व, विभिन्नता, अवैयक्तिकता एवं द्वितीयक सम्बन्धों का प्रचलन, औपचारिक सामाजिक नियंत्रण पर निर्भरता नगरीय समुदायों की विशेषता होती है।

2.3 नगर बसने के आधार

हर एक सभ्यता के इतिहास में ग्राम से नगर की ओर उत्प्रवास तथा नगर विकास को देखा जा सकता है। यह नगर क्यों विकसित होता है और उसके आधार, शर्तें या स्थितियाँ क्या हैं/ समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से इनका विश्लेषण निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर किया जा सकता है -

(क) अत्यधिक संसाधन

जहाँ जनजीवन हेतु साधन की मात्रा आवश्यकताओं से अधिक हो जाती है, वहाँ नगर का विकास होता है। उदाहरण के तौर पर आधुनिक युग में प्रकृति पर मनुष्य के नियंत्रण और विज्ञान में प्रतियोगिता के बढ़ते स्तर ने अत्यधिक संसाधनों को जन्म दिया है और कृषि कार्य के साथ साथ औद्योगिक विकास आदि का सुत्रपात हुआ है।

(ख) औद्योगीकरण तथा वाणिज्यीकरण

अत्यधिक संसाधन शहर विकास की मुख्य शर्त है और इसके परिणाम स्वरूप उत्पादन के नये तरीकों द्वारा विकास शीघ्र हो गया। पशिचमी देशों में भाप शक्ति के विकास ने पारम्परिक गतिहीन श्रमिक समूह को कारखानों के नवीन उत्पादन केन्द्रों में परिवर्तित कर सघन रूप से बसने का काम सम्भव कर दिया। यूरोप तथा अमेरिका में बाद के वर्षों में सैकड़ों नगरों का विकास हुआ है, जो आधुनिक युग के उद्योगवाद के केन्द्र होने के कारण आकार में बढ़ गये हैं। इस प्रकार भारत के इस्पात केन्द्र जमशेदपुर पर औद्योगीकरण का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है।

अतः जहाँ औद्योगीकरण होता है वहीं शहरी विस्तार में व्यापार और वाणिज्य को बढ़ावा

मिलता है। यदि प्राचीन यूनान या रोम शहर को देखा जाय तो मध्य युग में जहाँ माल का वितरण किया जाता था, वाणिज्य सम्बन्धी संस्थाओं का विकास विनिमय पद्धति का विकास हुआ था, और तर्क संगति हिसाब-किताब रखने की व्यवस्था थी, वहीं नगर का विकास हुआ। यह सभी विकास औद्योगीकरण से सम्बन्धित हैं।

(ग) नगर का आर्थिक आकर्षण

नगर की ओर उत्प्रवास एक प्रकार के आर्थिक आकर्षण हैं। देश भर में अनेक ऐसे समूह हैं जो अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठाना चाहते हैं, वे सभी नगर की ओर आकर्षित होते हैं। नगरों में और नगरों के लिए आपूरित कृषि उत्पादन को दृढ़ मांग की अपेक्षा लोचहीन व्यवसायी वस्तुओं तथा सेवाओं की अधिक मांग होती है। इस मांग की अपेक्षा लोचहीन व्यवसायी वस्तुओं तथा सेवाओं की अधिक मांग होती है। इस मांग से यह प्रतीत होता है कि अधिकाधिक व्यक्ति अपनी आजीविका प्राप्त कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में **मैकाइबर एवं पेज** लिखते हैं कि, ''यदि अधिक संख्या में स्त्रियाँ न्यूयार्क या वाशिंगटन जायेंगी या लघुउद्योग फालरिवर, मैसेच्यूसेट्स, न्यूजर्सी जैसे स्थानों को जायेंगी अथवा अधिक संख्या में पुरूष अकान ओहियो आदि स्थानों पर जायेंगे तो इसका स्पष्ट कारण आर्थिक है।''

उपयुर्क्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि औद्योगीकरण और नगर परस्पर एक-दूसरे के पूरक हैं और यह नगर के औद्योगिक आधार को परिभाषित करता है।

2.4 नगर के औद्योगिक आधार

उद्योग तथा नगर अत्यन्त घनिष्ठता के साथ एक-दूसरे से संबन्धित हैं यह आकलन करना सटीक होगा कि जब किसी देश का औद्योगीकरण होता है तब नगरों का विकास होता है। इस सन्दर्भ में **किंग्सले डेविस** ने अपनी पुस्तक द पॉपुलेशन ऑफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान में यह मत व्यक्त किया है कि नगरों में नवागन्तुकों की संख्या में वृद्धि औद्योगिक विकास से अत्यन्त घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं जिस स्थान पर भी औद्योगीकरण होता है, वहाँ पर यातायात के साधन, व्यापार तथा अन्य संबन्धित विविध गतिविधियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं, जो अन्ततः श्रमिकों की संख्या को प्रभावित करती हैं। नगरों का विकास केवल उद्योग धन्धों से ही सम्बन्धित नही हैं बल्कि व्यापार तथा वाणिज्य पर भी निर्भर करता हैं।

इसी प्रकार नगरीकरण और औद्योगीकरण एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। यह प्रक्रिया परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करती है। यह प्रक्रिया नगरीकरण एवं औद्योगीकरण की प्रक्रिया को विस्तृत रूप से परिभाषित करती है। यह सर्वमान्य सत्य है कि जिन स्थानों पर उद्योगों का विकास हुआ वहाँ ही नगर का भी विकास हुआ। उद्योग की स्थापना के उपरान्त नगरीकरण अनेक नयी आवश्यकताओं को जन्म देता है, जैसे - कच्चा माल, श्रमिक शक्ति की सुविधा, यातायात संचार आदि। इन सभी आवश्यकताओं की पूर्ति अनेक संस्थाएं मिलकर करती हैं और एक नगर का निर्माण होता है।

18वीं शताब्दी में यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात नगरीकरण के विकास तथा उन्नति

में सबसे अधिक उत्तरदायी सिद्ध हुआ है। औद्योगीकरण अर्थात नवीन उद्योगों की द्रुतगति से स्थापनाा से नगरों के विकास को सुदृढ़ आधार प्राप्त हुआ। इससे सर्वत्र नगरीकरण को बल मिला। इसके फलस्वरूप 18वीं शताब्दी के उपरान्त इंग्लैण्ड में अनेक नवीन नगरों की स्थापना हुई और पुराने नगरों का तेजी से विकास हुआ। इन सब परिवर्तनों के फलस्वरूप वर्तमान समय में इंग्लैण्ड और बेल्स में 80 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है। इसी प्रकार फ्रांस में 49 प्रतिशत, उत्तरी आयरलैण्ड में 50.8 प्रतिशत, कनाडा में 53.7 प्रतिशत, संयुक्त राज्य अमेरिका में 80.0 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है।

औद्योगीकरण के अवसर पर दो प्रकार के नगर विकसित होते हैं। पहला- नगरों का विकास उन स्थानों पर होता है जहाँ पहले से छोटे नगर होते हैं और औद्योगीकरण की अन्य सामान्य सुविधाएँ उपलब्ध रहती हैं। भारत में इस प्रकार के विकसित हुए नगर हैं - मुम्बई, कोलकाता, अहमदाबाद और कानपुर। दूसरे प्रकार के नगर वहाँ विकसित होते हैं जहाँ पहले से कोई छोटा नगर विकसित नहीं रहता, परन्तु उद्योगों की स्थापना के लिए पर्याप्त सुविधाएँ उपलब्ध रहती हैं। इन स्थानों पर नये नगर बनाये जाते हैं। इस प्रकार के भारतीय नगरों में भिलाई, राउरकेला, दुर्गापुर आदि प्रमुख हैं।

2.5 नगरी औद्योगीकरण की विशेषताएँ

- नगरीय क्षेत्र उस परिपूर्णता के रूप में समझा जाता है जो मुख्यतः उद्योग, व्यापार, नौकरी तथा अन्य व्यवसायमें संलग्न होता है। इस समाज का सम्बन्ध कृषि व्यवसाय से नहीं होता।
- औद्योगिक नगर प्रमुखतः वस्तुओं के निर्माण तथा तकनीकी कार्यों से सम्बन्धित रहता है।
- औद्योगिक नगर का जीवन एक विशेष ढंग का होता है और यह ग्रामीण जीवन का ढंग या प्रणाली से भिन्नता रखता है।
- औद्योगिक नगर की सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति को व्यावसायिक क्रियाएँ करने की स्वतंत्रता होती है।
- नगरीय जीवन मानवीय औद्योगिक व्यवस्थाओं का एक संकुल है। जिसमें अनेकानेक आर्थिक क्रियाएँ संचालित होती हैं तथा जो एक दूसरे के लिए पूरक होती हैं।

इस समाज में व्यक्तियों के मध्य किसी प्रकार की आंतरिकता और प्राथमिक सम्बन्धों की व्यवस्था नहीं होती है। नगर एवं औद्योगिक समाज में भौतिक जीवन प्रकृति प्रधान नहीं होता अपितु मानवकृत होता है।

नगरीय पर्यावरण एवं वातावरण मानव निर्मित होता है। इसमें प्रकृति का प्रभाव नहीं है।

नगर एवं औद्योगिक समाज की परिस्थिति चंचल, भावना प्रधान और शोरगुल से आच्छादित होती है।

यहाँ भूमि का अधिक महत्व है और यहाँ जनसंख्या का धनत्व भी अधिक होता है।

औद्योगिक नगरों में सामाजिक गतिशीलता की मात्रा अधिक होती है। औद्योगीकरण के लिए तार्किकता, केन्द्रीयकृत आर्थिक संगठन आवश्यक है जिस पर नियुक्ति सार्वभौमिक मानक के आधार पर होती है, जो तार्किकता पर आधारित होती है।

औद्योगिक नगरों में जन शिक्षा एवं जन संचार अत्यन्त आवश्यक तत्व हैं। सार्वभौमिक संचार साधनों में विकास के फलस्वरूप व्यक्ति की विचारधारा में परिवर्तन होता है।

औद्योगीकरण के फलस्वरूप महिलाओं की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन देखने को मिल रहा है जिसके फलस्वरूप नारी का कार्य क्षेत्र विस्तृत हो गया है।

औद्योगिक नगरों की मुख्य विशेषता श्रम विभाजन एवं विशेषीकरण है। नगरीकरण के आरम्भिक दौर में श्रम विभाजन एवं विशेषीकरण का अभाव था, परन्तु औद्योगिक नगर में श्रम विभाजन एवं विशेषीकरण की जटिल व्यवस्था है। श्रम विभाजन के साथ हर व्यवसाय से जुड़े अलग-अलग विशेषीकरण की मांग है। इस व्यवस्था में विशेष क्षेत्र की जरूरत पड़ी जिसका कार्य लोगों को निर्देशन देना, उन पर नियन्त्रण रखना एवं मजदूरों की गतिविधियों की देखभाल करना। फलतः एक फैक्ट्री व्यवस्था का निर्माण हुआ। औद्योगीकरण के फलस्वरूप जहाँ विशेषीकरण की आवश्यकता बढ़ी वहाँ प्रारम्भिक प्रशिक्षण की आवश्यकता हुई। इससे पूर्व औपचारिक प्रशिक्षण की कोई आवश्यकता नहीं थी और लोगों को नियुक्तियाँ अपने नातेदारी के आधार पर मिलती थी। औद्योगिक नगरीकेरण ने इस व्यवस्था का अन्त करते हुए नये सार्वभौमिक और तार्किक व्यवस्था को जन्म दिया।

औद्योगिक नगरीकरण के परिणाम स्वरूप पहले का सीमित उत्पादन काफी बढ़ गया तथा इसका सुचारू रूप से संचालन करने के लिए नियमों की जरूरत पड़ी। औद्योगिक नगर में धन, प्रशिक्षित टेक्नीकल व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ी। उक्त व्यक्ति प्रशासकीय या व्यवसायिक क्षेत्र में कार्यरत रहते हैं। इसी तरह नौकरशाही का विकास हुआ और इस प्रक्रिया में औद्योगिक नगरीकरण का प्रादुर्भाव हुआ।

औद्योगिक नगर में कानून की दृष्टि से कोई ऊँच-नीच की भावना देखने को नहीं मिलती है। अतः सामाजिक संरचना और व्यक्तियों के प्रस्थिति में आर्थिक दशा के कारण भिन्नता पाई जाती है।

2.6 भारत के प्रमुख औद्योगिक नगर केन्द्र

भारत में औद्योगिक नगरों का विकास हुआ है। प्रमुखतः ये नगर उद्योग स्थापित होने के उपरान्त छोटे बड़े नगरों के रूप में विकसित हुए हैं। वे सभी औद्योगिक केन्द्र (**Industrial Centre**) के अन्तर्गत आते है। जिनमें लघु एवं भारी उद्योग पाए जाते हैं -

(अ) **बड़े पैमाने के उद्योग वाले नगर** - जमशेदपुर, चितरंजन, बंगलौर और भोपाल। इनमें

इस्पात, रेलों के इंजन, हवाई जहाज एवं भारी विद्युत सामान के कारखाने पाये जाते हैं।

(ब) मध्य उद्योग वाले नगर - कई नगर लघु उद्योगों के लिए प्रसिद्ध हैं। उदाहरणतः ग्वालियर चीनी के बर्तनों के लिए और जयपुर पीतल के छोटे खिलौने के लिए ।

2.7 नगरीकरण एवं विकास

समाज में परिवर्तन एवं विकास के कारक के रूप में उद्योग केन्द्रित नगरीकरण एक महत्पवूर्ण विषय बनता जा रहा है। औद्योगीकरण आधुनिकीकरण का अत्यन्त महत्वपूर्ण आधार है, अतः नगरीकरण, औद्योगीकरण और उद्योग केन्द्रित विकास समाजशास्त्र में एक चर्चित एवं महत्वपूर्ण विषय हैं। **किंग्सले डेविस** के अनुसार समाजशास्त्र में नगरीकरण जैसे विषय की लोकप्रियता के चार प्रमुख कारण हैं। **प्रथम** कारण यह है कि भाषा, धर्म, स्तरीकरण या परिवार जैसे विषयों की तुलना में नगरीकरण बहुत ही नवीनतम विषय है। कभी कभी तो ऐसा लगता है कि अन्य विषयों की तुलना में नगरीकरण कल ही प्रारम्भ हुआ है। दूसरा प्रमुख कारण यह है कि नगरीकरण के द्वारा मानव समाज में एक क्रान्तिकारी एवं युगान्तकारी परिवर्तन आया है। उद्योग और प्रौद्योगिकी के विकास पर आधारित नगरीकरण ने मानव समाज की पूरी तरह झकझोर दिया है। तीसरा कारण यह है कि परिवर्तन सिर्फ शहरी जीवन में ही नहीं वरन ग्रामीण जीवन को भी प्रभावित एवं संचालित करते रहते हैं। अन्त में डेविस कहते हैं कि चौथा कारण यह है कि नगरीकरण की प्रक्रिया अबाध गति से आज भी चल रही है। भारत में स्वाधीनता के बाद प्रारम्भिक दशकों में उद्योग-धन्धों में भारी पैमाने पर निवेश हुआ, जिसके कारण औद्योगिक क्रिया-कलापों मे व्यापक इजाफा हुआ और उद्योग केन्द्रित नगरों का विकास हुआ। इसके परिणामस्वरूप समाज में परिवर्तन एवं विकास का नये दौर का प्रारम्भ हुआ। औद्योगिक नगरीकरण से लोगों के जीवन और रहन सहन का स्तर बढ़ा और अनेक बेरोजगार लोगों को जीविकोपार्जन के साधन प्राप्त हुए।

औद्योगिक नगर के विकास के फलस्वरूप नगरीय जीवन में विविधतापूर्ण तथा अनेक भिन्नताओं में अनुकूलन की क्षमता में वृद्धि हुई। विभिन्न धर्मों, भाषाओं, रीति रिवाजों वाले लोगों को एक साथ रहना पड़ा, जिसके फलस्वरूप एक दूसरे के साथ सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता में वृद्धि हुई ।

नगरीकरण और विकास ने सामान्य जनजीवन में आत्मनिर्भरता को बढ़ाया है। नगर का जीवन अत्यन्त संघर्ष तथा प्रतिस्पर्धात्मक होता है। सामुदायिक भावना के अभाव होने के कारण व्यक्ति अपने ऊपर निर्भर करता है, फलतः उसमें आत्मनिर्भरता तथा आत्मविकास की भावना विकसित होती है।

नगरीय औद्योगीकरण ने वैज्ञानिक सोच, आविष्कार तथा प्रविधियों को बढ़ावा दिया है। नगरीय जीवन अत्यन्त परिवर्तनशील है, उससे निपटने के लिए निरन्तर नये नये साधनों तथा नई नई प्रविधियों का आविष्कार करना पड़ा है। इसलिए आविष्कार तथा नवीन प्रविधियों की खोज

अतः हम यह कह सकते हैं कि नगरीकरण एवं विकास का तात्पर्य किसी नगर की जनसंख्या के इस प्रकार व्यवस्थापन से है जिसमे सभी लोगों को सुविधाओं का दीर्घकालिक लाभ, प्रदूषण एवं अव्यवस्था की कठिनाइयों के बिना मिल सके। सभी वर्गों को अपनी परिस्थितियों को बेहतर बनाने के अवसर मिल सकें। आर्थिक संसाधनों के वितरण में विषमता को कम किया जा सके एवं रोजगार के बहुजन उपयोगी, अधिक खपत वाले, पुनरोत्पादक एवं दीर्घकालिक साधनों का सृजन एवं विकास किया जा सके, जो आधुनिकता के समस्त आयामों को साथ लेकर भी भारतीयता से संपृक्त हों तथा स्थानीय उपलब्धियों, परिस्थितियों एवं पर्यावरण के अनुसार विकसित हों।

2.8 नगर एवं उद्योग केन्द्रित विकास

नगर का विकास किसी एक कारण से नहीं होता है बल्कि अनेक ऐसे महत्वपूर्ण सहयोगी कारणों से होता है जो नगर को बनाने व बसाने में सहायक होते हैं। इस सन्दर्भ में अनेक विद्वानों ने नगरों के विकास को अनेक कारकों से केन्द्रित किया है। उदाहरणार्थ **नोइल जिस्ट** और **एल.ए.हरबर्ट** ने नगरों को उत्पादन के केन्द्र, व्यापार तथा वाणिज्य के केन्द्र,राजनीतिक राजधानियाँ, सांस्कृतिक केन्द्र, दर्शनीय तथा अवकाश कालीन नगर एवं विभिन्नता के नगर के रूप में दर्शाया है। इस प्रकार **मम्सफोर्ड** ने नगर को मध्यकालीन नगर अनवस्थित नगर, औद्योगिक नगर तथा विराट नगर के रूप में परिभाषित किया है।

उपर्युक्त वर्गीकरण से स्पष्ट होता है कि नगरों का विकास निश्चित रूप से उद्योग धन्धों के आधार पर केन्द्रित है। औद्योगिक नगर आधुनिक नगरों की नीव रखते हैं तथा उद्योग का विकास मशीनों के नित्य आविष्कार के साथ होता है । इसके साथ ही श्रमिकों का केन्द्रीययकरण भी औद्योगिक नगरों में बढ़ने लगता है।

आधुनिक औद्योगिक, तकनीकी एवं वैज्ञानिक युग में उद्योग की स्थापना, उद्योग के आधार पर हो रही है। वे स्थान जहाँ बड़े-बड़े कारखाने, फैक्ट्री और मील लगाये जा रहे हैं, वे स्वतः नगर बनते जा रहे हैं। इस क्षेत्र में लाखों की संख्या में श्रमिक कार्य करते हैं और अनेक कार्यालयों की स्थापना की जाती है। और वह बाजार व व्यापार केन्द्र बन जाते हैं । इसके साथ साथ शिक्षा संस्थाओं तथा तकनीक ज्ञान में प्रशिक्षण के केन्द्र बन जाते हैं। इस तरह औद्योगीकरण की प्रक्रिया जिस स्थान व क्षेत्र में तीव्र गति से आगे बढ़ती है वे सभी स्थान नगर व महानगर बन जाते हैं। भारत में अनेक उद्योग केन्द्रित नगर विकसित हुए हैं और वे सभी उत्पादन के प्रमुख केन्द्र है। भारत में जमशेदपुर , चितरंजन, बंगलौर, भोपाल, ग्वालियर आदि उद्योग केन्द्रित नगर विकसित हुए हैं।

स्टेट आफ इण्डिया'स अर्बनाइजेशन, एन.आई.यू.ए. 1988 के अध्ययन से स्पष्ट है कि भारत में तेजी से बढ़ते नगरीकरण के लिए दो कारक समान रूप से उत्तरदायी हैं - कुल नगरीय आबादी का 40 प्रतिशत नैसर्गिक बढ़ोत्तरी तथा 40 प्रतिशत गाँवों से नगरों की ओर प्रवसन। औद्योगीकरण को प्रवसन का मुख्य कारण माना जाता है। जबकि पीच के शब्दों में जो औद्योगीकरण

एवं नगरीकरण, औद्योगीकृत पशिचम में स्थायी परिणित लगते हैं, भारत में अक्सर विच्छेदित प्रतीत होते हैं। नीति निर्धारकों ने बिना नगरीकरण के औद्योगीकरण को लक्ष्य बनाया है तथा बिनाा औद्योगीकरण के नगरीकरण को पाया है।मांग से अधिक संख्या में शहरों व औद्योगिक केन्द्रों में लोगों का प्रवसन हुआ है। गत 40 वर्षों के अन्तराल में भी नगरों के औद्योगीकरण व नगरीकरण, रोजगार चाहने वाले की तुलना में कार्यदशाएँ उत्पन्न नहीं कर पायी हैं। उद्योगों एवं नगरों की स्थापना एवं विस्तार के सन्दर्भ में एक विडम्बना हमारे देश में पाई जाती है। वह यह है कि "जहाँ व्यापक उद्योग व खनिज हैं, वहाँ जन घनत्व अधिक नहीं है, परन्तु जहाँ अधिक घनत्व है वहाँ कृषि नहीं है।"

2.9 भारत में नगरीकरण और औद्योगीकरण का स्वरूप

भारत में यूरोप की भाँति नगरीकरण की प्रक्रिया घटित नहीं हुई, बल्कि 19वीं शताब्दी तथा 20वीं शताब्दी के आरम्भिक काल में निम्नलिखित तत्वों के परिणाम स्वरूप नगरीकरण हुआ -

1. रेल के विकास के कारण व्यापार को बढ़ावा मिला और व्यापार महत्वपूर्ण रेलवे स्टेशनों के मार्गों द्वारा होने लगा। भारत में रेल की आवश्यकता या तो प्रशासनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनुभव की गई या फिर निर्यात के उद्देश्य से महत्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्रों पर वस्तुएँ और कच्चा माल एकत्रित करने के लिए।

2. 19वीं शताब्दी में व्यापक अकालों के कारण बड़े पैमाने पर किसान बेरोजगार हो गये। ग्राम-क्षेत्रों में रोजगार न मिल सकने के कारण ग्रामीण जनसंख्या रोजगार की तलाश में नगरों की ओर चल पड़ी। सन 1872 से सन 1881 और सन 1891 से सन 1901 की अवधि में भीषण अकाल पड़ने के कारण नगरों की ओर जनसंख्या का प्रवाह सर्वाधिक तीव्र दिखाई पड़ता है।

3. भूमिहीन श्रमवर्ग के विकास से भी नगरीकरण उत्पन्न हुआ, चाहे यह केवल नकरात्मक प्रवृत्ति ही थी। इस वर्ग के जिन लोगों को नगर क्षेत्रों में स्थायी रोजगार अथवा अपेक्षाकृत ऊंची मजदूरी मिल गई, वे वहीं बस गये, किन्तु इनमें से कोई आकर्षण महत्वपूर्ण रूप में कार्य नहीं कर सका।

4. धनी जमींदारों में भी नगरों में बसने की प्रवृत्ति नगरीय जीवन के आकर्षण के कारण विकसित हुआ।

5. नये उद्योगों की स्थापना अथवा पुराने उद्योगों का विस्तार होने के कारण श्रम-शक्ति नगरों में खपने लगी।

इस सम्बन्ध में डी.आर. गाडगिल इस परिणाम पर पहुँचे कि इन सब कारणों में उद्योगों का विकास अन्य सभी देशों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण रहा है, किन्तु भारत में इसका प्रभाव निश्चय ही इतना सशक्त नहीं रहा। सच तो यह है कि भारत में बहुत कम ऐसे नगर हैं जिनका उदभव नए उद्योगों के कारण हुआ हो।

2.10 सारांश

इस इकाई में नगर के औद्योगिक आधार और उद्योग केन्द्रित विकास पर चर्चा की गयी है। इकाई के प्रारम्भ में नगर क्या है इसको दर्शाया गया है। इसके बाद नगर बसने या विकसित होने के क्या कारण हैं इसका विवरण प्रस्तुत किया गया है। तत्पश्चात नगर के औद्योगिक आधार और औद्योगिक नगरों के प्रमुख लक्षणों पर चर्चा करते हुए भारत के प्रमुख औद्योगिक नगरीय केन्द्रों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई में नगरीकरण एवं विकास के सम्बन्ध तथा नगर एवं उद्योग केन्द्रित विकास की विवेचना की गयी है।

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

किंग्सले, डेविस, द *पॉपुलेशन ऑफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान* ।

गाडगिल डी. आर., द *इंडस्ट्रीयल इवैल्यूशन ऑफ इण्डिया* ।

एन.आई.यू.ए., *स्टेट आफ इंडिया'स अर्बनाइजेशन,* 1988।

पीच, जी.सी.के., *अर्बनाइजेशन इन इण्डिया,* बैकिन्सले एवं हास्टन, जे.एम. के सम्पादित पुस्तक *अर्बनाइजेशन एण्ड इट्स प्रॉब्लम,* ऑक्सफोर्ड प्रेस, बाम्बे।

गाडगिल, डी, आर., द इण्डस्ट्रियल इवॉलूशन ऑफ इण्डिया।

2.12 प्रश्नोत्तर

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नगर से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट करें।
2. नगर बसने के आधार को परिभाषित कीजिए।
3. औद्योगीकरण तथा वाणिज्यीकरण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. भारत के प्रमुख औद्योगिक केन्द्रों का उल्लेख करें।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नगर को परिभाषित करते हुए नगर बसने के प्रमुख आधार को स्पष्ट कीजिए?
2. नगर के औद्योगिक आधार से आप क्या समझते हैं? भारत के प्रमुख औद्योगिक नगरों का उल्लेख कीजिए?
3. नगरीकरण को स्पष्ट करते हुए नगरीकरण और विकास के सम्बन्ध को स्पष्ट कीजिए?
4. नगर और उद्योग केन्द्रित विकास की विवेचना कीजिए?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'द पॉपुलेशन ऑफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान' नामक पुस्तक किसने लिखी है?

   (अ) किंग्सले डेविस (ब) मैकाइबर एण्ड पेंज

(स) लुईस वर्थ (द) एम.एस. राव

2. नगर शब्द की उत्पत्ति किस भाषा से हुई है?

(अ) ग्रीक (ब) लैटिन

(स) यूनानी (द) इनमें से कोई नहीं

3. यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात कब हुआ था?

(अ) 16वीं शताब्दी में (ब) 17वीं शताब्दी में

(स) 18वीं शताब्दी में (द) 19वीं शताब्दी में

4. समाजशास्त्र में नगरीकरण जैसे विषय की लोकप्रियता के चार प्रमुख कारण किसने बताये हैं?

(अ) मैकाइवर एण्ड पेंज नें (ब) एम.एस. राव ने

(स) लुईस वर्थ ने (द) किंग्सले डेविस ने

उत्तर - (1) अ (2) ब (3) स (4) द ।

इकाई -3 : नगर के व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन का स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 सामाजिक संरचना : अर्थ

3.3 नगरीय सामाजिक संरचना

3.4 नगरीय सामाजिक संरचना की प्रमुख विशेषताएँ

3.5 नगरीय सामाजिक संरचना के आधार

3.6 नगर में सामाजिक परिवर्तन एवं इसके कारक

3.7 नगरीय व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन का स्वरूप

3.8 सारांश

3.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.10 प्रश्नोत्तर

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई नगर में व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन के स्वरूप पर केंन्द्रित है।इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त हम नगर की सामाजिक संरचना, वर्ग संरचना व व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन के अतिरिक्त परिवर्तित व्यावसायिक संरचना के स्वरूप को जान सकेंगे इसके साथ साथ छात्र वर्तमान समय में नगरीय समाज के ढाँचागत स्वरूप व उसमें होने वाले परिवर्तन के कारणों के अतिरिक्त विभिन्न समाजशास्त्रियों के विचार से भी अवगत होंगे।

3.1 प्रस्तावना

समाजशास्त्र में समाज के ढाँचागत स्वरूप के आधार पर अनेक अध्ययन केन्द्रित हैं। समाज का संरचनात्मक विश्लेषण समाजशास्त्रीय अध्ययन का प्रमुख आधार है। ग्रामीण समाज की भॉति नगरीय समाज को भी उसके ढॉचागत स्वरूप के आधार पर विश्लेषित किया जा सकता है। नगरीय समाज की संरचना आर्थिक एवं व्यावसायिक स्वरूप पर आधारित है। समय के साथ साथ विभिन्न कारणों से नगरीय समाज के संरचनात्मक स्वरूप में अनेक परिवर्तन हुए हैं जिसने नगरीय समाज के व्यावसायिक संरचना को काफी हद तक प्रभावित किया है।

3.2 सामाजिक संरचना : अर्थ

मानव समाज की संरचना भवन की सरंचना से काफी साम्य रखती है। इसी आधार पर समाजशास्त्री सामाजिक संरचना को परिभाषित करते हैं। भवन निर्माण के लिए आवश्यक घटक सामग्री जैसे - ईंट, बालू, सीमेंट आदि को निशिचत क्रम में जोड़ कर रखा जाता है। जिसके परिणाम

स्वरूप एक भवन का निर्माण होता है। अतः सामग्री को जब क्रमबद्ध तरीके से सजाकर तथा मिलाकर रखने पर ही भवन का निर्माण सम्भव होता है। उसी प्रकार समाज की संरचना के निर्माण में निम्नलिखित प्रमुख तत्व होते हैं यथा -

1. स्त्री-पुरूष, बुजुर्ग, बच्चे, विभिन्न व्यावसायिक तथा धार्मिक समूह ।
2. विभिन्न व्यावसायिक तथा धार्मिक समूह के अंतःसम्बन्ध (जैसे पति-पत्नी के मध्य सम्बन्ध, माता-पिता व बच्चों के मध्य सम्बन्ध व विभिन्न समूहों के मध्य सम्बन्ध)
3. समाज के सभी समूह का एक इकाई के रूप में मिलकर कार्य करना समाहित होता है।

अतः इससे स्पष्ट होता है कि सामाजिक संरचना उन विभिन्न तरीकों से है जिसके अन्तर्गत सामूहिक नियमों, भूमिकाओं एवं कार्यों को लेकर स्थिर प्रतिमान संगठित होता है। यद्यपि यह संरचना अदृश्य होती है, परन्तु हमारे कार्यों के स्वरूप को स्पष्ट करती है। सामाजिक संरचना के मूलभूत तत्व, जो हमारे कार्यों को निर्देशित करते हैं, वे हैं - सामाजिक प्रस्थितियाँ, सामाजिक भूमिकाएँ, सामाजिक मानक एवं सामाजिक मूल्य ।

3.3 नगरीय सामाजिक संरचना

नगरीय सामाजिक संरचना विशेष प्रकृति की है जो ग्रामीण सामाजिक संरचना से भिन्न है। विभिन्न समाजशास्त्रियों ने नगरीय सामाजिक संरचना के विश्लेषण में भिन्न भिन्न मार्गों को अपनाया है जैसे कि रॉबर्ट के. मर्टन ने व्यक्ति की सामाजिक स्थिति और कार्य के आधार पर इसका विश्लेषण किया है परन्तु सामान्यतः समाजशास्त्री समाज विशेष के संस्थानिक ढाँचे के आधार पर इसकी विवेचना करते हैं। नगरीय सामाजिक संरचना की कुछ प्रमुख विशेषताएँ हैं जो इस संरचना को समझने में सहायक सिद्ध होंगी।

3.4 नगरीय समाज के संरचना की प्रमुख विशेषतायें

जैसा कि हमने पहले चर्चा किया है कि समाज में स्त्री-पुरूष, बुजुर्ग, बच्चे विभिन्न व्यावसायिक समूह, धार्मिक समूह तथा विभिन्न अन्य समूह किस आधार पर एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया तथा मेल-मिलाप करते हैं, और इस प्रकार बार बार अन्तःक्रिया के उपरान्त जो ढाँचागत स्वरूप उभरता है उससे सामाजिक संरचना का निर्माण होता है। निम्नलिखित विशेषताओं के आधार पर नगरीय समाज का यह स्वरूप स्पष्ट हो जायेगा।

1. अस्थायित्वता

नगरीय समाज में व्यक्ति नित नये नये लोगों से मिलता है और संबंध जोड़ता है, परन्तु यह सम्ब्रन्ध अस्थायी होता है। उसे इतने अधिक लोगों से सम्बन्ध रखने में हर एक को स्मरण रखना असम्भव हो जाता है। अतः यहाँ द्वितीयक सम्बन्ध देखने को मिलता है। व्यक्ति की सामाजिक स्थिति अत्यन्त परिवर्तनशील है, जिसके सन्दर्भ में लुईस वर्थ ने कहा है कि ये सम्बन्ध व्यक्तियों पर आधारित नहीं होते बल्कि अवैयक्तिक (Impersonal) होते हैं, ये दिखावटी, कृत्रिम, अस्थायी, परिवर्तनशील

और कार्य विशेष से ही सम्बन्धित होते हैं।नगर के व्यक्ति के सम्बन्ध प्रायः औपचारिक होते हैं। इन सामाजिक सम्बन्धों के कारण नये सामाजिक संगठन एवं सामाजिक संरचना का जन्म होता है।

2. गुमनामता

नगरीय समाज में व्यक्ति अपने काम में लिप्त रहता है तथा नगर की भीड़ में सभी लोगों के नाम से जानना असम्भव रहता है। इस समाज में व्यक्ति गुमनाम रहना ज्यादा पसन्द करता है।

3. कृत्रिमता

नगरीय समाज में व्यक्तियों के सामाजिक सम्बन्ध कृत्रिम एवं औपचारिक होते हैं उसका व्यवहार घनिष्ठ नहीं होता अपितु बनावटी होता है वह 'हैलो-हाय मित्रता' में विश्वास रखता है और स्वार्थ की बात करता है।

4. व्यक्तिवादिता

नगरीय समाज की मूल्य व्यक्तिवाद पर आधारित होते हैं। हर व्यक्ति अपने दृष्टिकोण से सोचता, विचारता एवं कार्य करता है। सामूहिकता के आधार पर विचार नहीं किया जाता है।

5. बेमेलता

नगरीय सामाजिक संरचना की एक विशेषता यह है कि वहाँ पर बेमेलता पायी जाती है। नगरीय समाज में विभिन्न प्रजातियों, क्षेत्रों धर्मों, व्यावसायों एवं भाषाओं के व्यक्ति रहते हैं। यहाँ सामाजिक सामंजस्य का अभाव पाया जाता है।

6. व्यावसायों की बहुलता एवं भिन्नता

नगरीय समाज में अनेक प्रकार के भिन्न भिन्न व्यवसाय होते हैं। श्रम-विभाजन बहुत अधिक होता है। एक व्यावसाय में लगा व्यक्ति दूसरे व्यावसाय के विषय में जानकारी नहीं रखता है।

3.5 नगरीय सामाजिक संरचना के आधार

समाजशास्त्रियों का मानना है कि वर्ग व्यवस्था मुख्यतः नगरीय सामाजिक संरचना का आधार है। आधुनिक नगरीय सामाजिक संरचना में औद्योगीकरण, नगरीकरण, तकनीकी विकास आदि ने आधुनिक वर्ग-व्यवस्था को आर्थिक आधार प्रदान किया है। नगरीय समाज में संरचना का दूसरा आधार व्यावसायिकता है और व्यवसायों की बाहुल्यता होने के कारण यहाँ विभिन्न वर्ग पाये जाते हैं इनमें शिक्षक, व्यापारी, इंजीनियर, मजदूर आदि प्रमुख हैं। अतः नगरीय सामाजिक संरचना के निम्नलिखित आधार हैं।

1. शक्ति

नगरीय समाज में आर्थिक शक्ति के आधार पर व्यक्तियों में अन्तःक्रिया होता है। जिसमें आर्थिक विभेदन होता है। औद्योगिक नगरीय समाज में आर्थिक शक्ति के आधार पर समाज के स्वरूप का निर्धारण होता है। इसी प्रकार प्रजातान्त्रिक समाजों में बड़े बड़े औद्योकि नियम और व्यापारिक

संस्थान, अर्थव्यवस्था पर एकाधिकार करके राष्ट्रीय आय का अधिकांश भाग प्राप्त कर लेते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप उनकी आर्थिक शक्ति ऊँची हो जाती है।

आधुनिक औद्योगिक नगरीय समाज में आर्थिक सम्पन्नता सामाजिक संरचना का महत्वपूर्ण तत्व है। आज के नगरीय समाज में भूमि के द्वारा आर्थिक एवं राजनीतिक दोमों शक्तियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। निजी सम्पत्तियाँ और आय इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण तत्व हैं। आय की असमानता अमेरिका आदि देशों में भी बढ़ रही है। **'कोल्को और मिलर'** इत्यादि विद्वानों ने अमेरिका में आय की असमानता के विकास को स्वीकार किया है। ब्रिटेन और भारत में भी आय की असमानता के विकास को स्वीकार किया है। ब्रिटेन और भारत में भी आय की असमानता, शक्ति निर्धारण का आधार है।

2. व्यवसाय

आधुनिक समाजों में व्यवसाय को वर्ग निर्धारण का अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व समझा जाता है।व्यवसाय का सम्बन्ध आय से, सामाजिक सम्मान तथा शक्ति से और शिक्षा से भी है। नार्थ तथा हॉट ने अमेरिका के वयस्कों का अध्ययन करके 70 व्यवसायों की तुलना की जिसमें सर्वाधिक प्रतिष्ठा चिकित्सकों की थी, और निम्नतम प्रतिष्ठित व्यवसाय 'जूते की पालिश' का था। चिकित्सा के बाद अन्य व्यावसायिक व्यवसाय अधिक प्रतिष्ठित थे जिनका क्रम इस प्रकार पाया गया - क्लर्क, व्यापारी, विक्रेता, कुशल श्रमिक तथा अकुशल श्रमिक। इसमें कोई सन्देह नहीं कि व्यवसाय वर्ग स्थिति को निश्चित करने वाला महत्वपूर्ण मापदण्ड है।

व्यवसाय पर निर्धारित वर्ग संरचना की व्याख्या में एक मुख्य कठिनाई यह है कि उच्च वर्ग के अधिकांश लोग ऐसे हैं कि जिन्हें किसी व्यावसायिक श्रेणी में शामिल करना कठिन है। पैतृकता से प्राप्त सम्पत्ति और प्रतिष्ठा को किस व्यवसाय के साथ जोड़ा जाय। व्यवसाय के आधार पर किसी की आर्थिक स्थिति का अनुमान करना सम्भव नहीं होता है क्योंकि एक ही व्यवसाय के लोगों की आर्थिक शक्ति में बहुत भिन्नता पाई जाती हैं एक ही दफ्तर में काम करने वाले क्लर्कों की भी आर्थिक शक्ति में अन्तर होता है। एक क्लर्क अपनी ऊपर.की आमदनी से पर्याप्त धनी हो जाता है। जबकि उसी के साथ कार्य करने वाला दूसरा क्लर्क कठिनता से घर का खर्च चलाता है। एक स्तर की नौकरी करने वाले लोगों की पैतृक पृष्ठभूमि आर्थिक स्थिति में अन्तर कर देता है। किसान को विरासत में अपने किसान पिता से कम या अधिक जमीन या आय के साधन प्राप्त होते हैं। कृषि के व्यवसाय में लगे व्यक्तियों की आमदनी और व्यय का स्तर भिन्न हो सकता है। उनकी प्रतिष्ठा और शक्ति भी समान नहीं होती। व्यापारी भी विरासत में बड़ी बड़ी दुकानें या फैक्ट्री प्राप्त कर लेते हैं।

3.6 नगर में सामाजिक परिवर्तन तथा उसके कारक

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है चाहे वो ग्रामीण समाज हो या नगरीय समाज, परिवर्तन सर्वत्र विद्यमान है। भारत में नगरों की स्थापना भी एक प्रकार परिवर्तन का परिणाम है। भारत में नगर के विकास में ग्रामीण कारक अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण रहा है। भारत में यदि इन ग्रामीण कारकों को नगर रूपी भवन की नींव कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। यहाँ का नगरीकरण ग्रामों

पर आधारित है न कि गाँवों को निगलने वाला। भारतीय ग्रामों में विभिन्न प्रकार के आर्थिक सामधनों का आधिक्य हुआ तभी नगरों का जन्म और विकास हो सका है। परिवर्तन का प्रारम्भ इस प्रकार नगरीय समाज को जन्म दिया और यह प्रक्रिया लगातार बढ़ती गयी और आज यह नगरीय समाज सामाजिक परिवर्तन का परिणाम है।

नगर में सामाजिक परिवर्तन का दूसरा कारण औद्योगिक क्रान्ति है। औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम स्वरूप नगरों में सैकड़ों की संख्या में फैक्ट्री, मिल, कारखाने बसाये गये जिसने नगरों में नौकरी के असंख्य विकल्प प्रस्तुत किये। अतः औद्योगिक क्रान्ति नगरीय समाज में परिवर्तन का यह महत्वपूर्ण कारक है।

नगरीय समाज में सामाजिक परिवर्तन का तीसरा कारक आवागमन के साधनों में विकास है। आवागमन के साधनों के अभाव में नगर व्यापार का केन्द्र नहीं बन सकता और उद्योग तथा व्यापार का विकास नहीं हो सकता। अतः आवागमन के साधन जैसे रेल, बस, ट्रक, पानी के जहाज, हवाई जहाज आदि व्यापार एवं वाणिज्य को बढ़ावा देते हैं। और सामाजिक परिवर्तन के वाहक हैं। नगरीय समाज में परिवर्तन के कारक के रूप में संदेश वाहन के साधन भी विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। जैसे डाक, तार, टेलीफोन, रेडियो, समाचार पत्र पत्रिकाओं, इंटरनेट आदि के माध्यम से आज व्यापारिक सूचनायें देश के कोने कोने तक पहुँचती हैं। संचार का यह प्रवाह नगरीय समाज और संरचना को तेजी से बदलता है।

नगरीय समाज में अनेक बेहतर सुविधाओं का केन्द्र होने के कारण सामाजिक परिवर्तन बहुत जल्दी पनपता है और इन सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति नगरों की ओर आकर्षित होता है। प्रमुखतः नगरीय सुविधाओं में उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, चिकित्सकीय सुविधा, जीवन की अधिकतम आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और ये सभी परिवर्तन के कारक हैं।

3.7 नगरीय व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन का स्वरूप

उपरोक्त कारकों ने नगरीय समाज के ढाँचागत स्वरूप को प्रभावित और परिवर्तित किया है परिवर्तन की मात्रा अधिक होने के साथ साथ सामाजिक सम्बन्ध स्वार्थ और व्यक्तिवाद पर आधारित होते हैं। अतः यह नगरीय सामाजिक ढाँचा और व्यावसायिक संरचना को परिवर्तित करता रहता है।

नगरीय समाज में औपचारिक एवं अवैयक्तिक सम्बन्ध देखने को मिलते हैं। फलतः यह नगरीय व्यावसायिक संरचना को प्रभावित करती है जिसमें स्थायित्व और घनिष्ठता का अभाव होता है।

नगरों का व्यक्ति व्यक्तिवादी प्रवृत्ति का होता है। वह अपने स्वार्थों, महत्वाकांक्षाओं और अहम से संसार में रहता है। वह अपनी खुशी, वैभव और सम्पन्नता के लिए स्वयं प्रयत्न करता है। वह अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए कुछ भी कर सकता है। उसे अपने सिवा किसी की चिन्ता नहीं होती है इसीलिए यहाँ मानवीय सम्बन्ध, जीवन का मूल्य न होकर वैयक्तिक मूल्य ही बन जाता है। अतः नगरीय समाज की यह प्रकृति व्यावसायिक संरचना के स्वरूप को निर्धारित करती है।

नगरों में सामाजिक सम्बन्धों का जाल बड़ा होता है। व्यक्ति के व्यवहारों को यहाँ समझना टेढ़ी खीर है। एक व्यक्ति एक समय पर क्या करेगा इसका अनुमान लगाना दुरूह कार्य है। इसके अतिरिक्त एक व्यक्ति के अनेक पद और स्थितियाँ हैं। वह परिवार का स्वामी है तो कहीं का प्रेसीडेन्ट, चेयरमैन तो किसी दूसरी संस्था का प्रबंधक है तो कहीं कुछ और। इस तरह नगरों में व्यक्ति का जीवन विभिन्न क्षेत्रों के कार्यों से जुड़ा है। ये सभी स्थितियाँ व्यक्ति के सामाजिक सम्बन्धों को जटिल बनाती है। एवं ढाँचागत स्वरूप को प्रभावित करती हैं।

3.8 सारांश

प्रस्तुत इकाई नगर में व्यवसायिक संरचना में परिवर्तन के स्वरूप के अध्ययन पर आधारित है। इस इकाई में सर्वप्रथम हमने सामाजिक संरचना के अर्थ को समझाने का प्रयास किया। तत्पशचात नगरीय सामाजिक परिवर्तन एवं उसके आधार को परिभाषित करते हुए व्यावसायिक संरचना की चर्चा की है। किस प्रकार और किन कारणों से नगरीय समाज में परिवर्तन हो रहे हैं। तथा नगरीय व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन का स्वरूप किस प्रकार है आदि पहलुओं पर संक्षेप में व्याख्या की गयी है।

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सिंह, योगेन्द्र, 1999, *भारत में सामाजिक परिवर्तन : संकट और समुत्थानपरकता,* जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली ।
2. एनडर्सन एन. *इन्डस्ट्रियल अर्बन सिविलाइजेशन ।*

3.10 प्रश्नोत्तर

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 सामाजिक संरचना से क्या तात्पर्य है? नगरीय सामाजिक संरचना को स्पष्ट कीजिए।

2. नगरीय सामाजिक संरचना के आधार को स्पष्ट कीजिए।

3. सामाजिक परिवर्तन को परिभाषित कीजिए तथा नगरीय व्यावसायिक संरचना के परिवर्तन को दर्शाइये।

4. नगरीय समाज से क्या तात्पर्य है? नगरीय समाज में होने वाले परिवर्तन के कारकों की विवेचना कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक संरचना की परिभाषा दीजिये।
2. नगरीय सामाजिक संरचना पर टिप्पणी लिखिए।
3. नगरीय सामाजिक संरचना की प्रमुख विशेषताएँ बताइये।
4. नगरीय समाज में गुमनामता से क्या तात्पर्य है?

बहु विकल्पीय प्रश्न

1. इनमें से कौन सी विशेषताएँ नगरीय समाज की विशेषता नहीं है ।

   (अ) सामाजिक एकता (ब) स्थायित्वता (स) गुमनामता (द) कृत्रिमता

2. किसने कहा है कि ''नगरीय समाज में सम्बन्ध व्यक्तियों पर आधारित नहीं होता, बल्कि अवैय्यक्तिक होता है।''

   (अ) पार्क एवं बर्गेस (ब) लुईस वर्थ (स) एण्डर्सन (द0 इनमें से कोई नहीं।

3. वर्ग व्यवस्था का मुख्य आधार क्या है?

   (अ) सामाजिक (ब) राजनीतिक (स) आर्थिक (द) सांस्कृतिक

4. किसने अमेरिका के वयस्कों का अध्ययन व्यवसाय तथा शिक्षा के सन्दर्भ में किया है।

   (अ) नार्थ तथा हॉट (ब) पार्क एवं बर्गेस (स) लुईस वर्थ (द) एण्डरसन

उत्तर - 1. (अ) 2. (ब) 3. (स) 4. (अ)

इकाई -4 : व्यवसाय संरचना में परिवर्तन का सामाजिक संरचना पर प्रभाव

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 व्यावसायिक संरचना का अर्थ
4.3 व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन तथा उसका कारक
4.4 सामाजिक संरचना का अर्थ
4.5 सामाजिक संरचना की परिभाषा
4.6 नगरीय समाज एवं सामाजिक संरचना
4.7 व्यवसायी संरचना का सामाजिक संरचना पर प्रभाव
4.8 सारांश
4.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
4.10 प्रश्नोत्तर

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन का सामाजिक संरचना पर प्रभाव से अवगत होना है। इस इकाई में व्यवसाय संरचना क्या है किन कारणों से व्यावसाय संरचना में परिवर्तन होता है, और यह परिवर्तन किस प्रकार सामाजिक संरचना को प्रभावित करती है इन प्रश्नों पर चर्चा की जायेगी।

4.1 प्रस्तावना

प्रत्येक समाज का एक ढाँचागत या संरचनात्मक स्वरूप होता है और यह स्वरूप समाज में तारतम्यता बनाये रखने तथा अन्तःक्रिया का आधार है, परन्तु समय के साथ-साथ संरचनात्मक स्वरूप में परिवर्तन अवश्य होता है और यह सम्पूर्ण समाज के संरचनात्मक स्वरूप को प्रभावित करता है। नगरीय समाज में काम धन्धे या व्यवसाय के आधार पर एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ अन्तःक्रिया और मेल मिलाप करता है। जो व्यावसायिक संरचना को जन्म देता है। इनमें प्रमुखतः आर्थिक आधार होता है। और यह परिवर्तनशील है। इस परिवर्तन में गत्यात्मकता की मात्रा अधिक होती है। जो व्यावसाय संरचना को बदलती है। और यह सामाजिक संरचना पर भी अपना प्रभाव डालती है।

4.2 व्यवसाय संरचना का अर्थ

नगरीय समाज के व्यवसाय संरचना का प्रमुख आधार पूँजी या धन होता है। फिर भी नगरीय समाज में धनी, निर्धन, श्रमिक, तथा मध्यम वर्ग रहते हैं। नगर विभिन्नताओं का केन्द्र है, यहाँ ऊँची

ऊँची अट्टालिकायें नगर के वैभव की कहानी कहती हैं। पाँच सितारा होटल नगर की विलासिता के द्योतक हैं। बंगलों और महलों के वातानुकूलित कमरे अभिजात्य और उच्च व्यावसायिक वर्ग की प्रतिष्ठा का संदेश देते हैं। सड़कों पर दौड़ती कारें धनी नगर का परिचय देती हैं। इसके विपरीत मलिन बस्तियाँ भी हैं जो इस धरती के नर्क हैं, जहाँ लाखों व्यक्ति रहते हैं और जहाँ पशु भी रहना पसन्द नहीं करेंगे। भूख से चिपके हुए पेट और युवा अवस्था में उभरी हुई गाल की हड्डियाँ नगर की गरीबी की दासता कहते हैं। फुटपाथों पर सोने वाले असंख्य व्यक्ति धूप, गरमी, बरसात और जाड़े को अपने शरीर पर ओढ़ते हैं। डामरी तपती सड़क पर नंगे पैर ठेला खिंचता हुआ श्रमिक इस नगर की जर्जर आर्थिक व्यवस्था की दासता कहता है। नगर में धनी, धनाढ्य और पूँजीपति भी हैं साथ ही साथ करोड़ों की संख्या में निर्धन श्रमिक भी हैं जिन्हें दो समय का भोजन अपना पसीना बहाकर अर्जित करना होता है। यह गरीबी और अमीरी की तस्वीर नगरीय आर्थिक ढांचे की विभिन्नताओं का चित्र प्रस्तुत करती है। तथा संरचनात्मक पहलुओं को दर्शाती है।

नगरीय समाज में व्यक्ति अपने इच्छानुसार कार्य करता है। इसमें अपनी इच्छा व योग्यता के अनुरूप किसी प्रकार का कार्य या व्यावसाय कर सकता है। इसी प्रकार एक जैसे कार्य करने वाले का समूह बन जाता है। इस समूह में विभिन्न जाति के व्यक्ति होते हैं किन्तु उनका व्यावसाय एक होता है, उदाहरणार्थ किसी फैक्ट्री में विभिन्न जाति के व्यक्ति एक साथ काम करते हैं, उन्हें केवल श्रमिक कहा जाता है।इस तरह समान तरीके से एक प्रकार के कार्य करने वाले व्यक्तियों का समाज में भिन्न भिन्न समूह बन जाता है और यह व्यावसाय संरचना को जन्म देता है। व्यावसाय संरचना का निर्माण जन्म के आधार पर न होकर समान प्रकार के कार्य करने वाले समूह से होता है। जैसे लेखक, शिक्षक, वकील, श्रमिक, व्यापारी, डॉक्टर, कारीगर, अभियन्ता आदि। नगर में व्यावसायों के असंख्या प्रकार होते हैं और इसी व्यावसायिक आधार पर व्यक्ति अंतःक्रिया और सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करता है। अतः यह सभी नगरीय समाज की व्यवसाय संरचना को प्रदर्शित करता है।

4.3 व्यवसाय संरचना में परिवर्तन तथा उसका कारक

नगरीय समाज में परिवर्तन की मात्रा अत्यधिक होती है, क्योंकि समय तथा प्रौद्योगिकी के साथ सामंजस्यता इसकी माँग है। नगरीय समाज में कार्य करने की पद्धति तथा उससे जुड़े प्रौद्योगिकी में तेजी से बदलाव होते हैं। अतः यह व्यवसाय संरचना में परिवर्तन को पनपाती है।

नगरों के अन्तर्गत प्रवास और सामाजिक गतिशीलता की प्रवृत्ति बहुत अधिक पायी जाती है। नगरों के लोग आसानी से एक जगह से दूसरी जगह या एक शहर से दूसरी शहर जाने के लिए तैयार रहते हैं। उन्हें अपने स्थान से ग्रामीण लोगों की तरह कोई गहरा लगाव नहीं होता है। बेहतर अवसर की खोज में एक पेशे से दूसरे पेशे में भी जाने को तैयार रहते हैं। वे समान किस्म के पेशे में जगह बदलने में भी नहीं हिचकते हैं। सामाजिक स्थिति एवं मान-सम्मान के लिए लोग स्थान और पेशे में परिवर्तन के लिए तत्पर रहते हैं।

शहरी वातावरण आमतौर पर मानव निर्मित होता है और वह परिवर्तनशील भी होता है। जैसे जैसे आर्थिक विकास होता है वैसे ही विज्ञान और प्रौद्योगिकी में परिवर्तन आता है, और यह शहरी वातावरण में परिवर्तन लाता है। कभी शहरों के अन्तर्गत टमटम, साईकिल और रिक्शा जैसे वाहनों की प्रधानता थी तो आज विभिन्न प्रकार की मोटरकार, स्कूटर, हवाई जहाज और रेलगाड़ी दिखाई पड़ती है। सौ साल के अंतराल में शहरों में इतना अधिक परिवर्तन आ जाता है कि हमारी आँखें चौंक जाती है। लेकिन गाँव सौ साल के अंतराल में भी वैसा का वैसा ही बना रह जाता है।

जैसा कि पहले भी जिक्र किया जा चुका है कि शहर में हमारे सम्बन्ध बहुत अल्पकालिक होते हैं एवं वैयक्तिक पहचान की कमी होती है। लोग अपनी पहचान के लिए विभिन्न प्रकार के संकेतों एवं नाम या पद पट्टिकाओं का प्रयोग करते हैं। अधिकांश व्यक्तियों को इस बात की बहुत चिन्ता होती है कि वह जो हैं, उसकी उस रूप में पहचान नहीं हो रही है। इस स्थिति में वे विभिन्न किस्म के प्रचार-प्रसार के माध्यमों के सहारे अपने नाम को उजागर करने का प्रयास करते हैं ताकि शहरी भीड़ में उसकी एक अच्छी पहचान बन सके।

शहरी जीवन में लोगों में एक प्रत्याशा की मनोवृत्ति पाई जाती है। जब कभी भी शहरों में कुछ परिवर्तन होता है तो उससे वहाँ के लोगों को ऐसा लगता है कि वहाँ कुछ और भी परिवर्तन होने जा रहा है। जैसे जैसे शहरों में परिवर्तन आता है, वैसे वैसे वहाँ लोग भी बदलते जाते हैं शहरी लोगों में समायोजन की क्षमता अधिक पायी जाती है जबकि यथार्थ तो यह है कि शहरी लोग कुछ ज्यादा ही परिवर्तन पसंद करते हैं। शहर के लोग इतने परिवर्तन प्रेमी होते हैं कि जब अक्सर परिवर्तन नहीं दिखायी देता है तो उन्हें कुछ अच्छा महसूस नहीं होता है।

भारतीय जनगणना की रिपोर्ट को देखने से ऐसा स्पष्ट लगता है कि शहरों में 3 प्रतिशत से 5 प्रतिशत लोग खेती बारी के माध्यम से अपना जीवन यापन करते हैंभारत में नगरीय आबादी एवं उद्योग में काफी वृद्धि हुई है। इसके बावजूद आँकड़ों को देखने से लगता है कि पेशागत या व्यवसाय संरचना में बहुत परिवर्तन आया है।

4.4 सामाजिक संरचना का अर्थ

रेडक्लिफ ब्राउन, मालीनोव्स्की और नैडेल की दृष्टि में सामाजिक संरचना, सामाजिक सम्बन्धों, भूमिकाओं तथा संविधियों (स्टैट्यूटस) की 'व्यवस्था' है जो प्रकट यथार्थ का घटक है और जो मानव मस्तिष्क की परिधि से बाहर स्थित है। सामाजिक संरचना वास्तविक है फिर भी यह पूर्णतः वास्तविक नहीं है। यह एक अनुभाविक तथ्य है और फिर भी एक तरह की तर्काधारित संरचना ही है जो यदाकदा सांख्यिकीय चित्र, कभी नातेदारी का 'पॉलीग्राफ' या कभी भूगर्भशास्त्रीय 'चार्ट' के रूप में व्यक्त होता है।

4.5 सामाजिक संरचना की परिभाषा

कार्लमानहाइम ने सामाजिक संरचना को अन्तःनिर्भर सामाजिक दबावों का जाल कहा है, जिससे समझने व सोचने के विविध आयाम समाज में उभरने लगते हैं। ये अन्तरनिर्भर सामाजिक दबाव सामाजिक वैयक्तिक स्थिति व भूमिका, प्रतिमान और मूल्यों समूह व संस्थाओं स्तरीकरण और व्यक्तिगत पारस्परिक सम्बन्धों से विकसित होता है।

मर्टन से सामाजिक संरचना को संदर्भ समूहों के साथ जोड़कर समझाया है। उनके अनुसार हर समाज की सामाजिक संरचना उसमें विद्यमान समूहों तथा उनके सदस्यों के बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों के निर्धारण में प्रयुक्त मानक मूल्यों की व्यवस्था के आधार पर बनती है। सन्दर्भ समूह विविध समूहों में लोगों की भूमिकाओं के बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों के प्रतिमान व्यक्तियों के आपसी व्यवहार के उन स्वरूपों के आधार पर बनते हैं जिन्हें व्यक्ति प्रतिमानों के अनुकरण या उल्लंघन के द्वारा प्रकट करते हैं। सामान्यतया समाज में सामाजिक विचलन का कोई न कोई स्वरूप उसके संरचनात्मक अवयवों (मानक मूल्यों, प्रस्थिति व भूमिका) के बीच असंतुलन के कारण को पनपता है।

पारसंस व नेडल सामाजिक संरचना की परिभाषा के सन्दर्भ में कहते हैं कि "यह व्याख्या स्थूल जनसंख्या व उसके अमूर्तता के आधार पर की जाती है। यह सम्बन्धों की व्यवस्था लोगों की विविध पारस्परिक भूमिकाओं के निर्वहन के प्रतिमान स्वरूप उभर कर आती है।" पारसंस एवं नेडल की इस व्याख्या के अन्तर्गत भूमिका सम्बन्धों के प्रतिमानों पर अधिक जोर दिया गया है।

4.6 नगरीय समाज एवं सामाजिक संरचना

प्रस्तुत अध्याय नगरीय समाज एवं सामाजिक संरचना पर आधारित है। उपरोक्त परिभाषाओं से संरचना का अर्थ स्पष्ट है परन्तु यह समीचीन होगा कि संरचना की व्यवहारिक परिभाषा दें, जिससे कि नगरीय समुदाय के सम्पूर्ण अवयवों के सन्दर्भ में आनुभाविक स्तर पर परीक्षित किया जा सकता है।

नगरीय सामाजिक संरचना को समझने के लिए नगरीय समुदाय में विद्यमान आंतरिक सम्बन्धों, समूहों तथा समुदायों के अंतर्गत विद्यमान उप-समुदायों के सदस्यों का अध्ययन करना आवश्यक होता है। नगर को एक स्वतंत्र और आत्मनिर्भर इकाई के रूप में देखना आवश्यक है। शहर अपनी आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक स्वतंत्र इकाई होता है। इसके अतिरिक्त भारतीय शहर को सम्पूर्ण भारतीय समुदाय के सन्दर्भ में भी देखना चाहिए, क्योंकि कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रत्येक भारतीय शहर भारत के दूसरे भागों पर भी निर्भर रहता है। इस संदर्भ में मैकाइवर एवं पेज लिखते हैं कि, "समूह निर्माण के विभिन्न तरीके संयुक्त रूप से सामजिक संरचना के जटिल प्रतिमान का निर्माण करते हैं। सामाजिक संरचना के विश्लेषण प्राणियों की विविध प्रकार की मनोवृत्त्यों तथा रूचियों के कार्य प्रकट होते हैं।"

नगरीय सामाजिक संरचना का निर्माण करने वाली प्रमुख इकाईयाँ निम्नलिखित हैं -

परिवार, विवाह, संस्था, जाति, नगरीय अध्ययन, नगरीय शिक्षा, आर्थिक संरचना जिसमें उद्योग और गैर व्यवसाय, नगर, विकास, समाज सेवी संस्थायें एवं नगरीय राजनीतिक व्यवस्था आदि।

4.7 व्यवसाय संरचना का सामाजिक संरचना पर प्रभाव

नगरीकरण के फलस्वरूप अनेक व्यावसायिक वर्गों जैसे चिकित्सक, व्यापारी, वकील, शिक्षक, अभियन्ता व कलाकार आदि समूहों ने जन्म लिया है और यह समाज के संरचनात्मक स्वरूप को प्रभावित करता है। क्योंकि पारम्परिक समाज में व्यक्तियों के बीच अन्तःक्रिया में प्रगाढ़ता थी। नये व्यावसायिक समूहों के उभरने के साथ साथ व्यावसायिक और स्वार्थ पर आधारित द्वितीयक सम्बन्ध देखने को मिल रहा है जो सामाजिक संरचना को प्रभावित कर रहे हैं।

व्यावसायिक संरचना में सामाजिक और आर्थिक गतिशीलता की मात्रा अधिक होती है, बल्कि यों कहें कि सामाजिक गतिशीलता नगरीय समाज में अपनी चरम सीमा पर होती है। नगर में व्यक्ति की पारिवारिक पृष्ठभूमि को महत्व न देकर उनकी व्यक्तिगत और व्यावसायिक सफलताओं को सबसे अधिक महत्व दिया जाता है । प्रमुखतः व्यक्तियों की कार्य करने की क्षमता, अविष्कार करने के गुण तथा व्यवहार कुशलता को महत्व दिया जाता है। इस स्थिति में व्यक्ति अपने जीवन काल में अपने सामाजिक पद को ऊँचा उठा सकता है अथवा नीचे गिरा सकता है। यह स्थिति व्यावसायिक संरचना के लचीलापन से सम्भव है और यह समाज के सामाजिक संरचना को प्रभावित करती है।

नगरीय परिवार का स्वरूप भी व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन से प्रभावित होता है। नगरीय परिवार में पितृसत्तात्मक अधिकार होते हैं और नगरीय परिवार का आकार छोटा होता है और यह परिवार, व्यावसायिक गतिशीलता के कारण अस्थायी रूप से एक जगह रहता है। और एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित होता रहता है । व्यावसायिक संरचना की गतिशीलता सम्पूर्ण परिवार के संरचना को तथा पारिवारिक आपसी सम्बन्धों को प्रभावित करती है। सिम्स ने लिखा हैं, 'निश्चय ही यह (ग्रामीण परिवार) उसकी (ग्रामीण सामाजिक संरचना) सदैव से ही प्रमुख संस्था रही है, जो व्यक्ति को स्थिति प्रदान करती है तथा सामाजिक संरचना की अधिकांश प्रकृति निश्चित करती रही है।'' गामीण परिवार सम्पूर्ण ग्रामीण सामाजिक संरचना पर छाया रहता है और उसकी छाप हर संस्था पर स्पष्ट परिलक्षित होती है। ग्रामीण समाज को ही परिवारात्मक समाज कहा गया है।

नगरीय परिवार का महत्व नगरीय सामाज़िक संरचना में उतना अधिक नहीं है। नगरीय परिवार नगरीय सामाजिक संरचना की एक साधारण संस्था है। नगरीय परिवार का अधिक प्रभाव नगरीय सामाजिक संरचना पर नहीं पड़ता है। नगरीय समाज में सामाजिक संरचना की विशेषता तथा नियमबद्धता समाज के सभी व्यक्तियों के लिए सदैव उपयोगी नहीं हो सकती है तथा सभी व्यक्तियों के लिए समान रूप से सामाजिक संरचना लाभकारी सिद्ध नहीं हो सकती है। आधुनिक नगरीय समाज परिवर्तन का समाज है। यहाँ पर व्यक्ति के विचार मूल्य दृष्टिकोण, कार्य करने की पद्धति आदि में अक्सर परिवर्तन होता रहता है। जिसके कारण सामाजिक संरचना के नियम, परम्पराएँ व मान्यताओं आदि में परिवर्तन होता है । और नये रूप में संरचना का निर्धारण होता है। इस प्रकार बार बार व जल्द ही परिवर्तन के परिणाम स्वरूप नयी सामाजिक संरचना पूरी तरह से निर्मित नहीं हो पाती, जिसके

फलस्वरूप समाज में नियम हीनता, विघटन या आदर्श शून्यता की स्थिति उत्पन्न होती है।

4.8 सारांश

प्रस्तुत इकाई व्यावसायिक-संरचना में परिवर्तन का सामाजिक संरचना पर प्रभाव के अध्ययन से सम्बन्धित है। इस इकाई में सामाजिक संरचना को परिभाषित किया गया है। तत्पश्चात नगरीय समाज एवं सामाजिक संरचना में सम्बन्ध को दर्शाया गया है। इसके बाद व्यावसायिक संरचना को परिभाषित और उसमें होने वाले परिवर्तन के कारणों की विस्तृत रूप से चर्चा की गयी है और व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन सामाजिक संरचना को किस प्रकार प्रभावित करती है आदि प्रमुख बिन्दुओं को रेखांकित तथा दर्शाया गया है।

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

तेलंग, रचना, भारतीय नगर-बदलते आयाम, प्रिन्टवैल पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर, 1999

जैक्सन, जे. एन., दि अबर्न फ्यूचर एलेन एण्ड अनविन लिमिटेड, लंदन, 1972

मर्टन आर. के. सोशल थ्योरी एण्ड सोशल स्ट्रक्चर ।

4.10 प्रश्नोत्तर

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक संरचना से क्या अभिप्राय है?
2. व्यावसायिक संरचना से क्या अभिप्राय है?
3. नगरीय समाज एवं सामाजिक संरचना में सम्बन्ध को दर्शाइये।
4. व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन के कारणों का उल्लेख कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. व्यवसाय संरचना को परिभाषित कीजिए और उसमें परिवर्तन के कारण को विस्तृत रूप से समझाइये ।
2. सामाजिक संरचना को परिभाषित करते हुए नगरीय सामाजिक संरचनात्मक रूप की विवेचना कीजिए।
3. व्यवसाय संरचना की परिभाषा लिखिए और उसमें होने वाले परिवर्तन किस प्रकार सामाजिक संरचना को प्रभावित करता है, दर्शायें ।
4. ''नगरीय समाज में व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कार्य करता है''। इस कथन की विवेचना कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. सोशल थ्योरी एण्ड सोशल स्ट्रक्चर किताब के लेखक कौन हैं?

(अ) आर. के. मर्टन (ब) नाडेल (स) रेडक्लिफ ब्राउन (द) मैलिनोसकी

2. किसने कहा है कि ''सामाजिक संरचना अंतर निर्भर सामाजिक दबावों का जाल है''?

(अ) मर्टन (ब) कार्लमानहाइम (स) नाडेल (द) रेडक्लिफ ब्राउन

3. नगरीय समाज की व्यवसाय संरचना का प्रमुख आधार क्या है?

(अ) परम्परा (ब) प्रथा (स) पूँजी या धन (द) जाति

4. नगरीय समाज में परिवर्तन की मात्रा अत्यधिक होने का क्या कारण है?

(अ) आवागमन की सुविधा (ब) प्रौद्योगिकी का विकास

(स) नगर व्यवसाय का केन्द्र है (द) उपरोक्त सभी

उत्तर- 1. (अ) 2. (ब) 3. (स) 4. (द)

इकाई -5 : धार्मिक नगरों का स्वरूप एवं महत्व

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 नगर के अर्थ

5.3 धार्मिक नगर : अर्थ एवं परिभाषा

5.4 नगर एवं धार्मिक नगर में अन्तर

5.5 धार्मिक नगर की विशेषताएँ

5.6 धार्मिक नगर के स्वरूप

5.7 विश्व के प्रमुख धार्मिक नगर

5.8 धार्मिक नगर के महत्व

5.9 सारांश

5.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

5.11 प्रश्नोत्तर

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य है धार्मिक नगरों के स्वरूप एवं महत्व से अवगत होना। इस इकाई में नगर एवं धार्मिक नगर किसे कहते हैं, नगर व धार्मिक नगर में अन्तर, धार्मिक नगर के स्वरूप, विश्व के प्रमुख धार्मिक नगर एवं धार्मिक नगर के महत्व आदि के सन्दर्भ में विस्तृत में चर्चा की गयी है। इस इकाई का उद्देश्य विद्यार्थियों को धार्मिक नगरों के स्वरूप, महत्व तथा नगरीय समाज में धार्मिक नगरों कका अलग व विशेष महत्व आदि से अवगत कराना है।

5.1 प्रस्तावना

नगरीय समाजशास्त्र में धार्मिक नगरीय समाज का वर्गीकरण धार्मिक विश्वास व धार्मिकता के आधार पर किया गया है। धार्मिक नगरों की पहचान, विशेषताएँ, सामाजिक सम्बन्ध आदि सामान्य नगरों की तुलना में भिन्न और विशेष है। धार्मिक मान्यताओं व विश्वासों की जो परम्परा है इस आधार पर अनेक बहुसंख्यक समुदाय अपनी जीवन पद्धति, सामाजिक व धार्मिक मान्यताओं, कार्य करने की प्रणालियों एवं आपसी व्यवहार के प्रतिमानों को निर्धारित करती हैं। धर्म, व्यक्ति के जीवन का अहम् हिस्सा है तथा सामाजिक नियन्त्रण का सशक्त आधार है। इस प्रकार समस्त विश्व में धर्मानुसार अनेक मान्यताएँ व जीवनशैलियाँ संचालित हैं। इसी वैशिष्ट्य के कारण समाजशास्त्र में विशेषतः नगरीय समाजशास्त्र में इसे प्रमुख स्थान दिया गया है।

5.2 नगर का अर्थ

नगर सामाजिक विभिन्नताओं का वह समुदाय है जहाँ द्वितीयक समूहों और नियंत्रणों, उद्योग और वाणिज्य, घनी आबादी, अवैयक्तिक सम्बन्धों आदि की प्रधानता होती है। नगरों का स्वरूप गाँवों की अपेक्षा बहुत आधुनिक है। गाँव में जहाँ कम मात्रा में जनसंख्या रहती है, वही नगरों में बहुत बड़ी मात्रा में जनसंख्या निवास करती है। नगरों में जनसंख्या अधिक होना उस नगर विशेष के औद्योगिक विकास पर निर्भर करता है। संक्षेप में इतना कहा जा सकता है कि जिस जिस स्थान का जितना औद्योगिक विकास हुआ है, उतनी ही अधिक जनसंख्या वहाँ रहती है और वह क्षेत्र नगरीय क्षेत्र कहलाता है। नगरीय समुदाय में द्वितीयक सम्बन्धों की अधिकता पायी जाती है। यहाँ पर विविध समूह एवं क्लब पाये जाते हैं जिनमें द्वितीयक सम्बन्ध होता है। यहाँ का जीवन अधिक भीड़-भाड़ एवं गतिशील होता है, जिसमें व्यक्ति दूसरे की परवाह न करते हुए अपने लक्ष्य एवं उन्नति के लिए प्रयास करते हैं।

नगर प्रायः औद्योगिक रूप से बहुत ही विकसित होते हैं। यहाँ पर बड़े बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठान होते हैं, जहाँ पर विशाल पैमाने पर उत्पादन होता है। नगरों में व्यक्तिवादिता बहुत ही तेजी से पनपती है। वहाँ की सामाजिक परिस्थितियाँ भी कुछ इस प्रकार की होती हैं, जो व्यक्तिवादिला को बढ़ावा देती हैं। व्यक्ति केवल अपने ही हितों का ध्यान रखता है और निजी गुणों के विकास के लिए ही प्रयत्नशील रहता है।

5.3 धार्मिक नगर : अर्थ एवं परिभाषा

धार्मिक नगर को समझने से पहले धर्म की अवधारणा को समझना होगा। धर्म शब्द 'धृ' धातु से निर्मित हुआ है जिसका अर्थ है 'किसी वस्तु को धारण करना' अथवा 'उस वस्तु के अस्तित्व को बनाये रखना'। धर्म का सामान्य अर्थ 'कर्तव्य' है।

अनेक समाजशास्त्रियों ने धर्म को पृथक पृथक ढंग से परिभाषित करने का प्रयास किया है। धर्म की कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं -

गिलिन और गिलिन के शब्दों में - "धर्म के समाजशास्त्रीय क्षेत्र के अन्तर्गत एक समूह में अलौकिक से सम्बन्धित उद्देश्यपूर्ण विश्वास तथा इन विश्वासों से सम्बन्धित वाह्य व्यवहार, भौतिक वस्तुएं और प्रतीक आते हैं।"

आर. एल. बील्स और एच. हाइजर का विचार है कि, "धर्म मुख्य रूप से विश्व की व्यवस्थित धारणा का परिणाम है। यह मनुष्य को भविष्यवाणी करने, घटनाओं को समझने की अयोग्यता द्वारा निर्मित चिन्ताओं को शान्त करने का एक यंत्र है जो स्पष्टतया नियमों के अनुरूप बनता है।"

जैसा कि ऊपर दर्शाया गया है, नगर विभिन्न संस्कृतियों का पुंज है और यहाँ अनेक धर्म, सम्प्रदाय, जाति और प्रजाति के व्यक्ति साथ-साथ रहते हैं। इन सभी की धार्मिक परम्पराएँ, रीति-

रिवाज, संस्कार और अनुष्ठान में भिन्नताएं देखने को मिलती हैं। धर्म का शास्त्रीय अथवा सैद्धान्तिक पक्ष नगर में ही देखनें को मिलता है, जहाँ पर धर्म गुरू व मनीषी, विद्वानों और चिन्तक धर्म के विभिन्न पक्षों की विवेचना करते हैं। इस विवेचना के आधार धार्मिक ग्रंथ होते हैं। जिसका प्रचार व प्रसार नगरीय केन्द्रों से होता है।

नगर में आस्तिक और नास्तिक दोनों श्रेणी के लोग रहते हैं। यहाँ ऐसे भी व्यक्ति हैं जो अपने इष्ट देव की आराधना और साधना करते हैं। तो कुछ ऐसे भी हैं जो सम्पूर्ण मानव समाज के कल्याण को ही धर्म समझते हैं। इस प्रकार नगरों में धर्म के दो स्वरूप देखने को मिलता है। एक पक्ष के विचारक सम्पूर्ण संसार के कल्याण और हित को धर्म समझते हैं। इनका अपना कोई समूह, सम्प्रदाय या जाति या देश नहीं है। सम्पूर्ण संसार के मानव का कल्याण ही इनका धर्म है। इसकें विपरीत अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं, जो अपने हित, स्वार्थ और महत्वाकांक्षाओं को ध्यान में रखकर ही धार्मिक कृत्य करते हैं। इसे वैयक्तिक धर्म भी कहा जा सकता है। धर्म बहुत ही वैयक्तिक है और व्यक्ति धर्म को स्वीकार करे न करे, यह उस पर निर्भर करता है। वह किस समय पूजा-पाठ करे यह उसकी रूचि व इच्छा पर निर्भर है। वह किसी भी धर्म को अंगीकार कर सकता है या वह किसी भी धर्म की आलोचना कर सकता है। इसलिए नगर में धर्म निरपेक्षता का अपना महत्व होता है। इसके अतिरिवत नगर, धार्मिक आन्दोलन के केन्द्र स्थल भी हैं। जहाँ नगर में अनेक धार्मिक सिद्धान्तों की स्थापना हुई है, वहीं धर्म सम्बन्धी अनेक धार्मिक कुरीतियों का निवारण भी हुआ है। आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन आदि इन धार्मिक आन्दोलनों के उदाहरण हैं।

5.4 नगर एवं धार्मिक नगर में अन्तर

नगर	धार्मिक नगर
1. नगर में द्वितीयक सम्बन्ध पाया जाता है।	1. धार्मिक नगर में धार्मिकता के आधार पर सहज मित्रवत सम्बन्ध पाया जाता है।
2. नगरों में जनसंख्या का घनत्व अधिक होता है।	2. धार्मिक नगरों की जनसंख्या का घनत्व तुल्नात्मक दृष्टि से नगरों से कम होता है। और विशेष उत्सवों या धार्मिक अनुष्ठानों पर अधिक हो जाता है।
3. नगरों में प्रौद्योगिकी का अत्यधिक उपयोग किया जाता है और अत्यधिक उपभोक्तावाद देखने को मिलता है।	3. धार्मिक नगरों में प्रौद्योगिकी का उपयोग कम होता है और प्रौद्योगिकी का परम्परागत स्वरूप भी देखने को मिलता है और उपभोक्तावाद कम होता है।
4. नगरों की भीड़-भाड़ की अधिकता देखने को मिलती है।	4. धार्मिक नगरों में किसी विशेष त्यौहारों के समय ही अत्यधिक भीड़ की स्थिति देखने को मिलती है।
5. नगरों में व्यक्ति की पहचान	5. धार्मिक नगरों में व्यक्ति की पहचान आर्थिक,

आर्थिक तथा उसकी कार्यों से होती है।	सांस्कृतिक तथा धार्मिक होती है।
6. नगरों में व्यक्ति अर्जित परिस्थिति के बल पर आगे बढ़ता है।	6. धार्मिक नगरों में अर्जित परिस्थिति के साथ ही साथ प्रदत्त परिस्थिति को भी महत्व दिया जाता है।
7. नगरों में अत्यधिक मात्रा में पशिचमी सभ्यता का प्रभाव देखने को मिलता है और पॉप संगीत आदि को पसन्द किया जाता है।	7. धार्मिक नगरों में भजन, कीर्तन तथा शास्त्रीय संगीत को महत्व दिया जाता है।
8. नगरों में आधुनिक सभ्यता की झलक अत्यधिक दिखाई पड़ती है।	8. धार्मिक नगर में आधुनिकता के साथ परम्परा का भी समन्वय देखने को मिलता है।

5.5 धार्मिक नगर की विशेषताएँ

धर्म के अर्न्तगत अनेक प्रकार के विश्वास, कर्मकाण्ड, संस्कार, अनुष्ठान और धार्मिक प्रतीकों का समावेश होता है। इनके माध्यम से धर्म की अभिव्यक्ति होती है। इस अभिव्यक्ति को दृष्टि में रखते हुए, धार्मिक नगर की विशेषताओं को निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर जाना जा सकता है :

1. वैयक्तिक धर्म

नगरीय धर्म की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वह बहुत कुछ वैयक्तिक है। वह ईश्वर की साधना, आराधना, पूजा-पाठ, किस रूप में करना चाहता है वह व्यक्ति पर निर्भर करता है। कर्म-काण्डों और विभिन्न संस्कारों से जुड़े अनुष्ठानों को वह कैसे करे और कितना उनका पालन करे अथवा न करे यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।उस पर किसी भी प्रकार का दबाव नहीं डाला जा सकता है। वह धर्म सम्बन्धी कार्यों को अपने ढंग से करने के लिए पूर्णतया स्वतंत्र है।

2. नगरीय धर्म में सामूहिक भागीदारी का अभाव

ग्रामीण समाज में धार्मिक कार्य सामान्यतया सामूहिक रूप से सम्पन्न होते हैं। सम्पूर्ण गाँव का व्यक्ति धार्मिक कार्यों में सहभागी बनता है, किन्तु नगरों में धार्मिक कार्यों में सामूहिक भागीदारी न के समान होती है। कुछ विशेष अवसरों पर ही व्यक्ति धार्मिक कार्यों में सहभागी बनता है, जैसे यज्ञ अथवा धार्मिक जुलूस।

3. धार्मिक कृत्यों का संक्षिप्तीकरण

नगर के व्यक्ति के पास न तो समय या धैर्य है । वह प्रत्येक कार्य को कम से कम समय में पूर्ण कर लेना चाहता है। इसलिए वह धार्मिक कृत्यों का संक्षिप्तीकरण कर लेता है। उदाहरण के लिए वह विवाह संस्कार के अनेक चरण जो कई दिनों में पूर्ण होते थे वे आज कुछ ही घंटों में पूर्ण हो जाते हैं।

4. धार्मिक कार्यों में साज-सज्जा का महत्व

नगर दिखावे के केन्द्र हैं। यहाँ व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से दिखावे में प्रतिस्पर्द्धा कर, अपने को बड़ा व्यक्ति दिखाने का प्रयत्न करता है। धार्मिक कार्यों में दिखावे का आडम्बर ऐ सामान्य बात है। उदाहरण के लिए किसी स्थल पर यज्ञ के आयोजन समाचार पत्रों में विज्ञापन दिया जाता है। पण्डाल को दुल्हन की तरह सजाया जाता है। लाउडस्पीकर से पाठ जाते हैं। इस तरह नगरीय धार्मिक कृत्यों में दिखावे का प्रदर्शन अधिक है।

5. धर्म निरपेक्षीकरण

नगर में प्रत्येक व्यक्ति किसी धर्म को स्वीकार करने अथवा अस्वीकार करने के लिए स्वतंत्र होता है। प्रत्येक धर्म को अपने धार्मिक कृत्यों को करने की आजादी है।उसे तब तक यह स्वतंत्रता प्राप्त है जब तक कि कोई धर्म दूसरे धर्म को किसी भी तरह की हानि नहीं पहुँचाता है। नगर धर्म-निरपेक्षीकरण के सिद्धान्त के लिए प्रसिद्ध हैं।

6. धार्मिक कट्टरता में कमी

नगर के व्यक्ति प्रगतिवादी, शिक्षित और तार्किक होते हैं। उनकी सोच में संकीर्णता कम और विशालता अधिक है। इसके अतिरिक्त औद्योगीकरण, नगरीकरण और वैज्ञानिक प्रगति ने व्यक्ति के जीवन पद्धति को पूर्णतया परिवर्तित कर दिया है। एक ही मिल, फैक्टरी, कारखाने, होटल, रेस्ट्रा, सिनेमाघर आदि में विभिन्न जाति के व्यक्ति साथ साथ काम करते हैं और मनोरंजन भी। अब नगर में किसी अस्पृश्य के स्पर्श से कोई सवर्ण अपवित्र नहीं होता बल्कि सत्य तो यह है कि अब सवर्ण को असवर्ण, पिछड़ी हुई जातियों के यहाँ भोजन करने में भी संकोच नहीं होता। इस तरह नगर में धार्मिक कट्टरता दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है।

5.6 धार्मिक नगर के स्वरूप

धार्मिक नगरों का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए दो आधारों का प्रयोग किया जा सकता है। प्रथम धर्म का सैद्धान्तिक पक्ष और दूसरा धर्म का व्यावहारिक पक्ष ।

सैद्धान्तिक पक्ष से अभिप्राय है धर्म सम्बन्धी विचार जो सिद्धान्तों के रूप में स्थापित हो गये हैं। भारतीय मनीषियों और धर्मशास्त्र के पंडितों ने भारतीय धर्म दर्शन को विभिन्न सिद्धान्तों के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित किया है। धार्मिक दर्शन वेदों से प्रारम्भ हो कर उपनिषद, पुराण, मनुस्मृति आदि धार्मिक ग्रन्थों तक विस्तृत है। अनेक विचारकों ने धर्म के सिद्धान्तों को एक नया कलेवर या अमलीजामा पहनाने का प्रयास किया है, जिससे व्यावहारिक पक्ष की अभिव्यक्ति होती है। भारत ने आध्यात्मिक दर्शन के क्षेत्र में संसार के अन्य देशों में अपनी एक अलग और विशेष पहचान बनायी है। इसका मुख्य कारण है कि हिन्दु धर्म दर्शन लकीर का फकीर कभी नहीं रहा है। उसने धर्म सम्बन्धी सिद्धान्तों को भी एक संकीर्ण घेरे में बन्द नहीं किया हैं।उसने सदैव नये नये प्रयोग अपने अनुभवों और ज्ञान के आधार पर किया है और इससे धार्मिक सिद्धान्तों को जहाँ नया रूप प्रदान हुआ वहीं नये रूप में मार्ग दर्शन भी। इस नये प्रयोगों की पृष्ठभूमि में भारतीय हिन्दू धर्म की उदारवादी एवं सहिष्णुतावादी नीतियों का मुख्य भूमिका है।

धार्मिक सिद्धान्तों के रचयिताओं ने विभिन्न सिद्धान्तों की रचना कर व्यक्ति को अपने

धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक कर्तव्यों को संसार में रहकर ही पूर्ण करने की प्रेरणा दी। व्यक्ति के लिए धर्म, आचरण की संहिता तैयार की जिसके पालन से उसे मोक्ष की प्राप्ति के लिए एक विशाल कर्मकाण्डों का जाल बुना गया। पाप, पुण्य, स्वर्ग, नकर, पुरूषार्थ, पुनर्जन्म के विचारों की स्थापना की वही दूसरी ओर उन्होंने इन सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप भी प्रदान किया जिससे वे मानव जीवन में कार्यरत हो सके।

5.7 विश्व के प्रमुख धार्मिक नगर

धार्मिक नगर एक ऐसा पवित्र शहर है जो कि किसी धर्म गुरू से जुड़ा हो या किसी धर्म के संस्थापक का जन्म स्थान हो या कोई धार्मिक तीर्थ स्थल हो। विश्व में ऐसे अनेक धार्मिक नगर है। जो कि नगरीय समाज में या नगरीय समाज की विशेषताओं से अलग हैं। विश्व के प्रमुख धार्मिक नगरों में से कुछ का संक्षिप्त विवरण निम्नवत है।

1. अमृतसर

यह एक ऐसा शहर है जो कि सिख धर्म का धार्मिक केन्द्र स्थल है। इस शहर में स्वर्ण मन्दिर अवस्थित है जो कि इस शहर का सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक गतिविधियों का केन्द्र स्थल है।

2. बनारस (काशी)

यह शहर हिन्दू एवं बौद्ध धर्म में विश्वास रखने वाले लोगों का अत्यन्त परम धार्मिक तीर्थ स्थल है। प्रतिदिन इस शहर में लाखों करोड़ों लोग धार्मिक संस्कारों के लिए आते हैं। इस शहर में अनेक देवी देवताओं के मन्दिर हैं,जो दर्शनीय हैं तथा लोगों के धार्मिक विश्वास का केन्द्र है।

विश्व के प्रमुख धार्मिक नगरों में वाराणसी (काशी) का प्रमुख स्थान है। क़ाशी प्राचीन नगरी है, जो आधुनिक वाराणसी क्षेत्र में स्थित है। इतिहास में काशी महाजनपद के नाम से 6वीं शताब्दी ई0पू0 में चर्चित था, जिसकी राजधानी वाराणसी थी। काशी का अस्तित्व वैदिक ग्रन्थों में उल्लिखित है।काशी का सर्व प्रथम उल्लेख अथर्ववेद में प्राप्त होता है। महाभारत तथा रामायण में भी काशी का उल्लेख है। षोडस महाजनपदों में काशी प्रमुख महाजनपद था। बुद्ध काल के ग्रन्थों में काशी की विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है। महाभारत के अनुसार काशी की स्थापना दिवोदास नामक राजा ने की थी। काशी विद्या के केन्द्र के रूप में हजारों वर्षों से प्रसिद्ध रहा है। काशी शैव धर्म का प्रमुख केन्द्र था तथा हिन्दू धर्म की महत्वपूर्ण धार्मिक नगरी के रूप में सदैव प्रतिष्ठित रहा है। हिन्दुओं का यह प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है।

3. सारनाथ

उत्तर प्रदेश में वाराणसी नगर से 12 किलोमीटर दूर स्थित सारनाथ प्राचीनकाल में इसिपतन मिगदाय (ऋिधिपत्तन मृगदाव) के रूप में प्रसिद्ध था। यह बौद्ध सम्प्रदाय एवं मौर्यकाल से सम्बद्ध स्थल है। भगवान बुद्ध का धर्मचक्र प्रवर्तन सारनाथ में हुआ था। मौर्य सम्राट अशोक ने सारनाथ में एक सिंह-शीर्ष प्रस्तर स्तम्भ बनवाया था। स्वतंत्र भारत के राज चिन्ह में इसी सिंह-शीर्ष को अपनाया गया है। यह मौर्य प्रस्तर काल का उत्कृष्ट उदाहरण है। सारनाथ के स्तम्भ पर अशोक का लघु लेख भी उत्कीर्ण है फाहियान ने सारनाथ की यात्रा की थी, इसका विस्तृत उल्लेख उसने अपने यात्रा-विवरण में दिया है, ह्वेनसांग के समय सारनाथ थेरवाद का प्रमुख केन्द्र था, अपने यात्रा विवरण

में ह्वेनसांग ने इसका वर्णन किया है। मध्य युग में गहड़वाल शासक की रानी कुमारदेवी ने यहाँ विहार और संघाराम बनवाए थे। उत्खनन में सारनाथ से गुप्तकालीन धमेख स्तूप के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

4. भुवनेश्वर

भारत के अनेक धार्मिक नगरों में से भुवनेश्वर एक प्रसिद्ध धार्मिक स्थल है,जहाँ पर अनेक मठ और मन्दिर स्थित हैं। जिसमें मुक्तेश्वर लिंगराज मन्दिर, लिंगराज मन्दिर, राजाराणी मन्दिर आदि प्रमुख हैं। इसके अलावा धउली स्थित बौद्ध शान्ति स्तूप, खण्डगिरी व उदय गिरी आदि अनेक दर्शनीय स्थल हैं। भुवनेश्वर समीप पूरी स्थित श्री जगन्नाथ मन्दिर विश्वविख्यात है जहाँ जून-जुलाई में प्रत्येक वर्ष रथ यात्रा पर्व हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। जिसमें देश विदेश के अनेक श्रद्धालु भाग लेते हैं। भुवनेश्वर निकटस्थ एक और प्रमुख दर्शनीय स्थल विश्व ऐतिहासिक किर्तीत्रयोदश शताब्दी का सूर्य मन्दिर जो कोणार्क सूर्य मन्दिर के नाम से विश्वविख्यात है।

5. जेरूसलम

यह नगर ईसाई, मुसलमान एवं यहूदियों के लिए एक पवित्र स्थल है। इसका प्रमुख धार्मिक आकर्षण हैं - वेस्टनवॉल, रॉक के गुम्बज एवं पवित्र सपुलचर में स्थित गिरिजाघर, धार्मिक कृत्य के लिए अनक श्रद्धालु तीर्थ यात्रा पर यहाँ आते हैं।

6. करबला (इराक)

यह शहर शिया मुसलमानों के धार्मिक एवं पवित्र स्थल के रूप में प्रसिद्ध है। और यहाँ पर पैगम्बर मोहम्मद के पोते अतलाह हुसैन की मजार है।

7. मक्का (अरब)

प्रत्येक वर्ष अरबों-खरबों मुसलमान इस शहर में तीर्थ करने आते हैं। यह शहर मुसलमानों के लिए अत्यन्त पवित्र एवं पापों को धो देने वाला पवित्र स्थान है। और प्रत्येक मुसलमान की ख्वाहिश है कि वे हज यात्रा में मक्का जायें।

8. मदीना (अरब)

मक्का की तरह यह भी मुसलमानों का धार्मिक तीर्थ स्थल है । रमजान के पवित्र महीने में लाखों-करोड़ों मुसलमान हज करने के लिए मक्का-मदीना जाते हैं। इस शहर में पैगम्बर मोहम्मद साहब की गुम्बज है।

9. बेटिकन सिटी

यह शहर इटली के रोम शहर में अवस्थित है और यह रोमन कैथोलिक धार्मिक समुदाय के लिए अत्यन्त पवित्र तीर्थ स्थल है जहाँ पर लाखों की संख्या में ईसाई लोग तीर्थ करने आते हैं।

10. प्रयागराज (वर्तमान में इलाहाबाद)

प्रयागराज (वर्तमान में इलाहाबाद) उत्तर प्रदेश में गंगा-यमुना के संगम पर स्थित है। एस.आर. गोयल का कथन है कि पाटलिपुत्र के पूर्व प्रयाग गुप्त सामन्तों की राजधानी भी रही थीं गुप्तों

के सम्राट बनने के उपरान्त प्रयाग उनकी धार्मिक- सांस्कृतिक राजधानी बनी रही। प्रयाग धार्मिक महत्व (त्रिवेणी संगम) के कारण सदैव प्रसिद्ध रहा है इसे तीर्थराज भी कहा जाता है। हर्षवर्द्धन प्रति पांचवें वर्ष प्रयाग में महामोक्ष परिषद् का आयोजन करता था । कालिदास, कल्हण, अल्बरूनी ने प्रयाग के धार्मिक सांस्कृतिक महत्व की चर्चा की है।

11. कुशीनगर

कुशीनगर की पहचान उत्तर प्रदेश के देवरिया क्षेत्र में स्थित कसयॉ स्थल से की गयी है। दिव्यावदान, दीघनिकाय, अशोक के आठवें वृहद शिलालेख, कनिष्क के सिक्कों तथा फाहियान एवं ह्वेनसांग के यात्रा विवरणों से कुशीनगर की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। कुशीनगर मल्ल गणराज्य की राजधानी थी। भगवान बुद्ध का महापरिवनिर्वाण (483 ई.पू.) कुशीनगर में ही हुआ था। श्रावस्ती-वाराणसी मार्ग का प्रमुख केन्द्र होने के कारण इसका आर्थिक व्यापारिक महत्व स्थापित था। प्रमुख बौद्ध नगरी होने के कारण अशोक के समय में कुशीनगर में अनेक स्थापत्य कृतियाँ निर्मित हुई थी। यह स्थापत्य निर्माण गुप्त काल में भी खूब हुआ था। अशोक ने यहाँ स्तूप व विहार निर्मित कराये थे। कुशीनगर से कनिष्क के सिक्के प्राप्त हुए हैं । कुमार गुप्त के समय हरिबल ने भी स्तूप एवं विहार निर्मित कराये थे। कुशीनगर के व्यापारियों एवं शिल्पियों के द्वारा मुद्रा-परिचालन के साक्ष्य भी प्राप्त हुए हैं। हूणों के कुशीनगर पर आक्रमण के साक्ष्य भी प्राप्त होते हैं।

5.8 धार्मिक नगर के महत्व

विशव में नगरों की तुलना में धार्मिक नगरों का महत्व अधिक है। नगरों में लाखो-करोड़ों लोग अपने रोजगार या अच्छे सुख-सुविधाओं के लिए अविस्थापित होते हैं। परन्तु धार्मिक नगरों में पुण्य, मोक्ष, एवं भक्ति के आकर्षण के परिणाम स्वरूप अनेकों लोग धार्मिक नगरों में बसते हैं या तीर्थ करने जाते हैं। धार्मिक नगर समाज व संस्कृति की पारम्परिक पहचान को बनाये रखता है। और सामाजिक - सांस्कृतिक पहचान का धरोहर है। धार्मिक नगर विश्व के सभ्यताओं के प्रतीक भी हैं।

5.9 सारांश

इस इकाई के प्रारम्भ में नगर के अर्थ का विवेचन किया गया है। तत्पश्चात धार्मिक नगर, नगर एवं धार्मिक नगर में अन्तर, धार्मिक नगर की विशेषताएं आदि पर प्रकाश डाला गया है। इसके बाद धार्मिक नगर के स्वरूप, विश्व के प्रमुख धार्मिक नगर व धार्मिक नगरों के महत्व आदि का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गोल्ड हैरी, 1982, *सोशियोलॉजी ऑफ अरबन लाईफ,* प्रेंटिस हाल इण्टरनेशनल,लंदन
2. राव, एम. एस. ए., 1970 *अरबनाईजेशन एण्ड सोशल चेंज,* ओरिएण्ट लांगमैन्स , बाम्बे।
3. राव, प्रकाश, 1983 *अरबनाईजेशन इन इण्डिया,* कान्सेण्ट पब्लिकेशन्स, दिल्ली।

4. सैरिंग, एम.ए., 1968, *बनारस : ए सेक्रेड सिटी ऑफ दी हिन्दूज,* बी0आर0 पब्लिशिंग कार्पोरेशन, नई दिल्ली ।

5.11 प्रश्नोत्तर

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. धार्मिक नगर को परिभाषित कीजिए।
2. धार्मिक नगर एवं नगर में अन्तर बताएं।
3. भारत के प्रमुख धार्मिक नगर को दर्शाएं।
4. धार्मिक नगर के स्वरूप से आपका क्या तात्पर्य है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नगर को परिभाषित करते हुए नगर एवं धार्मिक नगर में अन्तर बताएं।
2. विश्व के प्रमुख धार्मिक नगर को स्पष्ट करते हुए धार्मिक नगर के महत्व को समझाइये।
3. नगरीय धर्म की अवधारणा से आपका क्या तात्पर्य है? धर्म की सामान्य विशेषताओं का वर्णन करें।
4. नगर के अर्थ को परिभाषित करते हुए धार्मिक नगर के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. नगरों का स्वरूप कैसा है?

   (अ) आधुनिक (ब) पारम्परिक (स) सैद्धान्तिक (द) व्यवहारिक

2. निम्नलिखित में से धार्मिक नगर की कौन सी विशेषता नहीं है?

   (अ) धर्म निरपेक्षीकरण (ब) वैयक्तिक धर्म

   (स) धार्मिक कट्टरता (द) अत्यधिक धार्मिकता तथा अंधविश्वास

3. "धर्म के समाजशास्त्रीय क्षेत्र के अन्तर्गत एक समूह में अलौकिक से संबंधित उद्देश्यपूर्ण विश्वास तथा इन विश्वासों से संबंधित वाह्य व्यवहार, भौतिक वस्तुएँ और प्रतीक आते हैं" यह परिभाषा किसने दी है?

   (अ) राधाकृष्णन (ब) एच0एम0जानसन

   (स) गिलिन और गिलिन (द) आर0 एल0 वील्स

4. धर्म शब्द की उत्पत्ति किस धातु से हुआ है?

   (अ) धृ धातु (ब) घी धातु

   (स) ध्री धातु (द) घृ धातु

उत्तर- 1. (अ) 2. (द) 3. (स) 4. (अ)

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

MASY-09
भारत में नगरीय समाज

खण्ड

4

नगरीय, सामाजिक समस्यायें

इकाई-1 5

मलिन बस्तियों में वृद्धि एवं पर्यावरण प्रदूणष

इकाई-2 13

व्यावसायिक गतिशीलता एवं पारिवारिक अस्थिरता

इकाई-3 20

आवास की समस्या एवं मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्तता

इकाई-4 27

नगरीय निर्धनता, बेरोजगारी तथा प्रवजन

इकाई-5 35

नगरों में बढ़ते अपराध की प्रकृति एवं स्वरूप

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौज़िया	**कुलसचिव - सचिव**

परिमापक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 जयकान्त तिवारी	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सम्पादक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

प्रो0 जयकान्त तिवारी	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड-4 : खण्ड परिचय - नगरीय सामाजिक समस्यायें

इस खण्ड में निम्नलिखित इकाइयाँ हैं-

इकाई-1 मलिन बस्तियों में वृद्धि एवं पर्यावरण प्रदूषण।

इकाई-2 व्यावसायिक गतिशीलता एवं पारिवारिक अस्थिरता।

इकाई-3 आवास की समस्या एवं मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्तता।

इकाई-4 नगरीय निर्धनता, बेरोजगारी तथा प्रवजन।

इकाई-5 नगरों में बढ़ते अपराधों की प्रकृति एवं स्वरूप।

इकाई - 1 : मलिन बस्तियों में वृद्धि एवं पर्यावरण प्रदूषण

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 मलिन बस्ती की अवधारणा

1.3 मलिन बस्तियों का वर्गीकरण

1.4 भारत में मलिन बस्तियों का उद्भव एवं विकास

1.5 मलिन बस्तियों का पुनर्वास

1.6 पर्यावरण प्रदूषण की समस्या

1.7 सारांश

1.8 बोध प्रश्न

1.9 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- मलिन बस्ती का अर्थ एवं परिभाषा बता सकेंगे।
- मलिन बस्तियों में वृद्धि की प्रक्रिया का वर्णन कर सकेंगे।
- मलिन बस्तियों के पुनर्वास के प्रयासों से अवगत होंगे।
- पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का विश्लेषण कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

भारत में विगत गीत दशकों से जीवको पार्जन की तलाश में ग्रामीण निर्धनों का विभिन्न नगरों एवं महानगरों में प्रवास हुआ है जिसके परिणाम स्वरूप महानगरों में मलिन बस्तियों में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। मलिन बस्तियाँ नगरीकरण की प्रक्रिया में अपरिहार्य बन गई हैं। नगरों के विकास के साथ-साथ मलिन बस्तियों की वृद्धि ने जहाँ एक और नगर की छवि को घूमिल किया है वहीं दूसरी ओर नगर की त्रासदी, निर्धनता, मानव मूल्यों के ह्रास, पर्यावरण प्रदूषण जैसी ज्वलन्त समस्याओं को उत्पन्न किया है। इस इकाई में हम मलिन बस्तियों में वृद्धि के साथ-साथ पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करेंगे।

1.2 मलिन बस्ती की अवधारणा

मलिन बस्ती वस्तुतः नगर की असहनीय परिस्थिति का परिणाम है जो आबादी के केन्द्रीयकरण से उपजती है। मलिन बस्ती किसी सामाजिक व्यवस्था की विशिष्ट सामाजिक आर्थिक एवं

आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप उभरती है जिसके अन्तर्गत सघन आबादी, अत्यधिक भीड़-भाड़, अस्वास्थ्यकर दशायें, जल आपूर्ति एवं जल निकास का अभाव, शौचालय की सुविधा की अपर्याप्तता, निम्न जीवन स्तर जैसी विशेषतायें परिलक्षित होती हैं। ये दशायें व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, नैतिक एव सामाजिक विकास की अवरूद्ध करती हैं जिसके कारण मलिन बस्तियों के निवासी नगर के व्यापक सामुदायिक जीवन की गतिविधियों में प्रत्यक्ष सहभागिता नहीं कर पाते।

मलिन बस्तियों के प्रति पाश्चात्य दृष्टिकोण एवं भारतीय दृष्टिकोण में थोड़ी भिन्नता दिखती है। पाश्चात्य सम्पन्न राष्ट्रों में जिसे मलिन बस्ती की संज्ञा दी जाती है वह भारत, पाकिस्तान एवं बंगलादेश जैसे विकासशील राष्ट्रों में अच्छे स्तर का आवास माना जा सकता है। इस प्रकार मलिन बस्ती का अर्थ एव परिभाषा अलग - अलग समाजों में अपनी अपनी सामाजिक-आर्थिक दशाओं के अनुरूप बदलता रहता है।

संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट (1952) में मलिन बस्ती को पारिभाषित करते हुए बताया गया कि मलिन बस्ती मकान अथवा घरों का एक समूह एवं क्षेत्र है जिसमें अत्यधिक भीड़-भाड़, प्रदूषण, अस्वास्थ्यक्रर दशायें होती हैं जिसके परिणामस्वरूप व्यक्तियों के स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं नैतिकता की क्षति होती है। बर्गेल (1955:401) एवं क्लिनार्ड (1960:4) ने भी मलिन बस्ती के भौतिक पहलुओं पर बल दिया है। उनकी दृष्टि में मलिन बस्ती नगर का वह क्षेत्र है जहाँ आवास में भीड़-भाड़, आरोग्य दशाओं की उपेक्षा एवं दयनीयता परिलक्षित होती है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में भी मलिन बस्तियों की भौतिक दशायें दयनीय हैं, किन्तु उनके स्तर के निर्धारण का पैमाना पाश्चात्य पैमाने से पृथक है।

भौतिक दशाओं के अतिरिक्त सांस्कृतिक दशाओं के आधार पर भी मलिन बस्ती को परिभाषित किया गया है। जोरबाध (1957·128) ने मलिन बस्ती को एक ऐसा पृथक क्षेत्र माना है जिसमें झुग्गी झोपड़ी के अतिरिक्त मानवीयता का निम्न स्तर , आर्थिक विफलतायें, विघटित परिवार परिलक्षित होता है। इसके अतिरिक्त मलिन बस्ती में अत्यन्त गरीबी, बेदखली, करापवञ्चन, उच्च जन्म एवं मृत्यु दर, अवैधता, वेश्यावृत्ति एवं अपराध जैसी विशेषताएँ पाई जाती हैं। भारतीय सन्दर्भ में अपराध, वेश्यावृति, अवैधता जैसी विशेषताएं सिर्फ मलिन बस्ति में ही नहीं अपितु उसके बाहर भी समान रूप से दिखाई पड़ती है। कुछ अन्य समाज वैज्ञानिकों (पार्क, बर्गेस, मैकेन्जी, इत्यादि) ने मलिन बस्ती को नगर के 'अन्धकार क्षेत्र', 'अस्पृंश्य क्षेत्र' के रूप में पारिभाषित किया है जिसमें बूझी हुई आशा, सामाजिक विघटन, निम्न स्वास्थ्य एवं मानसिक विकृति परिलक्षित होती है। आस्कर लेविस (1961) ने मलिन बस्ती के बाशिदों को 'निर्धनता की संस्कृति' से प्रभावित बताया।

हाल के दशक में कुछ उत्तर-मार्क्सवादी विचारकों (टर्नर, वेलेन्टाइन, राबर्टस, गिलबर्ट, पर्लमैन, इत्यादि) ने मलिन बस्ती की परिभाषा में व्याप्त पूर्वाग्रहों एवं नकारात्मक दृष्टिकोणों की आचोलना करते हुए इसे आशाओं के केन्द्र के रूप में स्वीकार किया है, जहाँ बेहतर जीवन की आकांक्षायें पनपती हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार मलिन बस्तियों को एक पृथक क्षेत्र रूप में देखने की बजाय पूँजीवादी सामाजिक रचना प्रक्रिया के समन्वित परिप्रेक्ष्य में परिभाषित किया जाना चाहिए जिसमें नगरीय निर्धन एक विलग समूह की बजाय सामाजिक - आर्थिक प्रक्रिया के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकारा जाना चाहिए।

1.3 मलिन बस्ती का वर्गीकरण

प्रवास के स्वरूप, आर्थिक गतिविधियों तथा सामाजिक आधारों के आधार पर मलिन बस्तियों का वर्गीकरण किया गया है। प्रवास के दो प्रमुख स्वरूप हैं-सम्पूर्ण परिवार का प्रवास एवं इकाइयों का प्रवास। पहले स्वरूप में प्रवासी अपने सम्पूर्ण परिवार को लेकर नगर की मलनि बस्ति को आकर रहने लगता है तथा अपने उद्‌गम स्थल के सामाजिक सम्पर्क से कट जाता है। दूसरे स्वरूप में पूरे परिवार की बजाय कार्यशील पुरुष (अपने बच्चों, वृद्ध एवं महिलाओं को मूल स्थान में छोड़कर) नगर में आकर धन आर्जन का प्रयास करता है। इस स्थल में नगरीय मलिन बस्ती में रहते हुए उसका अपने उद्‌गम स्थल से सम्पर्क एवं सम्बन्ध बना हुआ है।

आर्थिक गतिविधियों के अन्तर्गत मलिन बस्तियों में रहनेवालों की व्यावसायिक क्रियाओं को आधार बनाकर वर्गीकरण किया जाता है, जैसे-सार्वजनिक उद्यमों में कार्यशील श्रमिकों की मलिन बस्ती, परम्परागत जातिगत व्यवसाय करने वालों की मलिन बस्ति, गैरपरम्परागत एवं अनौपचारिक कार्य (जैसे लघु व्यवसाय, घरेलू नौकरानी, भवन निर्माण मजदूर, इत्यादि) करनेवालों की मलिन बस्ती इत्यादि।

सामाजिक आधारों-धर्म, भाषा, जाति, क्षेत्र इत्यादि पर भी मलिन बस्तियों का वर्गीकरण किया जाता है, जैसे हिन्दू मलिन बस्ती, मुस्लिम मलिन बस्ती, मुसहर मलिन बस्ती, भंगी मलिन बस्ती बंगलादेशी शरणार्थी मलिन बस्ती, कश्मीरी शरणार्थी मलिन बस्ती, इत्यादि।

चार्ल्स स्टोक्स ने मलिन बस्ती के दो स्वरूप बताया - आशा पर आधारित मलिन बस्ती एवं निराशा पर आधारित मलिन बस्ती। पहले प्रकार में व्यक्ति अथवा परिवार एक निर्धारित अवधि तक मलिन बस्ती में रहने के उपरान्त अपने उद्‌गम स्थल पर वापस लौटने की मंशा रखता है। जबकि दूसरे प्रकार में पूरी जिन्दगी उसी मलिन बस्ती में बीताने के सिवा दूसरा विकल्प नहीं मिलता।

1.4 भारत में मलिन बस्ती का उद्‌भव एवं विकास

नगरों के विकास से सम्बन्धित अध्ययन यह प्रदर्शित करते हैं कि मलिन बस्तियों का आविर्भाव विकृत औद्योगिकरण एवं वाणिज्यीकरण के परिणामस्वरूप हुआ है। ज्यों ज्यों नगरों में औद्योगिक विस्तार होता गया त्यों-त्यों आसपास एवं दूरस्थ क्षेत्रों से आजीवन की तलाश में इन औद्योगिकृत नगरों में केन्द्रीकरण बढ़ता गया। इनमें से अधिकांश प्रवासी समाज के निर्धन समूहों का प्रतिनिधित्व करते थे। नगर एक सीमा तक तो इन प्रवासी व्यक्तियों को सस्ते श्रमिक के रूप में खपाता गया किन्तु इनकी बढ़ती आबादी ने नगरों में मलिन बस्तियों का क्रमशः विस्तार किया। नगर की संरचना में श्रमिकों के आठ घंटे के श्रम की उपयोगिता आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण मानी गई किन्तु बाकी सोलह घंटे में इन श्रमिकों की आवास, जल आपूर्ति, सार्वजनिक यातायात एवं अन्य आवश्यकताओं ने नगरीय समस्यायें उत्पन्न कर दी। श्रमिकों ने अपनी आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में नगरों के खाली सार्वजनिक स्थानों के आस-पास झुग्गी-झोपड़ी बनाना आरम्भ किया। आरम्भिक अवस्था में इन झुग्गी झोपड़ियों के निर्माण का कोई प्रतिरोध नहीं हुआ किन्तु इनकी बढ़ती संख्या ने नगरीय जनजीवन को विविध रूपों में प्रभावित किया। इनकी अस्वास्थ्यकर दशाओं एवं मौलिक सुविधाओं के अभाव ने नगरीय प्रशासन के समक्ष विभिन्न समस्यायें उत्पन्न किया। परिणामतः ये मलिन बस्तियाँ नगर के उद्योगपतियों, व्यापारियों, भूमि एव गृह स्वामियों, प्रशासकों एवं मध्यम वर्गों

की आँखों की किरकिरी बन गईं, इन्हें आर्थिक विकास का अवरोध एवं नगरीय सामाजिक व्यवस्था के लिए खरतनाक माना जाने लगा।

बम्बई महानगर का सामाजिक-आर्थिक इतिहास यह प्रदर्शितत करता है कि 1940 के पूर्व तक मलिन बस्तियों का विकास यहाँ नहीं हुआ था, यद्यपि आवासीय समस्या कुछ सीमा तक विद्यमान थी। 1911 की जनगणना के आँकड़े यह दिखाते हैं कि 69 प्रतिशत आबादी एक कमरे के आवास में रहती थी। 1931 में औसतन 4.4 व्यक्ति एक कमरे में साथ-साथ रहते थे तथा उस समय ऐसे लगभग ढाई लाख आवास थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् आवासीय समस्या तेजी से गम्भीर बन गई। 1951 में एक कमरे की औसत आबादी 6 व्यक्ति हो गई। 1977 के सर्वेक्षण बताते हैं कि 77.4 प्रतिशत आबादी 1 कमरे एव 14.2 प्रतिशत आबादी-2 कमरों में रहती थी। 1980 में बम्बई में प्रतिदिन लगभग 300 अतिरिक्त हाथ आजीविका की तलाश में आने लगे। इस बढ़ती आबादी द्वारा क्रमशः अवैध रूप से सार्वजनिक स्थानों का अधिग्रहण करने एवं मलिन बस्तियों के निर्माण की प्रक्रिया बढ़ती गई।

बम्बई की ही भाँति भारत के अन्य महानगरों एवं नगरों में मलिन बस्तियों में वृद्धि की प्रक्रिया नगरीकरण के साथ साथ बढ़ती गई। दिल्ली महानगर में 1951 में झुग्गी झोपड़ियों की संख्या बहुत ही कम थी किन्तु 1970-75 तक झुग्गी-झोपड़ियों की तीव्र बढ़ती संख्या एवं आबादी दिल्ली नगर निगम की सबसे प्रमुख समस्या बन गई। सरकारी आंकड़ों के अनुसार दिल्ली में झुग्गी-झोपड़ियों की संख्या 1951 में 12000, 1961 में 43000, 1971 में 63000, 1981 में 113000 तथा 1991 में 259,0000 होती गई।

1981 की जनगणना रिपोर्ट से यह तथ्य प्रदर्शित होता है कि भारत के चार महानगरों-बम्बई, कलकत्ता, मद्रास एवं दिल्ली में मलिन बस्तियों की आबादी क्रमशः 34.3%, 32.9%, 32.1% तथा 31% थी। 1981 में भारत में मलिन बस्ति की कुल आबादी 27.90 मिलियन थी जो 1991 में बढ़कर 51.23 मिलियन हो गई। कुल नगरीय आबादी को 21.21 प्रतिशत हिस्सा मलिन बस्तियों की आबादी है। ये तथ्य यह निष्कर्ष प्रतिपादित करते हैं कि नगरों में मलिन बस्ती की वृद्धि का क्रम जारी है। इन चार महानगरों के अतिरिक्त प्रथम श्रेणी के कुछ नगरों-बंगलोर, पूणे, अहमदाबादा, हैदराबाद इत्यादि की आबादी 1991 की नई आर्थिक नीति एवं सूचना क्रांति के परिणामस्वरूप काफी बढ़ी है। भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया के नये दौर में जहाँ एक ओर नोयडा, गुड़गाँव जैसे नये व्यवस्थित औद्योगिक नगर बसाये जा रहे हैं, वहीं दूसरी ओर मलिन बस्तियों में वृद्धि का क्रम भी जारी है। एक अनुमान के अनुसार 2005 तक भारतीय नगरों में मलिन बस्तियों की आबादी लगभग 70 मिलियन हो गई है, जिसमें महानगरों की लगभग 45% आबादी शामिल हैं। मलिन बस्तियों में हो रही उत्तरोत्तर वृद्धि ने नगरीय विकास प्रक्रिया एवं नगर प्रशासन के समक्ष अत्यधिक भीड़-भाड़, निर्व्यक्तिकरण, नगरीय आवश्यक सुविधाओं-जलआपूर्ति, जल निकास, परिवहन एवं यातायात, विद्युत आपूर्ति की अपर्याप्तता जैसी, अनेक समस्यायें उत्पन्न किया है।

1.5 मलिन बस्तियों का पुनर्वास

भारत सरकार द्वारा मलिन बस्तियों के पुनर्वास हेतु मोटे तौर पर तीन प्रकार योजनायें चलाई गई-

(अ) मलिन बस्तियों में रहने वालों का पुनर्स्थापन,

(ब) मलिन बस्तियों का पुनरुद्धार एवं

(स) स्थल विकास एवं सेवा योजना

पुनर्स्थापन योजना का प्रादुर्भाव 1957-1958 में किया गया। इस योजना का उद्देश्य था नये स्थानों पर घर बनवाकर मलिन बस्ती क्षेत्र को खाली कराना। दिल्ली में इस योजना के अन्तर्गत 1966 तक 35000 परिवार, 1973 तक 54000 परिवार, 1976-77 तक लगभग 2 लाख परिवार एवं 1991 तक 2.16 लाख परिवार को नगर के आसपास 45 पुनर्स्थापित कालोनियों में बसाया गया। पुनर्स्थापन योजना के क्रियान्वयन के बावजूद महानगरों में मलिन बस्ती की समस्या बनी हुई है। इसका प्रमुख कारण यह है कि नये प्रवासियों द्वारा आये सार्वजनिक स्थलों के इर्द-गिर्द मलिन बस्तियाँ स्थापित करने का क्रम जारी है।

पुनरुद्धार योजना का प्रादुर्भाव 1972 में किया गया। इसका उद्देश्य था मलिन बस्तियों में आवश्यक सुविधाओं के विकास के आधार वहाँ के पर्यावरण को सुधारना। 1971 की जनगणना में 8 लाख से अधिक आबादी वाले शहरों की मलिन बस्तियों में इसका क्रियान्वयन किया गया। पहले चरण में 11 शहरों में 20 करोड़ का सरकारी अनुदान जारी किया गया। पाँचवीं पंयवर्षीय योजना के पुनरूद्धार योजना का विस्तार 3 लाख से अधिक आबादी वाले शहरों की मलिन बस्तियों में भी किया गया। इस योजना का मूल्यांकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि योजना विभिन्न शहरों में असमान रूप में क्रियान्वित की गई, पुनरुद्धार की गई मलिन बस्तियों में रखरखाव की नी समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं तथा कई मध्यम आकार वाले शहरों को इस योजना में शामिल नहीं किया गया है। इन सबके परिणामस्वरूप यह योजना अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं हुई है।

स्थल विकास एवं सेवा योजना को प्रादुर्भाव 1975-76 में किया गया। इसके अन्तर्गत दिल्ली में 25 स्क्वायर यार्ड के भूमि, जहाँ आवासीय सुविधाओं का विकास किया गया हो, अल्प किराये, लगान पर मलिन बस्ती धारकों में वितरित की गई। दिल्ली विकास प्राधिकरण द्वारा इन योजना के तहत 1975-76 27 नई कालोनियों में 80,000 परिवारों को पुनर्स्थापित किया गया। 1976 के मध्य तक पुनः 70,000 नये स्थलों को विकसित कर 50,000 और परिवारों को स्थानान्तरित किया गया। इस योजना ने भी स्थानान्तरित परिवारों में नये परिवेश से अनुकूलन अथवा तादात्म्य स्थापित करने जैसी समस्यायें उत्पन्न किया है।

मलिन बस्तियों के पुनर्वास सम्बन्धी विभिन्न योजनायें निम्मलिखित कमियों के कारण अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त करने में विफल नहीं रहीं :

(i) पुनर्वास योजना के क्रियान्वयन के पूर्व समुचित नियोजन एवं प्राथमिकताओं का निर्धारण नहीं

किया गया।

(ii) स्थानीय अधिकारियों द्वारा कोई विशिंष्ट विकास योजना का प्ररुप नहीं बनाया गया।

(iii) पुनर्वास कार्यक्रमों से सम्बद्ध विभिन्न विभागों में समन्वय का अभाव परिलक्षित होता है।

वस्तुतः मलिन बस्ती के पुनर्वास एवं उन्नयन सम्बन्धी प्रयासों की सफलता इस तथ्य पर निर्भर है कि नगरीय निर्धनों एवं मलिन बस्तियों को नगरीकरण एवं नगरीय विकास प्रक्रिया के अवशिष्ट के रूप में देखने की बजाय अभिन्न अंग के रूप में देखा जाय। मलिन बस्ती विहीन नगर की बजाय मौलिक सुविधाओं युक्त मलिन बस्तियों को समन्वित करते हुए नगरीय विकास की भावी दिशा निर्धारित करनी होगी। भारत में मलिन बस्तियों की आबादी, आकृति एवं वृद्धि दर से सम्बन्धित व्यवस्थित सर्वेक्षण एवं अध्ययन नहीं किए गए हैं। अनुमानित आंकड़ों में मलिन बस्ती की आबादी को कम करके आंका गया है। अतः आवश्यकता है कि व्यवस्थित सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर उपयुक्त रणनीति विकसित की जाय। नगरीय निर्धनों एवं मलिन बस्त्रियों के उन्नयन की रणनीति में मानव विकास से जुड़े समस्त पहलुओं-शिक्षा, स्वास्थ्य, आय अर्जन इत्यादि को महत्व दिया जाना चाहिए।

1.6 पर्यावरण प्रदूषण की समस्या

औद्योगिकरण, नगरीकरण एवं मलिन बस्तियों की वृद्धि ने पर्यावरण को प्रदूषित किया है। कई शहर अपने औद्योगिक अवशिष्ट एंव गंदे पानी का 40% से 60% भाग असंशोधित रूप से अपने पास की नदियों में बहा देते हैं। छोटे से छोटे कस्बे अपने कूड़े एवं मल को अपनी खुली नालियों के जरिए निकटतम नहर/पानी में बहा रहे हैं। इसके अतिरिक्त शहरी उद्योग अपनी चिमनियों ने निकले धुँए एवं जहरीली गैसों से वायुमडल को प्रदूषित करते हैं।

मैसूर नगर के वैयक्तिक अध्ययन के प्राप्त तथ्य यह प्रदर्शित करते हैं कि दो बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठान विक्रान्त टायर एवं शिमोगा स्टील फैक्टरी सल्फर डाइ आक्साइड एवं अन्य प्रतिबंधित अवशेषों को आवासीय आबादी क्षेत्रों में प्रवाहित कर रहे हैं। एक अन्य कम्पनी कापचेत्र के द्वारा जहरीला मिथैन गैस छोड़ा जा रहा है। कर्नाटक राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड इस प्रदूषण वृद्धि की प्रक्रिया में मूकदर्शक बनी है। मैसूर शहर में मलमूत्र शोधन का द्वैयिक संयंत्र न होने के कारण प्राथमिक शोधित अवशेष जो प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के मानकों को पूरा नहीं करते, नगर को प्रदूषित करते हैं। नगर के कई भागों में खुले नाले से मलमूत्र के प्रवाह के कारण पर्यावरण प्रदूषण एवं स्वास्थ्य के लिए खतरे उत्पन्न हुए हैं। नगर में फैक्टरी की चिमनियों के धुँए के अतिरिक्त बढ़ते स्वचालित यातायात के साधनों-बस, कार, मोटरसाइकिल, आटोरिक्शा आदि ने कार्बन मोनोक्साइड एवं हाइड्रोकार्बन की मात्रा बढ़ाकर नगरीय पर्यावरण को प्रदूषित किया है। मैसूर की भांति भारत के अन्य समस्त नगरों में पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि हुई है। महानगरों में पर्यावरण प्रदूषण एक गम्भीर समस्या बन गई है। नगर की मलिन बस्तियों में शौचालय, जल निकासी, की सुविधा के अभाव एवं कूड़े-कचरे के निस्तारण की व्यवस्था के अभाव में ये बस्तियाँ मानव स्वास्थ्य के लिए खतरनाक बन जाती है। नाले के किनारे निचले तल पर स्थापित झुग्गी झोपड़ियों मे खुले नाले की बदबू के अतिरिक्त बरसात

के दिनों में घरों में प्रदूषित जल के घुस जाने के कारण स्थिति- अत्यन्त नारकीय बन जाती है।

नगरों में प्रदूषण की वृद्धि के परिप्रेक्ष् में यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो गया है कि हम नगरीय विकास का एक ऐसा वैकल्पिक स्वरूप विकसित करें जिसमें नगरीय निर्धनों को शामिल करते हुए पर्यावरण संरक्षित बना रहे।

1.7 सारांश

इस इकाई में आपने मलिन बस्ती के अर्थ एवं विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन किया। इसके उपरान्त भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् नगरीकरण एवं औद्योगिकरण के परिणामस्वरूप होने वाले नगरीय विकास के साथ - साथ मलिन बस्तियों में विकास का समाज एतिहासिक विश्लेषण किया गया। तत्पश्चात मलिन बस्तियों के पुनर्वास के प्रयासों का विवरण देते हुए उनका मूल्यांकन किया गया। इस इकाई के अन्तत में नगरीकरण एवं मलिन बस्तियों में वृद्धि के साथ-साथ पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का विश्लेषण किया गया। इस इकाई के अध्ययन से समसामकि भारत में मलिन बस्तियों की वृद्धि एवं पर्यावरण प्रदूषण का स्वरूप आपके मानस पटल पर अंकित हुआ होगा।

1.8 बोध प्रश्न

1. मलिन बस्ती से आपका क्या आशय है?
2. भारतीय परिप्रेक्ष्य में मलिन बस्ती को परिभाषित करें।
3. मलिन बस्ती के कितने स्वरूप हैं?
4. भारत में मलिन बस्ती के उद्भव एवं विकास का विश्लेषण कीजिए।
5. मलिन बस्तियों के पुनर्वास सम्बन्धी प्रयासों का मूल्यांकन कीजिए।
6. नगरों में पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का विश्लेषण कीजिए।

1.9 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

1. 'निर्धनता की संस्कृति' की अवधारणा किसने दिया?

   (क) बर्गेल (ख) क्लिनार्ड (ग) आस्कर लेविस (घ) पर्लमैन

2. मलिन बस्तियों को 'आशा के केन्द्र' के रूप में किसने स्वीकारा?

   (क) जोरबाघ (ख) मैकेन्जी (ग) पार्क (घ) टावर

3. मलिन बस्ती को नगर के 'अन्धकार क्षेत्र' के रूप में किसने माना ?

   (क) वेलेन्टाइन (ख) राबर्ट्स (ग) पार्क (घ) चार्ल्स स्टोक्स

प्रश्नों के उत्तर -

(1) ग (2) घ (3) ग

1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

Ali Sabir (1990) Slums within Slums, Vikas Publishing House, New Delhi.

Bergell, E.E. (1955) Urban Sociology, New York : McGraw Hill.

Castells, Manuel (1977) The Urban Question : A Marxist Approach, Combridge : MIT Press.

Clinard, M.B. (1966) Slums and Community Development, New York: The Free Press.

Lewis, Oscar (1980) "Culture of Poverty" in Gmelch and Zenner (eds) Urban Life, New York : St. Martin's Press.

Perlman, J. (1976) The Myth of Marginality, Barkeley : University of California Press.

Roy, Pradipto and Das Gupta, S. (ed) (1995) Urbanization and Slums, Har Anand Publications, New Delhi.

Valentine, Charles A. (1968) Culture of Poverty : Critique and Counter Proposals, New York : The University of Chicago Press.

Zorbaugh, H.W. (1957) Gold Coast and the Slum, Chicago : The University of Chicago Press.

इकाई -2 : व्यावसायिक गतिशीलता एवं पारिवारिक अस्थिरता

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 व्यावसायिक गतिशीलता का अर्थ एवं स्वरूप

2.3 व्यावसायिक गतिशीलता के कारण एवं परिणाम

2.4 पारिवारिक अस्थिरता की अवधारणा

2.5 नगरीकरण, व्यावसायिक गतिशीलता एवं पारिवारिक अस्थिरता

2.6 सारांश

2.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- व्यावसायिक गतिशीलता के अर्थ एवं स्वरूप को समझ पायेंगे।
- व्यावसायिक गतिशीलता के कारकों एवं परिणामों से अवगत हो जायेंगे।
- पारिवारिक अस्थिरता का अभिप्राय समझ सकेंगे।
- व्यावसायिक गतिशीलता एवं पारिवारिक अस्थिरता के आधुनिक स्वरूप का विश्लेषण कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

समाज में गतिशीलता के दो स्वरूप परिलक्षित होते हैं : (अ) भौगोलिक गतिशीलता, जिसके अन्तर्गत किसी व्यक्ति का समूह के जीवन में प्रवास सम्बन्धी परिवर्तन होता है, तथा (ब) सामाजिक स्थिति में परिवर्तन होता है। व्यावसायिक गतिशीलता सामाजिक गतिशीलता का एक स्वरूप है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति अपने पूर्व व्यवसाय के स्थान पर नया व्यवसाय अपनाता है। व्यावसायिक गतिशीलता की स्थिति व्यक्ति को ग्रामीण से नगरीय प्रवास की ओर उन्मुख करती है। व्यावसायिक गतिशीलता से जनित नगरीय प्रवास की प्रक्रिया व्यक्ति की परंपरागत पारिवारिक संरचना को प्रभावित करती है तथा परिवार का स्वरूप स्थायी नहीं रह पाता। परिवार का प्रकार्य एवं व्यवसाय, उसका आकार, स्त्रियों की प्रस्थिति, लैंगिक सम्बन्धों का स्वरूप, इत्यादि में परिवर्तन के परिणाम स्वरूप पारिवारिक अस्थिरता उत्पन्न होती है। वर्तमान इकाई के अन्तर्गत व्यावसायिक गतिशीलता के स्वरूप एवं पारिवारिक अस्थिरता की प्रकृति एवं सहसम्बन्ध का विश्लेषण किया गया है।

2.2 व्यावसायिक गतिशीलता का अर्थ

गतिशीलता सामाजिक परिवर्तन से सम्बद्ध एक प्रक्रिया है जिसका अभिप्राय है व्यक्ति की स्थिति में हेरफेर होना। व्यावसायिक गतिशीलता में वे सभी परिवर्तन शामिल हैं जिनसे व्यक्ति के पेशे और व्यवसाय में परिवर्तन होता है। लिपसेट एवं बेनडिक्स ने व्यावसायिक गतिशीलता को पारिभाषित करते हुए बताया कि व्यावसायिक गतिशीलता एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय को ग्रहण करता है। यह स्थिति एक विशेष संस्तरणात्मक मूल्य प्रकट करती है जिसको प्रायः सभी लोग स्वीकार करते हैं।

व्यावसायिक गतिशीलता सामाजिक गतिशीलता का एक स्वरूप है। सामाजिक गतिशीलता व्यक्ति या समूह की अलग-अलग सामाजिक आर्थिक स्थिति में होने वाला परिवर्तन है। सामाजिक गतिशीलता के अन्तर्गत यह आवश्यक नहीं कि व्यक्ति की हैसियत में आमूल परिवर्तन हो। एक ही स्थिति में रहकर यह पेशे या आमदनी में कोई परिवर्तन होता है तो वह भी सामाजिक गतिशीलता माना जाएगा। जैसे यदि कोई व्यक्ति बोकारो स्टील कम्पनी में सुपरवाइजर का पद छोड़कर टाटा स्टील कम्पनी में सुपरवाइजर का पद ग्रहण करता है, तो यह सामाजिक गतिशीलता है, यद्यपि उसकी सामाजिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

गतिशीलता सिर्फ व्यक्ति को जीवन में नहीं बल्कि सम्पूर्ण समूह में जीवन में हो सकती है। समूह में होनेवाली गतिशीलता को हार्टन एवं हन्ट ने सामूहिक गतिशीलता कहा है। जैसे आजादी के बाद पंजाब के सिक्खों का जीवन स्तर बिहारियों की अपेक्षा काफी ऊंचा हुआ है। यह सिक्खों की सामूहिक गतिशीलता है।

विभिन्न वर्गों में गतिशीलता का प्रतिमान एक जैसा नहीं होता। उदाहरणार्थ उच्चवर्ग का व्यक्ति विलासी या अवसरवादी होता है, वह हर उपलब्धि अथवा छोटे - बड़े अवसरों को तुरन्त ही भोगना चाहता है। इसके विपरीत मध्यम वर्ग का व्यक्ति बड़ी उपलब्धि को प्राप्त करने के लिए साधारण उपलब्धि को कभी-कभी टाल भी देता है। इनसे पृथक निम्न वर्ग के लोगों के जीवन में इतनी परेशानियाँ (मजबुरियाँ) होती हैं कि उन्हें जो कुछ भी अवसर मिलता है, उसका वे तुरंत लाभ उठाना चाहते हैं।

2.3 व्यावसायिक गतिशीलता का स्वरूप

लिपसेट एवं बेनडिक्स ने व्यावसायिक गतिशीलता के दो स्वरूप बताया :

अन्तर पीढ़ीगत गतिशीलता - जिसके अन्तर्गत एक पीढ़ी के बाद दूसरी पीढ़ी का व्यक्ति अपनी व्यावसायिक स्थिति में परिवर्तन कर लेता है, जैसे-यदि मामूली किसान का पुत्र सरकारी नौकरी प्राप्त कर लेता है तो इसे अन्तर पीढ़ीगत गतिशीलता कहा जायेगा।

अन्तरा पीढ़ी गतिशीलता - जिसमें व्यावसायिक गतिशीलता पीढ़ीगत अन्तर की बजाय

स्वयं व्यक्ति के जीवनकाल में होता है। जैसे-अपनी उद्यमिता से एक छोटा दुकानदार अपने ही जीवनकाल में करोड़पति व्यापारी बन जाता है अथवा एक करोड़पति व्यापारी घाटा लगने के कारण छोटा व्यापारी बन जाता है तो यह दोनों ही स्थिति अन्तरापीढ़ी गतिशीलता कही जायेगी।

सोरोकिन ने व्यावसायिक गतिशीलता के दो स्वरूप बताया :

समस्तरीय गतिशीलता - जिसमें व्यावसायिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप व्यक्ति ही सामाजिक-आर्थिक स्थिति में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं आता। जैसे-कोई पान बेचने वाला चाय बेचने लगे तो यह समस्तरीय गतिशीलता है।

विषमस्तरीय गतिशीलता - जिसमें व्यावसायिक परिवर्तन व्यक्ति की सामाजिक - आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाता है। विषम स्तरीय गतिशीलता के दो रूप हैं:

(अ) आरोही गतिशीलता- जिसमें व्यक्ति व्यावसायिक परिवर्तन के कारण उच्च स्तर प्राप्त कर लेता है। जैसे-साइकिल बेचने वाला कार का दुकानदार बन जाय।

(ब) अवरोही गतिशीलता - जिसमें व्यावसायिक परिवर्तन के कारण निम्न सामाजिक - आर्थिक स्थिति प्राप्त हो जाती है। जैसे आलू का व्यापारी सूअर का व्यवसाय करने लगे तो यह अवरोही गतिशीलता है।

2.4 व्यावसायिक गतिशीलता के कारण

व्यावसायिक गतिशीलता के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं :-

(i) **उच्च प्रस्थिति की इच्छा -** अपनी वर्तमान प्रस्थिति से असंतुष्टि एवं अधिक उच्च प्रस्थिति प्राप्त करने की इच्छा के कारण व्यक्ति व्यवसाय परिवर्तन करता है।

(ii) **श्रमिकों का शोषण -** शोषण से मुक्ति पाने की अभिलाषा में श्रमिक अपने परम्परागत व्यवसाय को बदलने की कोशिश करते रहते हैं।

(iii) **जातिगत व्यवसाय में शिथिलता -** वर्तमान परिवेश में जजमानी प्रथा पर आधारित परम्परागत जातिगत व्यवसाय में शिथिलता के कारण व्यक्तियों के व्यवसाय का निर्धारण प्रतिबंधों से मुक्त हो गया है।

(iv) **भौतिकवादिता -** भौतिकवादित के परिप्रेक्ष्य में व्यक्ति उन व्यवसायों की ओर अधिक आकृष्ट होने लगे हैं जिनमें उन्हें अपेक्षाकृत अधिक लाभ की सम्भावना दिखती है।

(v) **अर्जित प्रस्थिति का महत्व -** वर्तमान सन्दर्भों में प्रदत्त प्रस्थिति की अपेक्षा अर्जित प्रस्थिति का महत्व बढ़ा है। परिणामस्वरूप व्यक्ति व्यावसायिक गतिशीलता के द्वारा अपनी अर्जित प्रस्थिति बढ़ाने का प्रयत्न करता है।

(vi) **शिक्षा में वृद्धि -** शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के कारण स्त्रियों एवं अन्य दुर्बल समूहों में भी व्यावसायिक गतिशीलता बढ़ी है।

2.5 व्यावसायिक गतिशीलता के परिणाम

व्यावसायिक गतिशीलता के निम्नलिखित परिणाम दृष्टिगोचर होते हैं :-

आर्थिक स्थिति में परिवर्तन - व्यावसायिक गतिशीलता ने व्यक्ति की आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाया है जिसके अन्तर्गत कभी उसकी आर्थिक स्थिति सुधरी है तथा कभी बदतर भी हुई है।

परम्परागत मूल्यों एवं मान्यताओं में परिवर्तन - व्यावसायिक गतिशीलता के कारण परम्परागत धार्मिक, जातिगत, वैवाहिक मान्यताएं एवं मूल्य बदले हैं। परम्परागत रूढ़ियाँ एवं जड़ता मिटी है तथा अर्जित योग्यताओं को महत्वपूर्ण माना जाने लगा है।

आधुनिकीकरण एवं आर्थिक विकास - व्यावसायिक गतिशीलता ने जहाँ एक ओर समाज को आधुनिक बनाया है वहीं दूसरी ओर आर्थिक विकासस, रहन-सहन के स्तर, व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय आय में वृद्धि की है।

व्यक्तिवादी भावना का विकास - व्यावसायिक गतिशीलता ने व्यक्तिवादिता, गलाकाट प्रतिस्पर्द्धा एवं भौतिकता को प्रोत्साहित किया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि व्यावसायिक गतिशीलता ने समाज पर सकारात्मक एंव नकारात्मक दोनों प्रकार के परिणाम उत्पन्न किया है।

2.4 पारिवारिक अस्थिरता की अवधारणा

पारिवारिक अस्थिरता का आशय है परिवार के परम्परागत एवं स्थायी स्वरूप में हेरफेर, परिवर्तन अथवा विघटन की प्रक्रिया। परम्परागत परिवार का स्वरूप स्थिर था जिसका विघटन सुगम नहीं था। परिवार का व्यवसाय निश्चित था, जो भावी पीढ़ियाँ जारी रखती थीं। स्त्रियाँ परिवार से बाहर कोई आश्रय नहीं पा सकती थीं। परम्परागत परिवार में मुखिया का बाकी सदस्यों पर नियंत्रण था तथा बड़े-बूढ़ों के निर्णय में नई पीढ़ी का हस्तक्षेप नहीं था। परिवार के सदस्यों में पारस्परिक एकता एवं विश्वास की भावना थी। वैवाहिक बंधन एवं प्रतिबंध कठोर थे। परिवार को दो-तीन पीढ़ी के सदस्य साथ-साथ संयुक्त रूप से एक ही आवास में रहते थे तथा उनका चुल्हा भी सांझा था। यह सबकुछ अब बदल गया है। मुखिया का परिवार के सदस्यों पर नियंत्रण शिथिल हो गया है। युवा पीढ़ी अपने मामलों में बुजुर्गों के हस्तक्षेप को पसंद नहीं करती। परिवार के सदस्यों में पारस्परिक एकता एवं विश्वसनीयता घटी है। वैवाहिक बन्धन शिथिल पड़ गए हैं। एक ही परिवार के सदस्य भिन्न भिन्न वर्गों में संलग्न हैं एक ही घर में अलग अलग चुल्हे हैं। स्त्रियाँ परिवार से बाहर विभिन्न कार्यों एवं व्यवसायों में संलग्न हैं। परिवार का आकार सिकुड़ गया है। परिवार के सदस्यों का सहभाग, जो परम्परागत परिवार की रीढ़ थी, कम हुआ है। अब कोई पारिवारिक धंधा या व्यवसाय नहीं रहा। यह सब स्थिति परिवार की अस्थिरता के उदाहरण हैं। पारिवारिक अस्थिरता के कारण परिवार की परम्परागत संरचना एवं प्रकार्य में महत्वपूर्ण-परिवर्तन परिलक्षित होता है।

2.5 नगरीकरण, व्यावसायिक गतिशीलता एवं पारिवारिक अस्थिरता

पारिवारिक स्थिरता पर व्यावसायिक गतिशीलता का क्या प्रभाव पड़ा है, इस प्रश्न पर समाजशास्त्रियों के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष समरूपीय नहीं विषमरूपीय हैं। एक प्ररूप के निष्कर्ष यह प्रतिपादित करने में है कि व्यावसायिक गतिशीलता एवं नगरीकरण की प्रक्रिया ने परिवार की परम्परागत संरचना एवं प्रकार्य को विघटित किया है जबकि दूसरे प्ररूप के निष्कर्ष यह दर्शाते हैं कि नगरीयता एंव व्यावसायिक गतिशीलता के बावजूद परिवार की परम्परागत संरचना, मूल्यों, मान्यताओं एवं प्रतिमानों में निरन्तरता बनी हुई है, उनका पूरी तरह विस्थापन नहीं हुआ है तथा उनमें परम्परा एवं आधुनिकता दोनों साथ-साथ जारी है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में नगरीय परिवारों पर आई0पी0 देसाई, के0 एम0 कपाडिया, एलीन रास इत्यादि के आनुभविक अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष यह दर्शाते हैं कि शहरी संयुक्त परिवार का स्थान धीरे- धीरे एकांकी परिवार ले रहा है, परिवार का आकार सिकुड़ रहा है और रिश्तेदारी के सम्बन्ध केवल दो या तीन पीढ़ी तक सीमित रह गए हैं। गुजरात के महुआ कस्बे में 1955-57 के बीच 423 परिवारों पर किये गए अध्ययन में आई0 पी0 देसाई (1964) ने पाया कि 50 प्रतिशत परिवार निवासी एवं प्रकार्यात्मकता दोनों रूप से एकांकी थे; 74 प्रतिशत परिवार निवास रूप से एकाकी थे किन्तु प्रकार्यात्मक रूप से संयुक्त; 21 प्रतिशत परिवार निवासी, प्रकार्य एवं सम्पत्ति सभी रूप से संयुक्त थे। देसाई ने अपने अध्ययन में पाया कि शहरी परिवार का ढांचा बदल रहा है किन्तु परिवारों में व्यक्तिवाद की भावना नहीं बढ़ी है।

कपाडिया (1959) ने 1955 में गुजरात के 1162 परिवारों के अध्ययन में यह पाया कि ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक दो एकांकी परिवारों के पीछे तीन संयुक्त परिवार थे। नगरीय क्षेत्रों में एकाकी परिवार संयुक्त परिवारों से 10 प्रतिशत अधिक थे। एलीन रास (1967) ने 1957 के 157 हिन्दू परिवारों के अध्ययन में पाया कि 3/5 परिवार एकांकी थे और 2/5 संयुक्त : शहरी भारत में छोटा संयुक्त परिवार पारिवारिक जीवन का सर्वाधिक प्रतिनिधिक रूप है तथा व्यक्ति के दूर के संबंधियों से सम्बन्ध टूट गये हैं।

आर0 के0 मुकर्जी (1973) ने पश्चिम बंगाल में 1960-61 में 4120 परिवारों के अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष दिया कि संयुक्त परिवार का एकांकी परिवार द्वारा प्रतिस्थापन एक अनिवार्य प्रक्रिया है।

गाडगिल (1952), घूरिये (1961), हैरल्ड गूल्ड (1963) एवं एम0 एन0 श्रीनिवास (1977), इत्यादि के अध्ययन यह प्रमाणित करते हैं कि नगरीय परिवारों में जाति व्यवस्था का स्वरूप जीवंत बना हुआ है। व्यावसायिक गतिशीलता के कुछ उदाहरण अवश्य दिखते हैं। किन्तु अभी भी ब्राह्मण, बनिया, धोबी, डोम, मुसहर, मोची, नाई जैसी सैकड़ों जातियाँ परम्परागत पेशों के माध्यम से जीवन यापन कर रही हैं। इसके अतिरिक्त नगरीय एवं शिक्षित परिवारों में जातिवाद की भावना तथा ग्रामीण पूर्वाग्रह ग्रामीण तथा अनपढ़ परिवारों की अपेक्षा कम की बजाय अधिक ही परिलक्षित होता है।

व्यावसायिक गतिशीलता के परिणामस्वरूप अन्तःपारिवारिक एवं अन्तर पारिवारिक सम्बन्धों में महत्वपूर्ण परिवर्तन यह है कि पति प्रधान परिवार का स्थान समानतावादी परिवार ले रहा है जिसमें निर्णय प्रक्रिया में पत्नियों की भी भागीदारी महत्वपूर्ण मानी जाने लगी है। माता-पिता भी बच्चों पर अपना अधिकार नहीं थोपते और न ही बच्चे आँख मूदकरि अपने माता-पिता के आदेशों का पालन करते हुए दिखते हैं, किन्तु इसका आशय यह नहीं कि बच्चे अपने बड़ों का आदर नहीं करते, परिवार के सदस्यों के प्रति अपने कर्तव्यों पर ध्यान नहीं देते या पत्नियाँ अपने पतियों के अधिकारों को सदैव चुनौती देतीं हैं। स्त्रियों की अर्जनशक्ति ने उन्हें पुरुषों पर निर्भरता से कुछ सीमा तक मुक्त किया है। इसके अतिरिक्त परिवार उत्पादन इकाई से उपभोग इकाई में परिवर्तित हो रहा है। इस प्रकार व्यावसायिक गतिशीलता एवं परिवारिक अस्तिरता के सहसम्बन्ध बहुआयामी एवं विषमरूपीय हैं। आम राय यह है कि परिवार का अस्तित्व समाप्त नहीं होगा तथा अस्थिरता के बावजूद परिवार भविष्य में भी सामाजिक संरचना की एक महत्वपूर्ण इकाई बना रहेगा।

2.6 सारांश

इस इकाई में आपने व्यावसायिक गतिशीलता के अभिप्राय को समझा। व्यावसायिक गतिशीलता के विविध स्वरूपों का अध्ययन किया। व्यावसायिक गतिशीलता के कारकों एंव परिणामों का अवलोकन किया। पारिवारिक अस्थिरता की अवधारणा का स्पष्टीकरण किया। आखिर में आपने व्यावसायिक गतिशीलता एवं नगरीकरण का पारिवारिक स्थिरता पर पड़ने वाले प्रभाव के विविध स्वरूपों को परखा। इस इकाई के सम्पूर्ण अध्ययन से भारतीय परिप्रेक्ष्य में व्यावसायिक गतिशीलता एवं परिवारिक अस्थिरता के विविध आयाम आपको स्पष्ट हुआ होगा।

2.7 बोध प्रश्न

1. व्यावसायिक गतिशीलता से आपका क्या आशय है ? यह सामाजिक गतिशीलता से किय भाँति सम्बन्धित है?
2. व्यावसायिक गतिशीलता के विविध स्वरूपों की विवेचना कीजिए।
3. व्यावसायिक गतिशीलता के कारण एवं परिणाम बताइए।
4. पारिवारिक अस्थिरता क्या है? पारिवारिक अस्थिरता का उदाहरण दीजिए।
5. भारत में नगरीकरण, व्यावसायिक गतिशीलता एवं पारिवारिक अस्थिरता के स्वरूपों की विवेचना कीजिए।

2.8 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

1. व्यावसायिक गतिशीलता एक -

(अ) अन्तरपीढ़ीगत प्रक्रिया है।

(ब) अन्तरापीढ़ीगत प्रक्रिया है।

(स) समस्तरीय गतिशीलता का प्ररूप है।

विषय स्तरीय गतिशीलता का प्ररुप है।

उपर्युक्त में से कौन सा कथन सही है?

(अ) अ तथा स (ब) ब तथा द

(स) अ ब एवं द (द) उपर्युक्त सभी

2. व्यावसायिक गतिशीलता से अर्जित प्रस्थिति का महत्व -

(अ) बढ़ा है (ब) घटा है

(स) परिवर्तित नहीं हुआ है। (द) भविष्य में घटेगा

3. किसके अध्ययन से यग निष्कर्ष प्रतिपादित होता है कि व्यावसायिक गतिशीलता से व्यक्तिवाद की भावना नहीं बढ़ी है?

(अ) एलीन रास (ब) आई0 पी0 देसाई

(स) एम0 एन0 श्रीनिवास (द) आर0 के0 मुकर्जी

प्रश्नोत्तर

(1) द (2) अ (3) ब

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

Gore, M. S. (1968) Urbanization and Family Change, Popular Prakashsn, Bombay.

Lipset, S.M. & Bendix, R. (1959) Social Mobility in Industrial Society, University of California Press, Berkeley.

Ross, Aleen D. (1967) The HindiFamily in its urban Setting, University of Toronto Press, Toronto.

Sorokin, Pitrim A (1927) Social Mobility, Harper & Co. New York.

Srinivas, M.N. (1977) Social Change in Modern India, Orient Longman Ltd., New Delhi.

Turner, Roy (ed) 1962) India's Urban Future, Berkeley and Los Angeles, University of California Press.

इकाई -3 : आवास की समस्या एवं मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्तता

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 भारतीय नगरों की आवास की समस्या

3.3 मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्तता

3.4 राष्ट्रीय आवास नीति एवं विकास कार्यक्रम

3.5 सारांश

3.6 बोध प्रश्न

3.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप-

- भारतीय नगरों के आवास की समस्या का विश्लेषण कर सकेंगे।
- नगरीय परिवारों, विशेषकर मलिन बस्तियों में मौलिक आवश्यकताओं के अभाव की विवेचना कर सकेंगे।
- राष्ट्रीय आवास नीति एवं नगरीय निंर्धनों हेतु क्रियान्वित विकास कार्यक्रमों से अवगत होंगे।

3.1 प्रस्तावना

नगरों में आवासहीनता एवं गंदी बस्तियाँ एक महत्वपूर्ण समस्या है। नगरीय निर्धनों द्वारा मलिन बस्तियों में पारिवारिक जीवन का एक बड़ा भाग आवासीय इकाई के बाहर बिताया जाता है। नगरीय मलिन बस्तियों में जनजीवन से जुड़ी मौलिक सुविधाओं - जल आपूर्ति, जल निकास, विद्युत आपूर्ति, सड़क एवं परिवहन के संसाधन, इत्यादि का अभाव दिखाई पड़ता है। यह स्थिति न सिर्फ नगरीय जनजीवन को दूभर बनाती है बल्कि इसके कई अन्य नकारात्मक सामाजिक परिणाम उत्पन्न होते हैं, जैसे आवास की कमी बच्चों को सड़क पर समय बीताने के लिए बाध्य करती है,उन पर नियंत्रण कायम रखना सम्भव नहीं हो पाता, महिलाओं के निजी जीवन की गोपनीयता भंग होती है, इत्यादि। इस इकाई में नगरीय परिप्रेक्ष्य में आवास एवं अन्य मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्तता से जुड़ी समस्याओं का विश्लेषण किया गया है।

3.2 भारतीय नगरों में आवास की समस्या

भारत में विविध समाजशास्त्रियों - वी0 के0 आर0 पी0 राव, एन0 के0 बोस, एम0 एम0 टाकुर, आर0 टर्नर, एम0 ए0 गोरे, इत्यादि द्वारा समय समय पर किये गये अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष यह प्रदर्शित करते हैं कि भारतीय नगरों में आवासीय दशायें संतोषजनक नहीं हैं। यू0 एन0 आई0 की रिपोर्ट (1988) में यह बताया गया कि महानगरों में एक चौथाई और आधे के बीच व्यक्ति कामचलाऊ आश्रयों एवं गंदी बस्तियों में रहते हैं। देश के कुल परिवारों में कम से कम 15 प्रतिशत आवास मे वंचित हैं, 60 प्रतिशत से अधिक घरों में रोशनी एवं हवा की सुविधाय अपर्याप्त हैं तथा 80 प्रतिशत ग्रामीण एवं 30 प्रतिशत शहरी आबादी कच्चे मकानों में रहती है। कालान्तर में 1998 के सर्वेक्षण यह दर्शाते हैं कि उक्त अवधि में भारतीय नगरों में गंदी बस्तियों की आबादी लगभग 50-55 मिलियन थी। इसमें दिल्ली की 44 प्रतिशत, मुम्बई की 45 प्रतिशत, कलकता की 43 प्रतिशत एंव चेन्नई की 39 प्रतिशत आबादी झोपड़पट्टी एवं चाल में रहती है। महानगरों के अतिरिक्त प्रथम श्रेणी के अन्य नगरों - बंगलोर, हैदराबाद, अहमदाबाद, पूणे, नागपुर, कानपुर, जयपुर की भी बड़ी आबादी मलिन बस्तियों में निवास करती हैं।

लाभ उन्मुख अर्थव्यवस्था में निजी भवन निर्माताओं एवं बस्तियों का निर्माण करने वाले पूँजीपतियों, ठेकेदारों को निर्धन एवं निम्न मध्यम वर्ग के लिए शहरों में मकान बनाने से बहुत कम लाभ मिलता है। अतः वे इनकी बजाय धनाड्य एवं उच्च मध्यम वर्ग की आवासीय आवश्यकताओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। वर्तमान में नगर की लगभग आधी आबादी के पास स्तरहीन आवास हैं अथवा वे अपनी आय का 20 प्रतिशत आवासीय किरायों पर व्यय करते हैं। हाल के दशक में कुछ राज्यों में आवासन मंडल, नगर विकास प्राधिकरण इत्यादि ने जीवन बीमा निगम, हुडको, अन्य एजेन्सियों की सक्रिय वित्तीय सहायता के द्वारा नगर की आवासीय समस्या का समाधान करने का प्रयास किया है। वे मकान की पूरी कीमत मासिक किश्तों में लेते हैं और 9 प्रतिशत से 18 प्रतिशत तक ब्याज लेते हैं। इन सरकारी प्रयासों में इंजीनियर, ठेकेदार एवं सरकारी अधिकारियों की मिलीभगत से घटिया माल लगाने, निर्धारित विनिर्देशों का उल्लंघन करने एवं अत्यधिक लाभ कमाने की प्रवृत्ति खरीददारों को अल्प अवधि में ही छत टपकने, चूना झड़ने, दीवारों में दरार पड़ने, बिजली के उपकरण खराब होने जैसी समस्याओं का एहसास करा देती है।

भारत में जनगणना रिपोर्ट से प्राप्त आंकड़े यह दर्शाते हैं कि 1961 से 2001 के बीच भारत के गाँवों की अपेक्षा नगरों में अधिक घर बनाये गये हैं। 1961-71 के दशक में नगरों में घर बनाने की आवृत्ति में 31 प्रतिशत वृद्धि हुई जबकि गाँवों में 14 प्रतिशत ही रही। 1971-81 के दशक में नगरों में 48 प्रतिशत वृद्धि हुई जबकि गाँवों में यह वृद्धि 18 प्रतिशत थी। 1981-91 के दशक में 43 प्रतिशत वृद्धि नगरों में हुई जबकि गाँवों में महज 25 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस वृद्धि के परिणाम स्वरूप नगर में आवास की कमी के प्रतिशत में कुछ गिरावट आई है। मसलन 1961 में प्रति 1000 परिवारों पर 899 घर थे, जो 1971, 1981 एवं 1991 में बढ़कर क्रमशः 963, 947 एवं 980 हो गए। घरों में वृद्धि के बावजूद आवास की समस्या में वृद्धि का कारण यह है कि इन अवधियों में नगर में **प्रवासी** व्यक्तियों की आबादी भी उत्तरोत्तर बढ़ती रही।

नगर में 1961 से लेकर अब तक की अवधि में एक कमरे में आवास में रहने वालों का प्रतिशत घटा है एवं 2 अथवा 2 से अधिक कमरों के बाशिंदों का प्रतिशत बढ़ा है जिसे तालिका 1 द्वारा देखा जा सकता है।

तालिका 1 : नगरीय आवास में कमरों की संख्या में प्रतिशत वितरण

कमरों की संख्या	1961	1971	1981	1991
1 कमरा	53.05	50.01	45.80	39.55
2 कमरा	24.66	26.93	27.84	30.37
3 कमरा	10.29	11.42	12.21	14.82
4 कमरा	5.35	5.71	6.33	7.77
5 कमरा एवं अधिक	5.76	5.64	5.70	6.97

स्रोत : विजय नुत्री (2000:305)

नगर में आवास निर्माण के विविध सरकारी एवं गैरसरकारी प्रयासों के परिणाम स्वरूप 1961 से लेकर अब तक की अवधि में गृहस्वामियों की संख्या बढ़ी है तथा किरायेदारों की संख्या घटी है, जिसे तालिका 2 से अवलोकित किया जा सकता है।

तालिका 2 : प्रति 1000 नगरीय परिवारों के गृहस्वामीत्व का स्वरूप

स्वरूप	1961	1971	1981	1991
गृहस्वामी	462	471	535	631
किरायादार	538	529	465	341

किन्तु दूसरी ओर मलिन बस्तियों की आबादी में उत्तरोत्तर वृद्धि भी हुई है। मसलन 1981 में मलिन बस्तियों की आबादी 27.90 मिलियन थी जो 1991 में बढ़कर 51.23 मिलियन हो गई। इन तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि नगरों में आवास निर्माण की प्रक्रिया का लाभ प्रायः उच्च एवं मध्यम आय वाले समूहों को मिला है। नगरीय निर्धनों में गृहस्वामियों की अपेक्षा किरायादार एवं आवास विहीनता का स्वरूप अधिक है। विभिन्न राज्यों एवं केन्द्र प्रदेशों के नगरों में आवास की कमी के प्रतिशत सम्बन्धी आंकड़े तालिका 3 से देखे जा सकते हैं।

तालिका 3 : 1991 में राज्यवार नगरों में आवास की कमी का प्रतिशत

10 प्रतिशत से कम	:	गोवा, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, सिक्किम, पश्चिम बंगाल, लक्ष्यद्वीप
10-20 प्रतिशत	:	बिहार, केरल, मेघालय, मिजोरम, पंजाब, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, अंडमान एवं निकोबार, चंडीगढ़, दिल्ली।
20 - 30 प्रतिशत	:	आंध्र प्रदेश, आसाम, नागालैण्ड, दामन एवं दीव
30 - 40 प्रतिशत	:	अरूणाचल प्रदेश, उड़ीसा त्रिपुरा, पांडीचेरी
40 -50 प्रतिशत	:	मणिपुर, दादरा एवं नागर हवेली

स्रोत : विजय मुन्नी (2000 : 313)

3.3 मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्तता

नगरों में जहाँ एक ओर आवास की कमी एक प्रमुख समस्या है वहीं दूसरी ओर नगर की मलिन बस्तियों में उपलब्ध आवासों का भौतिक स्वर अत्यन्त दयनीय है तथा उनमें मौलिक आवश्यकता से जुड़ी सुविधाओं का पर्याप्त अभाव है।

पेय जल आपूर्ति : - नगरीय आवासों में पेय जलकी कमी सबसे प्रमुख समस्या है। चेन्नई, हैदराबाद, राजकोट, अजमेर, उदयपुर जैसे अनेक शहरों में नगरपालिका प्रतिदिन एक घंटे से भी कम समय तक जल आपूर्ति करती है। कई छोटे कस्बों में पाइप लाइन द्वारा जल आपूर्ति होती ही नहीं और वे ट्यूबवेल आदि पर निर्भर हैं। महानगरों एवं सुव्यवस्थित नगरों में भी जल आपूर्ति का अभाव है। 1991 में सर्वेक्षण रिपोर्ट यह दर्शाते हैं कि 17 राज्यों में 80 प्रतिशत नगरीय आवासों में स्वच्छ पेयजल आपूर्ति होती है, 10 राज्यों में केवल 50 से 80 प्रतिशत घरों में ही जल आपूर्ति होती हैं जबकि केरल, मिजोरम, नागालैण्ड एवं लक्षद्वीप के 50 प्रतिशत से भी कम नगरीय आवासों में जलापूर्ति होती है।

विद्युत की सुविधा :- भारत में नगरीय आवासों में विद्युत कनेक्शन 1981 में 61.60 प्रतिशत था जो 1991 तक बढ़कर 75.93 तक हो गया है। राज्यवार आंकड़े बताते हैं कि हिमाचल प्रदेश (96.24), पंजाब (94.60) सिक्किम (92.37), लक्षद्वीप (99.11) में विद्युत कनेक्शन सर्वाधिक है जबकि असम (63.21), बिहार (58.77), केरल (67.65), उड़ीसा (62.11) एवं उत्तर प्रदेश (67.76) में सर्वाधिक कम है तथा अन्य राज्यों में 70 प्रतिशत से अधिक आवासों में विद्युत कनेक्शन है। विद्युत कनेक्शन में वृद्धि के साथ-साथ दूसरा पहलू यह भी है कि अधिकांश राज्य अपनी आवश्यकतानुसार बिजली उत्पादन करने की स्थिति में नहीं है। विद्युत आपूर्ति की कमी के कारण परिणाम स्वरूप नगरीय उद्योग धंधे ही प्रभावि नहीं बल्कि सामान्य जनजीवन भी कष्टकर हो गया है।

शौचालय की उपलब्धि :- नगरीय आवासों में शौचालय 1981 मे 57.44 प्रतिशत से बढ़कर 1991 में 63.58 प्रतिशत'हो गया है। राज्यवार वितरण के आंकड़े दर्शाते हैं कि केवल 4 राज्यों - असम, मेघालय, मिजोरम एवं त्रिपुरा में 80 प्रतिशत से अधिक आवासों में शौचालय की सुविधा है जबकि आंध्र प्रदेश, बिहार, गोआ, हिमालय प्रदेश, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु जैसे राज्यों में 60 प्रतिशत से कम है तथा उड़ीसा में महज 49.27 आवासों में शौचालय की सुविधा है। शौचालय के अभाव में नगर पर्यावरण प्रदूषित होता है।

1991 की जनगणना के आंकड़े यह दर्शाते हैं कि भारत के नगरों में 9.62 प्रतिशत अनुसूचित जातियों, 15.70 % अनुसूचित जनजातियों एवं 4.46% अन्य जातियों के आवासों में पानी, बिजली एवं शौचालय तीनों में कोई भी सुविधा नहीं प्राप्त है। उड़ीसा में यह प्रतिशथ सर्वाधिक क्रमशः 25.19 32.76 एवं 10.25 है। भारतीय स्तर पर 28.08% अनुसूचित जातियों

25.64% अनुसूचित जनजातियों एवं 54.27% अन्य आवासों में उपरोक्त तीनों सुविधायें प्राप्त हैं।

परिवहन एवं यातायात सुविधा :- नगरों में परिवहन एवं यातायात के सार्वजनिक साधनों का अभाव है। महानगरों में कार्यरत व्यक्तियों की कम आय उन्हें दूरस्थ सस्ते मकानों वाले क्षेत्रों में रहने के लिए बाध्य करती है जिसके परिणामस्वरूप उन्हें नित्य लम्बी यात्रा करने की मजबूरी है। जन परिवहन की सार्वजनिक सुविधाओं - रेल, बस, मेट्रो सेवा की अपर्याप्तता के कारण न सिर्फ कार्यशील आबादी बल्कि महिला, वृद्ध एवं बालकों को भी भीड़ की परेशानी झेलनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त नगरों में बढ़ती हुई मोटर साइकिल, स्कूटर, कार, आटोरिक्शा की संख्या ने नगरीय यातायात को बाधित करने, ट्रैफिक जाम करने एवं प्रदूषण बढ़ाने जैसी समस्याओं में वृद्धि की है।

जल निकास क सुविधा :- नगरीय आवासों एवं मलिन बस्तियों में जल आपूर्ति के अभाव के अतिरिक्त जल निकासी की भी पर्याप्त व्यवस्था नहीं है। परिणामतः मलमूत्र एवं अन्य अवशेष खुले नालों के जरिए पास की नदियों, नहरों में बहा दी जाती है। कई शहर अपने औद्योगिक अवशिष्ट एवं गंदे पानी का 40 से 60 प्रतिशत भाग असंशोधित रूप से अपने पास की नदियों में बहाते हैं। इसके अतिरिक्त शहरी उद्योग अपनी चिमनियों से निकलते धुँए एवं जहरीली गैसों से वातावरण को प्रदूषित करते रहते हैं। इस प्रकार नगरों एवं कस्बों के वर्तमान स्वरूप ने पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ाया है।

3.4 राष्ट्रीय आवास नीति एवं विकास कार्यक्रम

1998 में भारत सरकार द्वारा एक समन्वित आवास एवं पर्यावास नीति बनाई गई जिसके अन्तर्गत नगरों में आश्रय उपलब्ध कराने के लिए स्थायी विकास, बुनियादी ढांचा तथा आवास निर्माण क्षेत्र में निजी हिस्सेदारी आदि मुद्दों पर बल दिया गया है। इस नीति के अन्तर्गत हर वर्ष 20 लाख मकानों के निर्माण का लक्ष्य रखा गया है जिसमें 7 लाख शहरी क्षेत्रों तथा शेष 13 लाख ग्रामीण क्षेत्र में बनाये जाने हैं। इस लक्ष्य में निम्न आय वर्गों, अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों की जरूरतों पर विशेष ध्यान देने का प्रस्ताव है। शहरी क्षेत्रों में ऋण आधारित कार्यक्रम के तहत हुडको, सहकारी क्षेत्र, राष्ट्रीय आवास बैंक, व्यावसायिक बैंक तथा आवासीय वित्त संस्थाओं के माध्यम से प्रतिवर्ष आवास निर्माण किये जा रहे हैं। उदाहरणार्थ हुडको ने 31 दिसंबर 2004 तक आपदा प्रभावित क्षेत्रों में 34 अरब 35 करोड़ की लागत से 40 लाख आवासों का निर्माण कराया और 20 अरब 96 करोड़ की वित्तीय सहायता प्रदान की।

झुग्गी बस्तियों के विकास का राष्ट्रीय कार्यक्रम (National Slum Development

Programme) अगस्त 1996 में शुरू किया गया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य शहरी क्षेत्र की मलिन बस्तियों में जल आपूर्ति, बरसाती पानी के निकास के लिए नालियाँ, सामुदायिक स्नानघर, संकरे रास्ते को चौड़ा करना, सामुदायिक शौचालयों, सीवर, सड़क की बत्तियों, इत्यादि की सुविधाएं उपलब्ध कराकर इन बस्तियों का जीवन स्तर बेहतर बनाना है। इस कार्यक्रम में बसेरों के स्तर में सुधार, नये मकानों के निर्माण जैसे लक्ष्य शामिल हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत शुरू से लेकर 31 मार्च 2005 तक केन्द्र सरकार द्वारा जारी 3089.63 करोड़ रुपये की कुल निधि में से 2130.09 करोड़ रुपये खर्च किए गए तथा 4.12 करोड़ मलिन बस्ती के निवासियों को लाभ पहुँचा।

केन्द्र सरकार द्वारा 2 दिसंबर 2001 को बाल्मीकि अंबेडकर आवास योजना शुरू की गई हे जिसका उद्देश्य झुग्गी झोपड़ी में रहने वाले उन शहरी लोगों की स्थिति में सुधार करना है जो गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं तथा जिनके पास उपयुक्त आश्रय स्थल नहीं है। इसके अलावा एक नई उपयोजना 'निर्मल भारत अभियान' के जरिये ऐसी बस्तियों में सामुदायिक शौचालयों का निर्माण करना भी इस योजना का एक प्रमुख उद्देश्य है। इस योजना में केन्द्र सरकार द्वारा 50 प्रतिशत सब्सिडी दी जाती है। तथा बाकी 50 प्रतिशत हिस्सा राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। इस योजना की शुरूआत से लेकर 2005 तक 3,569,91 आवास इकाइयों तथा 64,259 शौचालयों के निर्माण के लिए कुल 795.63 करोड़ रुपये की केन्द्रीय सब्सिडी जारी की जा चुकी है। 2005-06 के लिए 1 लाख आवास इकाइयों के निर्माण हेतु 249 करोड़ रुपये के बजट का प्रावधान है।

इन योजनाओं के अतिरिक्त अन्य कई सरकारी प्रयास के जरिये नगरीय आवास की समस्या को सुलझाने की कोशिश जारी है, जैसे हुडको की आदर्श झुग्गी बस्ती के विकास का कार्यक्रम, पूर्वोत्तर राज्यों तथा सिक्किम के लिए व्यय की समय बाध्यता से मुक्त केन्द्रीय संसाधन पूल की स्थापना, भारत सरकार द्वारा 2005 में सम्पूर्ण शहरी आवास, ढांचागत एवं निर्माण विकास परियोजनाओं में सौ प्रतिशत प्रत्यय विदेशी निवेश को मंजूरी देना, इत्यादि। सरकार ने 'सभी के लिए आवास' योजना को प्राथमिकता का विषय माना है। किन्तु नगरीय आबादी में हो रही उत्तरोत्तर तीव्र वृद्धि के परिप्रेक्ष्य में आवास एवं मौलिक आवश्यकताओं की आपूर्ति को और अधिक बढ़ाने की आवश्यकता है।

3.5 सारांश

इस इकाई में आपने भारतीय नगरों में आवासीय समस्या की गहनता का अध्ययन किया। इसके उपरान्त नगरीय आवासों की दयनीय भौतिक दशाओं एवं उनमें मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्त सुविधाओं का अवलोकन किया। इकाई के अंत में आपने भारत की राष्ट्रीय आवास नीति एवं विकास कार्यक्रमों के जरिए किए जाने वाले प्रयासों तथा उनकी उपलब्धियों का आकलन किया। इस इकाई के सम्पूर्ण अध्ययन के समसामयिक भारत के नगरों में आवास एवं मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्तता का स्वरूप आपको स्पष्ट हुआ होगा।

3.6 बोध प्रश्न

1. भारतीयों नगरों में आवास की समस्या की विवेचना कीजिए।

2. नगरीय जनजीवन में मौलिक आवश्यकताओं की अपर्याप्तता पर प्रकाश डालिए।

3. भारत की राष्ट्रीय आवास नीति एवं विकास कार्यक्रम का मूल्यांकन कीजिए।

3.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

1. भारत के महानगरों में मलिन बस्ती की आबादी का प्रतिशत कितना है?

   (अ) 40 - 45 प्रतिशत (ब) 45 से 50 प्रतिशत

   (स) 35 से 40 प्रतिशत (द) 50 से 55 प्रतिशत

2. निम्नलिखित में से किस राज्य में आवास की कमी का प्रतिशत सबसे अधिक है?

   (अ) बिहार (ब) आंध्रप्रदश (स) पश्चिम बंगाल (द) उड़ीसा

3. बाल्मीकि अम्बेडकर आवास योजना कब शुरू की गई?

   (अ) 1996 (ब) 1998 (स) 2001 (द) 2004

प्रश्नों के उत्तर -

(1) अ (2) द (3) स

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

Ali, Sabir (1990) Slums within Slum, Vikas Publishing House, New Delhi.

Gilbert, Alan (1984) "The Housing of the Urban Poor" in Gagler and Gilbert (ed) Cities, Poverty and Development : Urbanization in the Third World, Oxford University Press, London.

Govt. of India (2006) India, Information and Broadcasting Minsitry, New Delhi.

Roy, P. and Das Gupta, S. (ed) (1995) Urbanization and Slums, Har Anand Publications, New Delhi.

Vijayanunni, M. (2000), "Housing and Amenities in Urban India : An Inter State Analysis". in Kundu, Amitabh (ed) InequalityMobility and Urbanisation, ICSSR and Manak, New Delhi.

इकाई -4 : नगरीय निर्धनता, बेरोजगारी तथा प्रवजन

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 भारत में नगरीय निर्धनता

4.3 निर्धनता एव बेरोजगारी

4.4 प्रवजन, नगरीकरण एवं निर्धनता

4.5 सारांश

4.6 बोध प्रश्न

4.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप-

- नगरीय निर्धनता के स्वरूप से अवगत हो सकेंगे।
- नगरीकरण एवं बेरोजगारी की समस्या का विश्लेषण कर सकेंगे।
- प्रवजन के प्रतिमान एवं नगरीय वृद्धि के प्रारूप का विश्लेषण कर सकेंगे।
- नगरीय निर्धनता, बेरोजगारी एवं प्रवजन के सहसम्बन्ध की विवेचना कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

संयुक्त राष्ट्र द्वारा '2006/7 में विश्व के नगरों की स्थिति' की रिपोर्ट में यह तथ्य उजागर किया गया है कि मानव इतिहास में पहली बार 2007 में विश्व में नगरों की आबादी गांवों की अपेक्षा बढ़ जायेगी तथा उसमें से लगभग एक बिलियन से अधिक व्यक्ति (नगरीय जनसंख्या) के प्रति तीन में से एक व्यक्ति) मलिन बस्तियों में रहेंगे। इस रिपोर्ट में यह साक्ष्य दिया गया कि एक ही नगर में दो नगरीय स्वरूप परिलक्षित होते हैं : एक तरफ वह आबादी है जिसे नगरीय जीवन के समस्त लाभ मिले हुए हैं तथा दूसरी तरफ नगरीय निर्धनों की आबादी है जो अपने ग्रामीण सम्बन्धियों की अपेक्षा अधिक दयनीय नगरीय मलिन बस्तियों में रहते हैं। रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि आगामी 20 वर्षों में प्रतिवर्ष 27 मिलियन आबादी के नगरीय प्रवजन के परिणामस्वरूप नगरीय निर्धनता का वैश्विक स्वरूप विकराल बन जायेगा जिसमें विकासशील देशों को अपने 95 प्रतिशत स्रोत समस्त

नगरीय वृद्धि में खपाने की आवश्यकता पड़ेगी। इस व्यापक परिप्रेक्ष्य में वर्तमान इकाई के अन्तर्गत भारत में नगरीय निर्धनता, बेरोजगारी तथा प्रवजन की प्रवृति, प्रकृति एवं समसामयिक समस्या का विश्लेषण किया गया है।

4.2 भारत में नगरीय निर्धनता

निर्धनता वह स्थिति है जो शारीरिक आवश्कताओं की पूर्ति करने अर्थात् जीवित, सुरक्षित एवं निश्चिंत रहने की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ है। इस दृष्टिकोण से जीवित रहने के लिए न्यूनतम आय का निर्धारित रेखा से निम्न आय प्राप्त होने की स्थिति को निर्धनता कहा जाता है।भारत में योजना आयोग के प्रभाग द्वारा विविध अवधियों में प्रचलित मूल्यों के परिवर्तन के अनुरूप प्रति व्यक्ति आय की उपलब्धि के आधार पर निर्धनता की रेखा का निर्धारण किया जाता रहा है। 1961 के प्रचलित मूल्यों के अनुरूप ग्रामीण क्षेत्रों में 20 रुपये एवं शहरी क्षेत्रों में 25 रुपये प्रति व्यक्ति मासिक आय से कम प्राप्त व्यक्तियों को निर्धनता रेखा से नीचे माना गया, 1981 के प्रचलित मूल्यों के अनुरूप ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के लिए यह राशि क्रमशः 107 एवं 122 रुपये निर्धारित की गई तथा 1998-99 के प्रचलित मूल्यों के अनुरूप 218.75 रुपये एवं 247.80 रुपये से कम आय वाले को क्रमशः ग्रामीण निर्धन एवं नगरीय निर्धन माना गया है।

भारत में ग्रामीण एवं नगरीय निर्धनता के अनुपात एवं विविध अवधियों में निर्धनों की संख्या को तालिका-1 के माध्यम से देखा जा सकता है।

तालिका 1 : भारत में निर्धनता का अनुपात

वर्ष	निर्धनता का अनुपात (प्रतिशत में)			निर्धनों की संख्या (मिलियन में)		
	ग्रामीण	नगरीय	समन्वित	ग्रामीण	नगरीय	समन्वित
1957 - 58	52.2	47.8	53.9	186.8	33.8	220.6
1973 - 74	56.4	49.0	54.9	361.3	60.0	321.3
1977 - 78	53.1	45.2	51.3	264.3	64.6	328.9
1983 - 84	45.7	40.8	44.5	252.0	70.9	322.9
1987 - 88	39.1	38.8	38.9	231.9	75.2	307.1
1993 - 94	37.8	32.4	36.0	244.0	76.3	320.3
1999 - 2000	27.1	23.6	26.1	193.2	67.1	260.3

स्रोत - मेहता एवं शाह (2004 : 149)

स्वतंत्रता के उपरांत से ही भारत के नगरों में विकसित होने वाली मलिन बस्तियों तथा उनमें रहने वाले निर्धनों की सामाजिक - आर्थिक समस्याओं से निबटने के प्रयास होते रहे हैं। इस प्रतिबद्धता के परिणाम स्वरूप नगरीय गरीबी का स्तर, जो 1973-74 में 49 प्रतिशत था, क्रमशः घटते हुए 1999-2000 में 23.6 प्रतिशत तक पहुँच गया। नगरीय गरीबों की संख्या 76.3 लाख (1993-

94) से घटकर 67 1 लाख (1999-2000) हो गई। 2001 की जनगणना के अनुसार देश की शहरी जनसंख्या का लगभग 23 प्रतिशत रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहा है। ये गरीब बड़े शहरों की मलिन बस्तियों में निवास कर रहे हैं जहाँ अधिकतर मूलभूत सेवाएँ या तो उपलब्ध नहीं है या उपलब्धता का स्तर लगभग नगण्य ही है। देश के शहरी क्षेत्रों के विकास को गति प्रदान करने वाला नगरीय गरीब मूलभूत नागरिक सुनिधाओं से वंचित जीवनयापन करने को विवश है। उसकी गरीबी मात्र आर्थिक विपन्नता से ही सबद्ध ''ीं है। उसके पास समुचित आवास, पीने के पानी, बच्चों के शिक्षा की सुविधा तथा पूरे परिवार के f .ए स्वास्थ्य सुविधाएं प्रायः दुर्लभ हैं। कुपोषण, भुखमरी, बीमारी, प्रदूषण, गंदगी से जूझता भारतीय शहरों का एक बड़ा वर्ग सामाजिक आर्थिक विपन्नताओं के झेलता हुआ शहर के विकास में अपना योगदान करता जा रहा है।

नगरीय निर्धनता की स्थिति वस्तुतः नगरीकरण की उस प्रक्रिया की परिणति है जिसमें नगरीय विकास के साथ-साथ स्रोतों के वितरण में असमानतायें परिलक्षित होती हैं। स्रोतों के असमान वितरण के परिणामस्वरूप एक ओर जहाँ नगरीय आबादी के निम्नतम 20 प्रतिशत को कुल आय का महज 7 प्रनिशत प्राप्त होता है, वहीं दूसरी ओर उच्चतम 20 प्रतिशत आबादी को लगभग 50 प्रतिशत हिस्सा प्राप्त होता है। जब तक स्रोतों के वितरण की असमानता को कम नहीं किया जाता तब तक निर्धनता की स्थिति बनी रहेगी।

4.3 निर्धनता एंव बेरोजगारी

निर्धनता की स्थिति बेरोजगारी से सम्बद्ध है। बेरोजगारी काम न मिलने की एक दशा है, जहाँ एक समर्थ व्यक्ति काम चाहते हुए भी काम नहीं पाता। कार्ल प्रिब्राम ने बेरोजगारी की परिभाषा देते हुए बताया कि बेरोजगारी श्रम बाजार की वह दशा है जिसमें श्रम शक्ति की पूर्ति कार्य करने के स्थानों की संख्या से अधिक होती है।

बेरोजगारी एक आर्थिक घटना ही नहीं बल्कि एवं सामाजिक तथ्य है। एक बेरोजगारी व्यक्ति वह है जिसमें कमाने की अन्तर्निहित और इच्छा दोनों है, फिर भी उसे वैतनिक काम नहीं मिल पाता। इस दृष्टि से बेरोजगारी के तीन तत्व हैं : (अ) व्यक्ति में काम करने की क्षमता का होना, (ब) काम करने की इच्छा का होना, एवं (स) व्यक्ति द्वारा काम ढूँढने का प्रयत्न किया जाना। बेरोजगारी की दशाओं के निर्धारण में जहाँ दाण्डेकर एवं रथ ने कार्य के अभाव एवं आय को महत्वपूर्ण आधार माना वहीं राजकृष्ण ने समय, आय, कार्य की इच्छा एवं उत्पादकता को बेरोजगारी के महत्वपूर्ण आधार के रूप में स्वीकार किया।

अर्थशास्त्रियों की दृष्टि में बेरोजगारी के उत्तरदायित्व कारक हैं: पूँजी का अभाव, निवेश की कमी, व्यापार चक्र में मंदी, औद्योगिक अव्यवस्था, मशीन आधारित प्रौद्योगिकी, अति उत्पादन, बचत की इच्छा, मांग एवं पूर्ति में असंतुलन, एकाधिकारी उद्योग, आर्थिक मंदी, मौसमी उतार चढ़ाव, क्रय शक्ति में कमी, कृषि एवं औद्योगिक नीति, ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग-धन्धे का पतन, इत्यादि। कुछ विचारकों की धारणा है कि बेरोजगारी के लिए केवल आर्थिक कारकों को उत्तरदायी नहीं माना जा सकता, सामाजिक एवं वैयक्तिक कारक बी बराबर सहायक हैं। बेरोजगारी के सामाजिक कारक हैं: अपमानजनक सामाजिक प्रस्थिति, जनसंख्या की तीव्र वृद्धि, भौगोलिक गतिहीनता, दोषपूर्ण शिक्षा

प्रणाली, दोषपूर्ण सरकारी नीति, इत्यादि। बेरोजगारी के वैयक्तिक कारक हैं : अनुभवहीनता, व्यावसायिक अयोग्यता, बीमारी, असमर्थता इत्यादि।

देश में उच्च बेरोजगारी की दर श्रम की मांग को कम करती है। केन्द्रीय श्रम मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार भारत में शिक्षित बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या 1967 में 27.40 लाख थी जो क्रमशः बढ़ते हुए 1976 में 93.26 लाख· 1980 में 1.62 करोड़; 1986 में 1.80 करोड़; 1992 में 2.30 करोड़; 1997 में 3 करोड़; 2002 में 3.86 करोड़ तथा 2005 तक लगभग 05 करोड़ हो गई है। नगरीय क्षेत्रों में शिक्षित बेरोजगारी का प्रतिशत 33.40 है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में 40.24 प्रतिशत।

नेशनल सैम्पल सर्वे आर्गेनाइजेशन (NSSO) की ओर से जारी 2007 के आंकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के डेढ़ दशक बीतने के बावजूद भारत में पहले दर्जे के 15 बड़े शहरों में बेरोजगारी लगभग 50 प्रतिशत से ऊपर है। शहरी क्षेत्रों में नौकरी मे लगे लोगों की संख्या 498 प्रति हजार ही है। शहरी क्षेत्र में रोजगार प्राप्त पुरुषों की संख्या 76.3 प्रतिशत है जबकि महिलाओं की संख्या 22.7 प्रतिशद है। प्रथम श्रेणी के नगरों में रोजगार प्राप्त पुरुषों एवं महिलाओं का अनुपात क्रमशः 76.2 एवं 19.8 प्रतिशत है। दिल्ली में रोजगार प्राप्त कुल संख्या 44.2 प्रतिशत है, मुम्बई में 54.5 प्रतिशत; लखनऊ में 40 प्रतिशत, कानपुर में 44 प्रतिशत; वाराणसी में 66.7 प्रतिश्त तथा पटना में मात्र 31.3 प्रतिशत है। हरियाणा के अहम शहरों में अपेक्षाकृत अधिक रोजगारपरक आबादी है। मसलन फरीदाबाद में रोजगार प्राप्त लोगों की संख्या 46.4 फीसदी तथा लुधियाना मे 52.8 फीसदी है। वित्त वर्ष 1999-2000 के मुकाबले 2004-05 के दौरान पहले दर्जे के शहरों के अलावा दूसरे एवं तीसरे दर्जे के शहरों में पुरुषों के रोजगार स्तर में एक प्रतिशत की वृद्धि हुई है वहीं महिलाओं के रोजगार स्तर में पहले दर्जे के शहरों में दो प्रतिशत एवं दूसरे तथा तीसरे दर्जे के शहरों में चार प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है।

धार्मिक समूहों में बेरोजगारी पर जारी राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे रिपोर्ट (2007) यह प्रदर्शित करती है कि जहाँ देश के कुल 80 करोड़ हिन्दुओं में लगभग 33 करोड़ (41.2 फीसदी) लोग रोजगार में हैं वहीं 15 करोड़ मुस्लिम जनसंख्या में करीब 5 करोड़ (33.5 फीसदी) व्यक्ति रोजगार से जुड़े हैं। उत्तर प्रदेश की शहरी एवं ग्रामीण आबादी के प्रति एक हजार व्यक्ति में मुस्लिम धर्मावलम्बी रोजगार प्राप्त व्यक्तियों की संख्या 393 एवं 322 है वहीं 386 शहरी हिन्दुओं के पास रोजगार है। शहरों में 37 प्रतिशत हिन्दू एवं 33 प्रतिशत मुसलमान रोजगार में हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर के अभाव के दबावमूलक कारकों एवं शहरों में रोजगार की उपलब्धि के आकर्षमूलक कारकों के परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण जनसंख्या नगरों की ओर प्रवास करती है, जहाँ अल्परोजगार के अवसर उन्हें निर्धनता के दुष्चक्र से बाहर निकालने में अपर्याप्त एवं असमर्थ होते हैं। बेरोजगारी की स्थिति नगरों में पारिवारिक तनाव, निर्धनता में वृद्धि, सामाजिक विघटन, अपराध एवं हिंसा में वृद्धि, मानव प्रतिष्ठा में ह्रास जैसे अनेक नकारात्मक परिणाम उत्पन्न करती है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट (2006) में यह बताया गया कि विश्व में 5 से 24 वर्ष की आयु में युवाओं में बेरोजगारी की संख्या 1995 से 2005 की अवधि में 74 मिलियन से बढ़कर 85 मिलियन हो गई है, बेरोजगारों की संख्या में यह वृद्धि दर 14.8 प्रतिशत है। इन बेरोजारों में 300 मिलियन से अधिक युवा (लगभग 25 प्रतिशत युवा आबादी) गरीबी रेखा से नीचे के समूह का प्रतिनिधित्व करती है जिनकी प्रतिदिन की आय 2 डालर से कम है। भारत में नगरीय एवं ग्रामीण निर्धनता के निवारण एवं युवाओं की उत्पादक क्षमता को सार्थक बनाने हेतु रोजगार के अवसरों के श्रृजन, जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण, औद्योगिक एकाधिकारों की समाप्ति, उद्योग को श्रमपरक बनाने, जैसे तात्कालिक एवं गम्भीर प्रयासों की आवश्यकता है।

4.4 प्रवजन, नगरीकरण एवं निर्धनता

प्रवजन का अभिप्राय है व्यक्ति अथवा व्यक्तियों द्वारा एक निर्धारित अवधि के लिए एक स्थायी/अस्थायी आवास को छोड़कर दूसरे स्थायी अथवा अस्थायी आवास में जाना। प्रवजन के दो स्वरूप हैं : एच्छिक एवं अनैच्छिक। जहाँ एच्छिक प्रवजन के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी इच्छा एवं चुनाव के अनुरूप एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता है, वहीं अनैच्छिक प्रवजन के अन्तर्गत भौगोलिक, सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के दबाव जैसे - युद्ध, दंगे, बाढ़, सूखा, भूकम्प, विवाह, इत्यादि के कारण व्यक्ति को एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवास करना पड़ता है। प्रवजन राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर होता है।

भारत में प्रवजन के चार स्वरूप हैं: ग्रामीण से ग्रामीण, ग्रामीण से नगरीय, नगरीय से नगरीय तथा नगरीय से ग्रामीण। इनमें सबसे अधिक संख्या ग्रामीण से ग्रामीण प्रवजन के स्वरूप की है, जिसमें महिलाओं की संख्या सर्वाधिक है क्योंकि शादी के उपरान्त स्त्री को अपने पति के घर प्रवास करने की परम्परा है। इसके उपरान्त गाँव से नगर में प्रवजन की संख्या है। भारत में 1901 से 2001 तक ग्रामीण से नगरीय प्रवासियों की आनुपातिक वृद्धि के परिणामस्वरूप नगरीकरण की प्रक्रिया का विवरण तालिका 2 में अवलोकित किया जा सकता है।

जहाँ विकसित देशों में शहरीकरण का स्तर 75.5 प्रतिशत है तथा एशिया में 37.5 प्रतिशत है वहाँ भारत में अभी भी 2001 की जनगणना के अनुसार शहरीकरण का स्तर मात्र 27.78 प्रतिशत है। भारत में 1901 से 2001 की अवधि में कुल जनसंख्या 4.30 प्रतिशत बढ़ी जबकि शहरी जनसंख्या 11 गुणा से अधिक बढ़ी। तालिका 2 से यह प्रदर्शित होता है कि जनसंख्या में वार्षिक वृद्धि 1941-51 के दशक में सबसे अधिक रही। शहरों की संख्या लगभग दो गुना हो गई लेकिन प्रथम श्रेणी के शहरों में रहने वाली जनसंख्या तीन गुना हो गई। पिछले पचास वर्षों में 10 लाख से ऊपर वाले शहरों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि पाई गई है। 1951 में जहाँ देश में कुल पांच शहर ऐसे थे जिनकी जनसंख्या दस लाख से ऊपर थी, वहीं 2001 में इनकी संख्या 35 हो गई।

35 बड़े शहरों में देश की कुल नगरीय जनसंख्या का लगभग 38 प्रतिशत भाग केन्द्रित

तालिका 2 : शहरीकरण (1901-2001) आंकड़ों में

वर्ष	शहरी जनसंख्या (लाख)	शहरीकरण का स्तर (प्रतिशत) में	दशकीय वृद्धि (प्रतिशत में)	वार्षिक वृद्धि (प्रतिशत में)	कस्बों, शहरों की संख्या	प्रथम श्रेणी के शहरों में जनसंख्या (प्रतिशत में) एवं शहरों की संख्या (कोष्ठक में)	10 लाख से ऊपर की आबादी वाले शहर
1901	25.85	10.84	—	—	1887	26.0 (24)	1
1911	2594	19.29	0.35	0.03	1815	27.5 (23)	2
1921	28.09	11.18	8.27	0.79	1949	29.7 (29)	2
1931	33.46	11.99	19.12	1.76	2072	31.2 (35)	2
1941	44.15	13.86	31.97	2.81	2250	38.2 (49)	2
1951	62.44	17.29	41.42	3.52	2843	44.6 (76)	5
1961	78.94	17.97	26.41	2.30	2365	51.4 (102)	7
1971	109.11	19.91	38.23	3.28	2590	57.2 (148)	9
1981	159.46	23.34	46.14	3.68	3378	60.4 (216)	12
1991	217.18	25.72	36.19	3.16	3768	65.2 (296)	23
2001	285.35	27.78	31.39	2.70	4368	69.0 (393)	35

(स्रोत : 'योजन' अंक 4, जुलाई 2006, पृष्ठ 21)

हैं तथा प्रथम श्रेणी के शेष 358 शहरों में केवल 31 प्रतिशत जनसंख्या निवास कर रही है। शेष 31 प्रतिशत जनसंख्या अन्य नगरों में विभाजित है। आंकड़े प्रदर्शित करते हैं कि बड़े शहरों में जनसंख्या बढ़ती जा रही है तथा छोटे कस्बों की सख्या और जनसंख्या कम होती जा रही है। स्पष्ट है कि न केवल ग्रामीण क्षेत्रों से बल्कि छोटे कस्बों से भी जनसंख्या का पलायन बड़े शहरों की ओर हो रहा है। इस तरह बड़े शहरों की वृद्धि भारतीय नगरीकरणकी एक महत्वपूर्ण विशेषता बन गई है।

1991 की जनगणना के आंकड़े बताते हैं भारत में 64.5 प्रतिशत प्रवजन ग्रामीण से ग्रामीण की ओर है; 17.7 प्रतिशत ग्रामीण से नगरीय है; 11.8 प्रतिशत नगरीय से नगरीय है जबकि 6.0 प्रतिशत प्रवजन नगरीय से ग्रामीण स्वरूप की ओर है। बोस (1997:187) के अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि भारत में अन्तः जिले (कम दूरी के) का प्रवजन 21% और अन्तर राज्य (लंबी दूरी) का प्रवजन 11.0% है।

ग्रामीण निर्धनों के शहर में प्रवजन के परिणाम स्वरूप राजस्व में कमी आती है एवं नगरीय निर्धनता का स्वरूप और विकराल बन जाता है। इसके अतिरिक्त दूसरी ओर आजकल कुछ धनाड्य व्यक्ति उपनगरीय क्षेत्रों में रहना श्रेयष्कर मानने लगे हैं। उनके उपनगरीय क्षेत्रों में पलायन से नगर को वित्तीय हानि होती है। इस प्रकार नगर में प्रवसन तथा नगर से दूर प्रवसन दोनों से नगरीय निर्धनता बढ़ती है। अस्तु, हमें भारत में नगरीय निर्धनता को बेरोजगारी एवं प्रवजन से समन्वित रूप में विश्लेषित करते हुए निर्धनता निवारण का प्रयास करना होगा।

4.5 सारांश

इस इकाई में आपने निर्धनता की अवधारणा एवं निर्धनता के निर्धारण की प्रक्रिया को समझते हुए भारत में नगरीय निर्धनता के स्वरूप का अध्ययन किया। तत्पश्चात् बेरोजगारी एवं निर्धनता के सहसम्बन्धों का विश्लेषण किया। अन्त में भारत में प्रवज्रन के स्वरूप, नगरीकरण में वृद्धि तथा निर्धनता वृद्धि के पारस्परिक अन्तः सम्बन्धों की विवेचना की गई। इस इकाई सम्पूर्ण अध्ययन से भारत में नगरीय निर्धनता, बोरोजगारी एवं प्रवजन का समसामयिक स्वरूप एवं इनका पारस्परिक सहसम्बन्ध आपको स्पष्ट हुआ होगा।

4.6 बोध प्रश्न

1. निर्धनता से आपका क्या आशय है? इसका निर्धारण कैसे किया जाता है?
2. भारत में नगरीय निर्धनता के स्वरूप की विवेचना कीजिए।
3. बेरोजगारी एवं नगरीय निर्धनता में सह-सम्बन्ध बताइए।
4. भारत में प्रवजन की प्रवृत्ति एवं नगरीय वृद्धि पर प्रकाश डालें।
5. प्रवजन, नगरीकरण एवं निर्धनता के पारस्परिक सम्बन्ध बताइए।

4.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

1. 1999-2000 की अवधि में भारत में नगरीय निर्धनता का अनुपात क्या है?

   (अ) 32.4% (ब) 23.6% (स) 27.1% (द) 26.1%

2. अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट (2006) के अनुसार विश्व में 15 से 24 वर्ष की आयु वाले बेरोजगारों की संख्या में 1995 से 2005 की अवधि में वृद्धि का प्रतिशत कितना है?

   (अ) 14.8% (ब) 20.2% (स) 16.5% (द) 10.3%

3. 2001 में भारत में दस लाख से अधिक आबादी वाले शहर की संख्या कितनी है?

   (अ) 23 (ब) 42 (स) 32 (द) 35

   प्रश्नोत्तर - (1) ब (2) अ (3) द

4.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

Bose, Ashish (1997) India's Urbanization 1901-2001, New Delhi.

ILO Repo (2006) Rising Youth Unemployment and Poverty, published in 'The Hindi', New Delhi, Monday, October 30, 2006, p.9.

Khanna, R. S. (1996) Liberalisation and Unemployment in India, The Indian Journal of Public Administration, Vol. XLII, July-September.

Mehta, Asha Kapur and Shah, Amita (2004) Chronic Poverty in India: An Overview, Chronic Poverty Research Centre, IIPA, New Delhi.

Yojana (2006) Special Issue on Urban Development, Vol. 4, July, Yojana Bhavan, New Delhi.

UNO (2006) Report on State of the World Cities 2006/07, Published in 'The Hindu' New Delhi, Saturday, June 17, 2006 p. 11.

इकाई -5 : नगरों में अपराध की प्रकृति एवं स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 अपराध की अवधारणा

5.3 अपराध का वर्गीकरण

5.4 भारतीय नगरों में अपराध वृद्धि

5.5 नगरीय अपराध की प्रकृति एवं स्वरूप

5.6 सारांश

5.7 बोध प्रश्न

5.8 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

5.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप-

- अपराध के अर्थ एवं विविध प्ररूपों को समझ पायेंगे।
- भारतीय नगरों में अपराध वृद्धि के तथ्य से अवगत हो सकेंगे।
- नगरों में होने वाले अपराध की प्रकृति एवं स्वरूप का विश्लेषण कर सकेंगें।

5.1 प्रस्तावना

सामाजिक प्रतिमानों से विचलन विशेषकर कानून का उल्लंघन अपराध कहा जाता है। अपराध के विविध स्वरूप हैं-व्यक्ति के विरुद्ध, जैसे-हत्या, बलात्कार; सम्पत्ति विरुद्ध, जैसे- चोरी, लूटपाट; सत्ता विरुद्ध, जैसे - गबन, धोखाधड़ी; सदाचार विरुद्ध जैसे-जुआ, वेश्यावृत्ति; संगठित एवं असंगठित अपराध, इत्यादि। अपराध ग्रामीण एवं नगरीय दोनों परिवेश में होते हैं किन्तु गाँवों की अपेक्षा नगरों में अन्तर वैयक्तिक सम्बन्धों की घनिष्टता कम होने के कारण व्यक्तियों पर सामाजिक दबाव का अभाव अपेक्षाकृत अधिक होता है, परिणामतः नगरों में वैयक्तिक एवं सामाजिक विचलन की दर अधिक परिलक्षित होती हैं। विगत कुछ दशकों में भारतीय नगरों में अपराध की घटनाएं बढ़ी हैं नगरों में होने वाले अपराध के विविध स्वरूप हैं। वैसे तो इन सभी स्त्ररूपों में वृद्धि परिलक्षित होती है किन्तु संगठित अपराधों में वृद्धि जीवन की विभीषिका बन गई है। इस इकाई के अन्तर्गत नगरों में बढ़ते अपराध की प्रकृति एवं स्वरूपों का सामाजशास्त्रीय विश्लेषण किया गया है।

5.2 अपराध की अवधारणा

अपराध वह आचरण अथवा कृत्य है जो समाज विरोधी है, कानून द्वारा निषिद्ध है तथा ज़िसके लिए वैधानिक दण्ड की व्यवस्था है। अपराध को सामाजिक एवं कानूनी (वैधानिक) दोनों परिप्रेक्ष्य में पारिभाषित किया गया है। सामाजिक दृष्टि से अपराध मूलतः एक समाजविरोधी कार्य है। सामाजिक दृष्टि ससे इसकी परिभाषा देते हुए थार्सटन सेलिन ने अपराध को मानवीय समूहों के व्यवहार के आदर्श नियमाचारों का उल्लंघन करने वाला कार्य कहा है। मार्शल क्लिनार्ड (1957) की दृष्टि में मानदंडों के सभी विचलन अपराध नहीं होते। उन्होंने तीन प्रकार विचलन बताया - (अ) सहन किये जाने वाले विचलन, (ब) विचलन जिनकी नरमी से निंदा की जाती है, तथा (स) विचलन, जिसकी कड़ी निन्दा की जाती है। क्लिनार्ड के अनुसार तीसरे प्रकार का विचलन ही अपराध है।

कानूनी दृष्टि से अपराध को विधानों एवं स्थानीय कानूनो के विरुद्ध किया जानेवाला कार्य मना गया है। पाल टप्पन (1960 : 10) के अनुसार अपराध एक समिप्राय कार्य/ अनाचरण है जो दण्ड कानून का उल्लंघन करता है और जो बिना किसी सफाई और औचित्य के किया जाता है। हाल सिरोम (1947:18) की दृष्टि में अपराध कानूनी तौर पर वंचित एवं साभिप्राय कार्य है जिसका सामाजिक हितों पर हानिकारक प्रभाव पड़ा है, जिसका अपराधिक उद्देश्य है और जिसके लिए कानूनी तौर से दण्ड निर्धारित है। कानूनी दृष्टि से अपराध के मूल तत्व हैं (क) वह कार्य कानून द्वारा वर्जित हो, (ख) वह साभिप्राय हो, (ग) वह समाज के लिए हानिकारक हो, (घ) उसका आपराधिक उद्देश्य हो, तथा (ङ) उसके लिए कोई दंड निर्धारित हो।

अपराध के सामाजिक एवं कानूनी धारणाओं के विवाद के समाधान ढूँढतु हुए रीड (1976) ने यह सुझाव दिया कि कानूनी परिभाषा का उपयोग अपराध के आंकड़ों संकलन एवं अपराधी का लेबिल देने हेतु किया जा सकता है किन्तु अपराध के कारणों का अध्ययन करने हेतु उन प्रतिदर्शों को शामिल किया जाना चाहिए जो अपना अपराध स्वीकार करते हैं किन्तु न्यायालय से दोषी सिद्ध नहीं हुए हैं।

5.3 अपराध का वर्गीकरण

अपराध को वैधानिक, व्यक्तिवादी एवं सामाजिक आधारों पर वर्गीकृत किया गया है। सदरलैण्ड (1965 : 16) ने अपराधिक गतिविधि की नृशंसता एवं दण्ड की गम्भीरता के आधार पर अपराध के दो स्वरूप बताया - (अ) गम्भीर अपराध, जैसे-हत्या एवं (ब) साधारण अपराध जैसे जुआ। बोंगर ने अपराध के उद्देश्यों के आधार पर इसके चार स्वरूप बताया - (अ) आर्थिक अपराध, जैसे चोरी, डकैती (ब) राजनैतिक अपराध, जैसे-राजद्रोह, दलबदल (स) यौन अपराध, जैसे-बलात्कार, वेश्यावृत्ति (द) विविध अपराध, जैसे-आग लगाना, बदले की भावना से दूसरे पर प्रहार करना, इत्यादि। हेज ने उद्देश्यों के आधार अपराध के तीन स्वरूप बताया - (अ) सम्पत्ति के विरुद्ध अपराध, जैसे - चोरी, डकैती (ब) व्यवस्था के विरुद्ध अपराध, जैसे-नशे की हालत में सड़क पर

अव्यवस्था पैदा करना (स) व्यक्ति के विरुद्ध अपराध, जैसे हत्या, बलात्कार, इत्यादि। सदरलैण्ड ने अपराधियों की सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति के आधार पर अपराध के दो स्वरूप बताया - (अ) निम्नवर्ग अपराध, जो निम्न आर्थिक प्रस्थिति वाले व्यक्तियों के द्वारा किये जाते हैं, जैसे- पाटिकमारी, चोरी, इत्यादि एवं (ब) श्वेतवसन अपराध, जो उच्च सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति के व्यक्तियों द्वारा किया जाता है, जैसे - डाक्टर द्वारा अवैध रूप से भ्रूण हत्या करना, मंत्री एवं अधिकारी द्वारा कमीशन एवं धूस लेना। हेज ने अपराध की प्रकृति के आधार पर अपराधियों के चार प्रकार बताया (अ) प्रथम दोषी, (ब) आकस्मिक अपराधी, (स) आदती अपराधी एवं (द) पेशेवर अपराधी।

क्लिनार्ड एवं क्वीने ने अपराधी व्यवहार की पद्धतियों को आधार बनाकर अपराध के आठ स्वरूप बताया -

(i) हिंसात्मक व्यक्तिगत अपराध जैसे-हत्या, आक्रमण, बलात्कार।

(ii) सम्पत्ति सम्बन्धी आकस्मिक अपराध, जैसे-जाली चेक बनाना, कलात्मक वस्तुओं की चोरी,इत्यादि।

(iii) व्यावसायिक अपराध जैसे-गबन, झूठा विज्ञापन, कालाबाजारी।

(iv) राजनीतिक अपराध, जैसे-देशद्रोह, शत्रु देशों को सैनिक रहस्य, बताना, जासूसी।

(v) सार्वजनिक व्यवस्था सम्बन्धी अपराध, जैसे- आवारागर्दी, वेश्यावृति।।

(vi) परम्परागत अपराध जैसे-चोरी, डकैती, लूटमार इत्यादि।

(vii) संगठित अपराध, जैसे - तस्करी, अपहरण, आतंकवाद इत्यादि।

(viii) पेशेवर अपराध जैसे - जाली नोट छापना, जेबकरतना इत्यादि।

5.4 भारतीय नगरों में अपराध वृद्धि

स्वातंत्र्योत्तर भारत के विविध दशकों में एक ओर जहाँ नगरों की संख्या में क्रमिक वृद्धि हुई वहीं दूसरी ओर नगरों में अपराधों के दर एवं स्वरूप में भी वृद्धि हुई है। विभिन्न दशकों में भारतीय नगरों में अलग-अलग स्वरूपों वाले कुल अपराध प्रति 1 लाख जनसंख्या में 170 से 200 के बीच वृद्धि क्रम में घटित होता रहा है। हत्या, बलात्कार, चोरी, डकैती, पाकिटमारी, एवं राहजनी से लेकर विभिन्न संगठित अपराध, जैसे-अपहरण, तस्करी, भ्रष्टाचार,श्वेतव न अपराध,आतंकवाद, इत्यादि नगरीय अपराधों के प्रमुख स्वरूप हैं।

भारत में 1960 और 1970 के बीच जनसंख्या का दानत्व जहाँ 26.6 प्रतिशत बढ़ा वहीं अपराधों की दर में 57.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई। 1971 से 1981 के बीच जनसंख्या वृद्धि जहाँ 20.4 प्रतिशत रही वहीं अपराध में वृद्धि 60 प्रतिशत हुई। क्राइम इन इंडिया तथा राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (1997) के आंकड़ों में भारत के 23 बड़े नगरों को चिन्हित करते हुए उनमें हत्या की घटनाओं में 7 प्रतिशत तथा अपहरण में 16 प्रतिशत वृद्धि का उल्लेख मिलता है। 1997 में सर्वाधिक अपराध दिल्ली में हुआ, तत्पश्चात् मुम्बई एवं बंगलोर क्रमशः दूसरे एवं तीसरे स्थान पर

रहे। हत्या के अपराध में विगत दशक की अपेक्षा 30 प्रतिशत अधिक वृद्धि हुई तथा बलात्कार में 80 प्रतिशत वृद्धि हुई। सम्पत्ति के विरुद्ध अपराध जैसे चोरी, डकैती, लूटपाट आदि में 1997 में 2 प्रतिशत कमी आई।

संयुक्त राष्ट्र के वार्षिक अपराध में सर्वेक्षण सम्बन्धी तथ्य यह प्रदर्शित करते हैं कि भारत में विकसित औद्योगिक देशों की अपेक्षा अपराध की मात्रा कम है। समसल, वृहद आक्रामक अपराध की दर भारत में 1999 की अवधि में 23.72 थी, जबकि जापान में 21.91 तथा अमेरिका में 329.63 थी; हत्या की दर भारत में 3.72 थी, जबकि जापान में 0.53 तथा अमेरिका में 4.55 थी; बलात्कार की दर भारत में 1.55 थी जबकि जापान में 1.46 तथा अमेरिका में 32.05 थी; डकैती की दर भारत में 2.85, जापान में 3.34 तथा अमेरिका में 147.36 थी; वाहन चोरी की दर भारत में 5.98, जापान में 225.25 तथा अमेरिका में 412.70 थी; लूटपाट की दर भारत में 11.15, जापान में 205.50 तथा अमेरिका में 755.29 थी; चोरी की दर भारत में 27.25, जापान में 1279.00 तथा अमेरिका में 2502.66 थी।

भारतीय नगरों में अपराध सम्बन्धी तथ्य यह प्रदर्शित करते हैं कि यद्यपि विविध प्रकार के अपराधों के दर में वार्षिक वृद्धि या कमी होती रही है किन्तु व्यापक रूप में बाल एवं युवा अपराध, श्वेत वसन अपराध तथा संगठित अपराधों में महत्वपूर्ण रूप में वृद्धि हुई है।

5.5 नगरीय अपराध की प्रकृति एवं स्वरूप

नगरों में आबादी के केन्द्रीकरण, अन्तवैयक्तिक सम्बन्धों की घनिष्टता का अभाव, व्यक्तियों पर सामाजिक दबाव में कमी, बढ़ती हुई औद्योगिक प्रतिस्पर्द्धा, नगरीय मलिन बस्तियों में मौलिक आवश्यकता की सुविधाओं की अपर्याप्ता, अनैतिक व्यवहारों की नई नई प्रविधियों से सम्पर्क, इत्यादि कारकों के परिणामस्वरूप अपराध जन्य व्यवहार अधिक परिलक्षित होते हैं। नहरों में आर्थिक अपराध, यौन अपराध, श्वेतवसन अपराध, संगठित अपराध की बहुलता दिखती है, यद्यपि परम्परागत अपराध, प्रतिशोधात्मक हिंसाजन्य अपराध की घटनाएं भी नगरीय जनजीवन की सामान्य विशेषता बन गई है। मोटे तौर पर नगरीय अपराध की प्रकृति एवं बहुआयामी स्वरूप का विश्लेषण निम्नलिखित है:

(A) महिलाओं के विरुद्ध अपराध : महिलाओं के विरुद्ध अपराध के विविध स्वरूप हैं-बलात्कार, अपहरण, हत्या, घरेलू हिंसा, दहेज यातना, लैंगिक दुर्व्यवहार, मादा भ्रुण हत्या, छेड़छाड़, सम्पत्ति में महिलाओं की हिस्सेदारी से वंचित करना, इत्यादि। सरकारी आंकड़े प्रदर्शित करते हैं कि महिलाओं के विरुद्ध अपराध में विगत दशक में 12% वृद्धि हुई है। नगरों में सबसे अधिक मामले महिला को यातना देने (31.5%), तत्पश्चात छेड़छाड़ (23.6%), अपहरण (12.5%), बलात्कार (11.4%), शरीर व्यापार (6.6%), दहेज हत्या (5.3%), यौन उत्पीड़न (6.2%), दहेज कानून के उल्लंघन (2.6%), लड़कियों के आयात (0.1%) तथा महिलाओं के अंगों के अश्लील प्रदर्शन (0.1%) मिलते हैं। दहेज हत्या से जुड़े अपराध में विगत दशकमें 50

प्रतिशत वृद्धि परिलक्षित होती है।

(B) बाल अपराध : बाल अपराध के विविध स्वरूप हैं: व्यक्तिग बाल अपराध, समूह द्वारा समर्थित बाल अपराध, संगठित बाल अपराध एवं परिस्थितिवश बाल अपराध। नगरीय परिवेश में घरेलू जीवन की परिस्थितियों से असंतुष्टि, हीमभावना, इर्ष्याभाव, पारिवारिक नियंत्रण के अभाव, पड़ोस की संस्कृति, आदि बाल अपराध के लिए प्रमुख उत्तरदायी कारक हैं। बाल अपराध के विविध उदाहरण हैं : आवारागर्दी, स्कूल से भगेडूपन, जुआ खेलना, पाकिटमारी, चोरी, राहजनी, झगड़े-फसाद, अपहरण, धोखाधड़ी, हत्या, बलात्कार, इत्यादि। पुलिस अनुसंधान ब्यूरो के आंकड़े बताते हैं कि प्रतिवर्ष भारत में लगभग एक से डेढ़ लाख बाल अपराधी इंडियन पैनल कोड एवं क्षेत्रीय विशेष कानूनों के अन्तर्गत पकड़े जाते हैं। बाल अपराधियों के आंकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि लड़कों की अपेक्षा लड़कियों के आंकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि लड़कों की अपेक्षा लड़कियों द्वारा कम अपराध किये जाते हैं तथा 14-16 आयु समूह के बाल अपराधियों की सर्वाधिक संख्या है। महानगरों में बाल अपराधी छोटे शहरों की अपेक्षा अधिक हैं। विविध समाजशास्त्रीय अध्ययन (हन्नासेठ, एस0 सी0 वर्मा, जी0एन0 रूत्तोन्सा, इत्यादि) से प्राप्त निष्कर्ष यह प्रदर्शित करते हैं कि अधिकांश (66% से लेकर 82% तक) बाल अपराधी निर्धन परिवारों के हैं। यह तथ्य प्रकाश में आया है कि यद्यपि बाल अपराधियों द्वारा छोटे छोटे समूह बनाकर अपराध किया जाता है किन्तु इन छोटे समूहों को बड़े संगठित समूहों का समर्थन प्राप्त करता है।

(C) बाल दुर्व्यवहार एवं बाल श्रम : महानगरों एवं अन्य नगरों के सर्वेक्षण रिपोर्ट यह प्रदर्शित करते हैं कि बाल दुर्व्यवहार एवं बाल श्रम जैसे अपराध प्रचुरता में हैं। बाल दुर्व्यवहार का आशय है बच्चे को मानसिक एवं शारीरिक चोट पहुँचाना, उसकी उपेक्षा करना था उस पर हिंसा एवं प्रहार करना, मौखिक दुर्व्यवहार, धमकी इत्यादि। बाल दुव्यर्वहार की सामान्यतया तींन श्रेणियाँ हैं : शारीरिक, लैंगिक एवं भावात्मक। शारीरिक दुर्व्यवहार से सूचक हैं- चोट के निशान, जलाये जाने के छाले, हड्डियों का टूटना, जख्म अथवा खरोच के निशान इत्यादि। लैंगिक दुर्व्यवहार के सूचक हैं-दाग लगे हुए या रक्त रंजित वस्त्र, दर्द या खुजली, रक्तस्राव, अवैध गर्भ ठहराना, चलने या बैठने में कठिनाई, इत्यादि। भावात्मक दुर्व्यवहार के सूचक हैं - बच्चे की उपेक्षा, उसके साथ बदसलूकी, उसकी आवश्यकताओं की अवहेलना, बालकों के नैतिक आचरण को संवारने के प्रति जानबूझ की गई अवहेलना, उसे प्रशिक्षित एवं अनुशासित करने की अवहेलना, इत्यादि। नगरीय परिवेश एवं विशेषकर मलिन बस्तियों में बाल दुर्व्यवहार की शिकायतें प्रायःमिलती हैं।

नगरों में बाल श्रम के विविध स्वरूप दिखाई पड़ते हैं। बाल श्रमिक कैन्टीन/रेस्तरां में चिथड़े/कूड़ा उठाने, माल की फेरी लगाने, दुकानों एवं घरों में कार्य करने से लेकर जोखिम वाले उद्योगों में कार्यरत हैं। शिवकाशी के पटाखा फैक्टरी, फिरोजाबाद के ग्लास के कारखानों, जयपुर के बहुमूल्य पत्थरों की घिसाई की इकाइयों, मुरादाबाद के पीतल के बर्तन उद्योग, अलीगढ़ के ताला निर्माण इकाइयों, मंदसोर के स्लेट उद्यम, भदोही के कालीन उद्योग, सहारनपुर के लकड़ी की नक्काशी उद्योग, वाराणसी के रेशम बुनने के उद्योग, इत्यादि में हजारों बाल श्रमिकों से रोजगार की

खतरनाक एवं जोखिमभरी परिस्थितियों में कार्य कराने तथा उनका आर्थिक शोषण करने का अपराध परिलक्षित होता है।

(D) तस्करी : विगत हीन दशकों से भारत में मादक पदार्थों तथा अन्य वस्तुओं जैसे सोना, चाँदी, हथियार, विस्फोटक सामग्री, इलेक्ट्रानिक्स वस्तुएँ, सिन्थेटिक धागे, आदि की तस्करी की घटनाएँ जारी हैं तथा वैश्वीकरण की वर्तमान प्रक्रिया में तस्करी से जुड़े अपराध बढ़े हैं। मध्यपूर्व क्षेत्रों से पश्चिमी क्षेत्रों में हिरोइन और हशीश जैसे मादक पदार्थों की तस्करी के कारण मुम्बई, कलकत्ता, चेन्नई जैसे महानगर बहुत मेद्य बन गए हैं। भारत में अपराध के आंकड़े बताते हैं कि प्रतिवर्ष लगभग 55-60 करोड़ रुपये मूल्य के मादक द्रव्य पकड़े जाते हैं। भारत में मादक पदार्थों का वार्षिक व्यापार लगभग 2000 क्रोड़ रुपये से अधिक का है। मादक द्रव्यों के अतिरिक्त अन्य वस्तुओं की तस्करी में अधिग्रहित वस्तुओं का मूल्य 550 करोड़ से लेकर 1050 करोड़ रुपये तक प्रतिवर्ष होता है। क्राइम इन इंडिया (1998) के आंकड़े प्रदर्शित करते हैं कि एक वर्ष में 63.7 करोड़ मूल्य के मादक पदार्थ, 39 करोड़ के विद्युत उपकरण, 23.2 करोड़ के स्वर्ण ता 549.1 करोड़ मूल्य की अन्य वस्तुएं तस्करी में पकड़ी गई। तस्करी उद्योग ने नगर में नव धनाड्य वर्ग पैदा किया है जो अचल सम्पत्ति, फिल्म निर्माण एवं प्रतिष्ठित उपक्रमों पर नियंत्रण रखते हैं। तस्करी एवं अन्य संगठित अपराध में प्रस्थितियों की श्रेणीबद्ध संरचना वैयक्तिक वफादारी, आचार संहिता एवं आज्ञाओं की शृंखला से जुड़ी है। राष्ट्रविरोधी कार्यों, आतंकवादी गतिविधियों तथा हथियारों के गुप्त व्यापार में तस्करों की भूमिका महत्वपूर्ण है।

(E) भ्रष्टाचार : सामान्य अर्थों में भ्रष्टाचार का आशय है कि निजी लाभ के लिए सत्ताका दुरूपयोग करना। नगरीय समांज में भ्रष्टाचार के विविध स्वरूप दिखाई देते हैं; जैसे रिश्वखोरी, भाई -भतीजावाद, दूसरे के धन को अपने उपयोग में लेने की घटनाएँ,अपराधियों को संरक्षण देना,पक्षपात करना, इत्यादि। कार्यपालिका, विधायिका एवं न्यायपालिका समेत जनजीवन के समस्त सार्वजनिक क्षेत्रों में भ्रष्टाचार का विस्तार हुआ है। रक्षा सौदे मे दलाली, चारा घोटाला, अलकततरा घोटाला, स्टाम्प घोटाला, स्टाक मार्केट एवं प्रतिभूति घोटाला से लेकर मिडिया के स्टिंग आपरेशन से प्राप्त अनेक उदाहरण यह प्रदर्शित करते हैं कि मंत्री, नेता, नौकरशाह, व्यापारी, सामान्य जन, सभी भ्रष्टाचार में शामिल हैं। भारत में 1947 के भ्रष्टचार निरोधक अधिनियम के अन्तर्गत 1981 से 1987 तक भ्रष्टाचार के पंजीकृत मामलों की संख्या 300 से 500 के बीच थी किन्तु 1988 के नये संशोधित अधिनियम के पारित होने के उपरान्त भ्रष्टाचार के मामलों में वृद्धि दिखाई पड़ती है। 1988 में 1295, 1994 में 2104 तथा 1998 में 2817 भ्रष्टाचार के मामले पंजीकृत किये गए। एक गैरसरकारी जर्मन संगठन ट्रांसपेरेसी इन्टरनेशनल के समय पर किये जाने वाले सर्वेक्षण रिपोर्ट यग प्रदर्शि करते हैं कि 1995 में 41 देशों के सर्वेक्षण में भारत सातवें भ्रष्टतम देश के स्थान पर था। 2000 में 90 देशों के सर्वेक्षण में भारत का स्थान 22 वाँ था जबकि 2003 से 133 देशों के सर्वेक्षण में भारत का स्थान 51 वाँ था। सन् 2006 के सर्वेक्षण में भारत भ्रष्टाचार में कुछ कमी के संकेत मिल हैं। भ्रष्टाचार की उत्तरोत्तर वृद्धि के परिणाम स्वरूप जहाँ एक ओर जनसेवकों

के प्रति सामान्य जन की विश्वसयनीयता कम हुई है, वहीं दूसरी ओर नगरीय जीवन में अनुशासनहीनता, हिंसा, अराजकता एवं अनैतिकता बढ़ी है।

(F) आतंकवाद : आतंकवाद हिंसा या हिंसा की धमकी के उपयोग द्वारा लक्ष्य प्राप्ति के लिए संघर्ष की एक रणनीति है तथा अपने शिकार में भय पैदा करना इसका प्रमुख उद्देश्य है। यह एक क्रूर व्यवहार है जो मानवीय प्रतिमानों एवं विधानों का पालन नहीं करता। भारत में आकंकवाद के प्रमुख उदाहरण हैं- पंजाब में खालिस्तान उन्मुखी आतंकवाद, कश्मीर में उग्रवादियों का आतंकवाद, बंगाल, बिहार एवं आंध्रप्रदेश में नक्सल आतंकवाद, असम में उल्फा एवं बोडो

आतंकवाद, इत्यादि। 1984 से 1992 के बीच पंजाब के खालिस्तान उन्मुखी आतंकवादियों द्वारा 300 निर्दोष व्यक्तियों की हत्या, 114 हिन्दू रेलयात्रियों की हत्या, 24 विधानसभा चुनाव के प्रत्याशियों की हत्या, पंजाब एवं उसके बाहर बैंक आदि से नगद धनराशि को लूटने जैसे संगीन अपराध किए गए। नक्सली आन्दोलन के प्रादुर्भाव काल में पश्चिम बंगाल में 1969-72 के बीच 1711 व्यक्तियों की हत्या, 696 लूटपाट तथा 8857 अन्य प्रकार के हिंसात्मक अपराध नक्सली उग्रवादियों द्वारा किया गया। कालान्तर में नक्सलवादी आतंकवाद बंगाल से बढ़ता हुआ बिहार एवं आंध्रप्रदेश तक फैला। वर्तमान में नक्सली आतंकवाद का दायरा के भारत के ग्यारह राज्यों तक विस्तृत हो गया है जहाँ उनकी हिंसात्मक गतिविधियाँ जारी हैं। कश्मीर में 1988 में उग्रवादियों के विविध संगठनों द्वारा रक्त युद्ध छेड़ागया, हिन्दुओं को कश्मीर छोड़ने को बाध्य किया गया तथा अभी भी उनकी आतंकवादी गतिविधियाँ जारी हैं। असम में उल्फा आतंकवादियों ने 1980-1984 के बीच 5000 गैर असमियों को जान से मार डाला। इन राज्यों के अतिरिक्त आतंकवादियों ने मुम्बई महानगर पर 1993 में आतंकी हमला किया, दिल्ली में 2005 में विस्फोट किया, वाराणसी के संकटमोचन मंदिर एवं रेलवे स्टेशन पर 7 मार्च, 2006 में बम विस्फोट किया। इस प्रकार आतंकवादी गतिविधियों ने न सिर्फ धन-जन को क्षति पहुँचाया है बल्कि समसामयिक भारत एवं नगरीय समाज में भय असुरक्षा एवं अमानवीयता की त्रासदी उत्पन्न किया है ।

(G) साम्प्रदायिक हिंसा एवं दंगे : साम्प्रदायिक हिंसा एक मनुष्य की दूसरे समुदाय के प्रति घृणा, द्वेष एवं प्रतिशोध पर आधारित वह गतिविधि है जिसके अन्तर्गत दूसरे शारीरिक प्रहार करने, हत्या करने, लूटपाट करने जैसी क्रियायें शामिल हैं। साम्प्रदायिक हिंसा एवं दंगे का असर गांवों की अपेक्षा नगरों में अधिक परिलक्षित होता है क्योंकि नगरों की आबादी सघन होती है। भारत में साम्प्रदायिक उन्माद एवं दंगे 1946-48 की अवधि में पराकाष्ठा पर थे, क्योंकि इस अवधि में भारत एवं पाकिस्तान के विभाजन का असर था। भारत में 1950 से 1990 की अवधि में होनेवाले हिन्दू मुस्लिम दंगों में गांवों का हिस्सा सिर्फ 3.50% था जबकि शहरों का हिस्सा 96.50प्रतिशत प्रभावित हुआ। आठ शहर-अहमदाबाद, मुम्बई, अलीगढ़, हैदराबाद, मेरठ, बड़ोदरा, कलकता, दिल्ली में साम्प्रदायिक दंगों की प्रमुखता रही। आशुतोष वार्ष्णेय (2002) के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष यह प्रतिपादित करते हैं कि जिन नगरों में विभिन्न समुदायों में अन्तःक्रिया कम रही है एवं नागरिक संस्थाओं

का अभाव रहा है, वहाँ साम्प्रदायिक दंगे अधिक हुआ हैं।

(H) श्वेत वसन अपराध : श्वेतवसन अपराध वह है जो उद्योग, व्यापार तथा विभिन्न पेशों में संलग्न व्यक्तियों द्वारा अपने पदभार को कार्यान्वित करते समय किया जाता है। उदाहरणार्थ - व्यापारी द्वारा चोरबाजारी अथवा कालाबाजारी करना, डाक्टर का विभिन्न अपराधियों को सर्टिफिकेट देना, दवा के नाम पर पानी का इंजेक्शन लगाना, सरकारी आफिस में गोपनीय दस्तावेजों को घूस दिखाना, अध्यापक द्वारा विद्यार्थी को नकल कराना, व्यापारी द्वारा खाद्य पदार्थों में मिलावट करना, जज द्वारा घूस लेकर अपराधी के पक्ष में फैसला सुनाया जाना, कमीशनखोरी, लालफीताशाही, इत्यादि। श्वेतवसन अपराधी प्रायः अपनी उच्च सामाजिक आर्थिक प्रस्थिति, चालाकी, आपसी सांठगाँठ, सत्ता तक पहुँच होने के कारण अपराधी कृत्यों में पकड़े कम जाते हैं तथा अपने प्रभाव का उपयोग करके प्रायः बरी भी हो जाते हैं। भारतीय नगरों में सर्वाधिक अपराध श्वेतवसन अपराधियों द्वारा किये जाते हैं। 1960 से 1970 के दशक में भारत में जनसंख्या में 27.4 प्रतिशत वृद्धि हुई जबकि श्वेतवसन अपराध की दर में 57.16 प्रतिशत की वृद्धि हुई, यह वृद्धिक्रम हाल की अवधि में भी जारी है।

नगरीय अपराध के इन विविध स्वरूपों के अतिरिक्त अन्य कई अपराध-हत्या, अपहरण, राहजनी, पाकिस्तानी, लूटपाट साइबर अपराध, इत्यादि प्रमुख रूप से परिलक्षित होते हैं।

5.6 सारांश

इस इकाई में आपने अपराध के सामाजिक एवं कानूनी दृष्टिकोणों का अध्ययन किया। इसके उपरान्त अपराध के विविध प्रकारों का अवलोकन किया। तत्पश्चात् भारतीय नगरों में अपराध वृद्धि की स्थिति एवं नगरीय अपराध के विविध स्वरूपों का विश्लेषण किया। इस इकाई के सम्पूर्ण अध्ययन से भारतीय नगरों में बढ़ते अपराध की प्रकृति एवं स्वरूप आपको स्पष्ट हुआ होगा।

5.7 बोध प्रश्न

1. अपराध क्या है? अपराध के कानूनी एवं सामाजिक दृष्टिकोण में क्या अन्तर है?
2. अपराध का वर्गीकरण करते हुए इसके प्रमुख स्वरूप बताइए।
3. नगरीय भारत में अपराध की प्रकृति एवं स्वरूपों की विवेचना कीजिए।

5.8 वस्तुनिष्ठ प्रश्न एवं उत्तर

1. निम्नलिखित में से किसने अपराध को सामाजिक दृष्टिकोण के आधार पर पारिभाषित किया?

   (अ) थार्सटन सेलिन (ब) पाल टप्पन (स) हाल जिरोम (द) हाल्सबरा

2. ट्रांसपेरेंसी इन्टरनेशनल के सर्वेक्षण किस प्रकार के अपराध प्रदर्शित करते हैं ?

   (अ) महिला विरुद्ध अपराध (ब) बाल श्रम (स) भ्रष्टाचार (द) आतंकवाद

3. हन्ना सेठ का अध्ययन किस प्रकार के अपराध से सम्बद्ध है?

(अ) महिला विरुद्ध अपराध (ब) बाल अपराध (स) तस्करी (द) साम्प्रदायिक दंगे

प्रश्नोत्तर

(1) अ (2) स (3) ब

5.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

Clinard, Marshal B, (1957) Sociology of Deviant Behaviour, Holt, Rinchart and Winston Inc. New York.

Hall, Jerome (1947) General Principal of Criminal Law, Bobbs Merrill, India Polis.

Reid, S.T. (1976) Crime and Criminology, The Dryden Press, Illinois.

Ruttonsha, G.N. (1947), Juvenile Delinquency and Destitituion in Poons, Deccan College Series.

Seth Hanna (1961) Juvenile Delinquency in an Indian Setting, Bombay Popular Book Depot.

Sutherland, Edwin H. and Cressay, D. K. (1965) Principles of Criminology. The Times of India Press, Bombay.

Tappan Paul W. (1960) Crime, Justice and Correction, Mc Graaw Hill Book Co., New York.

Varshney, Ashutosh (2002) Ethnic Conflict and Civic Life : Hindus and Muslims in India, OUP, London.

Verma, S.C. (1967) Quoted by Sushil Chandra in Sociology of Deviation in India, Allied Publishers, Bombay.

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

MASY-09
भारत में नगरीय समाज

खण्ड

5

नगरीय समाजशास्त्र के सैद्धान्तिक पक्ष

इकाई-1 5

नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन के प्रमुख उपागम-वेबर, मम्फोर्ड एवं पार्क तथा बर्गेस के संदर्भ में

इकाई-2 16

नगर, नगरीकरण एवं नगरवाद

इकाई-3 27

भारत में नगर नियोजन एवं नगरीय प्रबंधन की समस्याएँ

इकाई-4 37

क्षेत्रीय नियोजन तथा सामाजिक एवं स्थानीय सिद्धान्तों में संबद्धता

इकाई-5 46

ग्रामीण - नगरीय सातत्य

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	**कुलसचिव - सचिव**

परिमापक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 जयकान्त तिवारी	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सम्पादक

प्रो0 आभा अवस्थी	अवकाश प्राप्त प्रो0 लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

प्रो0 जितेन्द्र प्रसाद	महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहत, हरियाणा

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड-5 : खण्ड परिचय - नगरीय समाजशास्त्र के सैद्धान्तिक पक्ष

इस खण्ड में निम्नलिखित इकाइयाँ हैं-

इकाई-1 नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन के प्रमुक उपागम, वेबर, मम्फोर्ड एवं पार्क बर्गेस के सन्दर्भ में।

इकाई-2 नगर, नगरीकरण एवं नगरवाद।

इकाई-3 भारत में नगर नियोजन एवं नगरीय प्रबंधन की समस्याएँ।

इकाई-4 क्षेत्रीय नियोजन तथा सामाजिक एवं स्थानीय सिद्धान्तों में सम्बद्धता।

इकाई-5 ग्रामीण नगरीय सातत्य।

इकाई - 1 : नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन के प्रमुख उपागमः वेबर, मम्फोर्ड एवं पार्क तथा बर्गेन्स के संदर्भ में।

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति

1.3 नगरीय समाजशास्त्र में अध्ययन किये जाने वाले मुद्दे

1.4 नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े उपागम

1.5 नगरीय समाजशास्त्र से संबंधित सिद्धान्त

1.6 नगरीय समाजशास्त्र का विषय क्षेत्र

1.7 नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े मैक्स वेबर के विचार

1.8 नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े लेविस मम्फोर्ड के विचार

1.9 नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े पार्क-बर्गेस के विचार

1.10 सारांश

1.11 बोध प्रश्न

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति की जानकारी प्राप्त कर सकेंगें।
- नगरीय समाजशास्त्र में जिन मुद्दों का वर्णन कि जाता है, उसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- नगरीय समाजशास्त्र में जिन अवधारणाओं तथा उपागम का अध्ययन किया जाता है, उसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- नगरीय समाजशास्त्र के विषय क्षेत्र का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े मैक्स वेबर के विचार से अवगत होंगे।
- नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े लेविस मम्फोर्ड के विचार से अवगत होंगे।
- नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े पार्क-बर्गेन्स के विचार से अवगत होंगे।

1.1 प्रस्तावना और 1.2 नगरीय समाजशास्त्र की प्रकृति

नगरीय समाजशास्त्र, समाजशास्त्रीय क्षेत्र के एक व्यापक तथा विशिष्ट पहलु का अध्ययन करता है, इसका क्षेत्र व्यापक इस वजह से है, क्योंकि यहाँ पूरे समाज को केन्द्र बनाकर अध्ययन करने का प्रयास किया जाता है। समाज के विभिन्न पहलुओं में जो सामाजिक परिवर्तन की विभिन्न प्रक्रियाएँ रही हैं, उनमें औद्योगिक क्रांति की एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है औद्योगिक क्रांति के परिणामों का अध्ययन केवल समाजशास्त्र में ही किया जाता, अपितु इसका व्यापक अध्ययन सामाजविज्ञान के अन्य विषय जैसे अर्थशास्त्र, भूगोल, राजनीति तथा सामाजिक मानवशास्त्री आदि भी अपने-अपने ढंग से करते हैं। समाजशास्त्र उस सभी विषयों के विद्वानों द्वारा नगरीय समाज से जुड़े मुद्दों को ध्यान में रखकर परिवर्तन की प्रक्रियाओं तथा नगरीय समाज के लिए उनकी क्या प्रासंगिकता बनती है? उस पर अपनी नजर रखता है, इसलिए समाजशास्त्र में नगरीय समाजशास्त्र का क्षेत्र काफी व्यापक हो जाता है।

1.3 नगरीय समाजशास्त्र में अध्ययन किये जाने वाले मुद्दे

नगरीय समाजशास्त्र में रहने वाले लोगों का व्यवस्थित होना, उनके राजनीतिक व्यवहार उनकी आर्थिक सोच, अर्थनीति के परिवर्तित स्वरूप, बाजार की ताकतें, लोगों के उपयोग की वस्तुओं को खरीदने की क्रय शक्ति, बैंकों द्वारा उपलब्ध करायी जाने वाली पूंजी तथा कर्ज की सुविधा, कर्ज पर नीजि कर लगाये जाने पर छूट, संस्कृति समूह का व्यवस्थन, वाणिज्य और व्यापार का बढ़ता महाजाल, विदेशी कंपनियों का गगनचुम्बी आवासीय क्षेत्र में बाजार को संगठित करना आदि कई ऐसे पहलू हैं, जिसने नगरीय समाज की व्यापकता को काफी जटिल बना दिया है। नगरीय समाजशास्त्र उपर्युक्त मुद्दों को तो अपने अध्ययन का केन्द्र बनाना ही है, साथ-ही-साथ अन्य विषयों के अंतर्गत शहर से संबंधित योजनाओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं, अध्ययन के क्षेत्र, आवाज की कमी, मलिन बस्तियों का गगनचुंब इमारतों के इर्दगिर्द कुकुरमुत्ते क तरह जन्म लेना, गाँव की जमीन का अधिग्रहण कर शहरी क्षेत्र में मिलाना, मलिन बस्ति में रहने वाले लोगों का मतदान रुझान आदि कई ऐसे मुद्दे हैं जो नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन-क्षेत्र के दायरे मे ऐआ जाते हैं।

1.4 नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े उपागम

नगरीय समाज के बहुआयामी पक्ष को ध्यान में रखते हुए नगरीय समाजशास्त्र कुछ मौलिक अवधारणाओं तथा उपागमों के द्वारा पूरी प्रक्रिया का अध्ययन करने का प्रयास करना है। नागरीय समाजशास्त्र नगरीय समाज के व्यापक क्षेत्र के अध्ययन के लिए जिन अवधारणाओं को ध्यान में रखकर अध्ययन करता है, उनमें समुदाय, शहर, नगर, नगरवाट, नगरीय समाज, शहरीकरण, औद्योगीकरण, आधुनिकीकरण, पारिस्थितिकी आदि प्रमुख हैं। जोबर्ग का मत है कि वर्तमान समय में जिस प्रकार इन अवधारणाओं का वर्मन किया जाता है। उनमें अवधारणाओं के बारे में स्पष्ट तथा वस्तुनिष्ठ सोच का सर्वथा अभाव है जिसके कारण एक ही अवधारणा को दूसरे अवधारणा का पर्याय मानकर अध्ययन कर लिया जाता है। इससे स्थिति और भी गंभीर बन जाती है।

समाजशास्त्र में मिली सामाजिक मुद्दे के अध्ययन के लिए जर्मनी के समाजशास्क्षी मैक्स वेबर ने एक विधि के प्रयोग की सिफारिश की थी। वह भी एक आदर्श प्रारूप की अवधारणा। उनके अनुसार जिस मुद्दे का अध्ययन करना हो उसका एक आदर्श प्रारूप तैयार करना जो समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से सर्वमान्य हो। दूसरी विधि जिसे अपना कर अवधारणाओं के संदर्भ में अस्पष्टता बनी होती है वह है उन अवधारणाओं के अनुभाविक पहलू जिन्हें रेखांकित कर उनकी पहचान करना जो सभी समुदाय में देखी जा सकती है, स्टीन (Stein) ने आदर्श प्रारूप के अवधारणा को मानते हुए शहरीकरण (Urbanisation), औद्योगीकरण (Industrialisation) तथा कर्मचारीतंत्रीकरण (Bureaucratisation) पर बल दिया है। इसके विपरीत श्नोर (Schnore) ने जनसंख्या के आकार व घनत्व को आधार बनाकर यह बताने की कोशिश की है कि इस प्रकार की स्थिति सभी समुदाय व लोगों की हो सकती है।

1.5 नगरीय समाजशास्त्र से संबंधित सिद्धान्त

जोबर्ग (Sjoberg) ने चार प्रकार वे प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन किया है जो नगरीय समाजशास्त्र के सोच को प्रभावित करते हैं- यह है शहर, सांस्कृतिक मूल्य तथा तकनीकी (Technology) या सत्ता (Poverd)। इन अवधारणाओं को ध्यान में रखकर नगरीय समाजशास्त्र के विषय-क्षेत्र (Field of Urban Sociology) की चर्चा की जा सकती है।

नगरवाद से संबंधित अनेक समाजशास्त्रियों ने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं जिनकी चर्चा विचार से हम दूसरे इकाई में करेंगे, परन्तु यहाँ पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि नगरवाद से जुड़े सिद्धान्तों का भी गणेश करने वाले अधिकांश समाजशास्त्री अमेरिका ने शिकागो विश्वविद्यालय से जुड़े थे। सन् 1920 से 1940 के दौरान रोबर्ट पार्क, इरनेस्ट वर्गेस तथा लुई वर्थ ने जो अध्ययन किया, उसे शिकागों स्कूल से जुड़ा माना जाता है। जिन दो उपागमों को शिकागो स्कूल के द्वारा बढ़ाया गया उसमें नगरीय समाजशास्त्र के अध्ययन क्षेत्र में दो सिद्धान्तों का विशेष रूप से उल्लेख किया जाता है। प्रथम सिद्धान्त को पारिस्थितिकी सिद्धान्त (Ecological Approach) तथा दूसरे सिद्धान्त को नगरवाद (Urbanism) के रूप में जाना जाता है। लुई वर्थ ने नगरवाद को जीवन की शैली (Urbanism is a wary of life) का अभिन्न अंग माना है। वर्थ के अनुसार शहरीकरण की प्रक्रिया के निम्न तीन सैद्धान्तिक तत्व हैं।

(a) जनसंख्या का आकार (Population size)

(b) जनसंख्या-घनत्व (Population Density)

(c) जनसंख्या-विविधता (Population Heterogeneity)

इस प्रकार लुई वर्थ के द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त की अवधारणा से जुड़ी बात यह थी कि जनसंख्या का आकार, उसका घनत्व या सघनता तथा विविधता के कारण, नगरवाद से जुड़े जीवन की शैली उतनी ही प्रबल होगी।

1.6 नगरीय समाजशास्त्र का विषय क्षेत्र

नगरीय समाजशास्त्र का उदय समाजशास्त्र विशिष्ट शाखा के रूप में हुई है। मैक्स वेबर (Max Weber), ज़ार्ज सिमेल (Georg Simmel), फर्डिनांड टानिज (Ferdinand Tonnies) ने जर्मनी में प्रचारित करने में अपना विशेष योगदान दिया। इसी प्रकारं अमेरिका में लुई वर्थ (Louis Wirth) के द्वारा नगरीय जीवन के ऊपर जो अध्ययन किये गये, उसने शिकागों स्कूल (Chicago School) को एक अलग स्थान दिलाया। इन विद्वानों के विचारों का वर्णन आवश्यक है।

1.7 नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े मैक्स वेबर के विचार

समाजशास्त्र में मैक्स वेबर का नाम शास्त्रीय समाजशास्त्री (Classical Sociologist) के रूप में भी लिया जाता है। मैक्स वेबर की अवधारणाओं को पश्चिमी देशों में जहाँ औद्योगीकरण के प्रभाव से समाज में मौलिक परिवर्तन हुए हैं, इस परिवर्तित समाज की संरचना को तथा उसके गुणात्मक पहलुओं को समझने के लिए अभूतपूर्व माना जाता है। इसके साथ ही समाजशास्त्र में उनकी अवधारणाओं को एक वैचारिक विवाद का भी हिस्सा माना जाता है। मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद तथा वर्ग आधारित समाज के विश्लेषण के विरोधी एवं आलोचक के रूप में भी वेबर की कृतियों को आकलित किया जाता है, परन्तु यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि जर्मनी के इन दोनों विद्वानों-मार्क्स तथा वेबर ने अपने-अपने ढंग से औद्योगिक समाज की विशेषताओं का वर्णन कि है। वेबर का मत था कि पश्चिमी संस्कृति तथा समाज में परंपरागत सोच का पर्दाफाश हुआ है। जहाँ एक ओर कट्टरपंथी और धर्मांधता का साम्राज्य व्याप्त था उसमें एक गुणात्मक बदलाव आया है जो कि मनुष्य के विवेक, उसके ज्ञान के प्रति रुझान को एक नयी दिशा, एक नयी वैचारिकी से भी जोड़ता है। परंपरागत संस्थात्मक स्वरूप व सोच के स्थान पर विवेक पर आधारित तर्कसंगत वैज्ञानिक सोच उसके धर्म तथा समाज के प्रति विचारों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है। आधुनिक समाज ज्यादा तर्कसंगत और विवेक पर आधारित समाज है। वेबर के अनुसार विवेक पर आधारित समाज के संस्थात्मक स्वरूप में भी क्रमशः बदलाव आया है।

मैक्स वेबर ने अपनी पुस्तक The City में अपने विचार प्रकट किये हैं। शहर के बारे में उनके विचार शिमेल के विचार से अलग हैं। उनका कहना था कि यह मान लेना कि शहर का आकार, सांख्यिकी दृष्टिकोण से बड़ा सघन और बृहत् होता है और इसी आधार पर शहर को परिभाषित करना गलत होगा। आकार के आधार पर ही शहर और गाँव के अंतर को देखना और शहर की परिभाषा देना गलत है। आर्थिक पहलू की व्याख्या करते हुए शहर की परिभाषा में उन्होंने राजनीतिक तथा प्रशासनिक पहलू को भी शामिल किया है। शहर को वे एक समूह के रूप में देखते हैं जिसका एक निश्चित भूभागीय क्षेत्र होता है, सैनिक नियंत्रण होता है। साथ-ही-शहरी समुदाय की कुछ अन्य विशेषताएं भी होती हैं। शहरी समुदाय एक ऐसी व्यवस्था है, जहाँ संबंध, व्यापार तथा वाणिज्य पर

आधारित होते हैं, जिसकी निम्नलिखित विशेषताएं उल्लेखनीय हैं :

(i) एक सीमा क्षेत्र (ii) बाजार

(iii) एक स्वतंत्र कचहरी जहाँ कानून आंशिक रूप से स्वतंत्र होता है।

(iv) एक समिति का स्वरूप

(v) आंशिक स्वतंत्रता तथा मतदान का अधिकार।

इस प्रकार शहर को परिभाषित करते हुए वेबर इसे एक नगरीय समाज के रूप में चित्रित करते हैं। वेबर का मानना था कि वे शहर जहाँ अधिकार परंपरागत तथा जानकारी व्यक्तित्व पर निर्भर करते हैं। उसे शहर नहीं माना जा सकता, जहाँ कानून निजी सोंच पर आधारित होता हो न कि सार्वजनिक आधार पर उन्हें भी शहर नहीं माना जा सकता है। इसीलिए चीन के शहरों को, ग्रीस तथा रोम के शहरों को वे शहर नहीं मानते। जिन शहरों पर सैन्य बल का प्रयोग हो और जिसका कोई आर्थिक आधार पर सैन्य बल का प्रयोग तो हो और जिसका कोई आर्थिक आधार न हो उसे शहर नहीं माना जा सकता है। एक शहर का आदर्श स्वरूप वहाँ परिलक्षित होता है जहाँ शहर एक सामाजिक व्यवस्था होती है, जहाँ अनेक लोग एके दूसरे से परस्पर अंतः संबंध एक खास वातावरण तथा भौतिक क्षेत्र में करते हों। ऐसे शहर में लोग परस्पर सांस्कृतिक रूप से निर्मित प्रतीक चिह्नों से जुड़े व संबंधित होते हैं। अंर्तसबंध रखने वाले लोगों के बीच उनके निहित स्वार्थ एक दूसरे से जुड़े हों और जहाँ शहर के सीमा क्षेत्र से भी लोग बंधे हों। इस प्रकार आदर्श शहर पश्चिमी यूरोप में सामंती व्यवस्था से पूंजीवादी व्यवस्था के बदलने से संभव हो पाया है। उनके शहर के संदर्भ में विचार निम्नलिखित दो पहलुओं पर आधारित हैं:

(i) पूंजीवादी समाज के विषय के विवेक पर आधारित सोंच।

(ii) व्यक्तिवादी सोच का अस्तित्व।

इस प्रकार शहर से संबंधित सोच उपर्युक्त दो मान्यताओं पर आधारित हैं। इसके अलावा यहाँ यह भी स्मरण रखना आवश्यक है कि वेबर के शहर का अध्ययन पूंजीवाद के विकास से भी जुड़ा है। मध्यकालीन शहर का विकास नई सामाजिक समितियों से जुड़ा हुआ था। विवेक पर आधारित व्यवहार जिस पर पूंजीवादी समाज आधारित था, उसकी जड़ें इन समितियों से जुड़ी थीं जिनमें **कानून**, कचहरी और श्रेणी, पूजास्थल तथा नगरीय प्रशासनिक व्यवस्था की अलग पहचान थी। शहरीकरण की प्रक्रिया एक विशिष्ट आर्थिक राजनीतिक परिवेश के साथ-साथ उन आवश्यक सामाजिक परिस्थितियों से जुड़ी थी, जिसके कारण पूंजीवादी की श्रृंखला बनी थी। निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि वेबर के शहर की अवधारणा एक ऐसी समग्र सामाजिक व्यवस्था को दर्शाती है जिसकीं कई अतसबधित क्रियाएं हैं। उनके आदर्श शहर की अवधारणा में आर्थिक तथा धार्मिक क्रियाओं का एक सामजस्य है जो निजी तथा जन जीवन का सम्मिलित स्वरूप है।

आलोचनात्मक दृष्टिकोण से यह कहा जा सकता है कि वेबर के शहर में संबंधित विचार नगरीय समाजशास्त्र के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण अवधारणा हैं, जहाँ वेबर ने शहर के आदर्श स्वरूप

का विवेचन किया है। सवाल यह है कि वास्तविक जीवन में यह आदर्श स्वरूप कभी विकसित भी हो पायेगा या नहीं, और विकसित होगा भी तो कब होगा? दूसरी ओर इतिहास में भी वेबर ने जिस आदर्श शहर की बात की है उसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। इसलिए यह कहना अनुचित न होगा कि वेबर की शहर से जुड़ी अवधारणा निसन्देह अत्यन्त सारगर्भित विचार है, परंतु नगरीय समाजशास्त्र के संदर्भ में इसका महत्व नगरवाद की एक अवधारणा और उससे संबंधित वर्गीकरण को ही लेकर बनाता है।

1.8 नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े लेविस मम्फोर्ड के विचार

लेविस मम्फोर्ड (Lewis Mumford) ने पर्यावरण से संबंधित मुद्दों को प्राथमिकता देते हुए शहरी समाज के विरोधभासी व अंतर्द्वन्द्व को चिह्नित करते हुए इस बात की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट कराया कि किस प्रकार हमारा शहरी जीवन यांत्रिक तरक से व्यक्ति को अपना जीवन यापन करने के लिए बाध्य कर रहा है। जिसके कारण शहरी जीवन मानवीय तथा प्राकृतिक जगत से पृथक होता जा रहा है। संभवतः इसीलिए जोबर्ग ने लेविस मम्फोर्ड के विचारों को पर्यावरण स्कूल से जोड़कर देखा है। लेविस मम्फोर्ड ने अपनी पुस्तक The City in History में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लिखा - "शहर का मुख्य कार्य है शक्ति को स्वरूप में बदलना, उर्जा को संस्कृतिक मृत पदार्थ को कला के जीवंत प्रतीक, जैविकीय उत्पादन को सामाजिक रचना का रूप देना। शहर का सकारात्मक कार्य नई तकनीकी व्यवस्था के निर्माण के बिना संभव नहीं है। आधुनिक व्यक्ति के अधीन जो क्षमता है उससे नई व्यवस्था का ऐसा निर्माम जो गाँव को नाभिकीय तथा सशक्त एवं संगठित शहर के रूप में परिवर्तित कर सके।"

इस प्रकार अमेरिकी विचारकों ने शहर के नकारात्मक स्वरूप को पहचाना जिसका वर्जन जर्मनी के कुश समाजशास्त्रियों जैसे सिमेल, वेबर तथा वर्थ महत्वपूर्ण ढंग से किया है। जर्मनी के यह समाजशास्त्री मानते हैं कि शहरीकरण एक आवश्यक प्रक्रिया है जो गंभीर सवाल उठात है। राबर्ट रेडफिल्ड मानते हैं कि मधु समुदाय की जो अपनी पहचान तथा जीवंत मूल्य हैं उसे मेट्रोपोलिस में बनाये रखना संभव नहीं हो पायेगा। लुई वर्थ ने शहर में जो विविधता, व्यापकता तथा सघन आबादी और धर्म निरपेक्ष कासमोपोलिटन तथा उपभोक्तावादी सोच व्याप्त है उसने समुदाय को एक दूसरे से पृथक कर सारगर्भित जीवन यापन करने से वंचित कर दिया है। सिमेल का मानना है कि शहर का मानसिक स्वास्थ्य अधिकाधिक धन संचय करने की मनोवृत्ति के कारण बदलता जा रहा है। इ. फैंकलिन फ्रेजियर ने अपनी पुस्तक The Negro in the United State में लिखा है कि जो नगरी वातावरण विकसित हो रहा है, वह शहर का विध्वंसक (City of Desruction) रूप है जिसके प्रभाव से विस्तृत परिवार (Extended Family) टूट रहे हैं और तलाकशुदा महिला एब एक विकसित शहर में अनिश्चित लक्ष्य की तरफ बढ़ती जा रही है।

लेविस मम्फोर्ड ने अपनी पुस्तक The City in History में शहरी समाज को क्रूर बताया है। मम्फार्ड - काम तथा आराम, शहर और गाँव तथा सामान्य एवं निजी जीवन के बीच संतुलन बनाने के पक्षधर हैं। इसके विपरीत शहरी जीवन-शहर को महिमा मंडित कर उसे उच्च स्थान देने की

सिफारिश करता है। मम्फोर्ड का मानना है कि एक आदर्श स्थिति तब उत्पन्न होती है, जब अधिकांश लोगों को अच्छे जीवन-यापन करने का विकल्प उपलब्ध हो और ऐसा न होना चिंता का विषय रहा है।

इस प्रकार नगरीय समाजशास्त्र में जब शहरीकरण की चर्चा की जाती है तब एक बेहतर विकल्प की भी बात की जाती है। जो नगरीय योजना (Urban Planning) से जुड़ी है। एक प्रगतिशील नगरीय योजना में आजादी, विविधता तथा चयन के सुनहरे अवसर एक लभावनी शब्दावली के रूप में हमारे सम्मुख प्रस्तुत होते हैं। एक दूसरी अवधारणा जो इससे जुड़ी मानी जाती है वह है शहरीकरम की प्रक्रिया। मम्फार्ड ने शहरीकरण का स्वागत किया है। उनकी मान्यता है कि शहरों में मनुष्य का जीवन व्यापक हो जाता है, क्योंकि बिखरे हुए तत्वों का संयोजन संभव हो जाता है जिससे मनुष्य की गुप्त ऊर्जा को प्रस्फुटित होने का एक रचनात्मक आधार तैयार होता है। शहर मनुष्य की आकांक्षाओं उसकी अभिलाषाओं तथा व्यक्तिगत अनुभव को पनपे तथा फैलने का पूरा अवसर प्रदान करता है। इस प्रकार मम्फोर्ड शहर की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए बताते हैं कि शहर मनुष्य के बृहत् तथा विभिन्न आयामों को प्रोत्साहित करता है, जिसके फलस्वरूप जो संवेदनात्मक संवाद तकनीकी से प्रेरित होकर संभव हो पाता है, वह मनुष्य के अप्रकट उत्कंठाओं को नाटकीय मोड़ देता है।

1.9 नगरीय समाजशास्त्र से जुड़े पार्क - बर्गेस के विचार

नगरीय समाजशास्त्र के विषय क्षेत्र में पारिस्थितिकी सिद्धान्त (Ecological Theory) का अपना - अपना महत्व है। सर्वप्रथम पारिस्थितिक सिद्धान्त के विचार को समाजशास्त्र विभाग द्वारा प्रचारित किया गया है। शिकागो विश्वविद्यालय की स्थापना 1982 में हुई थी। इसे शिकागो स्कूल के नाम से प्रसिद्धि मिली और बीसवीं सदी के दूसरे दशक के शुरुआती दौर को इसके स्वर्णिम युग (Golden Age) की संज्ञा दी जा सकती है। इस विश्वविद्यालय के प्रथम एवं प्रमुख कर्ताधर्ता। थोमस (Thomas) के बाद पार्क तथा बर्गेस के योगदान से शिकागो स्कूल को काफी प्रसिद्धि मिली। पार्क तथा बर्गेस का नाम मानवीय परिस्थितिकी (Human Ecology) का परिचय कराने वालों में (1921) आता है। पारिस्थितिकी को विज्ञान की संज्ञा दी जाती है तथा यह माना जाता है कि सर्वप्रथम पारिस्थितिकी एव विज्ञान है जहाँ जीवित प्राणी और वातावरण के बीच के अंतःसंबधों को ध्यान में रखकर शोध किया जाता है। इसके पूर्व वनस्पति शास्त्रियों, भूगर्भशास्त्रियों तथा जीव वैज्ञानिकों ने पौधों तथा पशु जगत को ध्यान में रखकर इस शब्द का प्रयोग किया था। पार्क तथा बर्गेस ने जीवन के जाल को मानवीय समुदाय के अध्ययन का एक अभिन्न अंग माना है।

शिकागो विश्वविद्यालय से जुड़े पार्क तथा बर्गेस ने नगरीय समाजशास्त्र को संकेन्द्रित क्षेत्र उपकल्पना (Concetric Zone Hypothesis) से जोड़कर देखा है। शहरी क्षेत्र में बसने वाले लोगों के बीच एक प्रतिस्पर्धा, संघर्ष, सम्मिश्रण तथा एक दूसरे के विचारों के अधिग्रहण करने की क्षमता होती है। पार्क तथा बर्गेस के अनुसार पूरी सामाजिक प्रक्रिया को पांच संकेन्द्रित क्षेत्र या जमीन पर होने वाली गुटबंदी को वृत्ताकार चक्र के रूप में देखा जा सकता है। प्रत्येक वृत्ताकार चक्र का एक

क्षेत्र, एक खास प्रकार की क्रिया के क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। सभी चक्रीय क्षेत्रों के द्वारा शहरी जीवन के बढ़ते आयाम को दर्शाया गया है। (देखें : चित्र-1)

चित्र-1 पार्क तथा बर्गेस के संकेन्द्रित क्षेत्र का सिद्धान्त

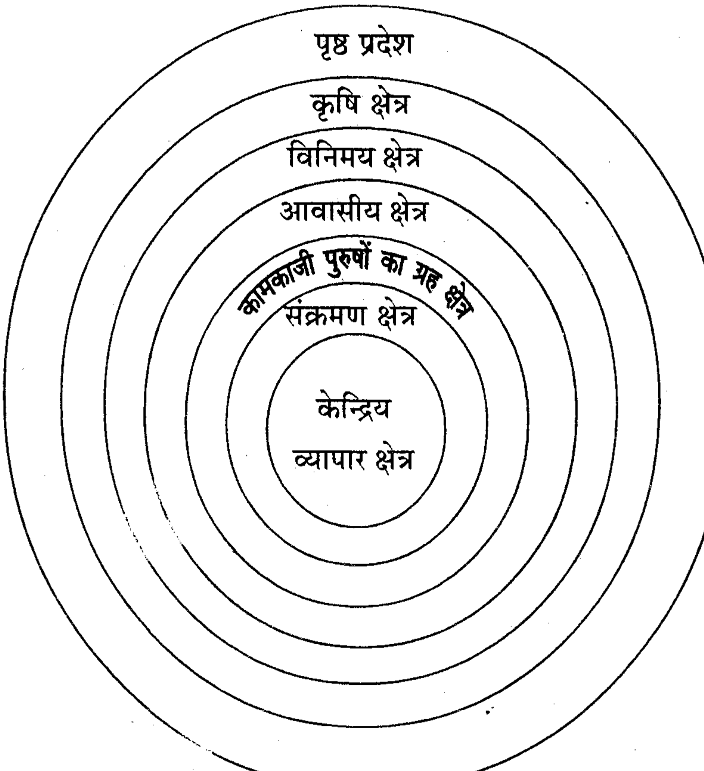

1.9 केन्द्रीय व्यापार-क्षेत्र

पार्क तथा बर्गेस द्वारा प्रतिपादित संकेन्द्रित क्षेत्र के सिद्धान्त में जो सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है, उसमें केन्द्रीत बैंक, डिपार्टमेन्ट स्टोर्स, माल, रेस्तरां, सिनेमा तथा रंगशालाओं में मनोरंजन चीजों को प्रस्तुत किया जाता है। इस केन्द्रीय व्यापार क्षेत्र मं किसी का आवास नहीं होता है, परन्तु इस जोन में खुदरा व्यापार, मनोरंजन, रेस्तरां तथा लघु स्तर पर फुटकर बिक्री हेतु समान होते हैं।

दूसरे क्षेत्र को संक्रमण क्षेत्र के रूप में देखा जाता है, जहाँ निरंतर परिवर्तन होता रहता है। आवासीय क्षेत्र पूर्ण या आंशिक रूप में वाणिज्य या व्यापारिक क्षेत्र बन जाते हैं। इस प्रकार इस क्षेत्र के भूभागीय स्थल का प्रयोग निरंतर बदलता रहता है। जनसंख्या के स्थानांतरण के द्वारा भी इसके क्रियाकलाप में नवीनता बनी रहती है। जिसका सर्वोपरि सरोकार जमीन के विभिन्न प्रकार से इस्तेमाल करने से जुड़ा होता है। इस क्षेत्र के विविध स्वरूप देखे जा सकते हैं। यहाँ एक ही समय पर कई विरोधी तत्वों का समावेश भी होता है। यहाँ धनवानों के लिए बाजार होता है तो बड़ा फुटपाथ गरीबों के लिए होता है, जहाँ गरीब फेरीवाले,छोटे विक्रेताओं की दुकान लगी होती है।

तीसरा जोन कामकाजी गृह का क्षेत्र होता है जिसे मुख्य रूप से आवासीय क्षेत्र कहा जा सकता है। इस क्षेत्र में बसने वाले छोटे उद्योगों से जुड़े कामकाजी लोगों का घर होता है। जिसे नृजातीय पृथक्

बस्ती (Ethnic Ghetto) तथा मध्यवर्गीय आवासीय क्षेत्र कहा जा सकता है। चौथा जोन वह क्षेत्र होता है जहाँ मध्यम श्रेणी के व्यापार व उद्योग से जुड़े लोग जिनमें नौकरी पेशे से जुड़े लोग, वकील, शिक्षक या पुलिस अधिकारी भी हो सकते हैं। इन आवासीय क्षेत्रों में एपार्टमेन्ट या बहुमंजिली इमारतें भी हो सकती हैं जहाँ मध्यम वर्ग के लोग रहत हैं।

पाँचवाँ तथा अंतिम क्षेत्र पार्क व बर्गेस के अनुसार विनिमय (Commuters zone) क्षेत्र कहा जाता है, जो शहरी क्षेत्र से थोड़ा अलग एक सेटलाइट शहर व आवासीय क्षेत्र होता है, जहाँ से बस, टाम व मेट्रो या स्वयं के वाहन द्वारा अपने कार्य क्षेत्र पर नित्य 25-50 किलोमीटर या उससे भी अधिक दूरी तय कर आते हैं। इन क्षेत्रों का उपनगर (Suburb) कहा जाता है।

पार्क तथा बर्गेस ने संकेन्द्रित क्षेत्र के प्रारूप के द्वारा समाजशास्त्रीय तस्वीर प्रस्तुत की है। उन्होंने इसके द्वारा शहर में बसने वाले लोगों, शहर के क्रियाकलाप तथा गतिशील जीवन की शैली को दर्शाया है। शहर के विभिन्न क्रियाकलापों को वर्णित करने का यह एक महत्वपूर्ण प्रारूप है जिसमें शहरी जीवन की व्यापक गतिविधियों और शहर से जुड़े लोगों के क्रियाकलाप व उनके व्यवहारों का अंदाज लगाया जा सकता है। किस प्रकार शहरी जीवन में गतिशीलता आती है, इसे दर्शाने के लिए दो महत्वपूर्ण अवधारणाओं चढाई (Invasions) तथा अनुक्रमण (Succession) के द्वारा शहरी जीवन की जीवन शैली को समझा जा सकता है। चढाई से तात्पर्य जमीन के बढ़ते इस्तेमाल तथा नये क्षेत्रों और समूह क क्रियाकलाप से है। अनुक्रमण के द्वारा आभास होता है कि एक गतिविधि को कैसे दूसरी गतिविधि द्वारा बदला जाता है।

इस प्रकार पार्क तथा बर्गेस के संकेन्द्रित क्षेत्र के सिद्धान्त द्वारा शहरी क्षेत्र में होने वाली तमाम क्रियाओं को समझा जा सकता है। इससे शहरी जीवन में होने वाले निरंतर बदलाव तथा वर्गों के परिवर्तित रुझान का अनुमान भी लगाया जा सकता है। इसीलिए संकेन्द्रित क्षेत्र का सिद्धान्त एक Gadient सिद्धान्त भी कहलाता है, जिसके द्वारा शहरी जीवन के परिवर्तित क्रियाकलाप को समझ कर इसमें होने वाले तमाम वारदातों जैसे अपराध की बढ़ती घटनाओं तथा मनुष्य के दैनिक जीवन में आने वाले तनाव आदि को भी समझा जा सकता है। शहर की सामाजिक पारिस्थितिकी को समझने के लिए निश्चय ही यह एक महत्वपूर्ण प्रारूप है।

1.10 सारांश

उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट है कि नगरीय समाजशास्त्र पूर्णरूप से एक अलग विषय के रूप में विकसित हुआ है। संभवतः इसीलिए समाजशास्त्रियों ने नगरीकरण की प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया है। वास्तव में, देखा जाये तो नगरीय समाज को समाजशास्त्रियों ने शुरू से ही अपने अध्ययन का केन्द्र माना है। इसीलिए जर्मन, फ्रांसीसी, अंग्रेज तथा अमेरिक समाजशास्त्रियों ने औद्योगीकरण की प्रक्रिया में नगरीय समाज के व्यापक क्षेत्र क। विस्तार से अध्ययन करने के लिए कई महत्वपूर्ण अवधारणाएँ तथा सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं जिन सभी का वर्णन प्रस्तुत इकाई में किया गया है।

1.11 बोध प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र01. The City in History के लेखक हैं :

(अ) मैक्स वेबर (ब) लुई वर्थ (स) लेविस मम्फोर्ड (द) जोबर्ग

प्र02. The City के लेखक हैं।

(अ) मैक्स वेबर (ब) लुई वर्थ (स) जोवर्ग (द) लेविस मम्फोर्ड

प्र03 आदर्श प्रारूप (Ideal type) की अवधारणा से किसका नाम जुड़ा है?

(अ) किंगसले डेविस (ब) जोबर्ग (स) गेराल्ड ब्रिज (द) मैक्स वेबर

प्र04 पार्क-बर्गेस का नाम निम्न से जुड़ा है

(अ) पर्यावरण (ब) पारिस्थितिकी (स) औद्योगिकी (द) आधुनिकीकरण

1.12 बोध प्रश्न

प्र01 'स'

प्र02 'अ'

प्र03 'द'

प्र04 'ब'

संदर्भ ग्रंथ-सूची

एब्राहमसन, मार्क, अर्बेन सोशियोलोजी, प्रेंटिस हाल सिरिज, न्यू जर्सी - 1980

ब्रिज, गेराल्ड अर्बेनाइजेंशन इन 'डेवेलपींग कंट्रीज, प्रेंटीस हाल सिरिज, 1967

बटलर, एडगर डब्लू, "अर्बेन सोशियालाजी ए सिस्टमेटिक अप्रोज, 'हार्पर एंड रो पब्लिशर्स न्यू यार्क, 1976

डिकिन्स, राबर्ट, ई, सिटी एंड रीजन : ए जियोग्रेफिकल इंटरप्रिटेशन, रुवलेज एंड केगन पाल, लंदन, 1964

गिडेन्स, एंथोनी, सोशियोलोजी पोलिटी प्रेस लंदन, 1996.

हाउजर फिलिप एम., द स्टडी आफ अर्बेनाइजेशन, जान विली एंड संस, न्यूयार्क, 1965.

मान, पिटर एच., एन अप्रोच टू अर्बेन सोशियोलोजी, रूटलेज एंड केगन पाल, न्यूयार्क, 1965.

मेलर, जे.पी. अर्बेन सोशियोलाजी इन एन अर्बेनाइज्ड सोसाइटी, रुटलेज एंड केगन पास, लंदन, 1977.

मोहन सुधा, अर्बेन डेवेलपमेन्ट, रावत पब्लिकेसन्स, जयपुर 2005.

भार्गव, गोपाल, अर्बेन प्रोबलेम्स ऑफ पालिसी पर्सपेक्टिव्स अभिनव पब्लिकेशन्स, नयी दिल्ली, 1981.

पटकर, मेघा एवं सिंप्रित सिंह :, अर्बेन रीनाअल : एट हूज, कॉस्ट ? इकानामिक एंड पालिटिकल विकली, वो0 XLII नंबर-11 मार्च 17-23 2007

रामचन्द्रन, आर. अर्बेनाइजेशन एंड अर्बेन स्सिटेम इन इंडिया, आक्सफार्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली 2001.

राव, एम. एस. ए. अर्बेन सोशियोलोजी इन इंडिया, रीडर एंड सोर्स बुक, ओरियंट एंड लौगमैन, नयी दिल्ली, 1974

इकाई -2 : नगर, नगरीकरण एंव नगरवाद

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 नगर उत्थान का ऐतिहासिक संदर्भ

2.3 नगर की परिभाषा, प्रकृति एवं विशेषताएं

2.4 नगरीकरण की प्रक्रिया : ऐतिहासिक संदर्भ

2.5 नगरीकरण की परिभाषा, प्रकृति एवं विशेषताएं

2.6 नगरीकरण के तत्व एवं इससे जुडे.जनसांख्यिकीय दृष्टिकोण

2.7 नगरवाद के उदय का ऐतिहासिक संदर्भ

2.8 नगरवाद की अवधारणा से जुड़े सिद्धान्त

2.9 सारांश

2.10 बोध प्रश्न

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- नगर, नगरीकरण एवं नगरवाद का ऐतिहासिक संदर्भ और उद्भव की क्या दिशा रही है- इसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- नगर, नगरीकरण एवं नगरवाद क्या है, इसकी प्रकृति एवं विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- नगर, नगरीकरण एवं नगरवाद संबद्ध अवधारणाएँ जो समाजशास्त्र या अन्य समाजिक विद्वान में अवधारणा तथा दृष्टिकोण से जुड़ी हैं, उसकी भी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- नगर, नगरीकरण एवं नगरवाद से जुड़े अन्य पहलू जिन्हें सामाजिक संरचना के बदलाव से जोड़कर देखा जाता है। उसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

नगरीय समाजशास्त्र का उदय उन्नीसवीं सदी के अंतिम चरणों में हुआ। सामाजिक चिंतकों ने विविध सामाजिक सर्वेक्षण द्वारा लोगों की सामाजिक स्थिति का आकलन करने के लिए सर्वेक्षण को अध्ययन विधि का एक आधार मानकर अध्ययन शुरू किया। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में जिस प्रकार सर्वेक्षण के कार्य का श्री गणेश किया गया, उसमें गरीबी (Poverty) को ध्यान में रखकर

सर्वेक्षण किये गये। गरीबी के साथ-साथ आवास तथा सामुदायिक विकास को भी अध्ययन-क्षेत्र के दायरे में रखा गया। बीसवीं सदी के मध्य तक नगरीय समाजशास्त्र ने अपनी पहचान बना ली थी। नगरीय समाजशास्त्र में नगर की संरचना, कार्य एवं इसकी गतिशीलता का अध्ययन किया जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद तीन अवश्यकताओं में नगरीय समाजशास्त्र का विकास हुआ। (क) पहली अवस्था की वस्तुनिष्ठ अध्ययन (Empirical Studies) की जिसमें क्षेत्रीय विधि के प्रयोग द्वारा अध्ययन-क्षेत्र का चुनांव करने की परंपरा शुरू हुई। यह परंपरा सामाजिक मानवशास्त्र की परंपरा थी जिसके प्रभाव में आकर समाजशास्त्रियों ने नगर को केन्द्र बनाकर उसकी संरचना, कार्य एवं परिवर्तित स्वरूप का अध्ययन किया। (ख) दूसरी अवस्था 1960 के मध्य से शुरू हुई जब नगरीय समाजशास्त्र में नगर को केन्द्र बनाया गया तथा समाजशास्त्रीय अवधारणाओं के संदर्भ में नगर के परिवर्तित स्वरूप का अध्ययन समाज की संस्थाओं को ध्यान में रखकर किया गया। अर्थात् नगर में परिवार,जाति, नातेदारी एवं विवाह जैसी जो संस्थाएं हैं उनपर नगरीकरण का क्या प्रभाव पड़ा?

इस प्रकार के अध्ययन अमेरिका व यूरोप के समाजशास्त्रियों की अवधारणाओं को भी ध्यान में रखकर किये गये। इस अध्ययन के माध्यम से तुलनात्मक विधि के द्वारा नगर का गाँव से क्या संबंध है, तथा नगरीकरण की प्रक्रिया ने गाँव के लोगों, उनके व्यवहार व दृष्टिकोण को किस प्रकार प्रभावित किया है-इन मुद्दों को अध्ययन का केन्द्र बनाया गया। (ग) नगरीय समाज क जो तीसरी अवस्था विकसित हुई उसमें यह महसूस किया गया कि नगरीय समाजशास्त्र अकेला ही नगर की संस्कृति, स्वरूप तथा गतिशीलता का अध्ययन नहीं करता, बल्कि इसके साथ क्षेत्रीय अध्ययन भी शामिल है। क्षेत्रीय आधार की परंपरा में नगर के विकास से जुड़े लोगों के राजनीतिक और आर्थिक पहलुओं का भी ऐतिहासिक संदर्भ में महत्वपूर्ण अध्ययन किया जाता है। नगर विकास के साथ ही नगर नियोजन में तकनीकी के विवेकसंगत प्रयोग की आवश्यकता है। शहर में रहने वालों की शहरी सुविधा के साथ-साथ, शहर व नगर से जुड़ी समस्याओं का समाधान कैसे किया जा सकता है? इन सभी मुद्दों और पहलुओं का व्यापक अध्ययन किया जाना आवश्यक है।

नगरीय समाजशास्त्र का अध्ययन -क्षेत्र पिछले 100 वर्षों के अनुभव से काफी व्यापक हुआ है। अब नगर व शहर की समस्याओं का विशिष्ट अध्ययन नगर नियोजन तथा नगर में बसने वालों की आवासीय समस्याओं, बिजली, पानी तथा सड़क के साथ, स्वास्थ्य एवं शिक्षा तक ही सीमित नहीं है। इसके साथ ही प्रदूषण रहित जलवायु कैसे प्रदान की जा सकती है-यह भी न केवल एक मूलभूत समस्या है, बल्कि अध्ययन के लिए एक चुनौती भी है। इस प्रकार आज नगर समाजशास्त्रियों को शहरीकरण की प्रक्रिया से जुड़ी महत्वपूर्ण समस्याओं और सवालों की ओर भी ध्यान देना जरूरी होता जा रहा है। आने वाले दिनों में जनसंख्या नियोजन, गरीबी, अप्रवासी लोगों की आवासीय समस्याएं, बिजली-पानी-सड़क का प्रबंधन तथा प्रदूषण रहित वातावरण के लिए सामाजिक पारिस्थितिकी के अनुरूप नियोजन आदि नगरीय अध्ययनों के क्षेत्र में एक प्रमुख चुनौती बनने वाली है। इन सब मुद्दों पर विस्तार से चर्चा करना इस इकाई का उद्देश्य नहीं है। इसलिए यहाँ पर नगर, नगरीकरण तथा नगरवाद पर दी विस्तार से हम चर्चा करेंगे।

2.2 नगर के उत्थान का ऐतिहासिक संदर्भ

नगर आज हम सभी के लिए एक प्राकृतिक आवासीय क्षेत्र बनता जा रहा है भूमंडलीकरण के दौर में वैचारिक स्तूर पर तो हम कह सकते हैं कि नगर से तथा उसकी समस्याओं से हम सब अच्छी तरह वाकिफ हैं। संचार के साधनों में जिस प्रकार के क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं उसमें नगर तथा गाँव के बीच के फासले लगभग समाप्त हो रहे हैं। कुछ जगहों पर तो नगर और गाँव की दूरी प्रायः समाप्त ही हो चुकी है।

नगर का इतिहास लगभग 6000 वर्ष पुराना है। नगर की सभ्यता का उद्भव प्राचीन मेसोपोटामिया से माना जाता है जो ग्रीस तथा रोम की राजशाही परंपरा से जुड़ा है। मध्यकालीन युग में नगर में बसने वाले लोगों की जनसंख्या में ह्रास शुरू हुआ जो सत्रहवीं तथा अठारवीं सदी तक चला। इसके बावजूद समाजशास्त्रियों के द्वारा City को परिभाषित करना उतना आसान नहीं है। मार्टिन्डेल का मत है कि नगर ने अपनी पुरानी परंपराओं तथा नीतियों को जो पश्चिमी देशों में परिलक्षित होती थी-खो दिया है। ग्रीस के नगरीय समाज जिसमें नगर सत्ता के महत्वपूर्ण स्वरूप को बनाया हुआ था-उसमें परिवर्तन हुआ है। इसका उदय अब एक स्वतंत्र आर्थिक इकाई के रूप में हुआ है। नगर की संस्कृति आज काफी व्यापक हो गयी है। एक महानगर के क्षेत्र के रूप में यह सरकार तथा इनके संघीय प्रणाली (Federal Character) से जुड़ा है। नगरीय समाज के उत्थान होने से शहर का स्वतंत्र रूप प्रायः लुप्त होता जा रहा है।

2.3 नगर की परिभाषा, प्रकृति एवं विशेषताएं

नगर से जुड़ी एक दूसरी अवधारणा है जो इसे एक विशिष्ट समुदाय के रूप में चित्रित करनी है। रोलैण्ड वारेन (Roland Warren) ने इस मत को प्रकट किया है। उनका कहना था कि समुदाय लोगों का एक समूह है जो सामाजिक क्रियाओं को एकीकृत करता है जिससे उसकी प्रासंगिकता आज भी बनी है। इसलिए नगर न केवल आकार, जनसंख्या के घनत्व तथा विजातीथ गुणों के कारण अपनी पहचान बनाता है, बल्कि अपने विशिष्ट सामाजिक संरचनात्मक गुणों के कारण इसकी पहचान बनती है। नगर की संरचनात्मक विशेषताएं निम्नलिखित हैं :

(क) जटिल श्रम विभाजन

(ख) इनके विभिन्न स्वार्थ तथा नगरीय समाज से जुड़े लोगों ने संबंध

(ग) बड़े समाज से इनके विधिवत् तथा व्यवस्थित संबंध

(घ) अधिकारी तंत्र से घनिष्ठता थथा अवैयक्तिक संबंध

(ङ) क्रियाओं में मुनाफे से जुड़े कार्य क्षेत्र के प्रति झुकाव और सरकारी

स्वैच्छिक समिति के विपरीत वैयक्तिक रुझान के प्रति झुकाव

रेडफिल्ड तथा लुई वर्थ के नगरीकरण के प्रारूप में नगर को ग्रामीण जनसंख्या से अलग

देखा गया है। आज छोटे-छोटे कस्बे की अपेक्षा नगर में परिवर्तन और अस्थायित्व अधिक है। उपसमाज स्कूल के समर्थक पार्क तथा बर्गेस ने नगर के संदर्भ में अवैयक्तिक प्रतिस्पर्धा (Impersonal Competition) को महत्वपूर्ण माना है। पर्यावरण स्कूल से प्रभावित लेविस मम्फोर्ड और जोबर्ग का मत है कि समस्याओं का मुख्य कारण उसके प्राकृतिक तथा मानवीय गुणों का अलग होना है। अर्थात् नगर के प्राकृतिक वातावरण में भी कृत्रिमता तथा यंत्रीकरण का वर्चस्व होता है। ऐसी स्थिति में मनुष्य भीड़ और तकनीकी से प्रभावित बाजार में भी अपने आप को ठगा हुआ सा एवं अलग-थलग महसूस करता है। संभवतः इसीलिए जर्मनी के प्रसिद्ध समाजशास्त्री वेबर ने शहर के आदर्श प्रारूप का वर्णन करते हुए इसे विवेक पर आधारित पूंजीवादी व्यवस्था के रूप में वर्णित किया था जिसमें कचहरी तथा नियमों का वस्तुनिष्ठ स्वरूप परिलक्षित होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नगरीय समाज की संरचना व क्रियाकलाप के आधार पर समाजशास्त्रियों ने अलग-अलग दृष्टिकोण से इसकी व्याख्या की है। नगरीकरण के संदर्भ में परंपरागत समाज की संरचना और क्रियाओं के प्रति शोध किये गये हैं। नगरीकरण की प्रक्रिया का विस्तार औद्योगिक क्रांति तथा शहरों में गाँव के लोगों के प्रवसन के कारण हुआ है। गाँवों से लोगों का नगर प्रवसन मूलभूत नगरीय ढाँचों में परिवर्तन तथा परिवहन की सुविधा होने से तीव्रतर हो गया है। शहर में जनसंख्या घनत्व का बढ़ना और संस्थात्मक बदलाव से सामाजिक संबंधों में भी व्याप्त जड़ता में पर्याप्त परिवर्तन आये हैं। जिन देशों में शहरों की संख्या कम थी वहाँ भी विज्ञान और तकनीकी में परिवर्तन के साथ-साथ शहरी संसाधनों के केन्द्रीकरण के कारण शहर के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ा है। रोजगार के अवसरों की उपलब्धता के कारण शहर में लोगों का प्रवसन जारी रहा। नगरीकरण की अवधारणा के माध्यम से प्रवसन की अनवरत प्रक्रिया को बेहतर तरीके से समझा जा सकता है।

2.4 नगरीकरण की प्रक्रिया व ऐतिहासिक संदर्भ

प्राचीन काल में बड़े समूह का संगठन पाया जाता था, जहाँ जनसंख्या का घनत्व अपेक्षाकृत सघन था। कुछ बड़े गाँव भी थे जहाँ आर्थिक कारणों से अर्थात् व्यापार व वाणिज्य की सुविधा के कारण अधिक से अधिक लोग वहाँ स्थाई रूप से बसना चाहते थे। यह सामान्य धारणा है कि विकसित तथा विकासशील सभी देशों में यह प्रक्रिया भी सभी जगहों में एक सी नहीं रही, इसलिए अलग-अलग जगहों पर इसका स्वरूप भी बदलता रहा है। आधुनिक औद्योगिक समाज भी नगरीय प्रभाव के कारण ही ज्यादा उभरे हैं। एंथोनी गिडेन्स का मानना है कि बड़े नगर जो औद्योगिक देशों में पाये जाते हैं वहाँ लोगों की संख्या लगभग 200 लाख के करीब पायी जाती है। इस प्रकार के शहर को नगर कोनुर्बेशन (Urban conurbation) कहा गया है। नगर कोनुर्बेशन से तात्पर्य शहरों के झुंड से है जो एक विस्तृत क्षेत्र में बने होते हैं जहाँ जनसंख्या का घनत्व अत्यधिक होता है। नगरीय जीवन के इस बढ़ते हुए क्षेत्र को जहाँ घनी आबादी हो मेगापोलिस (Megapolis) कहते हैं। यहाँ नगर में एक दूसरा नगर या उससे भी अधिक नगर संयोजित हो सकते हैं। नगरीय कोनुर्बेशन का उदाहरण देते हुए एंथोनी गिडेन्स ने बताया कि अमेरिका में इस प्रकार का नगरीय क्षेत्र बास्टन शहर तक फैला हुआ था। इस क्षेत्र में बसने वाले लोगों की संख्या 400 लाख के करीब थी जहाँ जनसंख्या का घनत्व 700 प्रतिमील था।

ब्रिटेन में सर्वप्रथम औद्योगीकरण की प्रक्रिया के प्रभाव से नगरीय समाज बने। ग्रामीण जीवन यापन करने वाले जनसंख्या में कालांतर में नगरीय क्षेत्र उभरे। 1800 में जहाँ 20 प्रतिशत लोग ही नगरीय प्रभाव वाले क्षेत्र में बसते थे- 100 वर्ष बाद अर्थात् 1900 में वहाँ 74 प्रतिशत लोगों का ठिकाना नगरीय बन गया। राजधानी लंदन की संख्या जो सन् 1800 में 10 लाख के करीब थी उसमें सन् 1900 तक सातगुणा वृद्धि हुई। बीसवीं सदी तक आते-आते लंदन में बसने वालों की संख्या 70 लाख हो गयी। ये सभी परिवर्तन अनायास ही नहीं हुए, बल्कि इसके पीछे कुछ कारक तत्व-कुछ आर्थिक क्रियाएं थी जिसके कारण लंदन, उत्पादन, वाणिज्य तथा वित्त का केन्द्र बन गया और लोगों के आकर्षण का केन्द्र बना। पूरे यूरोप तथा पश्चिमी देशों में इस प्रकार के बदलाव देखे गये हैं।

2.5 नगरीकरण की परिभाषा प्रकृति एवं विशेषताएं

नगरीकरण की प्रक्रिया को समझने के लिए समाजशास्त्र में इसे कैसे परिभाषित किया गया है- इस पर विचार करना आवश्यक होगा। जे क्लाइड मिचेल ने नगरीकरण को परिभाषित करते हुए इसके साथ जुड़ी अन्य प्रक्रियाओं का भी उल्लेख किया है। नगरीकरण के साथ-साथ वे गैर आदिवासीकरण (Detribalisation) तथा स्थिरीकरण (Stabilisation) को नगरीकरण से पृथक समझाने का प्रयास किया गया है। मिचेल के अनुसार नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके प्रभाव में नगर का निर्माण होता है, लोगों का प्रवसन शहर की तरफ होता है। कृषि पेशे से जुड़े लोग नगर में उपलब्ध अन्य पेशों को अपनाने लगते हैं और उसके अनुरूप ही उनके व्यवहार तथा सोच में भी अपेक्षित परिवर्तन होने लगता है। इसके विपरीत गैर आदिवासीकरण में दो कारक पाये जाते हैं-जनसांख्यिकी (Statistical Factors) तथा समाजशास्त्रीय (Sociological factor) । जनसांख्यिकी कारण में लोगों के उम्र व लिंग के लक्षणों में अंतर देखा जा सकता है जो ग्रामीण एवं शहरी इलाकों में पाये जाते हैं। दूसरा कारक समाजशास्त्रीय है जिससे प्रभावित होकर लोग अपने आप को ग्रामीण क्षेत्र के बंधन से अपेक्षाकृत स्वतंत्र हो जाते हैं। आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने की वजह से गाँव की संकीर्ण मानसिकता रोजगार के अवसर प्राप्त करने में बाधक नहीं साबित होती। छोटा-बड़ा काम उनके लिए उतना महत्व नहीं रखता है। मिचेल का मानना था कि स्थिरीकरण की प्रक्रिया वह प्रक्रिया है जहाँ प्रवासी नगर में अपने आवास व्यवस्थित करके वहाँ बस जाते हैं।

मिचेल की इस परिभाषा द्वारा नगरीकरण के प्रभाव से प्रवासी को कब स्थायी निवासी का दर्जा मिल जाता है-यह स्पष्ट नहीं है । मिचेल ने नगरीकरण की प्रक्रिया को नगरीय क्षेत्र से जोड़ा जहाँ लोगों के व्यवहार तथा उनकी जीवन शैली उस क्षेत्र के अनुरूप ही बन जाती है। नगरीकरण की व्याख्या दो अन्य अवधारणाओं द्वारा की जाती है जिनमें औद्योगीकरण तथा आधुनिकीकरण का अपना अलग महत्व है। नगरीकरण की प्रक्रिया को समझने के लिए यह आवश्यक है कि नगरीकरण को पश्चिमीकरण से जोड़कर न देखा जाये। नगरीकरण का विभिन्न देशों व क्षेत्रों में अपना पृथक् स्वरूप हो सकता है। उदाहरण के लिए भारत में 60 तथा 70 के दशकों में नगरीकरण में आकर जो बड़े शहर बने उनमें पंजीकृत वाहनों की संख्या पश्चिमी देशों के बड़े शहरों से अपेक्षाकृत कम थी। भारत

के एक-एक शहर की आबादी 20 लाख के लगभग भी पायी गयी, परंतु इन शहरों में परिवहन की संख्या 20 हजार से भी कम पायी गयी। पश्चिमी देशों में नगरीकरण के विशिष्ट तत्वों से यह भिन्न है। जिस प्रकार विकासशील देशों में जीविकोपार्जन के लिए लोग कृषि पर आश्रित होते हैं, उसी प्रकार नगरीकरण का प्रयोग भी जीवन निर्वाह के लिए किया जाता है जिसे अविस्थित नगरीकरण (Subsistence Urbanisation) कहा जाता है। अविस्थिति नगरीकरण से तात्पर्य एक नगर की उस अवस्था से है जिसमें जीवित रहने के लिए आवश्यक वस्तुएं ही मिल पाती है। विकासशील देशों में अविस्थिती नगरीकरण के वे उदाहरण देखे जा सकते हैं जहाँ नगरीय क्षेत्र में रहने के लिए लोगों के परिवार का मुश्किल से गुजारा हो सकने वाला आवास ही उपलब्ध हो पाता है। इसी प्रकार भोजन, कपड़ा तथा शहर की दूसरी सुविधाएं जैसे पानी, बिजली तथा गैस आदि भी मुश्किल से ही मिल पाती है। यह नगरीकरण की वह प्रक्रिया है जहाँ जनसंख्या का घनत्व काफी अधिक होता है और लोगों का जीवन ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोगों से भी ज्यादा कठिनाइयों से भरा होता है।

औद्योगीकरण को नगरीकरण का पर्याय भी माना जाता है। विश्व के कुछ देशों में औद्योगीकरण के सामान्तर ही नगरीकरण का विकास हुआ है। कुछ अन्य जगहों पर औद्योगीकरण हाल की घटना है और कुछ अन्य जगहों पर औद्योगीकरण तथा नगरीकरण की प्रक्रिंया अभी भी शुरू नहीं हो सकी है। हाल के कुछ वर्षों तक चीन जैसे देश के नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या का आकार तथा जनसंख्या का घनत्व तो अधिक था, परन्तु औद्योगीकरण की प्रक्रिया का श्री गणेश भी नहीं हो सका था। इसी प्रकार यह भी संभव है कि औद्योगीकरण का विकास जहाँ हुआ हो वहाँ नगरीकरण की प्रक्रिया शुरू भी न हो पाई हो। कई स्थान ऐसे भी हो सकते हैं जहाँ नगरीकरण की प्रक्रिया इतनी तीव्र हो कि नगर में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के पास रोजगार हो। ऐसी अवस्था में इस प्रक्रिया को अत्यन्तिक नगरीकरण से जोड़कर देखा जा सकता है। दूसरे अत्यन्तिक दशकों में इस प्रक्रिया को अत्यंतिक नगरीकरण की प्रक्रिया कहा जा सकता है। अगर औद्योगीकरण को समकालीन प्रथम बड़ी घटना माना जायें तो नगरीकरण की प्रक्रिया को निश्चय ही वर्तमान समय का क्रांतिकारी परिवर्तन माना जा सकता है।

2.6 नगरीकरण के तत्व एवं इसके जनसांख्यिकीय दृष्टिकोण

नगरीकरण के संबंध में जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है नगर के उत्थान व उदय के पीछे कुछ महत्वपूर्ण कारकों का योगदान रहा है। हाऊजर के अनुसार नगर के उदय के चार प्रमुख कारण रहे हैं: (i) जनसंख्या का आकार (ii) प्राकृतिक पर्यावरण पर नियंत्रण (iii) तकनीकी विकास (iv) सामजिक संगठन में विकास।

जनसांख्यिकीय दृष्टिकोण से नगरीकरण की प्रक्रिया कुल जनसंख्या के एक निश्चित भूभागीय क्षेत्र में लोगों के बसने से जुड़ी है। इस प्रकार नगरीकरण मौलिक रूप से जनसंख्या के एक स्थान पर संगठित होकर बसने से संबंधित है।

संयुक्त राष्ट्र की जनसांख्यिकीय वार्षिकी (Demographic year book) में नगर शब्द की परिभाषा को तीन प्रकार से दर्शाया गया है (क) नागर समाज (Civil Society) का वर्गीकरण

जिनके निम्न कारक विद्यमान हो सकते हैं : (i) स्थानीय सरकार के प्रकार (ii) नगर में बसने वालों की संख्या (iii) लोगों की आबादी जो कृषि से संबंधित हो। (ख) उन प्रशासकीय केन्द्रों का वर्गीकरण जिन्हें ग्रामीण क्षेत्र की छोटी इकाई में रहना पड़ता है और जिन्हें नगर में रखा जा सकता है, और शेष वे जिन्हें गाँव के साथ जुड़ा माना जाता है। (ग) उन नगरीय क्षेत्रों का वर्गीकरण जिन्हें प्रशासकीय सीमा के बाद भी नगर के साथ संबंधित माना जाता है। जनगणना के दृष्टिकोण से भी नगर का अभिप्राय बहुआयामी पहलुओं से जुड़ा है, जिसे ग्रामीण से अलग किया जाता है। सन् 1950 में अमेरिकी जनगणना के अनुसार उन क्षेत्रों को नगरीय क्षेत्र माना गया जहाँ की आबादी 2500 या उससे अधिक थी।

2.7 नगरवाद के उदय का ऐतिहासिक संदर्भ

ऐतिहासिक संदर्भ को ध्यान में रखकर जब हम नगरीकरण की प्रक्रिया की बात करने हैं तब ऐसा लगता है कि नगर का विकास एक जटिल परंतु तकनीकी के साथ जुड़ी प्रक्रिया रही है। नगर के विकास को सिर्फ जनसंख्या के घनत्व, तकनीकी में परिवर्तन एवं औद्योगिक समाज के उदय के साथ उसे मनुष्य के वातावरण, संस्थाओं के बदले स्वरूप, मनुष्य का प्रकृति से संबंध और उसके व्यवहार तथा चेतना से जोड़कर देखना चाहिए। इसीलिए 'नगरवाद' की अवधारणा को पूरे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिवेश से जोड़कर उसका विश्लेषण करना उचित होगा। नगरवाद के विषय में वि गार्डन चाइल्ड (V. Gordon Childe) ने अपने लेख The Urban Revolution में लिखा है कि यह एक नई आर्थिक अवस्था उदविकासीय क्रम में विकास से जुड़ा है। यहाँ क्रांति का अभिप्राय किसी आकस्मिक परिवर्तन से नहीं, अपितु एक आर्थिक संरचना में उत्तरोत्तर परिवर्तन से है जिसके कारण जनसंख्या में नाटकीय ढंग से वृद्धि हुई है। इस प्रकार की वृद्धि औद्योगिक क्रांति के बाद ब्रिटेन, अमेरिका तथा अन्य विकसित देशों में हुई थी।

प्रायः समाजशास्त्री समाज के विकास के क्रम को पूर्व औद्योगिक युग से जोड़कर देखते हैं, जिसमें क्रमशः विकास तीन चरणों में हुआ : जंगलीपन या असभ्यता (Savagery), बर्बरता (Barbarism) तथा सभ्यता (Civilisation)। तार्किक क्रम में भी इस विकास को लंबवत दिशा में बढ़ते देखा जा सकता है। जहाँ विकास की आरंभिक अवस्था तकनीकी तथा सोच के स्तर पर बाद की अवस्था से पिछड़ी हुई थी। नगरीय क्रांति द्वारा नगरीय समाज के उदय को ऐतिहासिक विशेषकर पुरातात्विक विद्वानों द्वारा प्रमाण से जोड़कर देखते हैं। गार्डन चाइल्ड ने नगरीय समाज के उदय को निम्नलिखित 10 प्रमुख विशेषताओं के द्वारा वर्णित किया है: (i) नगर का आकार : इसे मेसोपोटामिया तथा भारत के हड़प्पा तथा मोहनजोदाड़ो जैसे प्राचीन नगरों के विकास से जोड़कर देखा जा सकता है। (ii) नगरीय जनसंख्या का संयोजन (Composition) तथा कार्य (Function) में विविधता (iii) जमीन से हुई पैदावार व मुनाफे (Surpulus Production) को सरकारी खजाने में जमा करवाना (iv) इस सहायता राशि द्वारा बड़ी इमारतों व भवन निर्माण जिससे मंदिर, मस्जिद, गिरिजाघरों और पिरामिड आदि का निर्माण हुआ। (v) बृहत् स्तर पर अन्न उत्पादन का खाद्यान्न सामग्री को मंदिरों में जमा करवाना जिससे जो उत्पादन कार्य से प्रत्यक्ष रूप से नहीं जुड़े थे उन्हें राजकीय खजाने से जीविकोपार्जन का स्रोत प्राप्त कर सकें। (vi) सरकारी खजाने का प्रशासनिक तंत्र

द्वारा प्रबंधन (Management) किया जाना। (vii) लिखित जानकारी के संचय के लिए गणित का सहारा लिया जाना। (viii) विशेषज्ञों द्वारा कलात्मक शैली द्वारा कला कौशल को प्रोत्साहन (ix) सामाजिक रूप से अत्यधिक धन का संचय जिसका प्रयोग उद्योग के लिए कच्चे माल को खरीदने में किया गया। (x) विशेष कलात्मक शैली शिल्प चित्रकारी से जुड़े लोग राजनीतिक तथा आर्थिक रूप से भी शहर से जुड़े।

जोबर्ग ने भी चाइल्ड द्वारा नगर के परंपरागत तरीके से उभरने की प्रक्रिया को महत्व दिया है। उनका मानना है कि इस प्रकार से नगर के उदय से एक खास प्रकार की सत्ता की संरचनात्मक शैली को उभरते देखा जा सकता है। सामाजिक सत्ता के केन्द्रित स्वरूप का परिणाम है कि (क) नगर का फैलाव उसके आकार तथा संख्या से जुड़ा है, (ख) इनका फैलाव गैर-नगरी क्षेत्र में भी हुआ, (ग) और उनका ह्रास भी हुआ। इस तरह के विकास को राजनीतिक क्षेत्र के विकास से जोड़कर भी देखना होगा। गार्डन चाइल्ड के विचारों से प्रेरित होकर गिडियन जोबर्ग (Gideon Sjoberg) ने भी गैर औद्योगिक नगर की विशेषताओं का उल्लेख किया। उनका मत था कि सामंती व्यवस्था काफी स्थिर व्यवस्था थी जिसके प्रति सरकार सतर्क थी। गैर औद्योगिक नगर बाजार का केन्द्र बन जाते हैं। इन नगरों में दूर इलाकों से कच्चा माल व पदार्थ आते हैं। चूंकि गैर-औद्योगिक शहर आधुनिक औद्योगिक केन्द्र से अलग होते हैं अतः गैर औद्योगिक क्षेत्र मानवीय श्रम के स्रोत (Animate Source) पर आधारित थे, जबकि औद्योगिक नगरीय समुदाय गैर-मानवीय स्रोत जैसे बिजली व गैस आदि पर निर्भर होते हैं, जो पूर्व औद्योगिक शहर में नहीं पाया जाता था। पूर्व औद्योगिक शहर में वैज्ञानिक तकनीकी का इस्तेमाल कम होता था। इसे उत्पादन के प्रक्रिया में भी देखा जा सकता था। इस प्रकार जोबर्ग ने नगर को पूर्व औद्योगिक नगर तथा औद्योगिक नगर के रूप में देखा है। उन्नीसवीं सदी के अंत तक नगरवाद को विकसित करने में जिन प्रेरक तत्वों की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जा सकती है वे हैं (क) नगरीय क्षेत्रों का विकास और उसके विकास के साथ ही नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या में वृद्धि (ख) नगरीय क्षेत्रों में हुए विकास अन्य जगहों से अपेक्षा कहीं अधिक थे। इसीलिए बड़े शहरों (Metropolitan Area) की संख्या ग्रामीण तथा छोटे स्तर पर कस्बों में अपेक्षाकृत कम हुआ। (ग) बड़े शहरों से जुड़े उपनगरों (Suburb) में भी जनसंख्या का फैलाव हुआ। परिवहन की सुविधा ने इन्हें बढ़ावा दिया तथा नये आवासीय क्षेत्र इन उपनगरों में मुख्य तथा आवासीय क्षेत्र बन गये। (घ) उपनगरीय क्षेत्रों की आबादी तकनीकी विकास के कारण अलग से बढ़ी। वेबर ने इन नगरों के पर्यावरण में दो महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं का प्रभाव देखा : (क) विभेदीकरण या विजातीय लक्षण जिसके कारण समजातीय बदलाव आया। (ख) एकीकरण या आत्मनिर्भरता जिससे नगर के अलग-अलग अंगों में ज्यादा आत्मनिर्भरता और घनिष्ठ संबंध दिखाई पड़ा।

बढ़ते नगरीकरण के प्रभाव में नगरीकरण का जो रूप आया उसे मेट्रोपोलिटनिज्म अर्थात् महानगरवाद की संज्ञा दी जाती है इसे कानुरबेसन (Canurbation) भी कहते हैं। बड़े शहरों के इन समूहों को मम्फोर्ड ने मानवीय प्रजाति के लिए घातक बताया है। अमेरिका 1950 की जनगणना में बड़े शहरी क्षेत्र को मानक महानगरीय क्षेत्र (standard metropolition area) की संज्ञा दी गयी। हाउजर (1965) तथा डंकन (1959) ने निम्नलिखित चार तत्वों को नगर के विकास का

कारण बताया:

(1) कुल जनसंख्या का आकार

(2) प्राकृतिक वातावरण पर नियंत्रण

(3) तकनीकी विकास

(4) सामाजिक संगठन के विकास

नगरवाद का विकास कहाँ से हुआ है इसके लिए डेविस ने तीन कारकों को महत्वपूर्ण माना है :

(1) शुरू में ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या के अधिक बढ़ने के कारण उन्हें नगरीय क्षेत्र कहा जाने लगा। (2) जब मृत्यु दर के अनुपात में जन्मदर बढ़ती है तो जनसंख्या में वृद्धि होती है। (3) ग्रामीण क्षेत्रों से स्थानांतरित होकर नगर में प्रवसन के कारण नगरों में जनसंख्या सघन हो जाती है।

2.8 नगरवाद की अवधारणा से जुड़े सिद्धान्त

नगरवाद के संदर्भ में कुछ मौलिक सिद्धान्तों को ध्यान में रखना आवश्यक है। लुई वर्थ ने नगरवाद को जीवन की शैली की संज्ञा दी है। शिकागो स्कूल के समर्थक रोबर्ट पार्क ने भी नगरवाद को एक मौलिक अवधारणा बताते हुए इसकी व्यापक व्याख्या की है। वर्थ के विचार में ग्रामीण तथा शहरी जीवन से जुड़े समाजशास्त्रीय सिद्धान्त को शहर-ग्रामीण सातत्य के रूप में भी प्रस्तुत किया है। वर्थ ने उसके पारिस्थितिकीय गुणों की व्याख्या करते हुए नगर के आकार, सघनता तथा विषमता का विस्तार से वर्णन किया है। लोग आज के आधुनिक युग में जिस अनुपात में रह रहे हैं उसे नगर में बसने वाली कुल आबादी से जोड़कर ही नहीं मापा जा सकता है। जो प्रभाव नगर का होता है वह सिर्फ नगर में बसने वाले लोगों से ही नहीं पुष्ट होता है। अर्थात् शहरी जीवन को सिर्फ जनसंख्या के सघन या उसके घनत्व में वृद्धि से ही जोड़कर नहीं देखा जाना चाहिए। इसके कई अन्य पहलू भी हैं जिनका विश्लेषण आवश्यक है। नगरवाद के संदर्भ में यह देखना आवश्यक हो जाता है कि यहाँ आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक सभी आपस में घुलमिल जाते हैं और इन सभी पहलुओं का नियंत्रण नगर के द्वारा होता है।

नगरवाद एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति तथा प्रक्रिया है। जिन शहरों की आबादी ज्यादा सघन और ज्यादा विषमजातीय होगी वहाँ नगरवाद के ज्यादा लक्षण विद्यमान होंगे। नगर में रहने वालों का जीवन उनकी प्रारंभिक जीवन शैली से बिलकुल भिन्न भी हो सकता है। नगरवाद को नगरीय समाजशास्त्र में जनसंख्या की वृद्धि, उसके घनत्व तथा वहाँ बसने वाले लोगों के विषम गुणों से जोड़कर भी देखा जाता है।

जनसंख्या आकार : अरस्तू के समय से यह मान्यता थी कि अगर एक बस्ती में रहने वालों की एक संख्या एक सीमा से अधिक बढ़ती है तो नगर में बसने वाले लोगों के बीच के संबंध प्रभावित होंगे। साथ ही नगर की प्रकृति भी प्रभावित होगी। जनसंख्या का बढ़ता आकार व्यक्तिगत रूप से विविध स्वरूपों को जन्म देता है, क्योंकि अंतःसंबंध जब ज्यादा लोगों के बीच होते हैं तो विविधता

होनी स्वाभाविक है। वैयक्तिक गुण, पेशे, संस्कृति जीवन तथा समुदाय में रहने वाले सदस्यों के परस्पर विचारों में विविधता होना स्वाभाविक है। मैक्स वेबर ने भी विविधता के सामाजिक महत्व को समझाते हुए कहा था कि समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अधिक लोगों के बीच अंतः संबंध की प्रक्रिया से वैयक्तिक संबंध क्षीण हो जाते हैं और संबंधों के दायरे ज्यादा व्यापक हो जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका में एक प्रकार की अनिश्चितता, औपचारिकता, खोखलापन तथा विवेक पर आधारित व्यवहार झलकता है। व्यक्ति परंपरागत संबंधों से मुक्त महसूस करता है। संवेदात्मक संबंध का प्रभाव कम हो जाता है। इसे फ्रांसीसी समाजशास्त्री दुर्खिम ने तकनीकी समाज के गुणों का अभिन्न अंग बताया है। प्रतिमान व मानक शून्यता के साथ-साथ सामाजिक विघटन (Disorganisation) तथा व्यक्ति के अपने क्रियाकलाप में विशेषता (Specialisation) परिलक्षित होती है।

जनसंख्या घनत्व : जनसंख्या का घनत्व भी नगरवाद की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है। इसके अनुपात में वृद्धि होने से श्रम विभाजन की प्रक्रिया में तेजी आती है। लोगों के क्रियाकलाप में विविधता पायी जाती है। प्रतिस्पर्धा बढ़ती है और व्यक्ति को अपने आप को साबित करने का मौका मिल पाता है। इस प्रकार नगर के विभिन्न तत्वों में विशिष्ट क्रियाओं की तीव्र झलक दिखती है।

विजातीयता (Heterogeneity) : नगरवाद के प्रभाव के कारण अनेक प्रकार की विषमताएं भी बढ़ती हैं। समजातीय गुणों के स्थान पर विषमजातीय समाज की भी स्थापना होने लगती है। परंपरागत समाज में सामाजिक स्तरीकरण का आधार केवल जाति ही होती थी। अब जाति, वर्ग, धर्म, लिंग, संस्कृति, पेशे आदि सामाजिक स्तरीकरण के आधार हैं। इस प्रकार जो एकीकरण नगरवाद के प्रभाव से होता है उसमें सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक पहलुओं एवं क्षेत्रों में काफी विविधता देखी जा सकती है। शहर के विभिन्न पक्षों में विशिष्ट कार्य भी दृष्टिगोचर होते हैं। किसी भी व्यवसाय में लोगों के शामिल करने का आधार व्यापक होता है। इसमें किसी एक जाति, क्षेत्र, लिंग या वर्ग के लोगों को ही नहीं शामिल किया जाता है, बल्कि यह विभिन्न सामाजिक समूह से लिये जाते हैं।

नगरवाद से संबंधित अध्ययनों के तीन दृष्टिकोणों की चर्चा की जा सकती है :

(1) भौतिक संरचना जिसका आधार जनसंख्या, तकनीकी तथा पारिस्थितिकी व्यवस्था होती है।

(2) सामाजिक व्यवस्था जहाँ सामाजिक संस्थाओं के साथ एक विशेष प्रकार के सामाजिक संबंधों की शृंखला होती है।

(3) विशेष विचार, दृष्टिकोण व व्यवहार जो सामूहिक व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

2.9 सारांश

नगर, नगरीकरण एवं नगरवाद की अवधारणा समाजशास्त्र में बहुचर्चित विषय है। इन अवधारणाओं को लेकर समाजशास्त्र में जो अध्ययन हुए तथा उसके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का विस्तारपूर्वक वर्णन इस इकाई में किया गया है। तीसरी इकाई में इन अवधारणाओं तथा सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए नगर नियोजन एवं नगरीय प्रबंधन से संबंधित समस्याओं का विस्तार से वर्णन किया गया है।

2.10 बोध प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र01 नगर का इतिहास कितने हजार वर्ष पुराना है?

(अ) 1000 वर्ष (ब) 3000 वर्ष (स) 6000 वर्ष (द) 10,000 वर्ष

प्र02 नगर के आदर्श प्रारूप की बात किस समाजशास्त्री ने की है?

(अ) मैक्स वेबर (ब) लेविस ममफार्ड (स) लुई वर्थ (द) गार्डन

प्र03 सन् 1800 में कितने प्रतिशत लोग नगर में रहते थे?

(अ) 10 प्रतिशत (ब) 20 प्रतिशत (स) 5 प्रतिशत (द) 25 प्रतिशत

प्र04 किस विद्वान ने नगर के विकास को नगरीय क्रांति माना है।

(अ) लेविस ममफार्ड (ब) गोर्डन चाइल्ड (द) लुई वर्थ (द) मैक्स वेबर

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न 1 - (स) प्र-2 - (अ) प्र-3 (ब) प्र-4 (ब)

इकाई - 3: भारत में नगर-नियोजन एवं नगरीय प्रबंधन की समस्याएं

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 प्राचीन नगरों का स्वरूप

3.3 आजादी के बाद भारत में नगर नियोजन

3.4 नगर नियोजन से संबंधित समस्याएं

3.5 नगर नियोजन तथा मलिन बस्तियों की समस्याएं

3.6 वैश्वीकरण के दौर में नगर नियोजन की समस्या

3.7 भारत के बड़े शहर एवं मलिन बस्तियों की समस्या

3.8 पंचवर्षीय योजना में नगर नियोजन तथा उसकी समस्या

3.9 सारांश

3.10 बोध प्रश्न

3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- भारत के प्राचीन नगरों की विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- आजादी के बाद भारत में नगर नियोजन की जानकारी मिलेगी।
- नगर नियोजन से संबंधित समस्याओं में भूमि अधिग्रहण को लेकर विशेष आर्थिक क्षेत्र (Special Economic Zone) से संबंधित जनविरोधी व नगरीय प्रबंधन की समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकंगे।
- नगर नियोजन से संबंधित मलिन बस्तियों की समस्या की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- वैश्वीकरण के दौर में नगर नियोजन की समस्या को समझ सकेंगे।
- भारत के बड़े नगरों में मलिन बस्तियों की समस्या के बार में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- पंचवर्षीय योजनाओं में नगर नियोजन की समस्या को लेकर जितनी प्रकार की योजनाओं का क्रियान्वयन किया गया है, उसकी जानकारी मिल सकगी।

3.1 प्रस्तावना

नगरीकरण का इतिहास भारत में 2500 B.C. से, इंडस सभ्यता से जुड़ा माना जाता है।

भारत में ब्रिटिश शासक वर्ग के पहुँचने से पहले ही नगरीय सभ्यता के विकास के कारण नगर बसे हुए थे। एमएचए राव क अनुसार अंग्रेजी हुकुमत के आगमन के पहले भारत में निम्न चार प्रकार के नगर बसे थे। (क) प्रथम श्रेणी के वे नगर थे जिनमें बनारस, प्रयाग (एलाहाबाद) जैसे मशहूर नगर थे। (ख) दूसरा प्रकार राजधानी के रूप में लोकप्रिय नगरों का था जिसमें पाटलिपुत्र (पटना), अयोध्या, द्वारका, आगरा, दिल्ली, फतेहपुर, कन्नौज, लाहौर, ढाका, बीदर, विजयनगर, कांचीपुरम, मदुरई, तिरुवंतपुरम तथा मैसूर जैसे शहरों के नाम विशेष रूप से लिए जाते हैं। (ग) बंदरशाह की वजह से कालीकट तथा कैम्बे मशहूर थे।

(ङ) विभिन्न राजधानी तथा बंदरगाह नगरों में व्यापार तथा वाणिज्य का कार्य भी सक्रिय रूप से चलता था। जनसंख्या की दृष्टि से भी देखा जाये तो प्रसिद्ध समाजशास्त्री जी एस घूरचे (1962:21-4-19) का मानना है कि पाटलिपुत्र तथा विजयनगर में ब्रिटिश शासनकाल के पहले ही इन नगरों में दस लाख से ज्यादा लोग बसते थे। इन सभी नगरों के बारे में जो जानकारी हमें मिलती है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि नगर नियोजन व नगर प्रबंधन की कुछ बुनियादी रूपरेखा जरूर मौजूद रही होगी तभी सघन आबादी वाले नगर लंबे अरसे तक अस्तित्व में बने रह सके। हाँ, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि नगर नियोजन तथा नगर प्रबंधन की समस्याएं जो उस समय थीं-आज उन समस्याओं तथा उसके चुनौति का स्वरूप बिलकुल ही बदल चुका है।

3.2 प्राचीन नगरों का स्वरूप

ब्रिटिश शासन काल के प्रभाव से प्राचीन नगरों के सामने जनसंख्या में वृद्धि अधिकांश नगरों की विशेषता बन गयी। व्यापार और वाणिज्य के प्रसार से कच्चे पदार्थ का आयात-निर्यात तथा उपभोग की वस्तुओं का उत्पादन भी इन नगरों में शुरू हो गया। हालांकि उत्पादन की क्षमता का प्रचार व प्रसार थोड़ी देर से हुआ। नगर से जुड़ा दूसरा महत्वपूर्ण गुणात्मक बदलाव भवन निर्माण की शैली में देखा गया। उस समय की भवन निर्माण की शैली तात्कालिक जरूरतों के अनुरूप थी। नगरीय समाज को प्रभावित करने वाले सबसे महत्वपूर्ण बदलाव आर्थिक तथा राजनीतिक संगठन के ढाँचे तथा क्रियाओं में परिवर्तन था। नगर समाज को परिवहन तथा संचार संबंधी नियोजन तथा प्रबंधन की समस्या से भी जूझना पड़ा। इसलिए प्रायः यह कहा जाता है कि भारतीय नियोजन में प्रमुख रूप से तीन सभ्यताओं का प्रभाव देखा जा सकता है। प्राचीन काल में हिन्दू सभ्यता के विस्तार से जुड़े नियोजन को राष्ट्रवादी इतिहासकार विशेष महत्व देते हैं। मुस्लिम संस्कृति से प्रभावित भवन निर्माण की शैली मध्यकालीन युग मे बसे नगरों में दर्शनीय है। ब्रिटिश शासन काल के दौरान इसाई सभ्यता का प्रभाव आधुनिक काल के भवनों तथा बुनियादी ढाँचों में देखा जा सकता है। दूर संचार, परिवहन तथा यातायात के साधनों में हुए फैलाव ने नगर समाज के पूरे परिदृश्य को ही बदल दिया।

भारतीय नगरीय समाज के उत्थान की प्रक्रिया जितनी विदेशी मूल क सामाजिक चिंतन मान लेते हैं,उतनी आसान नहीं है। संभवतः इसीलिए कई विद्वानों ने नगरीय समाज के विकास की प्रक्रिया का विस्तार से व्यापक अध्ययन किया हैं। मैक्स वेबर, राबर्ट रेडफिल्ड, जी0एस0 घूरचे तथा पर्सिवल स्पीयर आदि कुछ ऐसे विद्वान हैं जिन्होंने नगरीय समाज के विभिन्न आयामों को ध्यान में रखकर तुलनात्मक विधि के द्वारा नगरीय समाज का गहन अध्ययन किया है। समाजशास्त्रीयों ने नगरीय

समाज में विभिन्न सामाजिक संस्थाओं के परिवर्तित स्वरूप का अध्ययन किया है। किस प्रकार जाति-विवाह, परिवार के संरचनात्मक स्वरूप नगरीय समाज में बदले हैं-इसका व्यापक अध्ययन किया गया है। मैक्स वेबर ने इस बात पर विशेष बल दिया है कि किस प्रकार जाति व्यवस्था, नागरिकता, सामाजिक तथा वैधानिक समानता तथा धर्म निरपेक्ष समाज के मार्ग को प्रशस्त करने में तथा स्वतंत्र रूप से नगर के विकास में बाधक रहे हैं। वैसे यह भी सत्य है कि इस प्रकार के संस्थात्मक तत्व परंपरागत नगर समाज के विकास में सहायक भी रहे हैं। वर्तमान युग में भी धर्म के प्रभाव के कारण परंपरागत शहरों की गरिमा बनी हुई है।

कुछ समाजशास्त्रियों ने उद्विकासीय सिद्धान्त का सहारा लेते हुए उसके आधार पर नगर नियोजन एवं संबंद्ध समस्याओं को पूर्व औद्योगिक तथा उत्तर औद्योगिक शहर के रूप में देखा है। इन समाजशास्त्रियों के अनुभव मध्यकालीन यूरोप तथा एशियाई नगरों के विकास से जुड़े हैं, परंतु जोबर्ग द्वारा प्रतिपादित पूर्व औद्योगिक तथा उत्तर औद्योगिक क्रम का खंडन करते हुए एम एस ए (1974) का कहना है कि भारतीय संदर्भ में शहर के विकास की परंपरा इतनी जटिल है कि उसे सिर्फ उद्विकासीय सिद्धान्त से जोड़कर देखना भ्रामक हो सकता है। हाँ! उतना जरूर है कि शहर के विकास में ब्रिटिश शासनकाल की नीतियों ने एक प्रभावी भूमिका अदा की है। वस्तुतः नगर नियोजन तथा उसकी समस्याओं को पूरे सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन से जोड़कर देखना उचित होगा, क्योंकि ब्रिटिश शासन काल में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में उद्योग प्रजातांत्रिक राजनीतिक संस्थाएं, वैधानिक व्यवस्था, उदारवादी शिक्षा नीति, आधुनिक चिकित्सा पद्धति स्वास्थ्य से संबंधित क्रियाएं तथा मनोरंजन के साधन आदि ने नगर से एक मुख्य आकर्षण का केन्द्र बना दिया। नवीन संस्थाओं तथा मनोरंजन के साधनों ने सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में गुणात्मक बदलाव ला दिया। इन सभी का सम्मिलित प्रभाव भारतीय नगरीय जीवन का पड़ा और पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित परंपरागत भारतीय नगरों की रूपरेखा में क्रांतिकारी बदलाव आये हैं।

3.3 आजादी के बाद भारत में नगर-नियोजन

आजादी के बाद भारत में नगर नियोजन के लिए जिन योजनाओं की शुरुआत की गयी, वह आर्थिक विकास की योजना से जुड़ी हुई थी। आर्थिक विकास की की पंचवर्षीय योजनाओं में उद्योग कृषि तथा जनसंख्या को लेकर योजनाबद्ध तरीके से नियोजन तथा प्रबंधन कि व्यवस्था की गयी। ऐसी कोई रूपरेखा इससे पहले के कुछ दशकों तक नगर से संबंधित नहीं थी। इसलिए राष्ट्र स्तर पर भी नगर से संबंधित किसी नीति की घोषणा नहीं की गयी। कालांतर में नगरीकरण की प्रक्रिया और औद्योगीकरण के प्रभाव से ग्रामीण क्षेत्र में बसने वाले लोगों का स्थानान्तरण नगरीय क्षेत्रों में शुरू हुआ। रोजगार के जो अवसर नगरीय क्षेत्रों में उपलब्ध हुए उसके कारण प्रवसन का झुकाव शहर की तरफ हुआ। नगरीकरण की प्रक्रिया ने गाँव की सीमा-क्षेत्र को भी प्रभावित किया। ग्रामीण क्षेत्र के इलाके वाले हिस्से नगरीय क्षेत्र में शामिल होने लगे। इसी के अनुरूप वाणिज्य, उत्पादन तथा उद्योग लगाने की प्रक्रिया में भी तेजी आयी। ग्रामीण क्षेत्र से नगरों में काम करने वालों के लिए आवास बनाने की योजना शुरू करनी पड़ी। शहरों की सीमा विस्तार होने लगा। आज जब हम ग्रामीण क्षेत्र से नगर की तरफ बढ़ते हैं तो दूर-दूर तक जो क्षेत्र कभी गाँव हुआ करते थे उन क्षेत्रों का अधिग्रहण शहर के

आवासीय क्षेत्र के रूप में किया जाने लगा। इसी के परिणामस्वरूप नगर के सीमावर्ती क्षेत्रों के इर्द-गिर्द बसने वाले गाँवों का स्वरूप भी बदलता जा रहा है। आवासीय क्षेत्र के साथ-साथ छोटे-बड़े उद्योग के लिए भी ग्रामीण क्षेत्रों में जमीन का अधिग्रहण किया जाने लगा। स्कूल, उद्यान, मनोरंजन के लिए सिनेमाघर, शापिंग माल, कोल्ड स्टोरेज, बड़ी कंपनियों के आफिस तथा फुटकर दुकानों का जाल सभी तरफ फैल गया। नगरपालिका भी इन क्षेत्रों को नियोजित करने के लिए कई योजनाओं की रूपरेखा तैयार करने लगी और इस प्रकार नगरीय क्षेत्रों के विकास को नियोजित तरीके से व्यवस्थित करने का प्रयास आरंभ हो गया।

समाजशास्त्री नगर के सीमावर्ती क्षेत्रों से जुड़े ग्रामीण क्षेत्र के विकास के इस क्रम को नगर-ग्रामीण फ्रिंज (Rural-Urban Fringe) की अवधारणा से जोड़कर देखते हैं। ग्रामीण नगर फ्रिंज केवल भारत तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि इस प्रकार की स्थिति पश्चिमी देशों में भी देखी जा सकती है। एक अमेरिकन अर्थशास्त्री वेरवीन (Wehrwein) ने पहली बार इसकी परिभाषा देते हुए कहा कि यह एक ऐसा क्षेत्र है जो कृषि के लिए निर्धारित होता है, किन्तु नगरीय उपयोग से संक्रमित होता है। ब्लिजाई तथा एंडरसन (Blizzard and Anderson) ने ग्रामीण-नगर फ्रिंज को मिश्रित रूप से नगरीय तथा ग्रामीण क्षेत्र से जोड़कर देखा है जहाँ नगरीय सेवा उपलब्ध नहीं होती, कृषि योग्यभूमि होती है। किन्तु भारतीय संदर्भ में इस प्रकार की स्थिति नहीं दिखती है, क्योंकि यहाँ नगरीय समाज की समस्याएं भिन्न प्रकार की है। यह सर्वविदित है कि भारतीय नगरों में जो जो नगर-विषयक सेवाएं है उनकी स्थिति ज्यादा अच्छी नहीं है। उदाहरण के लिए पानी पहुँचाने तथा ज़ल निकासी का कोई ठोस प्रबंध हमारे नगरों में नहीं है। कहीं कहीं तो जल निकासी के लिए पाईप ही नहीं डाले गये हैं। ऐसे आवासीय क्षेत्र भी नगर की सीमा में आते हैं जहाँ पानी की आपूर्ति का भी समुचित प्रबंध नहीं है। यह क्षेत्र मलिन बस्तियों से थोड़ी ही बेहतर स्थिति में है। ऐसी जगहों पर भूमि उपयोग के साथ ही मानव संसाधन के समुचित इस्तेमाल की भी जरूरत है, क्योंकि यहाँ के निवासियों के लिए स्वास्थ्य, स्कूल,कालेज, मंदिर, मनोरंजन के साधन, पार्क और यहाँ तक की शौच का भी यथोचित प्रबंध नहीं है।

3.4 नगर नियोजन से संबंधित समस्याएं

ग्रामीण - नगर फ्रिंज के संदर्भ में नगर नियोजन व नगरीय प्रबंधन की समस्याएं काफी जटिल हैं। नगर के समीप ही ऐसे ग्रामीण क्षेत्र भी पाये जाते हैं जहाँ नगरीय विशेषताएँ व उसके लक्षण स्पष्ट देखे जा सकते हैं। नगर के बाहर निकलने पर कुछ दूर तक नगरीय सुविधाएँ या विशेषताएँ दिखाई पड़ती है, परन्तु आगे चलने पर उन क्षेत्रों में शहर के अक्षय लगभग लुप्त हो जाते हैं और जो क्षेत्र दीखते हैं उनके लक्षण मूलरूप से ग्रामीण होते हैं। मुंबई शहर के बाहरी सीमावर्ती क्षेत्रों की स्थिति कुछ ऐसी ही है। दिल्ली के सीमावर्ती क्षेत्रों में भी इस प्रकार के ग्रामीण क्षेत्र जो उत्तर प्रदेश, हरियाणा तथा राजस्थान की सीमाओं पर हैं वहाँ, इस प्रकार के सीमांत क्षेत्र (Fringe Area) देखे जा सकते हैं।

पर राजस्व के दृष्टिकोण से इन सीमांत क्षेत्रों की अपनी कई समस्याएँ हैं। ग्रामीण क्षेत्र के इलाकों की भूमि का अधिग्रहण कर सरकार इस बड़ी-बड़ी कंपनियों की सौंप दे रही है। इससे सरकार

क नगरीय नियोजन की प्रणालि पर प्रश्न चिह्न लगा दिया है। हाल ही में सरकार ने विशेष आर्थिक क्षेत्र (Special Economic Zone) बनाने की योजना को क्रियान्वित करना शुरू किया है। इसके अंतर्गत अधिग्रहित क्षेत्र जो कभी कृषि योग्य भूमि हुआ करते थे उन्हें गैर कृषि कार्यों के लिए कुछ कंपनियों को सौंपा जा रहा है। परिणामस्वरूप कृषि से जुड़े लोगों को उनकी खेती के परंपरागत मौलिक संसाधन को उनसे छीनकर उन्हें उनके मूल निवास स्थान तथा मूल पेशे से विस्थापित किया जा रहा है। कई जगह पंजाब, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र तथा पश्चिमी बंगाल इस योजना को नगर नियोजन के एक गंभीर व घातक षड्यंत्र के रूप में देखा जा रहा है। इस प्रकार के नगर नियोजन को केन्द्र तथा वहाँ की स्थानीय सरकार की स्वीकृति मिल गय है और भारतीय किसान जो आज भी कृषि द्वारा अपनी जीविका चलाते हैं उनके जीविकोपार्जन के एकमात्र स्रोत से वंचित हो जा रहे हैं। सिर्फ महाराष्ट्र में ही 45 भूमि अधिग्रहणों को इस अनुबंध की स्वीकृति प्रदान की गयी है। जिसके अंतर्गत किसानों को उनके जमीन के बदले एक मोटी रकम की भी पेशकश की जाती है, किन्तु यह अस्थायी व्यवस्था है। मेधा पाटेकर तथा सीमप्रीत सिंह ने इसके दूरगामी परिणाम की चर्चा करते हुए लिखा है। कि इस प्रकार से भूमि अधिग्रहण, पूंजीवादी व्यवस्था का विस्तृत जाल फैलाना गैर कानूनी है। किस प्रकार के रेंट कन्ट्रोल अधिनियम यहाँ लागू होंगे और इन अधिग्रहीत की गई जमीन से जुड़े ग्रामीण क्षेत्र में बसने वाले लोगों को पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा, खाद्यान्न सुरक्षा आदि के बारे में क्या प्रबंध होगा? इन बातों पर कुछ भी निर्णय नहीं लिया गया है।

3.5 नगर-नियोजन तथा मलिन बस्तियों की समस्याएं

नगर नियोजन तथा नगर प्रबंधन से एक अन्य जुड़ी समस्या है मलिन बस्तियों में बसने वाले तथा छोटे उद्योग करने वाले और फेरी पर सामान बेचने वाले खुदरा विक्रेताओं को उनके द्वारा अधिग्रहीत जमीन से विस्थापित कर उन स्थानों पर बड़ी-बड़ी विशाल शापिंग माल बनाये जाने की योजना। इन कार्यों को करने लिए छोटे रोजगार करने वालों की दुकानों को न केवल मुबई में, बल्कि दिल्ली में भी ध्वस्त किया गया। हाल ही में नगर पालिका के जो चुनाव दिल्ली में हुए उसमें जनत ने अपना विरोध प्रकट करते हुए वहाँ की तत्कालीन सरकार को अपना समर्थन नहीं दिया। नगर प्रबंधन की समस्या चाहे विशेष आर्थिक क्षेत्र को लेकर या मलिन बस्तियों के निवासियों या छोटे रोजगार करने वाले खुदरा व्यापारियों के स्थान को अधिग्रहित करने वाले अभियान से संबंधित है। उससे यह स्पष्ट है कि नगर नियोजन तथा प्रबंधन की मुख्य समस्या विस्थापितों को आवास मुहय्या कराये जाने से हैं। आवास एक बुनियादी जरूरत है जो गरीब और अमीर सभी को उपलब्ध होनी चाहिए। साथ ही आवासीय क्षेत्र के निर्माण में कुछ मूलभूत सुविधाएं जैसे परिवहन, स्वास्थ्य, शिक्षा, बिजली, पानी आदि को ध्यान में रखना आवश्यक है। यहाँ इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि जिन लोगों को जमीन से बेदखल किया जा रहा है उन्हें कहाँ बसाया जायेगा? जिनके रोजगार के मौलिक अवसर उनसे छीन लिये जाते हैं, उनके परिवार के लोगों को जीविका कहाँ से मिलेगी? एक शहर जहाँ एक तरफ बड़ी-बड़ी दुकानें, माल, बहुमंजिली इमारतें, खुली सड़कें, मनोरंजन उद्यान आदि की सुविधाए हों और दूसरी तरफ झुग्गी झोपड़ियों तथा छोटे-बस्तियों में बसने वाले लोगों को उनकी मौलिक सुविधाएं भी न दी जायें, तथा गाँव में बसने वाले लोगों को उनके जमीन से विस्थापित कर रोजगार

व आय के मौलिक स्रोत से वंचित करके उनके नियमित आय का कोई प्रबंध न हो तो इस नगर नियोजन -प्रबंधन के अभियान को सफल नहीं कहा जा सकता तथा इसे जन विरोध का सामना करना ही होगा।

3.6 वैश्वीकरण के दौर में नगर-नियोजन की समस्या

उदारीकरण तथा वैश्वीकरण के दौर में नगर नियोजन व प्रबंधन की जिन समस्याओं को अधिकांश जगह देखा जा रहा है उसमें प्रवसन, जनसंख्या नियंत्रण, परिवहन की सुविधा, शहर-ग्रामीण क्षेत्रों का संतुलित विकास सम्मिलित है। औद्योगिक तथा नगरीकरण की प्रक्रिया अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी कुछ चुनौतियों को प्रस्तुत करती हैं। इनके प्रति ध्यान देना आवश्यक है। विश्व के स्तर पर बन रही आर्थिक परिवर्तन की रूपरेखा भी हमारे द्वारा दिये गये विचार की उपेक्षा करती है। कुछ विद्वानों की यह मान्यता है कि अब नगरों का जो रूप उभर कर आ रहा है उसे विश्वनगर (Global City) की संज्ञा दी जा सकती है। सास्किय सासेन (Saskia Sassen) ने विश्व नगर को प्रमुख हेडक्वार्टर के रूप में चित्रित करते हुए न्यूयार्क, लंदन तथा टोकियो को इसका उत्कृष्ट उदाहरण बताया है। उनकी सोच का मुख्य आधार विश्व नगरों की प्रमुख भूमिका का अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापार को नियोजित करने में होता है। इनकी चार विशेषताओं में उनका (i) योजनाओं का निर्माण (ii) वित्त व्यवस्था को नियमित करना (iii) उत्पादन तथा नये खोज करना और (iv) उत्पादित माल को बाजार की सुविधा प्रदान करना है।

इस प्रकार विश्व स्तर पर नगर नियोजन व प्रबंधन की जो चुनौती उभर रही है, उस संदर्भ में प्रवसन (Migration) एक बड़ी समस्या है। क्रमशः बड़े नगर तथा घनी आबादी वाले नगरों की संख्या भारत में भी बढ़ी है। तथाकथित तीसरी दुनिया में नगरीकरण से जुड़ी समस्या के बारे में अपने विचार प्रकट करते हुए एंथोनी गिडेन्स का मानना है कि परंपरागत तरीके से उत्पादित चीजों का बाजार घटता जा रहा है। जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्र में उत्पादन की प्रणाली का क्षेत्र संकुचित हो रहा है और गाँव में बसने वाले लोग रोजगार के बेहतर अवसर की तलाश में शहर की ओर आने लगे हैं। शुरू में उनका रुख शहर की ओर कुछ समय के लिए होता है। वे चाहते हैं कि कुछ कमाई हो जाने पर पुनः वे अपने गाँव में चले जायेंगे, परन्तु उसमें से कुछ थोड़े से लोग ही गाँव वापस जा पाते हैं। अधिकांश लोग स्थायी रूप से शहर में बस जाते हैं। पुनः गाँव में जाकर अपने समुदाय के बीच रहने में भी उन्हें कठिनाई महसूस होती है। इस प्रकार स्थानांतरित लोगों की संख्या नगर में बढ़ती जाती है। ये लोग शहर के एक किनारे पर या मुख्य शहर के बाहरी क्षेत्र में झुग्गी झोपड़ी में रहने लगते हैं। बहुत से लोग जिस बस्तियों में रहते हैं उन्हें विषाक्त सीमावर्ती (Septic Fringe) कहा जा सकता है। यहाँ वे कई बीमारियाँ से ग्रस्त हो जाते हैं। ये क्षेत्र व बस्तियाँ शहर की बाहरी सीमा व छोर पर बसे होते हैं। इन बस्तियों को बदनाम बस्ती भी कहा जाता है, क्योंकि यहाँ देह व्यापार, मादक पदार्थों का सेवन, जुआ तथा छोटे अपराध करने वाले लोगों का आवास होता है। एड्स जैसी घातक बीमारियों की आशंका भी यहाँ सदैव बनी रहती है। इन समूहों और बस्तियों की संख्या नगरों में निरंतर बढ़ती जा रही है। मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों की अपनी अलग पहचान शहरी गरीब (Urban Poor) के रूप में दी जाती है जो उनकी परंपरागत जाति व गाँव की पहचान

से अलग होती है। इस नयी पहचान को वोट बैंक की राजनीति के कारण और भी बल मिला है। इन व्यक्तियों को राजनीतिक लाभ उठाने के लिए नेतागण अपना चारागाह समझकर इस्तेमाल करते हैं। इन बस्तियों में बसने वाले लोगों की अपनी अलग स्वैच्छिक समितियाँ (Voluntary Association) बन जाती हैं जो दबाव समूह (Pressure group) के रूप में सक्रिय होती हैं। संभवतः इसीलिए इन्हें राजनीतिक संरक्षण भी आसानी से मिल जाता है।

इस प्रकार सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक दृष्टिकोण से मूल निवासियों को नगरीय क्षेत्र में विस्थापित करना इतना आसान नहीं है। सुधा मोहन ने (2005 : 232) नगरीय विकास की समस्याओं का उल्लेख करते हुए लिखा है कि इस प्रकार के समूह की प्रमुख वैचारिक सोच धर्म निरपेक्ष विचारधारा से जुड़ी होती है। इन समूहों में एक प्रकार की नागरिकता के अधिकार को प्राप्त करने की प्रबल इच्छा शक्ति भी होती है। सुधा मोहन ने प्रशासनिक सेवा से जुड़े नगर नियोजन के कार्यों में दिलचस्पी लेने वाले उच्च अधिकारियों से अपने वार्तालाप के बाद पाया कि सरकार को इन बस्तियों में रहने वाले लोगों से एक स्वस्थ संवाद स्थापित करना चाहिए तभी इनकी समस्याएं दूर हो सकें, क्योंकि संवाद के बिना नगर में विशेषकर इन मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों की समस्या का आकलन या अनुमान लगाना संभव नहीं है।

3.7 भारत के बड़े नगर एवं मलिन बस्तियों की समस्या

जहाँ तक नगर में बसने वाले विशेषकर मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों की समस्या का प्रश्न है, मुंबई जैसे बड़े शहर में नगर नियोजन की व्यवस्था के तहत 1950 तथा 1960 के दशक में इन बस्तियों के खिलाफ मुहिम चालू की गयी। झुग्गी झोपड़ियों को उजाड़ फेंका गया, क्योंकि इन बस्तियों के ऊपर अनधिकृत भूमि अधिग्रहण का आरोप लगाकर इनके द्वारा किये गये जमीन को अवैध घोषित किया गया। इन झुग्गियों को नष्ट कर दिया। यद्यपि सच्चाई यह थी कि इन बस्तियों में रहने वाले लोग कारखानों में मजदूरी, भवन निर्माण, घरेलू काम, कबाड़ी का काम, छोटे व्यापार जैसे फल और सब्जी बेचने का काम करते थे। इसे ध्यान में रखकर 1970 के दशक से इन बस्तियों में रहने वाले लोगों को आवासीय सुविधा प्रदान करने के लिए उन्हें पानी और बिजली की सुविधा दी जाने लगी। 1976 के आस-पास झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले लोगों को फोटो पहचान पत्र देकर उन्हें कुछ सुविधाएं भी दी गयी। 1980 के दशक में विश्वबैंक की नीति में बदलाव आये और वहाँ भी मलिन बस्तियों को सुधारने के लिए स्लम अपग्रेडेशन प्रोग्राम का अनुमोदन किया गया। जमीन को 30 वर्ष की लीज पर आवंटित किया गया। शहरी सुविधाओं को भी उपलब्ध करवाने का आश्वासन दिया गया। 1990 के दशक में इन बस्तियों को पुनर्व्यवस्थित करने की योजना बनायी गयी और इसके लिए लंबी अवधि की दूरवर्ती योजना बनाकर इनमें बसने वाले लोगों को शहरी सुविधा उपलब्ध करवाने की रूपरेखा तैयार की गयी। इस प्रकार के प्रयास सिर्फ मुंबई तक ही सीमित नहीं थे। दिल्ली, बंगलोर, कलकत्ता, जमशेदपुर, जयपुर, चेन्नई, पुणे आदि नगरों में भी योजनाबद्ध विधियों द्वारा नगर विकास की योजना की शुरुआत की गयी। इन्हीं योजनाओं के तहत - (a) नगरी गलियारा (Urban Corridors), (b) सेटेलाइट उपनगर (Satellite Suburb), (c) हरित क्षेत्र (Green Belts), (d) नये नगर, (e) सुरक्षित जन व्यवस्था, (f) जलनिकास के लिए नाले तथा सीवर, (g)

कूड़ा उठाने का प्रबंध, (h) पार्क तथा मनोरंजन व खेल के साधन, (i) पक्की सड़कें तथा सड़कों पर रोशनी की व्यवस्था, (j) गाड़ी खड़े करने के लिए भूमिगत पार्किंग, (k) परिवहन को संचालित करने के लिए बहुशाखायी पथ, फ्लाइओवर, (l) मेट्रो रेल तथा प्रदूषण को रोकने के लिए परिवहन के पंजीकरण से संबंधित नियमों को ध्यान में रखकर नगर नियोजन तथा उससे जुड़ी समस्याओं को दूर करने के उपाय को पंचवर्षीय योजना का हिस्सा बनाया गया। निम्न तालिका द्वारा विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में नगर नियोजन के लिए जो प्रावधान किये गये वे द्रष्टव्य हैं :

3.8 पंचवर्षीय योजना में नगर नियोजन एवं उसकी समस्या

पंचवर्षीय योजना के केन्द्र बिन्दु तथा नगरीय योजना

योजना वर्ष	योजना का फोकस	नगरीय योजना के संबंधित क्रियाएं
प्रथम योजना (1951-56)	आवासीय सुविधा भूमि नियोजन	आवासीय बोर्ड का गठन
द्वितीय योजना (1956-61)	मास्टर प्लान भूमि विकास एवं अधिग्रहण	वित्तीय सहायता
तृतीय योजना (1961-66)	मास्टर प्लान राज्य की राजधानी के विकास	मास्टर प्लान (बड़े शहरों के लिए) राजधानी के लिए योजना
चतुर्थ योजना (1967-74)	जमीन से संबंधित योजना नगर नियोजन से जुड़ी वित्तीय सहायता	नगरी विकास के लिए हडको का गठन पर्यावरण को नियंत्रित करने के लिए नगरों में सलम को सुनियोजित करना
पंचम योजना (1974-79)	बड़े रोजगारों की समस्याओं को दूर करना बड़े नगरों में गरीबी उन्मूलन की योजना	बड़े शहरों के लिए एकीकृत नगरीय विकास योजना का गठन (IUDP), भूमि सेलिंग अधिनियम (Land Ceil ing Act)
छठी योजना (1980-85)	बड़े व छोटे शहरों का विकास गरीबी उन्मूलन	मलिन बस्तियों में रहने वालों के लिए सस्ते दरों पर सैनिटेशन की सुविध
सातवीं योजना (1985-90)	गरीबी उन्मूलन, पिछड़े इलाकों में नगरी सुविधा उपलब्ध करवाना	मौलिक सुविधाओं को उपलब्ध करवाना, राष्ट्रीय आवासीय बैंक का गठन, नगरीकरण के लिए राष्ट्रीय आयोग का गठन
आठवीं योजना (1992-97)	रोजगार के साधन जुटाना मौलिक सुविधा स्थानीय स्तर पर जमीन उपलब्ध करवाना	नेहरू रोजगार योजना तथा गरीबों के लिए नगरीय क्षेत्रों में सुविधा उपलब्ध करवाना, संविधान में 74 संशोधन कर 1992 के अधिनियम को पारित करना
नवीं योजना	जनपक्षीय भागीदारी की योजना	आवासीय योजना सरकारी तथा गैर

(1979-2002)	सामाजिक सुविधा के लिए विशेष एक्सन योजना, स्थानीय क्षेत्रों का विकेन्द्रीकरण	सरकारी समितियों की सांझीदारी बढ़ाना
दसवीं योजना (2002-2007)	स्थानीय कड़ी को मजबूत करना नगरीय विकास पिछड़े लोगों पर विशेष ध्यान	बाहरी सहायता निजी क्षेत्रों की भागीदारी बढ़ाना वित्तीय सहायता द्वारा बाजार का गठन

तालिका -1 से स्पष्ट है कि नगरीय विकास की योजनाओं में नगर के परिदृश्य को बदलने के लिए सुनियोजित तरीके से नगर के गठन को प्राथमिकता देते हुए जनहित सेवाओं को बढ़ाना है। वस्तुतः योजना में प्रावधान करना एक बात है और उसको क्रियान्वित करना अलग। शहरों में भी अमीर-गरीब के आवासीय क्षेत्रों में जो सुविधाएं उपलब्ध है, उनमें काफी अंतर है। शहरी विकास योजना को सफल रूप से जनहित के लिए क्रियान्वित करना एक बहुत बड़ी चुनौती है।

3.9 सारांश

वर्तमान समय में भारत में नगर नियोजन एवं नगरीय प्रबंधन की समस्या ने बड़े शहरों में कुछ कठिन निर्णय लेने के लिए वहाँ के प्रशासकों को बाध्य कर दिया है। कुछ वर्ष पहले ही महाराष्ट्र सरकार ने मुंबई में लगभग 75,000 परिवारों के अवैध निर्माण को ध्वस्त कर दिया था। दिल्ली नगर निगम राजधानी शहर को अत्याधुनिक सेवाओं से भरपूर शहर बनाने के लिए प्रयास में जुड़ी है। मेघा पाटेकर (2007) के अनुसार महाराष्ट्र में 27 प्रतिशत शहरी आबादी के यह संख्या 42 प्रतिशत है और 26 प्रतिशत लोग मलिन बस्तियों में रहते हैं जिसकी कुल आबादी 60 लाख है जो पोलेंड के कुल आबादी से अधिक है। दूरदर्शन के एक मशहूर चैनल एन0डी0 टीवी द्वारा समाचार के साथ-साथ नित्य दिन बड़े शहरों के तापमान के अलावा प्रदूषण से संबंधित जानकारी (Pollution Watch) देते हैं। हमारे देश के बड़े शहर में रहने वालों का स्वास्थ्य किस कदर प्रदूषणों के कारण प्रभावित हो रहा है और नगर नियोजन तथा नगर प्रबंधन के लिए जिस प्रकार के नगरीय सीमा को अधिनियम के द्वारा (Urban Land Celing and Regulation Act) नियंत्रित करने की योजना बनी है, वह अपने आप में ठोस कदम हो सकते हैं। परन्तु साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि अधिग्रहण कर 25,000 एकड़ जमीन किसी कृषि प्रधान राज्य में अधिग्रहीत कर विशेष आर्थिक क्षेत्र (Special Economic Zone) में कर लेना भी एक अलग बात है। इस इकाई में इन सभी बातों की चर्चा को सवाल के रूप में उठाया गया है, क्योंकि नगर नियोजन के मार्ग में आज एक ज्वलंत मुद्दा कई राज्यों में बन गया है जिसके कारण केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार को एक उग्र जनविरोध का भी सामना करना पड़ रहा है।

3.10 बोध प्रश्न

प्र01 उस समाजशास्त्री का नाम लिखें जिन्होंने यह लिखा है कि पाटलिपुत्र जैसे नगर की आबादी ब्रिटिश शासन से पहले दस लाख की थी।

(a) एम. एस. ए. राव (b) एम.एन. श्रीनिवास (c) जी.एस. घूरमे (d) मैक्स वेबर

प्र02 सीमावर्ती क्षेत्र से जुड़े ग्रामीण क्षेत्र के नगरीय क्षेत्र से जुड़ने की प्रक्रिया को निम्न अवधारणा

से जोड़कर देखा जाता है।

(a) नगर-ग्रामीण फ्रिंज (b) परजीवी नगर (c) सीमांत क्षेत्र (d) विशेष आर्थिक क्षेत्र

प्र03 किस विद्वान ने यह कहा है कि महाराष्ट्र में भूमि अधिग्रहण के अनुबंध पूंजीवादी व्यवस्था का जाल फैलाने की एक गैरकानूनी क़ोशिश है?

(a) वेरविन (b) एम.एस.ए. राव (c) मेघा पटकर (d) जोबर्ग

प्र04 विश्व नगर की चर्चा किस विद्वान ने की है।

(a) जोबर्ग (b) सास्कीय सासेन (c) एंथोनी गीडेन्स (d) गेराल्ड ब्रिज

प्र05 किस पंचवर्षीय योजना में रोजगार के साधन जुटाने को एक महत्वपूर्ण अभियान का हिस्सा बनाया गया।

(a) द्वितीय पंचवर्षीय योजना (b) चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (c) नवीं पंचवर्षीय योजना (d) आठवीं पंचवर्षीय योजना।

3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

प्र01 (c)

प्र02 (a)

प्र03 (c)

प्र04 (b)

प्र05 (d)

इकाई -4 : क्षेत्रीय नियोजन तथा सामाजिक एवं स्थानीय सिद्धान्तों में संबंद्धता

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 नगरीय क्षेत्र के कार्य

4.3 क्षेत्रीय नियोजन

4.4 नगरीय स्थानों के व्यापक प्रभाव

4.5 नगरीय क्षेत्र में संबंधित सिद्धान्त

4.6 शहरी स्थापन से जुड़े आधार

4.7 क्षेत्रीय आधार पर नगर स्थापन से जुड़े अध्ययन

4.8 क्षेत्रीय नियोजन

4.9 सारांश

4.10 बोध प्रश्न

4.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- नगरीय क्षेत्र की अवधारणा तथा नगरीय क्षेत्र के विभिन्न कार्यों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- क्षेत्रीय नियोजन का अर्थ एवं उससे जुड़े महत्वपूर्ण मुद्दों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- नगरीय क्षेत्र से संबंधित सामाजिक तथा स्थानीय सिद्धान्तों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- शहरों के स्थापन से जुड़े आधारों के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे एवं भारतीय नगरों की स्थिति को जान पायेंगे।
- क्षेत्रीय आधार पर नगर स्थापन से जुड़े अध्ययन की समीक्षा कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

पिछले अध्याय में नगर नियोजन से जुड़ी समस्याओं की चर्चा की गयी थी। क्षेत्रीय नियोजन की विस्तृत जानकारी नगरीय क्षेत्र के संदर्भ में ही की जा सकती है। क्षेत्रीय नियोजन का जो वर्णन पिछले अध्याय में किया गया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि नगर का जो फैलाव एवं विस्तार कुछ दशकों में हुआ है- इस संदर्भ में उनकी अलग चर्चा आवश्यक है। समाजशास्त्रीय अध्ययनों द्वारा सामाजिक एवं स्थानीय सिद्धान्तों को समझने का प्रयास किया जा रहा है।

4.2 नगरीय क्षेत्र के कार्य

गेराल्ड ब्रीज (Gerald Breese) ने नगरीय क्षेत्र के तीन महत्वपूर्ण कार्यों का वर्णन किया है। सर्वप्रथम नगरीय क्षेत्र में उपनिवेश काल के क्रिया-कलाप में सुधार लाने की जरूरत है। नगरीय क्षेत्र के बढ़े हुए उत्तरदायित्वों के बारे में विचार करना भी इसी की परिधि में आता है। इसके साथ ही नगरीय क्षेत्र द्वारा संचार के साधनों को नियंत्रित करना, पुलिस तथा प्रशासनिक तंत्र को पुनर्रगठित किया जाना चाहिए।

दूसरा महत्वपूर्ण कार्य नगरीय क्षेत्रों में वाणिज्य तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर की क्रियाओं का संचालन है। अगर ग्रामीण क्षेत्रों में विदेशी तथा राष्ट्रीय पूंजीनिवेश होता है तो उसी क्षेत्र में प्रशासनिक कार्यों के नियमन केन्द्रों की स्थापना करना होगा।

तीसरा महत्वपूर्ण कार्य के साथ बेरोजगारी के लिए नगरीय क्षेत्रों का ग्रामीण लोगों के आकर्षण केन्द्र बन जाने से संबद्ध है। नगरीय क्षेत्रों में ग्रामीण इलाकों से अधिक संख्या में प्रवसन के कारण आवास, पीने का स्वच्छ पानी, स्वास्थ्य तथा शिक्षा जैसी आवश्यक सेवाएं हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि नगरीय क्षेत्रों का समुचित नियोजन किया जाये, ताकि ग्रामीण इलाकों के पास बसे नगरीय क्षेत्र को उनके ऊपर आश्रित न होना पड़े।

4.3 क्षेत्रीय नियोजन

क्षेत्रीय नियोजन के लिए नगर सन की भूमिका और उसके महत्व की चर्चा करना आवश्यक है। नगरीकरण की प्रक्रिया में नगर स्थानों की भूमिका पूंजि निवेश के लिए आवश्यक मानी जाती है। किस प्रकार के पूंजी निवेश के द्वारा नगर स्थानों के आर्थिक रूप से प्रभावी बनाया जा सकता है। वैश्वीकरण के दौर में पूंजी निवेश की संभावनाएं बढ़ी हैं तथा विदेशी कंपनियों ने भी पूंजीनिवेश के लिए नगर स्थानों को उपयुक्त माना है। शिक्षा तथा स्वास्थ्य के क्षेत्र में पूंजीनिवेश द्वारा बाजार को नियंत्रित करने की पहल और तत्परता के मद्दे नजर आधुनिक समाज में क्षेत्रीय नियोजन काफी जटिल हो गया है। किसी भी परियोजना को स्वीकृति राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर ही की जाती है।

एक अन्य महत्वपूर्ण बिन्दु है ग्रामीण क्षेत्रों से बड़ी संस्थाएँ स्थानान्तरण और नगरीय स्थानों में प्रवसन। पिछल कुछ दशकों में नगरीय स्थानों की आबादी कई गुना बढ़ी है। भारत जैसे देश में इस प्रकार की वृद्धि से समस्याएं भी बढ़ी हैं। सन् 1981 में भारत में नगरीय स्थानों की संख्या बढ़कर 3,245 हो गयी है जो अमेरीका के नगर स्थानों की तुलना में तीन गुणा अधिक है (रामचंद्रन : 1989 : 151)। 1950 तथा 1960 के दशकों के आंकड़ों के आधार पर अमेरिका ने इन नगर स्थानों के नियोजन के लिए कई योजनाएं प्रारंभ की, जिसक बारे में विकासशील राष्ट्रों ने भी सोचना शुरू कर दिया है। अमेरिका के मुकाबले भारत के नगर स्थानों का इतिहास काफी पुराना है तथा सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि भी जटिल है। इसलिए भारतीय भौगोलिक विद्वानों ने पूरे राष्ट्र के संदर्भ में उन नगरीय स्थानों का वर्गीकरण किया है। क्षेत्रीय नियोजन के लिए नगरीय स्थान के गुणात्मक पहलु के साथ-साथ उसके संख्यिकीय पहलूओं को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। भारत

के लगभग 1 लाख नगरीय स्थानों को समझने के लिए आर. रामचंद्रन के अनुसार चार मुख्य आधारों पर वर्गीकरण करना आवश्यक होगा। ये आधार है: (a) भौतिक (b) ऐतिहासिक (c) सामाजिक एवं सांस्कृतिक तथा (d) कार्यात्मक एवं आर्थिक।

क्षेत्रीय नियोजन के संदर्भ में एक अन्य महत्वपूर्ण बात जिसकी तरफ गेराल्ड ब्रिज के ध्यान आकृष्ट कराया है वह है छोटी और बड़ी अवधि के आधार पर योजना निर्माण अर्थात् छोटी अवधि के लिए किस प्रकार के पूंजी निवेश की आवश्यकता है। दूसरी ओर दीर्घकालीन समय के लिए किसी योजना के क्रियान्वयन के लिए दूरदर्शिता पूंजी निवेश पर बल दिया जाना चाहिए। संसाधनों को क्षेत्रीय स्तर पर किस प्रकार वितरित किया जाये इसे ध्यान में रखते हुए पूंजी निवेश की रूप रेखा तैयार करनी होगी। संसाधनों को किसी नगरीय क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रखना है अथवा उसे व्यापक स्तर पर विभिन्न नगरीय क्षेत्रों तक पहुँचाना विचार-योग्य मुद्दे होंगे जिन्हें ध्यान में रखकर क्षेत्रीय नियोजन की ऐसी रूपरेखा बनानी चाहिए जिससे भविष्य में आने वाली चुनौतियों से भी निपटा जा सके।

4.4 नगरीय स्थानों का व्यापक प्रभाव

नगरीय स्थानों के व्यापक प्रभाव से सामाजिक व सांस्कृतिक परिदृश्य में काफी बदलाव आया है। नगरीय स्थानों के आज के परिवर्तनों से उत्पन्न नगर स्थान तथा बड़े शहरों के अंतः संबंध को समझना आवश्यक है। कुछ समाजशास्त्रियों एवं भूगोलवेत्ताओं ने सामाजिक तथा स्थानीय सिद्धान्तों के द्वारा नगर व्यवस्थापन की प्रक्रिया को समझाने की कोशिश की है। इस प्रकार के सिद्धान्तों के दो प्रमुख पहलू हैं : (a) पहला व्यवहारवादी पहलू है जो व्यवस्थापन की मौजूदा परिस्थितियों के अध्ययन पर बल देता है और (b) दूसरा है मानकीय (Normative) पहलू जो व्यवस्थापन के आदर्श पहलू को ज्यादा महत्व देता है। यह व्यवहारवादी दृष्टिकोण से बिलकुल अलग है। व्यवस्थापन के आदर्श क्या होने चाहिए जिससे एक समन्वित विकास हो सके। उसके मापदंड को रेखांकित कर उसके अनुरूप नगर स्थापना की बात कहता है।

4.5 नगरीय क्षेत्र से संबंधित सिद्धान्त

व्यवस्थापन की प्रक्रिया को समझने में व्यवहारवादी सिद्धान्त का अपना अलग महत्व है। यहाँ आनुभाविक (Emperical) समानता के आधार पर विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में व्यवस्थापन प्रक्रिया का अध्ययन होता है। दूसरी ओर प्राइमेट नगर की अवधारणा विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में व्याप्त प्रमुख शहरों की बात करना है। यहाँ आनुभाविक निरीक्षण (Emperical observatrion) के आधार पर सिद्धान्त बनाये जाते हैं जिसके द्वारा विश्व के विभिन्न भागों में जो नियमित पद्धति हैं उसे समझा जा सके। यहाँ जिफ क्रम-आकार (Ranh-size) नियम को आधार बनाकर शहर के आकार और उसके अनुरूप व्यवस्थापन के अध्ययन को प्राथमिकता दी जाती है।

इसके विपरीत मानकीय सिद्धान्त की प्रमुख चिंता है कि केन्द्रीय स्थायी सिद्धान्त (Central Place Theory)। तृतीयक (Tertiary services) सेवाओं को किस प्रकार बड़े स्थापन से छोटे स्थापन तक पहुँचाये। विशेषकर आर्थिक गुणवत्ता (Economic Efficiency) के आधार पर यह

कैसे संभव रहे।

प्राथमिक नगर व्यवस्थापन पद्धति (Primate city settlement system) यह प्रमाणित करती है कि प्राचीनकाल में एक शहर सैकड़ों गाँवों से घिरा होता था। ईसा पूर्व छठी (6th Century B.C.) सदी में आर्य नगरीकरण की प्रणाली के राजधानी नगर जनपद के रूप में थे तथा बह सैकड़ों गाँवों के बीच स्थित थे। नगरीकरण विस्तार में शहरों की संख्या और तब भी राजधानी शहर (अर्थात जनपद जहाँ राजा रहते थे) को प्रमुख शहर (Primate city) का दर्जा मिला हुआ था।

विश्व के अनेक देशों प्रमुखतः इंग्लैण्ड, फ्रांस, हालैण्ड, थाइलैण्ड तथा फिलिपीन में पूरा आबादी का लगभग 20 प्रतिशत भाग शहरों में रहता है और सबसे बड़े शहरों की संख्या आकार में 5 स 10 गुणा बड़ी है। इस प्रकार प्रमुख शहर के बारे में मार्क जेफरसन ने 1939 में एक सिद्धान्त दिया जिसके अनुसार जनसंख्या समूह को बड़े शहर के उदय का महत्वपूर्ण कारण माना। छोटा नगर या शहर जब प्रमुख शहर का स्थान ले लेता है तो वह अन्य नगरों या शहरों की अपेक्षा ज्यादा तीव्र गति से बढ़ता है। आगे चलकर यह अन्य शहरों को बढ़ने से रोकता भी है।

वर्तमान समय में भारत में कोई एक प्रमुख शहर नहीं है अर्थात् कोई ऐसा शहर नही है जो पूरे देश में प्रभाव बनाये हुए हो। उन्नीसवीं सदी में तथा बीसवीं सदी के पूर्वाह्न तक कलकत्ता को एक प्रमुख शहर के रूप में देखा जाता था। तब दिल्ली का स्थान तीसरा था जो कलकता और बंबई के बाद आता था। कलकत्ता को मिला राजधानी का दर्जा पूरी उन्नीसवीं सदी तथा 1911 तक बना रहा। सन् 1911 में दिल्ली को राजधानी बनाया गया। कलकता के बंदरगाह शहर (Port City) होने के कारण यह औद्योगिक क्रिया-कलाप का केन्द्र भी था। वर्तमान समय में 29 राज्यों में लगभग एक दर्जन से अधिक प्रमुख शहर है जहाँ कि आबादी दूसरे स्थान वाले शहरों की अपेक्षा तीन गुनी तक ज्यादा है। जैसे कि कलकता पश्चिम बंगाल के दूसरे स्थान पर स्थित शहर आसनसोल की आबादी से लगभग 25 गुणा अधिक आबादी वाला शहर है।

4.6 शहरों के स्थापन से जुड़े आधार

केन्द्रीय स्थान सिद्धान्त (Central Place Theory) के निम्नलिखित आधार है : (a) केन्द्रीयकरण (b) स्तरीकरण केन्द्रीयकरण का अभिप्राय है कि प्रमुख शहर की भूमिका, माल (Goods) तथा सेवाओं (P) के वितरण से जुड़ी होती है। इसके प्रमुख कार्यों में तृतीयक सेवाओं की अहम भूमिका होती है। यहाँ बस-परिवहन को एक प्रमुख सेवा के रूप में देखा जा सकता है। समाचार पत्र-बिजली घर, डाकघर आदि सेवाओं को भी शहर के प्रमुख कार्यों से जोड़कर देखा जा सकता है। शहरों के स्थापन के बारे में क्रिसटालर (Christaller) ने तीन प्रमुख शर्तों पर बल दिया है : (a) बाजार का सिद्धान्त (b) परिवहन तथा (c) प्रशासनिक आधार।

क्रिसटालर द्वारा दीये गये सिद्धान्तों के द्वारा शहर के अवस्थित होने की स्थिती तथा बाजार, परिवहन और प्रशासनिक व्यवस्था किस प्रकार से शहर को प्रभावित करते हैं उसे समझा जा सकता है। शहर के स्थापन के उपर्युक्त तीन सिद्धान्तों का मूल्यांकन अनुभाविक अध्ययन (Empirical studies) के द्वारा किया जा सकता है। भारत में प्रशासनिक स्तर पर नगर स्थापन को निम्नलिखित

नालिका से समझा जा सकता है। (तालिका - 1)

तालिका - 1

भारत में नगर स्थापन के प्रशासनिक स्तर (1981 सेंसस के अनुसार)

क्षेत्र के प्रशासनिक स्तर	स्थापित नगरों की संख्या	केन्द्रीय स्थल से स्थापित क्षेत्र की दूरी	आबादी (लाखों में)	भूभागीय स्थल (वर्ग कि0मी0)
राष्ट्र की राजधानी	1	—	6,840	32,80,543
राज्यों की राजधानी	25	428	311	1,49,116
जिला मुख्यालय	412	100	17	7,962
तहसील मुख्यालय	2,500	40	2.8	1,250
खंड मुख्यालय	5,026	30	1.4	652
ग्राम पंचायत	2,00,000	5	0.04	20

तालिका - 1

भारत में नगर स्थापन के प्रशासनिक स्तर (1981 सेंसस के अनुसार)

जनसंख्या के आधार पर शहरों का वर्गीकरण	स्थापन की संख्या	स्थापित क्षेत्र में आबादी	स्थापित क्षेत्र का कुल क्षेत्रफल
दस लाख से उपर वाले शहर	12	54,916,000	248,000
एक लाख की आबादी वाले शहर	204	3,051,000	13,800
पचास हजार से ऊपर परंतु 1 लाख से कम आबादी वाले शहर	270	1,356,000	6,140
50 हजार से कम परन्तु 20 हजार से अधिक आबादी वाले शहर	739	538,000	2,440
20 हजार से कम परंतु 10 हजार से अधिक आबादी वाले नगर	2,881	160,000	727
10 हजार से कम परंतु 5 हजार से अधिक आबादी वाले छोटे शहर	7,924	55,000	248

4.7 क्षेत्रीय आधार पर नगर स्थापन से जुड़े अध्ययन

भारत में क्षेत्रीय आधार पर नगर स्थापन की प्रक्रिया का अध्ययन किया जाये तो 5,000 से अधिक आबादी वाले नगर को भी निम्नलिखित आँकड़ों के द्वारा समझा जा सकता है: (a) स्थानीय बैंक में लोगों के चालू खाते (b) इलाज के लिए गाँव से चिकित्सालयों में इलाज के लिए आये हुए रोगियों की संख्या (c) खरीदारी के लिए गाँव से शहर के बाजार में आने वालों की संख्या (d) मोटरसाइकिल, स्कूटर, ट्रैक्टर तथा अन्य मसीन उपकरणों को ठीक करवाने व पूर्जे खरीदने के लिए

गाँव से शहर में आने वालों की संख्या (e) गाँव से शहरों में शिक्षा-प्राप्त करने हेतु महाविद्यालय आने वालों का प्रतिशत तथा (f) सिनेमा, मनोरंजन आदि के लिए शहर जाने वालों की संख्या 1 शहरों के महत्व और आवश्यकता के आकलन के लिए उपर्युक्त संकेतक अत्यंत मुखर हैं। इस संदर्भ में आर0 एल0 सिंह (1955) ने भारत के शहरों में विशेष रूप से वाराणसी शहर की मुख्य विशेषताओं का वर्णन निम्न आधारों पर किया है। (a) सब्जी आपूर्ति (b) दूध आपूर्ति (c) खाद्यान्न आूपर्ति (d) परिवहन सेवा (e) समाचार पत्रों का वितरण (f) प्रशासनिक क्षेत्र की सीमा। उनके अनुसार इनमें अधिकांश सेवाएं वे हैं जिनके लिए शहर गाँवों पर निर्भर करता है। यहाँ परिवहन सेवाओं और प्रशासनिक क्षेत्र की सीमाओं को निर्धारित करके शहर के महत्व को समझा जा सकता है। मंजूर आलम (1965) ने भी आंध्र प्रदेश के हैदराबाद नगर में ओसमानिया विश्वविद्यालय द्वारा उच्चतर शिक्षा सेवा तथा अखबार वितरित करने को महत्वपूर्ण माना। इन अध्ययनों के द्वारा इस बात का अंदाज लगाया जा सकता है कि शहर का अंतः संबंध ग्रामीण क्षेत्र के किस प्रकार का है ? और इस दृष्टिकोण से इन शहरों का क्या महत्व है?

4.8 क्षेत्रीय नियोजन

क्षेत्रीय नियोजन क्षेत्रीय विकास के लिए एक आनावश्यक पहलू है जिसमें नगर स्थान एक महत्वपूर्ण कड़ी है जिसके आधार पर क्षेत्रीय नियोजन किया जा सकता है। क्षेत्रीय नियोजन के संदर्भ में वर्त्तमान समय में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि आज के शहर अत्यआधुनिक उद्योग के केन्द्र बनते जा रहे हैं। आज से 40 वर्ष पहले हैदराबाद शिक्षा और वाणिज्य के लिए मशहूर था, आज वह संचार तकनीकी का प्रमुख केन्द्र माना जाता है और साइसर तकनीकी क्षेत्र में हैदराबाद की विशेष प्रतिष्ठा है। इस शहर की अपनी अलग पहचान बनी है। क्षेत्रीय नियोजन के लिए इस प्रकार की विशेषताओं को ध्यान में रखना आवश्यक है।

तीसरी पंचवर्षीय योजना के बाद लगभग 400 शहरों के लिए मास्टर प्लान (Master Plan) बनाया गया। अगर छोटे-बड़े सभी शहरों को मास्टर प्लान का हिस्सा माना जाये तो इनकी संख्या लाखों में हो जायेगी। फिलहाल हम दिल्ली को ध्यान में रखकर मास्टर प्लान की मुख्य विशेषताओं को देखेंगे। इसके अंतर्गत 'हरित क्षेत्र', मनोरंजन पार्क, खेल गाँव, शैक्षणिक केन्द्र, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (National Capital Region) आदि को स्थान दिया गया है।

क्षेत्रीय नियोजन शहरों के आस-पास पायी जाने वाली सुविधाओं से जुड़ा होता है जो शहर में निवासियों के दैनिक जीवन के लिए आवश्यक होता है। रोजगार एवं शिक्षा प्रमुख आवश्यकताएं हैं। शहर का एक संक्रमित (Transitional) लक्षण होता है। जिसकी वजह से शहर को न तो पूर्णतः शहरी कहा जा सकता है और न ही ग्रामीण यहाँ पर शहर और ग्रामीण क्षेत्रों की छाप दिखती है। शहरीकरण की प्रक्रिया में गाँव के कुछ तत्व जो ग्रामीण जीवन के अंग था विशेषताएं होती हैं वे भी शहरों में देखी जा सकती हैं। परन्तु वे तत्व जों शहरों के अनुरूप नहीं होते वे अपना अस्तित्व खो बैठते हैं। इसीलिए रेडफिल्ड तथा सिंगर (Redfield and Singer; 1954) ने अपने अध्ययन के सिद्ध किया कि शहरीकरण की प्रक्रिया में जो ग्रामीण क्षेत्र नगरीकृत हो जाते हैं। उन क्षेत्रों के वे

तत्व ही अपना अस्तित्व बनाये रख पाते हैं जो प्रकार्यात्मक दृष्टि से शहरी संस्कृति के लिए प्रासंगिक होते हैं।

शहरी क्षेत्र के विस्तार में उपनिवेशी ताकतों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। कलकत्ता शहर के प्रमुख शहर बनने में हुकूमत की अहम् भूमिका थी। किंग्सले डेविस के अनुसार स्पेनी उपनिवेशी नीति दक्षिणी अमेरीका के व्यापार पर नियंत्रण फैला लिया था। इसी प्रकार ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी समय-समय पर अपने व्यापारिक संबंधों के दायरे का विस्तार क़िया। विकास के संदर्भ में ही बर्ट एक होजेलिज (Bert F. Hoselitz : 1957) ने कुछ प्रमुख शहरों की परजीवी भूमिका (Parasitic Role) को रेखांकित किया है। प्रमुख परजीवी विशेषताओं के विषय में उन्होंने लिखा है कि (a) शहर सारे निवेश को निगल जाते हैं। (b) मानव संसाधनों को खा जाते हैं। (c) सांस्कृतिक पद्धति पर अपना प्रभुत्व बना लेते हैं। (d) दूसरे शहरों के विकास में नकारात्मक भूमिका निभाते हैं। (e) संसाधनों का उपभोग उत्पादन के तुलना में कहीं अधिक करते हैं।

शहरी क्षेत्र का वर्गीकरण शहर के क्रियाकलाप के आधार पर भी किया गया है। शहरी क्षेत्र के राजनीतिक तथा आर्थिक क्रियाओं के आधार पर बेरी (1961) ने इसे वर्गीकृत किया है। इस आधार पर शहरी क्षेत्र को दो भागों में बाँटा जा सकता है। प्रथम शहरी क्षेत्र को राज़नीतिक तथा बौद्धिक केन्द्र माना जाता है। उदाहरण के लिए इस आधार पर दिल्ली तथा कलकत्ता को इसका उत्कृष्ट उदाहरण माना जा सकता है। दूसरा शहरी क्षेत्र का आर्थिक केन्द्र बन जाना ज़ैसे कि मुंबई तथा सांघाई को इसका उत्कृष्ट उदाहरण माना जा सकता है।

होजलिप ने शहरी क्षेत्र का वर्गीकरण उसके उत्पादक तथा परजीवी विशेषता को ध्यान में रखकर किया है। उत्पादक शहरी क्षेत्र (Generative Urban Area) वह है जिसका प्रभाव आर्थिक विकास के लिए सकारात्मक होता है। जो शहरी क्षेत्र अपने इलाके के आर्थिक विकास के मार्ग को अवरुद्ध करते हैं तथा विकास के दृष्टिकोण से जिनका प्रभाव नकारात्मक होता है उन्हें परजीवी शहरी क्षेत्र (Urban area) कहा जाता है। इनकी भूमिकाएं परिवर्तित भी होतीं रह सकती हैं। कोई एक परजीवी शहरी क्षेत्र बदलते समय के अनुसार सकारात्मक भूमिका वाला भी हो सकता है। इसी प्रकार उत्पादक शहरी क्षेत्र कालांतर में परजीवी भूमिका भी अदा कर सकता है। होलेलिज के अनुसार कुछ शहर स्थान ऐसे भी हो सकते है जो कुछ समय के लिए अपने-आस-पास के क्षेत्रों के लिए उत्पादक भूमिका अदा करें, किन्तु कुछ समय बाद वे परजीविता की भूमिका में आ जायें। रेडफिल्ड तथा सिंगर ने इसे भिन्न दृष्टिकोणों से देखा उन्होंने इसके सांस्कृतिक पहलुओं की विवेचना की। सांस्कृतिक भूमिका का वर्णन नियतविकासीय (orthogenetic) तथा विषमजातीय प्रभाव का (Heterogenetic) प्रभाव के आधार पर किया है। नियतविकासीय प्रभाव का तात्पर्य शहर की पुरानी संस्कृति को विधिवत् तथा उसके परावर्तित गुणों (Reflective character) को बनाये रखने से संबंधित होता है जबकि विषमजातीय प्रभाव उन मौलिक विचारों से जुड़ा होता है जो शहर की पुरानी संस्कृति तथा सभ्यता के विपरीत होते हैं। रेडफिल्ड तथा सिंगर नियतविकासीय परिवर्तन को उस शहर के नैतिक व आदर्शमूलक विचारों से संबंधित मानते हैं जबकि विषमजातीय परिवर्तन को तकनीकी बदलाव से जुड़ा मानते हैं।

4.9 सारांश

उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि क्षेत्रीय नियोजन वर्तमान समय में शहरों की आबादी तथा तकनीकी विस्तार के कारण एक बड़ी चुनौती बनती जा रही है। आज शहर की आबादी पिछले 60 वर्षों में लगभग तीन गुणा बढ़ी हैं। छोटे शहरों की अपेक्षा बड़े शहरों की आबादी और भी तेजी से बढ़ रही है। जिस प्रकार से जनसंख्या का प्रवसन राजनीतिक कारणों से भी 1947 में देश-विभाजन के बाद शरणार्थियों को लेकर हुआ था कई राज्यों में उसी प्रकार की स्थिति आजादी के 62 वर्ष बाद भी आतंकवादी घटनाओं के परिणामस्वरूप दुहराई गई है। विदेशी मुल्क के शरणार्थी पश्चिमी बंगाल के छोटे-बड़े कई शहरों में पलायन कर वहाँ बस गये। इस प्रकार राजनीतिक, जनसांख्यिकीय तथा आर्थिक आदि विविध कारणों से लोगों का जो पलायन ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में होता है उससे पिछले तीन-चार दशकों में शहरी जनसंख्या में काफी वृद्धि हुयी है। इसीलिए शहरीकरण की प्रक्रिया के अध्ययन में सामाजिक और स्थानीय सिद्धान्तों का वर्णन भी इस इकाई में किया गया है। व्यावहारिक सिद्धान्त तथा आदर्शवादी सिद्धान्तों का निरुपण किया गया। साथ ही शहरीकरण की प्रक्रिया से उभरने वाले नगरीय क्षेत्रों का भी वर्णन समाजशास्त्रियों तथा भूगोलवेत्ताओं ने जनगणना एवं संसाधनों के उपभोग के आधार पर किया है।

क्षेत्रीय नियोजन के क्षेत्र में इधर काफी व्यापकता आयी है, क्योंकि सामाजिक, आर्थिक के साथ ही इसका राजनीतिक महत्व भी बढ़ा है। संवैधानिक संशोधन के फलस्वरूप स्थानीय स्तर पर चुनावों में शहरी क्षेत्रों में उपलब्ध सेवाएं ही चुनावी मुद्दों का आधार बनती जा रही हैं। जैसे कि हाल ही में हुए दिल्ली के चुनाव में स्पष्ट देखा गया। सन् 2007. के नगरपालिका चुनावों में यही शहरी संबंधित मुद्दे तथा 2009 के पंद्रहवीं लोकसभा चुनाव में छाये रहे। इससे यह स्पष्ट है कि शहरों का जिस प्रकार विस्तार हो रहा है उसमें क्षेत्रीय नियोजन की रूपरेखा को लेकर सभी की इस दिशा में दिलचस्प स्वाभाविक है।

4.10 बोध प्रश्न

प्र01 किस विद्वान ने नगरीय क्षेत्र के उपनिवेशकाल के स्थिति में सुधार लाने की जरूरत पर बल दिया है।

(a) आर0 रामचन्द्रन (b) गेराल्ड ब्रिज (c) राबर्ट रेडफिल्ड (d) मिल्टन सिंगर

प्र02 किस विद्वान ने कहा है कि भारतीय नगर स्थानों की संख्या अमेरिका के मुकाबले तीन गुणा बढ़ी है?

(a) गेराल्ड ब्रिज (b) राबर्ट रेडफिल्ड (c) आर0 रामाचंद्रन (d) बालेश्वर ठाकुर

प्र03 किस विद्वान ने जनसंख्या समूह को बड़े शहर के उदय का कारण मानकर अपने विचार 1939 में दिये?

(a) मार्क जेफरसन (b) क्रिसटालर (c) बर्ट होजेलिज (d) मिल्टन सिंगर

प्र04 किस समाजशास्त्री ने बड़े शहर का वर्गीकरण करते हुए उसकी परजीवी भूमिका की बात की है?

(a) क्रिसटालर (b) किंगसले डेविस (c) गेराल्ड ब्रिज (d) बर्ट होंजेलिज

प्र05 किस समाजशास्त्री ने शहरी क्षेत्रों के सांस्कृतिक विशेषताओं का वर्णन किया है?

(a) क्रिस टालर (b) मिल्टन सिंगर (c) मिल्टन सिंगर तथा राबर्ट रेडफिल्ड

(d) गेराल्ड ब्रिज

4.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

प्र01 (b)

प्र02 (c)

प्र03 (a)

प्र04 (d)

प्र05 (c)

इकाई -5 : ग्रामीण नगरीय सातत्य

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 ग्रामीण नगरीय द्विभाजन

5.3 ग्रामीण-नगर सातत्यक

5.4 ग्रामीण-नगर सातत्य

5.5 ग्रामीण-नगर सातत्य से जुड़े लुई वर्थ के विचार

5.6 ग्रामीण नगरीय सातत्य का भारतीय समाज के अध्ययन में महत्व

5.7 सारांश

5.8 बोध प्रश्न

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- ग्रामीण-नगरीय समाज से संबंधित ग्रामीण-नगर सातत्य की अवधारणा को समझ सकेंगे।
- ग्रामीण-नगर सातत्य क्या है और इससे जुड़े लुई वर्थ के विचार को समझ सकेंगे।
- ग्रामीण-नगरीय समाज के अंतर के संबंध को समझने के क्या आधार हो सकते हैं? उसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- ग्रामीण-नगरीय सातत्य से जुड़े विभिन्न पहलुओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- भारतीय समाज के अध्ययन में ग्रामीण-नगर समाज के अध्ययन में क्षेत्रीय विधि के महत्व की जानकारी भी प्राप्त कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

समाजशास्त्रीय अध्ययन में सामाजिक संरचना को परस्पर दो भागों में बाँटकर उसके स्वरूपों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इन दो संरचनात्मक प्रकारों को ग्रामीण समुदाय (Village Community) तथा शहर व आधुनिक समुदाय (Urban or Modern Community) के रूप में देखा है। हेनरी मेन ने अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक Ancient Society (1861) में दो प्रकार के सामाजिक संगठनों की विशेषताओं को प्रस्तुत किया है। एक प्रकार का संगठन जो नातेदारी को ज्यादा महत्व देता है और दूसरी तरफ उसकी वह स्थिति जो जमीन पर उसके मालिकाने हक के कौन ग्रामीण व कौन नगरीय के कारनामें से जुड़ी होती है, उसे संविदा (Contract) कहत

हैं। इस प्रकार ग्रामीण तथा नगरीय समाज में मनुष्य के व्यवहार नियंत्रित होते हैं। फर्डिनांड टानिज जिनकी पुस्तक 1987 में प्रकाशित हुई थी ने दो शब्दों Gemeinschaft तथा Gesellschaft से संबोधित किया है। जेमाइगशाफट से उनका अभिप्राय समुदाय (Community) से था और गेजेलशाफ्ट से उनका अभिप्राय समाज (society) से था। टानिज ने इन दोनों शब्दों से संबंधित अवधारणाओं का विस्तार से वर्णन किया है। फ्रांस के समाजशास्त्री इ-दुर्खिम ने अपनी पुस्तक Division of Labour में विभिन्न समाजों में पाई जाने वाली सावयवी एकता (Mechanical Solidarity) तथा जैविकीय एकता (Organic Solidarity) का विवेचन किया है। उन्होंने दोहरी सामाजिक व्यवस्था की विशेषताओं की प्रकृति की चर्चा करते हुए समाज के मात्रा (Volume), परिमाण (Mass) तथा जनसंख्या घनत्व (Density) के आधार पर दोनों समाज के विविध स्वरूपों का वर्णन किया है। इन अवधारणाओं से प्रेरित होकर नगरीय समाजशास्त्र में भी ग्रामीण (Rural) तथा नगरीय (Urban) समाज के बीच के व्याप्त अंतर को स्पष्ट किया है।

5.2 ग्रामीण-नगरीय द्विभाजन

ग्रामीण-नगरीय समाज पर विचार करने से पहले यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि ग्रामीण क्या है ? और नगर क्या है? क्या ये दोनों एक दूसरे से पृथक् हैं? अगर ऐसा है तो किन आधारों पर ग्रामीण एवं नगर को अलग माना जाता है। सोरोकिन तथा जिमरमैन (Sorokin and Zimmeman) ने ग्रामीण-नगरीय क्षेत्र की परस्पर विरोधी विशेषताओं की व्याख्या करते हुए उनके बीच के अंतर को निम्नलिखित आधार पर स्पष्ट किया है :

ग्रामीण-नगर के बीच अंतर

अंतर के आधार	ग्रामीण	नगर
(i) पेशा	कृषि पर आधारित पेशा। पूरे ग्रामीण समाज में अधिकांश लोग खेती करते हैं और अन्य किसी गैरकृषि कार्यों से जुड़े होते हैं।	गैर कृषि पर आधारित पेशे जिसमें उत्पादन, वाणिज्य, व्यापार, व्यवसाय, तथा प्रशासन मुख्य है।
(ii) वातावरण	प्राकृतिक वातावरण का प्रभुत्व। ग्रामीण क्षेत्र से जुड़े लोगों का सीधा संपर्क प्रकृति से होता है	प्रकृति से पृथक् नगर में मनुष्य द्वारा निर्मित वातावरण में रहते हैं। नगर की प्रमुख समस्याओं में प्रदूषण विशेषकर वायु तथा जल प्रदूषण बड़ी समस्या होती है।
(iii) समुदाय का आकार	मुक्त किन्तु लघु समुदाय पाये जाते हैं। कृषि तथा समुदाय का एक दूसरे के साथ सकारात्मक संबंध नहीं होता है।	यहाँ समुदाय की संख्या बड़ी होती है और उनका आकार भी बड़ा होता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि नगर और समुदाय के आकार में सकारात्मक संबंध होता है अर्थात् नगर बड़ा होगा तो

		रहने वाले लोगों की जनसंख्या भी बड़ी होगी।
(iv) जनसंख्या का घनत्व	ग्रामीण क्षेत्रों में प्रायः जनसंख्या का घनत्व कम होता है। जनसंख्या घनत्व और ग्रामीण क्षेत्रफल में नकारात्मक संबंध होता है।	जनसंख्या का घनत्व नगर में ज्यादा होता है। यहाँ पर नगरीय प्रभाव तथा जनसंख्या के घनत्व के बीच सकारात्मक संबंध होता है।
(v) समजातीय एवं विषम जातीय गुण	ग्रामीण क्षेत्रों में समजातीय गुण ज्यादा पाये जाते हैं। सभी एक भाषा, एक धर्म को मानते हैं। इस प्रकार उनके प्रजातीय तथा सामाजिक व वैधानिक गुण अलग-अलग नहीं होते अर्थात् विजातीय या विषमजातीय गुणों (Heterogeneous attributes) से इनका नकारात्मक संबंध होता है।	नगरीय क्षेत्र में ज्यादा विषम जातीय गुण पाये जाते हैं। इस प्रकार नगरीय क्षेत्रों का विषम जातीय गुणों से सीधा संबंध होता है। यहाँ लोग भिन्न भाषा धर्म, संस्कृति, मान्यताओं के के आधार पर विविध पहचान के साथ जुड़े होते हैं।
(vi) सामाजिक भिन्नता तथा स्तरीकरण	ग्रामीण समाज में सामाजिक भिन्नता तथा स्तरीकरण नगर के अपेक्षा कम होता है।	भिन्नता तथा सामाजिक स्तरी-करण का सीधा सकारात्मक संबंध नगर से होता है।
(vii) गतिशीलता	ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिगत तथा पेशेगत गतिशीलता का स्वरूप अपेक्षाकृत कम उग्र होता है। प्रायः प्रवसन की लहर ज्यादा लोगों को ग्रामीण क्षेत्रों से स्थानांतरित कर नगर की तरफ ले जाती है।	नगरीय क्षेत्र में भूमिगत तथा पेशेगत गतिशीलता तीव्र होती है नगर के साथ गतिशीलता का सीधा व सापेक्ष संबंध होता है। नगर के लोगों का ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानांतरण केवल संकट के समय होता है।
(viii) अंतः संबंध	अंतः संबंध का दायरा सीमित होता है। अधिकांश लोगों के संपर्क प्राथमिक होते हैं। अतः स्थायी होते हैं। उनके बीच के संबंध में गंभीरता तथा सादगी होती है। व्यक्ति मानवीय गुणों के द्वारा सहज रूप से जुड़ा होता है।	नगर में लोगों के संपर्क बृहत् होते हैं। व्यक्ति के अंतः संबंध का दायरा काफी व्यापक होता है।यहाँ पर पारस्परिक संबंध अवैयक्तिक, अस्थायी तथा छोटे समय के लिए होते हैं। अतः संबंधों में जटिलता,छिछला-पन, औपचारिकता तथा सतही स्तर की अधिकता होती है। व्यक्ति की पहचान किसी संस्था या उसके पते से होती है, जहाँ वैयक्तिक संबंध का कोई स्वरूप नहीं होता।

ग्रामीण - नगरीय समाज के द्विभाजन के आधार :

ग्रामीण-नगर के बीच के अंतर को स्पष्ट करते हुए सोरोकिन तथा जीमरसैन ने आठ आधारों पर ग्रामीण तथा नगर के प्रकृति का वर्णन किया है। इन आधारों पर ग्रामीण-नगरीय सातत्य (Rural-Urban Continuum) की अवधारणा स्थित है। इसी से संबंधित एक दूसरी अवधारणा ग्रामीण-नगर निरंतरता (Rural -Urban Continuity) है। इसके विश्लेषण से पूर्व हमें ग्रामीण नगरीय संबंधी - नगरीय अंतर के सांख्यिकीय आधार पर किया गया विश्लेषण कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों पर प्रकाश डालेगा। डंकन तथा रिस ने अमेरिका के संदर्भ में ग्रामीण-नगरीय अंतर के चार आधार बताए हैं।

(1) जनसंख्या संरचना (2) प्रमुख आंकड़े

(3) स्वास्थ्य संबंधी आंकड़े (4) सामाजिक आंकड़े

उपर्युक्त चार पहलुओं के आधार पर निम्नलिखित पक्षों पर महत्वपूर्ण सांख्यिकीय आंकड़े द्रष्टव्य हैं :

(1) जनसंख्या संरचना :

(a) लिंग : इस आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की संख्या ज्यादा होती है।

(b) आयु : ग्रामीण क्षेत्रों के बजाय मध्यम आयु के वयस्क (25 से 55 के बीच के) लोगों की संख्या नगर में ज्यादा पायी जाती है।

(c) व्यवसाय: ग्रामीण क्षेत्रों में ज्यादा लोग कृषि से जुड़े होते हैं, जबकि नगर में ज्यादा लोग गैर कृषि पेशे से जुड़े होते हैं।

(d) राष्ट्रीयता: नगर में ज्यादा लोग विदेशी मुल्क के होते हैं अपेक्षाकृत ग्रामीण क्षेत्रों के।

(2) प्रमुख आंकडे :

(a) जन्म : ग्रामीण क्षेत्रों में नगरों की अपेक्षा जन्म दर ज्यादा होती है।

(b) बालमृत्यु दर : बाल मृत्यु दर गाँव की अपेक्षा नगरीय क्षेत्र में ज्यादा होती है। (चूंकि ये आंकड़े अमेरिकी संदर्भ में दिये गये हैं इसलिए संभव है सघन आबादी के कारण नगरीय क्षेत्रों में बाल मृत्यु दर का प्रतिशत अधिक पाया जाता हो।)

(c) मृत्यु : नगर में मृत्यु ज्यादा होती है अपेक्षाकृत ग्रामीण क्षेत्रों के।

(d) हिंसक मृत्यु : हिंसक मृत्यु की संख्या भी नगर में ज्यादा होती है अपेक्षाकृत ग्रामीण क्षेत्र के।

(3) स्वास्थ्य संबंधी आंकड़े -:

(a) रोग: नगर में महामारी वाले रोग ज्यादा होते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों को (यह भारतीय संदर्भ में बिलकुल भिन्न है, क्योंकि ब्रिटिश काल के रिकार्ड दर्शाते हैं कि महामारी के कारण पूरा का पूरा गाँव ही महामारी के कारण खाली हो जाता था।)

(b) मानसिक रोग : कमजोरी, मनोरोग (Imbecility and Feeble mindedness) ज्यादा नगर में होते हैं जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में पागलपन ज्यादा दिखता है।

(c) स्वास्थ्य सेवा : ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा स्वास्थ्य केन्द्र शहरों में अधिक पाये जाते हैं।

(4) सामाजिक आंकड़े (सांख्यिकी) :

(a) विवाह तथा तलाक : ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा नगरों में विवाह और तलाक की दर अधिक होती है।

(b) शिक्षा : शहर में शिक्षा के बेहतर अवसर होते हैं अपेक्षाकृत ग्रामीण क्षेत्रों के ।

(c) मतदान व्यवहार : स्थानीय निकायों के चुनावों में शहरी लोग ज्यादा हिस्सा लेते हैं अपेक्षाकृत ग्रामीण क्षेत्रों के।

(d) अन्य आंकड़े : धर्म, अपराध, घर, कर जमाकर्ता, लोक निवास - इस सभी क्षेत्रों में ग्रामीण क्षेत्र के बजाय नगर में इनकी बहुलता होती है।

5.3 ग्रामीण-नगर सातत्य

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट है कि ग्रामीण नगर समाज के बीच जिस अंतर की बात की जाती है उसमें यह कहना कि ग्रामीण समाज संरचनात्मक तथा सांस्कृतिक दृष्टिकोण से बिल्कुल ही भिन्न है- एक दूसरे से अलग है- यह उचित नहीं होगा, क्योंकि ग्रामीण समाज ही परिवर्तित होकर नगर के रूप में उभरता है। इसलिए कुछ सामाजशास्त्रियों ने ग्रामीण तथा नगर को समझाने के लिए ग्रामीण-नगरीय सातत्य (Rural-Urban Continuum) की अवधारणा प्रस्तुत की है। सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर विद्वानों ने गाँव तथा नगर में बसने वाले लोगों की विशेषताओं का वर्णन किया है। पीटर मान ने ग्रामीण तथा नगरीय समाज की विशेषताओं पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि जन-संचार तथा मनोरंजन के उन्नत साधन, गतिशीलता तथा निजी परिवहन के व्यापक विकास के कारण ग्रामीण तथा नगर के बीच का अंतर अब लोगों के सामाजिक जीवन में उतना प्रासंगिक नहीं है जितना कभी पहले हुआ करता था।

5.4 ग्रामीण-नगर सातत्य

ग्रामीण तथा नगरीय समाज में जो सामंजस्य या जिस रूप में उसका एकीकृत स्वरूप उभर कर आया है उसमें ग्रामीण - नगर सातत्य की कोई यथार्थ में प्रासंगिकता नहीं बची है। इसीलिए इस अवधारणा का खंडन करते हुए डिवी (Dewey) ने अपने विश्लेषग में बताया है कि ग्रामीण व नगर सांतत्य के मौलिक आधार के ऊपर कोई आम सहमति नहीं बन पायी है। डिवी का मत है कि यद्यपि ग्रामीण-नगरीय समाज के अंतर कुछ माने में वास्तविक भी हो सकते हैं, परन्तु फिर भी ग्रामीण-नगर सातत्य की अवधारणा को महत्वपूर्ण नहीं माना जा सकता। विबरले (Wibberly : 1966) ने इस मुद्दे पर अपनी संक्षिप्त प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा है कि बीसवीं सदी के मध्य तक ग्रामीण समाज क्या है ? - इसके बारे में कोई आम सहमति नहीं है और साथ ही ग्रामीण तथा नगरीय समुदाय के बीच क्या अंतर है? विशेषकर उनकी आंकांक्षाओं, उनके व्यवहार, उनकी सांस्कृतिक रीति-रिवाजों को लेकर क्या अंतर है- उसके बारे में कोई स्पष्ट रेखा नहीं खींची जा सकती है। जो महत्वपूर्ण बदलाव ग्रामीण समाज के संदर्भ में उसकी संरचना तथा क्रियाओं को लेकर प्रभावी हुआ है, वह है ग्रामीण समाज के स्वावलंबी स्वरूप में बिखराव। भौतिक तथा व्यक्तिगत गतिशीलता के कारण ग्रामीण जीवन अब स्वावलंबी नहीं रह गया है।

कुछ समाजशास्त्रियों का यह भी मत है कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से ग्रामीण-नगर के बीच का अंतर स्थायी कृषि समाज से जुड़ा रहा है और इस दृष्टिकोण से संभवतः ग्रामीण व नगर समाज

के बीच व्याप्त अंतर को रेखांकित किया जा सकता है। इस रूप में ग्रामीण तथा शहरी समाज में जो बदलाव आ रहा है उसकी पहचान भी की जा सकती है। परंतु यहाँ भी बदलाव की इस क्षणिक अवस्था में भी कार्यात्मक अंतर क्रमशः विलुप्त होता जा रहा है। वह दिन ज्यादा दूर नहीं है, जब कृषि में विशेष तकनीकी क्षमता रखने वाले व्यावसायिक यह पायेंगे कि वे जिन कार्यों में अपनी क्षमता साबित करना चाहते हैं उसे नगरीय समाज से ही जुड़ा माना जा सकता है।

5.5 ग्रामीण-नगर सातत्य से जुड़े लुई वर्थ के विचार

नगर और ग्रामीण समुदाय के बीच जो सातत्य व्याप्त है उस अवधारणा का एक और दूसरा स्वरूप भी है जो लुई वर्थ (Louis Wirth) के विचार से जुड़ा है। उनके अनुसार जिस अनुपात में मौजूदा विश्व के लोग शहर से जुड़े हैं उसे कुल आबादी से जोड़कर नहीं देखा जा सकता है। जो प्रभाव शहर का आम आदमी के सामाजिक जीवन पर पड़ता है वह शहर में रहने वाले कुल आबादी से कहीं ज्यादा व्यापक होता है। नगर लोगों के मात्र रहने की जगह तथा आधुनिक व्यक्ति के काम करने की जगह ही नहीं होती है, बल्कि यह वह स्थान है जो आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक जीवन को भी प्रभावित करती है। यह वह स्थान है जिसने दूर रहने वाले समुदाय को अपने प्रभाव क्षेत्र में आत्मसात कर लिया है जिसके फलस्वरूप नगर में रहने वाले विभिन्न जगहों से आये हुए लोग तथा उनकी क्रियाएं सभी एकीकृत होकर एक भूमंडल (Planet) से जुड़ जाते हैं। इसीलिए लुई वर्थ ने नगरवाद को जीवनशैली की संज्ञा दी है जिसे प्रभावित करने वाले निम्न परिणाम देखे जा सकते हैं। प्रथम परिणामस्वरूप जनता व भौतिक वातावरण के बीच संबंध जिसके कारण शहरी पारिस्थितिक दृष्टिकोण से प्रकृति से जनता का सीधा संपर्क होता है। दूसरा पहलू वह है जिसके कारण नगर समाज का वह सामाजिक संगठन परिलक्षित होता है जो नगर समाज की विशिष्ट पहचान बन जाती है और तीसरा पहलू वह है जो लोगों के सोचने के तरीके से जुड़ा है जो नगर समाज तथा उसके जीवन को दर्शाता है।

लुई वर्थ ने ग्रामीण-नगरीय सातत्य को अपने निम्नलिखित विचारों के द्वारा पुष्ट किया है। (a) भौतिक संरचना जो जनसंख्या, तकनीकी तथा पारिस्थितिकी व्यवस्था (Ecological System) को एक दूसरे से जोड़ने का आधार बनता है। (b) सामाजिक संगठन की एक व्यवस्था जिसमें सामाजिक संरचना की विशेषता तथा सामाजिक संबंध की विशिष्ट पद्धति विद्यमान होती है। (c) मानवीय दृष्टिकोण और विचारों तथा व्यक्तित्व का वह पहलू जो मनुष्य के समग्र व्यवहार से जुड़ा होता है और उसके सामूहिक व्यवहार (Collective behaviour) को प्रभावित करता है। इन सभी के कारण नगरीय समुदाय में पारिस्थितिकी सांस्कृतिक तथा राजनीतिक रूप एक दूसरे में समाहित होता है।

इस प्रकार ग्रामीण-नगर सातत्य से अभिप्राय है ग्रामीण जीवन तथा शहरी जीवन के बीच अटूट संबंध, इसलिए बीसवीं सदी के शुरुआती दशकों में ग्रामीण तथा नगर समाज के बीच जो अंतर बनाये गये थे उसे प्राचीन व नवीन संरचना के रूप में दर्शाया गया था वह लगभग समाप्त होता जा रहा है। वैश्वीकरण के दौर में ग्रामीण तथा नगरीय समाज का अंतर समाप्त होता जा रहा है और

ग्रामीण-नगर सातत्य की अवधारणा द्वारा इनके बीच के संबंध को समझा जा सकता है। लुई वर्थ ने अपनी पुस्तक Cities and Social Life (1964) में शहर की परिभाषा देते हुए उसके तीन निम्न लक्षणों को रेखांकित किया है :

(a) बृहत् आकार (Large Size) (b) सघन आबादी (High Density) तथा (c) जनसंख्या का विषमजातीय गुण (Heteogeneity of Population)। मध्यम श्रेणी के शहरों की प्रकृति का अध्ययन अगर उपर्युक्त तीन लक्षणों को ध्यान में रखकर किया जाये तो यो तीनों लक्षणों को उन शहरों में देखा जा सकता है। यहाँ पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि मध्यम श्रेणी के ये शहर लगभग 50 वर्ष पहले ग्रामीण क्षेत्र कहलाते थे।

इस प्रकार लुई वर्थ के विचार को ध्यान में रखा जाये तो जिन समाजशास्त्रियों ने नगर और ग्रामीण समाज को दो परस्पर पृथक् सामाजिक ढाँचे से जोड़कर उनके गुणों की व्याख्या की थी उससे उनका मत बिल्कुल भिन्न है। वे नगरवाद के प्रभाव को जीवन की शैली से जोड़कर देखते हैं जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोगों की सोच में भी बदलाव आया है। शिक्षा के प्रति उनका रुझान बदला है। शहर में घर लेकर रहने का खर्च वे सहन नहीं कर सकते। परिवहन की सुविधा हो जाने से कार्यस्थल पर आने-जाने से शहर से उनका संबंध बना होता है। समाचार पत्र तथा टेलिविजन के माध्यम से वे शहर की गतिविधियों से भलीभांति अवगत होते हैं। इसलिए जो लोग गाँव में रहना पसंद करते हैं उनके रहन-सहन में शहरी जीवन की छाप देखी जा सकती है। नगरवाद का यह प्रभाव ही ग्रामीण-नगर सातत्य की अवधारणा को स्पष्ट करता है। ग्रामीण व नगर समाज के बीच जो परंपरागत अंतर या दूरी देखी जाती थी वह बहुत हद तक दूर संचार तथा तकनीकी क्षेत्र में हुए परिवर्तन से काफी बदली है। ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोग भी आज कम्प्यूटर से जुड़कर इन्टरनेट की सेवा उपलब्ध होने से महानगरों से जुड़े हैं। टेलीशापिंग तथा इंटरनेट के द्वारा किसी भी स्थान पर आने-जाने के लिए टिकट खरीदा जा सकता है। यातायात के साधनों में जो बदलाव आया है उसने भी ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के अंतर को कम किया है। ग्रामीण-शहर सातत्य का यह नया एवं उभरता स्वरूप है जो वैश्वीकरण के दौर में और भी तेजी से बढ़ता जा रहा है।

5.6 ग्रामीण-नगरीय सातत्य का भारतीय समाज के अध्ययन में महत्व

एम. एस. ए. राव (M.S.A. Rao) ने अपनी पुस्तक Urban Sociology in India (1974) में नगरीय समाज के अध्ययन की आवश्यकता पर बल देते हुए लिखा है कि साधारणतया भारतीय सामाजिक संस्थाओं के बारे में हमारी प्राथमिकता ग्रामीण समाज के अध्ययन पर केन्द्रित रही है। क्षेत्रीय अध्ययन पर आधारित ग्रामीण समाज के अध्ययन के पूर्व अर्थात् 1940 के दशक के पहले के अध्ययन ज्यादातर भारत-विद्या दृष्टिकोण (Indological Perspective) से प्रभावित थे। इस सोच के कारण संस्कृत जानने वाले विद्वानों ने भारतीय नातेदारी, विवाह जाति व्यवस्था को ही भारतीय समाज के अध्ययन का प्रमुख आधार माना जिसकी कुछ अपनी सीमाएं थी। सर्वप्रथम इस प्रकार के अध्ययन हिन्दुओं की संस्थाओं को ही प्राथमिकता देते थे। हिन्दू समाज के अध्ययन में भी

उनका रुझान ज्यादातर सवर्ण या उच्च जाति की समस्याओं के अध्ययन तक ही सीमित था। समाजशास्त्री एम0एन0 श्री निवास ने भी अपनी चिंता व्यक्त करते हुए लिखा है कि इस दृष्टिकोण के प्रधान होने से समाज के बारे में हमें किताबी ज्ञान (Book view of knowledge) ही मिलता है। क्षेत्रीय अध्ययन की परंपरा के कारण समाजशास्त्र में जो अध्ययन 1950 तथा 1960 के दशक में हुए वे काफी व्यापक थे। उन अध्ययनों में सभी प्रकार के गाँवों का अध्ययन किया गया, जिसमें ग्रामीण समाज में व्याप्त लोगों के बीच के अंतः संबंध तथा कई व्यावहारिक पक्षों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसके फलस्वरूप पिछले पाँच दशकों में भारतीय सामाजिक संरचना, उसके संगठन तथा परिवर्तित स्वरूपों के बारे में बृहत् जानकारी उपलब्ध हो पायी है।

क्षेत्रीय विधि के महत्व का उल्लेख करते हुए राव का कहना था कि पूरे समाज को एक समग्र के रूप में देखा गया। इस दृष्टि में बदलाव के कारण नगरीय समाज के भी अध्ययन हुए जिससे भारतीय ग्रामीण समाज तथा भारतीय समाज के बारे में एक संतुलित जानकारी मिल सकी। उनका यह भी मानना था कि नगरीय समाज के अध्ययन की उपेक्षा इसलिए भी की जाती रही, क्योंकि यह मान्यता थी कि ग्रामीण और नगरीय समाज के बीच का अंतर जनसंख्या के आधार पर किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्र में 80 प्रतिशत लोग बसते हैं जबकि शहरी क्षेत्रों में रहने वालों की संख्या महज 20 प्रतिशत है। इसलिए नगरीय समाज के अध्ययन का कोई औचित्य नहीं है। दूसरी मान्यता यह थी कि ग्रामीण तथा नगरीय समाज दोनों एक ही सभ्यता, संविधान और राजनीतिक व्यवस्था से संचालित होते हैं। इसके विपरीत डेविड पाकक (David Pocock) का यह मानना था कि प्राचीन समय में भी शहरों में भी जाति से जुड़े व्यवसायों और गतिविधियों को देखा जा सकता था। सामाजिक संरचनाओं के तत्व विशेषकर विवाह, परिवार, नातेदारी तथा जातिव्यवस्था का जो संस्थात्मक स्वरूप शहर तथा ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त है उसमें अंतर जरूर पाया जाता है। इन संस्थाओं का जो परंपरागत स्वरूप गाँवों में दिखता है वह शहर में नहीं दिखता। इसलिए शहर तथा गाँव के बदलते स्वरूप को एक मानकर देखना भ्रामक हो सकता है। जो परिवर्तन शहरों में वैश्वीकरण तथा उदारीकरण की नीति के प्रभाववश हो रहे हैं, उसे अगर ध्यान में रखा जाये तो नगरीय समाज का अध्ययन भी आवश्यक प्रतीतं होता है।

5.7 सारांश

नगरीय समाज के अध्ययन से अन्य समाज के स्वरूप की व्यापक समझ हमें मिलती है। नगरीकरण विश्वव्यापी प्रक्रिया है। बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध तथा 21वीं सदी के आंशिक दशक में इसके कारण महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन हुए हैं। व्यापार जगत से जुड़े नीति निर्धारक भी वैश्वीकरण के प्रभाव से नगर तथा ग्रामीण समाज के अंतर्विरोधों को ज्यादा महत्व नहीं देते हैं। विकास की प्रक्रिया में नये स्वरूप उभर कर आये हैं। सामाजिक क्षेत्र में रोजगार के अवसर जो युवाओं तथा महिलाओं को मिले हैं उसे एक महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में देखा जाने लगा है। परिवर्तन के इस नये आयाम को समझने के लिए ग्रामीण नगरीय सातत्य जैसी अवधारणा की अपनी अलग प्रासंगिकता है। समाज

के इस परिवर्तित संदर्भ में महिलाओं की भूमिका भी काफी महत्वपूर्ण हो गयी है। उत्पादन के क्षेत्र में व्यापारिक जगत में एक मेहनतकश व्यावसायिकों के रूप में महिलाओं की अपनी अलग पहचान बनी है जिसे आसानी से नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। दलित, उपेक्षित, अल्पसंख्यक समाज से जुड़े लोगों की भी नयी भूमिका नगर समाज में उभरी है। यातायात तथा परिवहन के उन्नत साधनों के उपलब्ध होने से बाजार ने एक नया रूप अख्तियार कर लिया है। इस पूरे सामाजिक परिवर्तन की रूपरेखा को जानने के लिए यह आवश्यक है कि समाजशास्त्रीय अध्ययन में ग्रामीण व नगरीय समाज के बीच जो नया संबंध बन रहा है उसे समझने की कोशिश की जाये।

5.8 बोध प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र01 ग्रामीण - नगर समाज के अंतर को किस समाजशास्त्री ने जेमाइनशाफ्ट' तथा 'गेजेलशाफ्ट के रूप में प्रस्तुत किया है।

(a) रेडफिल्ड (b) दुर्खिम (c) मार्क्स (d) फर्डिनांड टानिज

प्र02 ग्रामीण-नगरीय विभाजन की व्याख्या करते हुए सोरोकिन तथा जिमरमैन ने कितने आधार बताये हैं।

(a) 4 (b) 5 (c) 8 (d) 6

प्र03 किस नगरीय समाजशास्त्री ने नगरवाद को जीवन की शैली बताया है?

(a) पार्क तथा बर्गेस (b) लुई वर्थ (c) राबर्ट रेडफिल्ड (d) मैक्स वेबर

प्र04 किस समाजशास्त्री ने किताबी जानकारी की बात की है?

(a) एम.एम.राव (b) एम.एन. श्रीनिवास (c) डेविड पाकक (d) लुई वर्थ

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र01 (d)

प्र02 (c)

प्र03 (b)

प्र04 (b)